ज़नानी ड्योढ़ी

थी। वू इंग को बढ़ावा न देना चाहतीं तो होठों पर आई मुस्कान हलकी ही रहती और कुछ न बोलतीं। इंग चुप रह गई और मालकिन की गुंथी हुई वेणियों को खोल फिर से सँवारकर गूंथने लगी। नये सिरे से वेणियां गूंथ कर उसने जूड़ा बांध दिया और सब्जा जड़े दो कांटे दोनों ओर से जूड़े में खोंस दिये। हाथों पर थोड़ा-सा सुगंधित तेल लगाकर इंग ने मालकिन के चमकते केशों पर हाथ फेर दिये।

'सब्जे वाली बालियां भी पहना दे।"—वू ने स्पष्ट सुरीले स्वर में कहा। उनके स्वर की सुरीली स्पष्टता में भी रहस्य की ऐसी झंकार थी कि कान सुनकर भी कुछ और समझ पाने के लिये प्रतीक्षा में रह जाते।

"हुजूर, सब्जे की बालियां ही निकाली हैं। मैं जानती थी, हुजूर आज वही पहनेंगी।"—इंग ने अपनी सूझ के लिये गर्व किया और फूलदार रेशम से मढ़ी एक छोटी डिबिया से बालियां निकालकर सावधानी से मालकिन के कोमल कानों में पहना दीं।

इंग को याद आया—चौबीस वर्ष पहले, उस दिन सुबह-सुबह उसने मालकिन को खूब खुली आस्तीनों की लाल साटिन की लम्बी कुर्ती और काले साटिन का लहंगा पहनाया था। लहंगे के खूब दाब देकर सिये पल्लों पर फूलों और पक्षियों की सोज़नकारी की हुई थी। इंग ने मालकिन को पोशाक पहनाई ही थी कि वू साहब कमरे में चले आये थे। साहब की रसीली आँखों में अभी नींद की खुमारी भरी थी। हाथ में यही, फूलदार रेशम से मढ़ी डिबिया थी। नौकरों के सामने मालकिन से कैसे बोलते? डिबिया इंग की ओर बढ़ाकर साहब ने कहा था—"अपनी मालकिन के कानों में पहना दो।"

बालियों में जड़े सुन्दर सब्जे को देखकर इंग मुँह खोले विस्मित रह गई थी। उसने बालियां मालकिन की आँखों के सामने करके दिखाईं। रानी की पलकें पल भर को साहब की आँखों की ओर उठीं और लाज के लावण्य से झुक गईं। ओंठ धीमे से हिले—"धन्यवाद।"

साहब ने स्वीकृति में सिर हिलाया और इंग को मालकिन के कानों में

को तोड़ डाला। रोटी के भीतर तरह-तरह की मिठाइयां भरी थीं। वू ने मिठाई का जरा-सा टुकड़ा ले दांत से काटते हुए प्रशंसा की—"बहुत अच्छी बनी है। बहुत स्वाद है।"

नौकरानी का हौंसला बढ़ा। वह मालकिन के समीप झुक आई और फुस-फुसा कर बोली—"हुजूर, लोग तो कहेंगे कि मुझे क्या मतलब, पर मालकिन इस घर का खयाल तो सब नौकरों को होना चाहिये। बड़े बावरची ईंधन के तिगने-तिगने दाम लगा रहे हैं। हां हुजूर, बाजार में नया ईंधन नहीं आ रहा, ईंधन महंगा तो है पर ऐसी लूट थोड़े ही मच रही है हुजूर? इंग हुजूर की खिदमत में है सो बड़े बावरची समझते हैं कि उनसे कुछ पूछने-कहने वाला कौन है?"

"हूं!," मालकिन की आंख नौकरानी की ओर से फिर गई—"जब वह हिसाब लायगा तो देख लिया जायगा।" नौकरानी ने पल भर मालकिन की ओर देखा, परन्तु अपनी ओर ध्यान न पाकर बाहर चली गई।

वू ने मीठी पाव रोटी का टुकड़ा हाथ से रख दिया और तली हुई मछली का एक टुकड़ा कमचियों से उठा लिया। मछली का टुकड़ा मुंह में ले अपने विचारों में डूब गई। अपनी चालीसवीं वर्षगांठ के अवसर पर घर का उत्तरदायित्व और प्रबंध अपनी बड़ी बहू मेंग के हाथ सौंप देने का इरादा नहीं था। वू अपनी सास की अकेली बहू थीं। उनके अपने चार बेटे थे। दो की बहुएं आ चुकी थीं। बहुओं में ईर्षा और स्पर्धा का बीज बो देने से क्या फायदा होता? बड़े बेटे लिआंगमो का विवाह पुरातन प्रथा के अनुसार कम उम्र में ही हुआ था। बहू वू ने स्वयं ही चुनी थी। मेंग वू की पुरानी सहेली कांग सेठानी की बेटी थी। उम्र अभी उसकी कम ही थी। आयु में तो बल्कि छोटी बहू रूलन ही बड़ी थी। वू को विवश होकर लिआंगमो का विवाह बेटे के उन्नीसवें वर्ष में ही जल्दी से बहू ढूंढ़कर कर देना पड़ा था। इस झंझट का कारण था छोटा बेटा त्सेमो।

छोटे बेटे त्सेमो को पढ़ने के लिये शंघाई के स्कूल में भेज दिया गया था। शंघाई में वह अपने से दो बरस बड़ी एक लड़की के प्रेम में फंसकर अठारह

की आयु में तुरन्त विवाह कर लेने की जिद्द कर बैठा। परम्परा के ख्याल से विवाह पहले बड़े भाई का ही होना चाहिए था। त्सेमो पर उचित नियंत्रण न रखने और उसे उच्छृंखलता का अवसर देने का संताप सदा ही रानी के मन में बना रहता था। इसे वह अपनी चूक समझती थीं, अस्तु, अब बहुओं के सम्बन्ध में विषमता आ गई। मेंग पद में बड़ी पर आयु में छोटी थी, रूलन पद में छोटी पर आयु में बड़ी। वू को यही उचित जंचा कि अभी मामला न उठाया जाय। समय स्वयं ही समस्याओं को सुलझा देता है।

वू ने निश्चय किया कि इस मामले में चुप ही रहेंगी। वर्षगांठ के भोज की तैयारी है, सो हो जाय। लोग जो कुछ उपहार वगैरा दें, ले लिए जायं। पोते-पोतियां आयंगे, उन्हें प्यार कर लेंगी। अभी तो अपनी सास भी हैं। बिस्तर से उठ नहीं पाती हैं पर दोपहर के भोज में तो वे भी होंगी। कोई बात उठे भी तो उनसे पूछ लेने के लिये टाल दी जाय।

कई दिन से रानी वू को जब भी चालीसवीं वर्षगांठ का ध्यान आता था मन तरह-तरह के विचारों में डूब जाता; उत्तरदायित्व पूरा कर विश्राम के संतोष की आशा और साथ ही निष्क्रियता की उदासी की आशंका। जीवन का पहला भाग पूरा कर दूसरे में प्रवेश होगा। बुढ़ापे के आरम्भ की भावना; परन्तु उसके साथ ही प्रौढ़ता का आदर और अधिकार, दिनोदिन परिवार और समाज में प्रतिष्ठा से ऊंचे उठते जाना। बीतती जवानी के साथ सौन्दर्य का आकर्षण खो देने का आतंक उतना नहीं था। आयु बढ़ने के साथ-साथ गाम्भीर्य और रोब की छाया वू के चेहरे पर जरूर आ गई थी, परन्तु अपनी आयु के विचार से वे अब भी अपूर्व सुन्दरी थीं। अपरिचित मान ही नहीं सकते थे कि चालीसवां पूरा कर चुकी हैं। चढ़ती जवानी के समय के भड़कीले और फूलदार कपड़े उन्होंने स्वयं ही छोड़ दिये थे, परन्तु हलके, नीले, धानी, बादामी या मोतिया रंग के कपड़े अब उन पर और भी अधिक फब रहे थे। आकर्षण की शक्ति खोकर तिरस्कृत हो जाने या ठुकरा दिये जाने का भय नहीं था। अपने सौन्दर्य और आकर्षण का

आत्मविश्वास अक्षुण्ण था, इसीलिए वे एक नयी बात करने जा रही थीं। ईर्षा के संताप में जलती स्त्री के लिये उतना साहस सम्भव ही नहीं था।

रानी वू नाश्ता कर चुकीं। हवेली में नन्हें बच्चों को छोड़कर परिवार के शेष लोग अभी सो ही रहे थे। दाइयां नन्हे बच्चों की माओं के उठने की प्रतीक्षा में बच्चों को आंगनों में या हवेली की फुलवाड़ियों में बहला रही थीं। वू को किसी के बैठक की ओर आने की आहट जान पड़ी। कुछ विस्मय हुआ, जब तक वे स्वयं ही किसी को न बुलवातीं, बच्चों को भी उनके यहां नहीं लाया जाता था। तभी आवाज़ सुनाई दी—

"ऐसा दिन रोज़ थोड़े ही आता है। आज मेरी प्यारी सहेली की चालीसवीं वर्षगांठ है। मैं ज़रा जलदी ही आ गई तो क्या?"

वू अपनी बड़ी बहू मेंग की मां, अपनी पुरानी सहेली सेठानी कांग की आवाज़ पहचान गईं। तुरंत छोटे गोल दरवाज़े की ओर बढ़ आईं। "आइये, आइये!"—स्वागत में बाहें फैलाकर पुकारा। उन्होंने आर्किड के हलके नीले फूल चौकी पर से उठा लिये थे। वे फूल अब भी उनके हाथों में थे।

कांग अपने ढीले भारी शरीर को घसीटती चली आ रही थीं। उम्र में चाहे वे रानी वू से कुछ कम ही रही होंगी पर शरीर फैलकर बेबस हो गया था। वू अब भी छमक-छड़ी बनी थीं, पर कांग के मन में इसके लिये कोई ईर्षा नहीं थी।

कांग दूर से ही पुकार उठीं—"एलिन, बधाई है, जुग-जुग जियो! देख लो, सबसे पहले आई हूं मैं!"

"हां, सबसे पहली तुम ही हो!"—वू ने मुस्कराकर समर्थन किया, "नौकरों की गिनती थोड़े ही होती है।"

कांग त्योरियां चढ़ाकर धमकाने के लिये इंग की ओर देखकर बोलीं—"तो कोई ऐसी जल्दी थोड़े ही आ गई मैं।"

इंग कांग को रास्ते में रोक रही थी कि मालकिन नाश्ता कर लें। बीच में कोई आ जाता था तो वू खा नहीं पाती थीं। कांग की इतनी परवाह

कौन करता था? सुबह-सुबह तो अगर ज़िले का कलक्टर भी आ जाता तो इंग उसे घंटे भर के लिये टाल देती। इंग के लिये तो सुबह के समय अपनी मालकिन की शांति ही बड़ी बात थी।

वू ने कांग के फूले-फूले हाथ पकड़कर कहा—"बहुत अच्छा हुआ, तुम सबसे पहले आ गईं।" और उन्हें आर्किडकी क्यारी की ओर ले गईं। क्यारी के समीप ही मजनू के एक पेड़ के नीचे छोटे जल-कुण्ड के किनारे बांस की कुर्सियां पड़ी थीं। कुंड में नीली कुमुदनी के फूल तैर रहे थे। वू को कमल के फूल नहीं भाते थे। कमल उन्हें बहुतबड़े लगते थे और उनकी सुगन्ध भी बहुत भारी। कुमुदनी के फूलों के नीचे छोटी-छोटी सुनहरी मछलियां बिजली-सी चमका जाती थीं।

"तुम्हारे बड़े का नन्हा अब कैसा है"—वू ने पूछा। वू के चार पुत्र थे। तीन चली गई सन्तानों में भी लड़की एक ही हुई थी। कांग के ग्यारह बच्चे हुए थे, इन में से छः लड़कियां थीं। कांग की हवेली में वू-परिवार की शांति की कल्पना भी नहीं जा सकती थी। सेठानी स्वभाव की बेचारी बड़ी भली थीं परन्तु प्रबंध और व्यवस्था उन के बस के नहीं थे। हवेली में दिन भर बच्चों और नौकरों नौकरानियों का कोहराम-सा मचा रहता। वू कांग को बहुत मानती थीं दोनों की माताएं भी [illegible] थीं। जब कभी आपस में आतीं, बेटियों को भी [illegible] लौटकर घर ही माताएं तो साथ बैठीं दिन भर [illegible]भी रात में भी जुग्न[illegible]
दोनों लड़कियां आपस में बात[illegible] या खेलती रहतीं थे। बहुत विह्वल हो
सहेलपना और बहनापा हो गया [illegible] जलन सही नहीं

वू के प्रश्न से कांग के चेहरे [illegible]सन्नता उड़कर
गई। "हाल क्या पूछती हो, वैसे है।"—उन्हों[illegible] [illegible] गईं। अपनी
रही हूं, बच्चे को फिरंगियों के [illegible]ल में ले जा[illegible] [illegible]बाबत सोचने
क्या कहती हो तुम?"

"क्यों, क्या कुछ अधिक[illegible] बात लग[illegible] [illegible]ती। कांग अच्छा-
[illegible]से पूछा। [illegible]न में भी कुछ खास नहीं।

मेंग स्वभाव से ही प्रसन्न-चित्त थी। पिछले कुछ दिनों से उसकी प्रसन्नता और भी बढ़ गयी थी। नयी संतान की आशा की बात उसने अभी पति के सिवा किसी को नहीं बताई थी और न किसी को मालूम ही थी। नौकरों की बात दूसरी थी, उन्हें तो मालूम हो ही जाता है। उसकी नौकरानी ने ही उसे बताया था कि कपड़ों से हुए दो महीने हो गए। नौकरानियों को तो सब कुछ मालूम था और इस बात से बहुत उत्साहित भी थीं। पर नौकरों का क्या है, बड़े घरों में उनकी परवाह कौन करता है, ऐसे ही समझो जैसे ढोर-डंगर या काम की चीज़-बस्त।

लेना को भी मालकिन के विषय में मालूम था और खुश थी। परिवार में जितनी अधिक धायें हों, उतना ही सौभाग्य। धीरे-धीरे अपने बेटे का प्यार लेना के मन से मिटता जा रहा था। उसका पूरा स्नेह और ममता अपने दूध-बेटे पर ही उमड़ पड़ी थी। उसके अपने घर में न पेट भर खाने को था, न पहनने को और न आराम। सास बड़ी कड़वी, लोभी और सदा लेना को हवेली से मिली तनख्वाह झपटने की चिंता में रहती थी। पहले लेना को अपने घर से बहुत प्यार था। पहले-पहल जब उसे सास ने धाय की नौकरी के लिये हवेली में भेजा वह दिन-रात अपने बच्चे और घर के लिये रोती रहती, पर अब दूसरी बात थी। उसे अच्छे खाने-पहनने का चस्का लग गया। बच्चे को दूध पिलाने, खिलाने के सिवाय और कोई काम न था। दिन भर ऊंघा करती। मेंग उसे सदा अच्छा खाने-पीने और खूब सोने के लिये कहती रहती कि दूध बढ़े। लेना को वू-हवेली अच्छी क्यों न लगती और मेंग के बच्चे के लिये ममता क्यों न होती?

उस दिन सुबह लेना भी बहुत उत्साहित और प्रसन्न थी। मन चाह रहा था कि मालकिन को दूसरी संतान आने की बधाई दे, पर झिझक रही थी। बड़े आदमियों के मिजाज का क्या ठिकाना! कभी कैसी भी बात हंसकर टाल दें और कभी बेमतलब बात पर डांट दें। लेना को साहस न हुआ। वह हंस-हंसकर मेंग के मुन्ने को दुलारती रही—"आ मेरे राजा, आ मेरे लाल।"

"मैं तो चाहती हूं अबकी बिटिया ही हो। लड़के ही लड़के हों तो दुनियां कैसे चलेगी। ठीक है न मेंग ?"

इस बात का उत्तर मेंग क्या देती, उसने लज्जा से सिर झुका लिया।

× × ×

रानी वू की चालीसवीं वर्षगांठ की दावत के लिये सब लोग बैठे थे। दावत में सम्मिलित होने के लिये रानी की वृद्धा सास भी अपने आंगन से आई थीं। वृद्धा की आयु और सम्मान के विचार से उन्हें प्रथम स्थान दिया गया था। वू साहब अपनी मां के दायीं ओर और रानी वू बायीं ओर थीं। वू साहब के साथ लिआंगमो और रानी साहिबा के साथ दूसरा बेटा त्सोमो बैठा था। त्सेमो के बाद तीसरा पुत्र फेंगमो था। येन्मो अभी सात ही बरस का लड़का था। वह पिता के साथ ही रहता था। इस समय भी वह वू साहब के पास ही बैठा था। बेटों के बाद दोनों बहुयें थीं। मेंग की गोद में उस का बेटा भी था। लेना मालकिन के पीछे खड़ी थी कि बच्चा परेशान करे तो वह उसे बाहर ले जाये। वृद्धा को अपने पड़पोते के लिये गर्व तो बहुत था परन्तु वे बच्चे से परेशान भी जल्दी हो जाती थीं। रानी वू की सहिष्णुता की तो कोई सीमा ही नहीं थी। उत्तेजित होते उन्हें किसने कब देखा था ?

पारिवारिक समारोह में रानी वू बहुत प्रसन्न दिखाई दे रही थीं। परिवार के लोगों के अतिरिक्त दूसरी छः चौकियों पर भी बहुत से अतिथि थे। एक-एक चौकी पर आठ-आठ आदमियों के लिये भोजन परोसा गया था। चाचे-चाचियां, भतीजे-भतीजियां, सम्बन्धी, मित्र और उनके बच्चे भी आये थे। एक चौकी पर आदर का स्थान कांग सेठ को दिया गया।

सभी लोगों के यहाँ से रानी वू के लिये उपहार आये थे। किसी ने फूलदान भेजे थे, किसी ने खजूरों की टोकरी, किसी ने मिठाइयां, किसी ने शगुन के रेशमी रूमाल जिन पर सुनहरे अक्षरों में शुभ कामनायें लिखीं

थीं। वू साहब ने ज़री के काम किये रेशम के दो थान उपहार में दिये थे। सास ने बहुत बढ़िया चाय की दो पेटियाँ दी थीं।

परिवार की ओर से रानी को एक बहुमूल्य चित्र भेंट किया गया था। यह चित्र नगर के सब से बड़े कलाकार से बनवाया गया था। चित्र था दीर्घ जीवन की देवी का। सभी अतिथियों ने इस चित्र की बहुत प्रशंसा की थी। चित्र वास्तव में ही बहुत सुन्दर था और उसे भोज के कमरे में सामने दीवार पर लटका दिया गया था। चित्र में दीर्घ जीवन की देवी अमरत्व का प्रतीक नाशपाती का फल हाथ में लिए थीं। देवी के समीप एक सुन्दर बारहसींगा खड़ा था और देवी के सिर के चारों ओर लाल रंग के चमगादड़ उड़ रहे थे। देवी की कमर से अमृत से पूर्ण एक कुप्पी लटकी हुई थी। देवी के दूसरे हाथ में एक लाठी थी। लाठी के सिरे पर प्राण-रक्षा करने वाली जड़ी-बूटियां बँधीं थीं।

रानी साहिबा के आसन के पीछे दीवार पर लाल रंग की साटिन के टुकड़े पर काले मखमल से दीर्घ जीवन का चिह्न काटकर लटका दिया गया था। रानी का उत्फुल्ल चेहरा और चिकने काले केश लाल साटिन के आगे खूब खिल रहे थे।

प्राचीन प्रथा के अनुसार रानी की ओर से परिवार का बड़ा पुत्र लिआंगमो और बड़ी बहू मेंग सब चौकियों के पास जा-जा कर अतिथियों का स्वागत कर, आगमन के लिए धन्यवाद दे रहे थे। अतिथियों की बधाइयों का उत्तर भी रानी साहिबा की ओर से वे ही दे रह थे।

सब काम और व्यवहार बहुत शान्ति और शिष्टाचार से चल रहा था। इसमें सन्देह नहीं था कि वू-परिवार पुरातन परम्परा का आदर करता था और नए रंग-ढंग से भी परिचित था। जब-तब रानी साहिबा स्वयं भी उठकर मेहमानों की चौकियों पर नज़र डालकर देख आतीं कि सब काम उचित ढंग से हो रहा है। रानी अपने आसन से उठतीं तो अतिथि भी उनके सम्मान में उठ खड़े होते और उनसे कष्ट और चिंता न

"मैं तो चाहती हूं अबकी बिटिया ही हो। लड़के ही लड़के हों तो दुनियां कैसे चलेगी। ठीक है न मेंग ?"

इस बात का उत्तर मेंग क्या देती, उसने लज्जा से सिर झुका लिया।

× × ×

रानी वू की चालीसवीं वर्षगांठ की दावत के लिये सब लोग बैठे थे। दावत में सम्मिलित होने के लिये रानी की वृद्धा सास भी अपने आंगन से आई थीं। वृद्धा की आयु और सम्मान के विचार से उन्हें प्रथम स्थान दिया गया था। वू साहब अपनी मां के दायीं ओर और रानी वू बायीं ओर थीं। वू साहब के साथ लिआंगमो और रानी साहिबा के साथ दूसरा बेटा त्सोमो बैठा था। त्सेमो के बाद तीसरा पुत्र फेंगमो था। येन्मो अभी सात ही बरस का लड़का था। वह पिता के साथ ही रहता था। इस समय भी वह वू साहब के पास ही बैठा था। बेटों के बाद दोनों बहुयें थीं। मेंग की गोद में उस का बेटा भी था। लेना मालकिन के पीछे खड़ी थी कि बच्चा परेशान करे तो वह उसे बाहर ले जाये। वृद्धा को अपने पड़पोते के लिये गर्व तो बहुत था परन्तु वे बच्चे से परेशान भी जल्दी हो जाती थीं। रानी वू की सहिष्णुता की तो कोई सीमा ही नहीं थी। उत्तेजित होते उन्हें किसने कब देखा था ?

पारिवारिक समारोह में रानी वू बहुत प्रसन्न दिखाई दे रही थीं। परिवार के लोगों के अतिरिक्त दूसरी छः चौकियों पर भी बहुत से अतिथि थे। एक-एक चौकी पर आठ-आठ आदमियों के लिये भोजन परोसा गया था। चाचे-चाचियां, भतीजे-भतीजियां, सम्बन्धी, मित्र और उनके बच्चे भी आये थे। एक चौकी पर आदर का स्थान कांग सेठ को दिया गया।

सभी लोगों के यहाँ से रानी वू के लिये उपहार आये थे। किसी ने फूलदान भेजे थे, किसी ने खजूरों को टोकरी, किसी ने मिठाइयां, किसी ने शगुन के रेशमी रूमाल जिन पर सुनहरे अक्षरों में शुभ कामनायें लिखीं

थीं। वू साहब ने ज़री के काम किये रेशम के दो थान उपहार में दिये थे। सास ने बहुत बढ़िया चाय की दो पेटियाँ दी थीं।

परिवार की ओर से रानी को एक बहुमूल्य चित्र भेंट किया गया था। यह चित्र नगर के सब से बड़े कलाकार से बनवाया गया था। चित्र था दीर्घ जीवन की देवी का। सभी अतिथियों ने इस चित्र की बहुत प्रशंसा की थी। चित्र वास्तव में ही बहुत सुन्दर था और उसे भोज के कमरे में सामने दीवार पर लटका दिया गया था। चित्र में दीर्घ जीवन की देवी अमरत्व का प्रतीक नाशपाती का फल हाथ में लिए थीं। देवी के समीप एक सुन्दर बारहसींगा खड़ा था और देवी के सिर के चारों ओर लाल रंग के चमगादड़ उड़ रहे थे। देवी की कमर से अमृत से पूर्ण एक कुप्पी लटकी हुई थी। देवी के दूसरे हाथ में एक लाठी थी। लाठी के सिरे पर प्राण-रक्षा करने वाली जड़ी-बूटियां बँधीं थीं।

रानी साहिबा के आसन के पीछे दीवार पर लाल रंग की साटिन के टुकड़े पर काले मखमल से दीर्घ जीवन का चिह्न काटकर लटका दिया गया था। रानी का उत्फुल्ल चेहरा और चिकने काले केश लाल साटिन के आगे खूब खिल रहे थे।

प्राचीन प्रथा के अनुसार रानी की ओर से परिवार का बड़ा पुत्र लिआंगमो और बड़ी बहू मेंग सब चौकियों के पास जा-जा कर अतिथियों का स्वागत कर, आगमन के लिए धन्यवाद दे रहे थे। अतिथियों की बधाइयों का उत्तर भी रानी साहिबा की ओर से वे ही दे रह थे।

सब काम और व्यवहार बहुत शान्ति और शिष्टाचार से चल रहा था। इसमें सन्देह नहीं था कि वू-परिवार पुरातन परम्परा का आदर करता था और नए रंग-ढंग से भी परिचित था। जब-तब रानी साहिबा स्वयं भी उठकर मेहमानों की चौकियों पर नज़र डालकर देख आतीं कि सब काम उचित ढंग से हो रहा है। रानी अपने आसन से उठतीं तो अतिथि भी उनके सम्मान में उठ खड़े होते और उनसे कष्ट और चिंता न

कर बैठ जाने का अनुरोध करने लगते। रानी अतिथियों से पहले बैठ जाने का अनुरोध करतीं।

रानी दो बार विनय और अतिथियों के प्रति सत्कार के लिये उठ चुकी थीं। वे तीसरी बार उठने लगीं तो वू साहब ने आगे झुककर अनुरोध किया—"न, न, लिआंगमो की मां, अब तुम बैठो तकलीफ़ न करो। शेष मैं स्वयं देख लूंगा। तुम चिंता न करो।"

रानी वू ने ज़रा सिर झुकाकर झीनी-सी मुस्कान और कृतज्ञता भरी नज़र से पल भर पति की ओर देखा, तभी उनका ध्यान वृद्धा सास की ओर गया। वृद्धा मुर्गी का एक बहुत बड़ा टुकड़ा उठाकर मुंह में लेने का यत्न कर रहीं थीं। टुकड़ा इतना बड़ा था कि उनके मुंह में आ नहीं सकता था। शोरवा ठुड्डी पर बह गया था और गाउन पर भी टपक रहा था। वू ने तुरन्त अपनी कमचियों से मुर्गी के टुकड़े को सास के मुंह के सामने सम्भाल लिया और खा सकने में उन्हें सहायता देने लगीं। सास मुंह का कौर खतम कर पाईं तो बिगड़कर पुकार बैठी—"इंग!"

इंग मालकिन की सेवा के लिये सदा ही समीप प्रस्तुत रहती थी। तुरन्त वृद्धा के सामने आ गयी। वृद्धा ने क्रोध में डांटा—"उस गधे, तेरे मर्द का दिमाग़ खराब हो गया है? मुर्गी के इतने बड़े-बड़े टुकड़े पकाकर रख देता है। क्या समझता है बेवक़ूफ़, हम आदमी हैं या शेर-चीते?"

"अम्माजी, मैं उनसे कह दूंगी।" इंग ने पति के अपराध के लिये वृद्धा के सामने सिर झुका दिया।

वृद्धा को जितना क्रोध शोरवा ठुड्डी पर बह जाने से आया था उससे अधिक संतोप स्वादिस्ट मांस से मिला था। वे अपनी ऊंची और भर्राई हुई आवाज़ में इधर-उधर देखकर बात करने लगीं—

"लोग कहते हैं, फिरंगी साबित मुर्गियां और सूअर या भेड़ का चार-पांच सेर का पूरा का पूरा टुकड़ा भूनकर मेज़ पर रख लेते हैं और छुरियों से गोश्त काट-काट कर खाते जाते हैं। बाबा रे! कैसे जाहिल

होंगे! हमने देखा तो नहीं, सुना है कि फिरंगी हाथ से नहीं खाते। छुरियों और सीखों से छेद-छेद कर गोश्त मुंह में लेकर खा जाते हैं।"

सभी लोगों ने हंसकर वृद्धा का समर्थन किया। वू साहब बोले--"हां ठीक तो है, अम्माजी ठीक तो कह रही हैं।" साहब मां की बात कभी नहीं टोकते थे। वृद्धा की बात से बनता बिगड़ता तो कुछ था नहीं, फिर उन्हें खिन्न करने से लाभ क्या होता ?

इसी समय परोसनेवाला, बहुत बड़ा थाल आठ मेवों के साथ पके मीठे पुलाव का लेकर भीतर आया। मेहमानों ने मुस्कराकर प्रसन्नता प्रकट की। मीठा पुलाव आने का अर्थ था कि दावत अभी आधे तक पहुंची है। इंग को पर्दे की आड़ में बाहर खड़ा बावरची, अपना पति, दिखाई दिया; समझ गई कि उसका पति मेहमानों से अपनी रसायन की प्रशंसा सुनने के लोभ में आया है। रानी की दृष्टि भी आड़ में खड़े बावरची पर पड़ गई। उन्होंने इंग की ओर देखा। इंग ने मालकिन की बात सुनने के लिये सिर झुका दिया।

"बावरची को भीतर बुला लो।"—रानी बोलीं। इंग का चेहरा गर्व से चमक उठा, परन्तु उसने पति के प्रति अभिमान न करने के शिष्टाचार से उत्तर दिया—

"मालकिन क्या तकलीफ़ करेंगी; वह क्या करेगा यहां आकर।"

"तुम बुलाओ तो।"

इंग ने मुंह बनाकर पति को भीतर आने का संकेत किया। मानो व्यर्थ ही उसे भीतर बुलाया जा रहा हो। बावरची [illegible] सामने पेश हुआ। उसने चिकनाई और मसालों से भरे हाथ अपने ऐप्रन से पोंछ लिये। ऐप्रन बिलकुल चीकट हो रहा था। बावरची को अपने चीकट ऐप्रन के लिये संतोष और गर्व था। वह कोई मामूली घर का बावरची तो था नहीं कि उसके ऐप्रन पर चिकनाई और मसाले के दाग़ कम होते।

"मेवों का मीठा पुलाव तो तुमने कमाल का बनाया है।"--रानी साहिबा ने प्रशंसा की। खाना तो तुम हमेशा ही बढ़िया बनाते हो, लेकिन

आज तो बहुत ही अच्छा है। तुम्हारी इस सेवा और मेहनत का हमें बहुत ख्याल है। शाम को तुम फिर आना।"

उसे मालूम ही था कि ऐसे अवसरों पर नौकरों को इनाम-इकराम दिये ही जाते हैं, परन्तु उसने विनय से सिर झुकाकर निवेदन किया—"हुजूर, सेवक किस लायक है? आप लोगों के लायक खाना बनाना क्या जानूं। जैसे-तैसे खिदमत करता हूं। आपकी कृपा है।"

"अच्छा, अब जा!"—इंग ने धीमे से, परन्तु सब को सुनाकर पति को धमकाया। मानो ऐसे पति के लिये उसे कोई अभिमान नहीं, परन्तु आंखें गर्व से चमक रहीं थीं।

इस बार वू साहब अपने आसन से उठे और मेहमानों के समीप जाकर जैसा-तैसा बन सका खाना, कृपाकर स्वीकार करने का अनुरोध करने लगे। रानी की नजरें उन की ओर ही थीं। वू साहब उस चौकी पर भी पहुंचे जहां काग-परिवार बैठा था। कांग की तीसरी सुन्दर बेटी—मेंग की छोटी बहिन—मां के पास बैठी थी। रानी ध्यान से देख रहीं थीं कि साहब उस लड़की की ओर ध्यान देते हैं या नहीं।

"फिरनी, फिरनी!"—वृद्धा सास चिल्ला उठीं। रानी साहिबा ने तुरन्त अपनी चौड़ी आस्तीन सम्भालकर चांदी के एक बड़े चम्मच से सास के प्याले में फिरनी भर दी।

"चम्मच, मेरा चम्मच कहां गया!"—सास फिर चिल्ला उठीं।

रानी साहिबा ने तुरन्त एक छोटा चम्मच सास के झुर्रियों से भरे हाथ में दे दिया।

अतिथि बढ़िया मीठे पुलाव के स्वाद में मग्न थे। रानी की नजरें साहब को भांप रहीं थीं। वे अपनी बहू मेंग की छोटी बहन के समीप जाकर ठिठक गये थे। लड़की नये रंग-ढंग की थी। केश गरदन तक छांटकर घुंघराले बनाये हुए थे, जैसे विलायती लड़कियां रखतीं हैं। जब अभी शंघाई शत्रु के हाथ में नहीं गया था तो यह लड़की वहां बरस भर स्कूल में पढ़ी

थी। अब इस देहाती नगर में उसका मन नहीं लगता था। वह मां-बाप के लिये कोई न कोई मुसीबत खड़ी किये रहती थी।

रानी ने देखा, वू साहब ने लड़की से कुछ कहा। लड़की हाज़िर जवाब थी। वू साहब हंसकर आगे बढ़ गये थे। अपना ध्यान भोजन की ओर दिखाने के लिये रानी ने एक चम्मच पुलाव ले लिया। साहब अपनी चौकी पर लौटे तो रानी ने प्यार से मुस्कराकर उनकी ओर देखा। "अब आप बैठ जाइयै, इतनी तकलीफ़ हुई आप को!"

दावत चलती रही। पुलाव के बाद कई तरह के मांस परोसे गए और फिर छ: तरह की सेवैयां प्यालों में लाई गई। वर्षगांठ का भोज था, इसलिये बावरची ने भात न बनाकर महीन और खूब लम्बी सेवैयां ही तैयार की थीं। सेवैयां चीन में दीर्घ जीवन का प्रतीक मानी जातीं हैं, इसलिये जन्म-दिन के भोज में अवश्य रहतीं हैं। रानी आहार हलका और कम ही करती थीं। मांस उन्होंने नहीं लिये थे। परन्तु वर्षगांठ के अवसर पर सेवैयां खाना तो आवश्यक था। चतुर बावरची ने सेवैयां इतनी लम्बी बनाई थीं कि उनका ओर-छोर न मिलता था। रानी ने बड़ी सुघड़ता से सेवैयों को अपनी भोजन की कमचियों पर लपेट लिया।

वृद्धा में इतना संतोष कहां था। उन्होंने सेवैयों का प्याला बायें हाथ से होठों तक उठा लिया। कमचियों से सेवैयां होठों में ले बच्चों की तरह मुंह में भरने लगीं। उन्हें अधिक खा जाने का व्यसन-सा था। खाते-खाते थककर कहती जातीं—"आज मेरी तबियत ज़रूर खराब हो जायगी, पर क्या करूँ; बेटी तुम्हारी चालीसवीं वर्षगांठ रोज़ थोड़े ही आयगी।"

"नहीं अम्माजी, अभी आपने खाया ही क्या है, कुछ तो और लीजिये!"—रानी वू सान्त्वना देती जातीं।

अतिथि संतुष्ट होकर एक-एक कर उठने लगे। शुभ कामनाओं के लिये पान करने का अवसर आया। अतिथि छोटे-छोटे प्यालों में शराब लेकर खड़े हो गए और शुभ कामनायें कर प्याले पीने लगे। रानी चुप रहीं। अधिक बोलने की ओर उनकी प्रवृत्ति नहीं थी। वू साहब अतिथियों की

शुभ कामनायें स्वीकार कर और उन्हें धन्यवाद देकर उनके साथ पीते रहे। इस कोलाहल में कांग सेठानी ने तिरछी नज़रों से रानी बू की ओर देखकर एक छोटा प्याला उठाया। रानी ने भी एक छोटा प्याला ले लिया। दोनों ने किसी रहस्य के प्रति परस्पर अनुमति में प्याले पी लिये। वृद्धा अब तक सामर्थ्य भर खा चुकी थीं और थककर सहारे के लिये कुर्सी की पीठ पर सिर टिका दिया था। उड़ती-उड़ती नज़रों से उन्होंने अपने परिवार के लोगों को देखा और बोलीं—"अरे लिआंगमो मुरझाया हुआ क्यों लग रहा है ?"

सब की आँखें लिआंगमो की ओर फिर गयीं। नौजवान का चेहरा कुछ मुरझाया-सा ज़रूर लग रहा था, परन्तु उसने मुस्कराकर कहा—"नहीं, बड़ी अम्माजी, अच्छा भला हूँ।"

मेंग ने चिंता से पति की ओर देखकर कहा—"नहीं, सुबह से तुम कुछ उदास-से तो हो, क्या बात है ?"

मेंग की बात सुन दूसरे भाई और बहुएँ सभी लिआंगमो की ओर देखने लगे। रानी ने यह सब देखा परन्तु चुप रहीं। वह जानती थीं कि लिआंगमो सुबह से उनकी बात सुनकर ही उदास है। लिआंगमो ने अपनी उदासी प्रकट हो जाने के अपराध के लिये क्षमा-सी माँगते हुए माँ की ओर देखा। माँ ने मुस्कराकर निग़ाहें नीची कर लीं। रानी बू की नज़रें छोटे बेटे त्सेमो की बहू की नज़रों से मिलीं। आँखें चार होते ही रानी रुलन की तीखी निगाहें भाँप गईं। रुलन बहुत तेज़ और दूर की कौड़ी लाने वाली थी। भोज में प्रायः वह चुप ही रही थी, परन्तु देख सब कुछ रही थी। लिआंगमो के चेहरे का भाव, माँ-बेटे की निग़ाहों का मिलना भी उससे बच नहीं पाया था। त्सेमो का ध्यान इन सब बातों की ओर नहीं था। वह था स्वभाव का बेपरवाह और अपने में मग्न जीव। वह भोज में इतनी देर तक बैठने से उकता गया था। कुर्सी पर करवटें ले रहा था कि कब उठ पायगा।

मेहमानों का कोई एक बच्चा बहुत अधिक खा गया था। बहुत ज़ोर से वमन कर बैठा। नौकर सफ़ाई करने के लिये परेशानी में दौड़ पड़े।

"अरे क्या है, एक कुत्ते को ले आओ न।"—कांग सेठानी ने सुझाया।

डंग दुर्घटना के स्थान पर पहुँच चुकी थी। उसने कांग की ओर देखकर क्षमा माँगी—"माफ़ कीजिये हुजूर, रानी साहिबा खाना खाने की मेज़ के पास कुत्ता लाने से नाराज़ होंगीं।"

"क्या करती हो अम्मी !"—कांग सेठानी की तीसरी सुन्दरी बेटी ने मुंह बनाकर विरोध किया, "क्या पुरानी गन्दी बातें करती हो। ऐसा आजकल कौन करता है? तुम घर पर भी ऐसा करती हो तो मुझे बड़ी शरम आती है।"

"अच्छा अच्छा," सेठानी ने बेटी को धमकाया, "चुप रह, यहाँ बकने की क्या ज़रूरत ?"

"ये लड़कियाँ बहुत बोलने लगी हैं।"—कांग सेठ ने भी इतराज़ किया। परन्तु लीनी की ओर देखा तो मुसकरा भी दिया ! लीनी पर उनका बहुत प्रेम था। वह उन की सब से सुन्दर बेटी थी।

वृद्धा सास नौकरानी का कंधा पकड़कर उठ खड़ी हुईं। "हम बहुत थक गये, ज़रा लेट जायं।"—उन्होंने कहा, "हमारी तबियत खराब हो रही है जाकर आराम करें।"

रानी ने उठकर समर्थन किया—"हाँ अम्माजी, आप अब आराम कीजिये। हम लोग अतिथियों के साथ दूसरे कमरे में बैठ रहे हैं।"

सब अतिथि वृद्धा के आदर के लिये खड़े हो गए। दो नौकरानियाँ वृद्धा को सहारा देती हुई ले गईं। रानी साहिबा ने साहब की ओर देखकर अनुरोध किया—"आप अतिथियों को दीवानख़ाने में ले चलिये। महिलायें मेरे कमरे में आ जायंगी।" वे स्त्रियों को लेकर अपनी बैठक की ओर चल दीं। पुरुष राजा साहब के साथ दीवानख़ाने की ओर चल दिये। दाइयाँ ऊँघते, सोते बच्चों को लेकर आँगन और फुलवारी की ओर चलीं गईं।

रानी बैठक के दरवाज़े पर ज़रा ठिठकीं। दाई बीमार बच्चे को लिये पीछे-पीछे आ रही थी। बच्चे को पुचकारकर उन्होंने कहा—"उसे फुलवारी वाले ठंडे कमरे में ले जाओ। वहाँ ठंड है, उसे नींद आ जायगी।" बच्चा रो रहा था, परन्तु उनका वत्सल स्वर सुनकर चुप हो गया।

भोज तो समाप्त हो चुका था परन्तु रानी अब भी शिष्टाचार के संयम में प्रायः चुप ही थीं। वे बोलती ही कम थीं, इसलिये उनकी चुप्पी की ओर ध्यान नहीं जा रहा था। स्त्रियों में बात-चीत चल रही थी। किसी प्रश्न का निपटारा करने की आवश्यकता होती तभी वह रानी वू की ओर देखतीं। सभी जानते थे कि इतनी बड़ी हवेली और परिवार की समस्याओं का निबटारा वे ही करतीं थीं। और रानी साहिबा संक्षेप में निर्णय दे देतीं। उस समय भी उनके तरल, कोमल स्वर में उत्तेजना न आती।

मनोरंजन के लिए भांड़ों और नक्कालों की टोली भी बुलाई गई थी। बच्चे उनकी नकलें और खेल देखने में मग्न थे। अतिथि भी बरसात से पहले की चुनी हुई सुगन्धित चाय की चुस्कियाँ लेते इस मनोरंजन को देख रहे थे। बहुओं की उपस्थिति में प्रौढ़ाओं के लिये निस्संकोच बात-चीत करना संभव नहीं था। इसलिए कांग सेठानी नींद का ठुमका ले रही थीं। रानी वू ने एक बार इंग को बुलाकर कहा—"जाओ ज़रा देख आओ, अम्मा जी की तबियत अब कैसी है।"

इंग हँसती हुई लौटी। "अम्माजी का खाया-पिया सब उलट गया।" नौकरानी ने बताया, "पर कह रही हैं कि दावत का बड़ा मज़ा आया।"

इंग की बात सुन सब हँस पड़ीं। हँसी से सेठानी कांग की नींद उचट गयी। "ओफ़ बहुत देर हो गई, अब घर चलें।" सेठानी ने रानी साहिबा की ओर देखा। "अब तुम भी आराम करो न बहन, अब तुम्हारी उमर आराम करने की है।"

अतिथि महिलायें एक-एक करके उठने लगीं। रानी वू ने सभी अतिथियों को बारी-बारी से उठकर बिदा किया। अतिथि हवेली के नौकरों-चाकरों के लिये मिठाइयाँ, उपहार और इनाम-इकरार दे गये थे। इंग यह सब चीज़ें ले आई। नौकर बारी-बारी से पेश हुए। नौकरों ने झुक-झुक कर सलामी दी। रानी साहिबा उन्हें इनाम देकर दो-चार शब्द आशीर्वाद और सांत्वना के भी कहती जातीं। नौकर भी रसोई घर में अपनी दावत

रानी वू बैठक में अकेली रह गईं। कुछ पल शिथिल हो विश्राम के लिये लेट गयीं। उनके शरीर की कोमल परन्तु तनी हुई मांसपेशियां, कोमल ग्रीवा, स्तन और कमर कुछ पल के लिये प्रौढ़ता से शिथिल हो गए। उन्होंने अपने कोमल गोल कंधों को झटका दिया और सीधी होकर बैठ गईं। अभी विश्राम का समय नहीं था।

× × ×

रानी वू एक घंटे विश्राम करने के बाद उठ खड़ीं हुईं। अपनी बैठक के सात चक्कर लगाये और फिर खिड़की के सामने जा बाहर देखने लगीं। खिड़की खूब बड़ी थी। बस्तेदार किवाड़ बाहर की ओर खुले हुए थे। खिड़की से फुलवारी दिखाई दे रही थी। सुबह उसी फुलवारी में रानी साहिबा सेठानी कांग और लिआंगमो से बात कर रहीं थीं। उन्हें याद आया, उनकी बात सुनकर दोनों ही कैसे विस्मय से घबरा गये। उनके कोमल होठों पर फीकी मुस्कान आ गई।

सामने के गोल दरवाज़े से इंग भीतर आई। मालकिन की मुस्कराहट की ओर उसका ध्यान गया, और बोल पड़ी—"मालकिन इस चांदनी में तो तुम सचमुच छोकरी ही लग रही हो।"

रानी वू ने इंग की बात की ओर ध्यान नहीं दिया। खिड़की से हटकर सिंगार की मेज के सामने कुर्सी पर बैठ गईं। इंग ने आकर उनके कपड़े बदलवा दिये, श्वेत महीन रेशम के भीतरी कपड़े भी। मालकिन के लम्बे केश खोलकर वह चंदन के महीन कंघे से कंघी करने लगी। सामने बड़े आइने में वू का शांत चेहरा दिखाई दे रहा था। चेहरे पर बड़ी-बड़ी काली आंखें। आंखों में आज और भी अधिक चमक थी।

"मालकिन थक गयी होंगी?"—इंग ने पूछा।

"नहीं तो"—वू ने उत्तर दिया।

इंग ने आग्रह किया—"नहीं मालकिन, आज दिन भर आपको आराम कहां मिला। चालीस की हो गईं। अब तो आपको आराम चाहिये ही,

हवेली और दुकानों की देख-भाल कुंवर साहब कर सकते हैं। रसद और रसोइयां बड़ी बहू देख लेंगी। छोटी बहू नौकरों-चाकरों पर आंख रख सकती हैं। अब आपको तो चाहिये कि आराम से अपने आंगन में लेटकर कुछ पढ़ लिया करें या फूलों से दिल बहलाया करें। कभी पोते-पोतियों की खैर-खबर ले ली।"

"ठीक ही कह रही हो तुम!"—वू ने स्वीकार किया, "हां, हम ऐसा ही कुछ सोच रहे हैं। इंग, आज राजा साहब से कहेंगे कि एक दूसरी जवान लड़की से ब्याह कर लें।"

रानी वू ने बात इतने साधारण ढंग से कही थी, मानों उसमें विस्मय और घबराहट का कोई कारण नहीं था, परन्तु इंग क्षण भर के लिये वू के केशों को सहारे के लिये पकड़े स्तब्ध रह गई। कंघी का चलना रुक गया।

"खैर, इस बात से तुम्हे क्या?"—वू बोलीं। इंग जल्दी-जल्दी कंघी करने लगी। "केश क्यों खेंच रही हो?"—वू ने टोका।

इंग के हाथ से कंघी फर्श पर गिर पड़ी। "मैं किसी दूसरी मालकिन की खिदमत नहीं करूंगी, कहे देती हूं।"—इंग ने कह डाला।

"तुझसे कौन पूछ रहा है?"—रानी साहिबा बोलीं।

इंग रानी साहिबा के समीप फर्श पर घुटने टेककर बैठ गई। दोनों हाथों में मुंह छिपा फूट-फूट कर रो पड़ी। आंसू बह गए। उत्सव के दिन पहने साटिन के नये कुर्ते के दामन से आंसू पोंछकर इंग ने पूछा—"मालकिन, क्या राजा साहब दूसरा ब्याह करने को कह रहे हैं? आपका-सा रूप और आपकी-सी नेक मालकिन उन्हें दुनियां में कहां मिलेगी। आप ही की बदौलत तो यह सब कुछ चल रहा है........."

"हम ही तो कह रही हैं।"—वू बोलीं, "उठो क्या कर रही हो। साहब आ जायं तो यही समझेंगे कि मैंने तुम्हें पीटा है........."

"हुजूर के लिये ऐसी बात कौन सोच सकता है?"—इंग ने हिचकी भरते हुए कहा, "आपने तो कभी बदन का खून चूसते मच्छर को भी अपने हाथ से नहीं मारा।" इंग ने कंघी फर्श से उठा ली और डबडबायी आंखों से ही

मालकिन के केश संवारने लगी। रानी ने इंग को समझाया—"सुनो, तुम्हें पहले ही बता रही हूं कि तुम दूसरे नौकरों-[illegible] भी समझा दो कि जब नई बहू आये तो कोई शोर-गुल या तूफ़ान न उठे। कोई कुछ कहे-सुने नहीं, और न किसी को दोष दे······"

"कौन, कहां से आ रही है?"—इंग ने पूछा।

"अभी क्या कह सकते हैं।"—वू ने उत्तर दिया।

"कब कर रहे हैं, शादी?"—इंग ने फिर पूछा।

"अभी तो यह नहीं सोचा,"—वू ने समझाया, "लेकिन जो भी कोई आये तो उसके साथ घर के आदमी की तरह आदर का व्यवहार किया जाय। हमारे बाद उसी को समझना। बहुओं को भी उसकी इज्ज़त करनी चाहिये। कोई एक्ट्रेस या नाचने-गानेवाली नहीं होगी; अच्छी खानदानी लड़की ही होगी। अदब-कायदे का पूरा ख्याल रखा जाना चाहिये। साहब या नई मालकिन के बारे में कोई उल्टी-सीधी बात न हो। यह ब्याह हम ही करा रहीं हैं।"

इंग चुप न रह सकी। गिड़गिड़ाकर बोली—"हुजूर की खिदमत में बांदी की उमर बीत गई। मुझे तो बताइए, यह क्या कर रही हैं?"

"तुझे क्या बतायें; यही ठीक है।"—रानी वू ने धीमे से उत्तर दे दिया।

इंग चुप रह गई। मालकिन के केशों में चन्दन का तेल लगा चोटियाँ गूंथ, स्नानागार में जाने के लिए केशों को समेट दिया और मालकिन के स्नान का प्रबन्ध करने लगी। स्नानागार के बाहर खुलनेवाले दरवाज़े से दो भिश्ती काठ की बड़ी-बड़ी बालटियों में गर्म और ठंडा पानी लेकर आए। इंग ने चीनी मिट्टी की हरे रंग की बड़ी-सी नांद में गर्म और ठंडा पानी मिलवाकर अपने बदन पर डालकर देखा। भिश्ती बाहर चले गए। इंग ने एक बोतल से पानी में सुगन्ध डाल दी। साबुन की नई बटिया और रेशमी तौलिए यथास्थान रख दिए, और जाकर मालकिन को सूचना दी—"हुजर गुस्ल तैयार है।"

रानी ने भीतर के अंतिम महीन वस्त्र भी उतार दिए और स्नानागर की ओर चलीं। उनका शरीर अठारह वर्ष की लड़की की तरह कोमल और छरहरा लग रहा था। इंग ने हाथ का सहारा देकर उन्हें गुनगुने पानी की नांद में बैठा दिया और सावधानी से नहलाने लगी। जैसे किसी सुकुमार बच्चे का शरीर धो रही हो। दर्पण की तरह स्वच्छ जल से भरी हरे रंग की नांद में उनका कंधों तक डूबा गोरा शरीर हाथी दांत की मूर्ति जैसा लग रहा था। जल में बैठे-बैठे अपने शरीर को देख वह सोचने लगीं, उनके शरीर की कोमलता, सौन्दर्य और सुघड़ता में कोई अन्तर न आया था; न शिथिलता, न भारीपन। सात सन्तानें तो हुई थीं, परन्तु साहब ने उन्हें किसी सन्तान को उनके स्तनों को मुंह नहीं लगाने दिया था। जल में डूबे स्तन अब भी कमल की कलियों के आकार और रंग के थे।

वू जल से बाहर निकलीं तो इंग ने उनका शरीर रेशमी तौलियों में लपेटकर सुखा दिया और फिर रात में पहिनने के ताज़े रेशमी कपड़े पहना दिए। कुर्सी पर बैठाकर उनके हाथ-पांव के नखों को संवार दिया। स्नान समाप्त हो जाने पर इंग ने सेज-कमरे का दरवाज़ा खोल दिया। साहब अभी नहीं आए थे। वे सदा ही देर से इंग के चले जाने के बाद ही आते थे; कभी-कभी तो रात भर भी न आते; पर ऐसा कभी ही होता। रानी रेशमी मसहरी से ढकी ऊंची सेज के नीचे साथ रखी सुन्दर कामदार चौकी पर पांव रख सेज पर चली गई।

इंग ने पूछा—"हुजूर, मसहरी गिरा दूं; बाहर चांदनी का उजाला बहुत तेज़ है।"

"नहीं रहने दो"—वू ने उत्तर दिया, "चांदनी अच्छी लग रही है।"

इंग ने मसहरी के रेशमी परदे चांदी की महीन जंजीरों में अटके रहने दिए। सेज के समीप की गोल मेज़ पर उसने ताज़ी चाय से भरी चायदानी और चांदी का तम्बाकू पीने का पाइप भी रख दिया।

रानी कभी नींद खुल जाने पर तम्बाकू पी लेती थीं। जलती मोमबत्ती के साथ इंग ने माचिस की डिबिया भी रख दी।

"अच्छा अब तू जा, आराम कर।"--वू बोलीं। इंग सिर झुकाकर बाहर चली गई।

सरदी नहीं थी। रानी वू रेशमी चादर पर कच्चे रेशम की हलकी रजाई ओढ़े लेटी हुई थीं। शयनागार की बड़ी खिड़की से आती चांदनी में सेज के सामने की दीवार चमक रही थी। चांदनी ऐसी उजली थी कि सामने दीवार पर लटके चित्र की रूप-रेखा स्पष्ट दिखलाई दे रही थी। देखने में साधारण ही था परन्तु कुशल कलाकार की कृति थी। चित्रकार ने गिनी-चुनी रेखाओं में ऊंचे पर्वत-शिखर पर चढ़ने के लिए जूझते मनुष्य की अस्पष्ट आकृति बना दी थी। यह निश्चय करना कठिन था कि चढ़ने वाला नर है अथवा नारी। वह केवल मनुष्य का प्रतीक था।

वू प्रायः ही टकटकी बांधकर इस चित्र को देखती रहतीं थीं। कभी जान पड़ता कि आरोही बहुत ऊंचा पहुंच गया है। कभी जान पड़ता कि वह फिसलकर कई मील नीचे आ गया है। वू जानतीं थीं कि यह भ्रम खिड़की से आते प्रकाश के ऊंचे-नीचे होने के कारण ही हो जाता है। उस रात खिड़की से आते प्रकाश ने चित्र को आधा-आध काट दिया था। आरोही लगभग शिखर तक पहुंचा हुआ जान पड़ता था। वू चित्र की ओर देखकर सोच रहीं थीं, आज आरोही शिखर तक पहुंचा जान पड़ रहा है; जान ही तो पड़ रहा है, है तो वह वहीं जहां सदा से है, न आगे न पीछे।

वू लेटी हुई थीं। वे न कुछ सोच रहीं थीं और न याद ही कर रहीं थीं। केवल सजीव होने की अनुभूति-मात्र थीं। साहब के आने की चिन्ता अथवा प्रतीक्षा भी नहीं थी। आ गए तो भला न आ सके तो फिर सही। उतावली क्या है, बात फिर हो जायगी। स्वयं आया अवसर ही उचित होता है, उतावली तो केवल बात को बिगाड़ती है।

रानी को आंगन से साहब के क़दमों की आहट सुनाई दी। आहट आंगन से बाहर के कमरे में, फिर बैठक में पहुंची। शयनागार का द्वार खुला और साहब दिखाई दिए। रानी के नाजुक नथुनों ने गरम मदिरा की गन्ध अनुभव की। वे समझ गईं कि साहब खूब पिए हैं। उनके पीने से रानी को कभी

परेशानी नहीं हुई थी। साहब पीने में बह नहीं जाते थे, उस संध्या तो अतिथियों के साथ पीना ही था। दावत के बाद तो यह होता ही है। साहब मुंह में थमा पाइप मेज़ पर रखने के लिए झुके, लेकिन सहसा रुक गए।

"क्या बहुत थकी हुई हो ?"—साहब ने पूछा।

"नहीं तो, बिलकुल भी नहीं।"—वू ने उत्तर दिया।

राजा साहब ने पाइप मेज़ पर रखकर चाँदी की जंजीरों से अटके मसहरी के परदे गिरा दिए और सेज पर आ गए।

चौबीस वर्ष से जीवन का एक अभ्यास और क्रम चला आ रहा था। रानी ने यह क्रम समाप्त कर देने का निश्चय कर लिया था। साहब के साथ यह अन्तिम रात्रि थी। भविष्य के विषय में ख्याल आया कि सम्भवतः राजा साहब को उनका विचार अच्छा न लगे। ऐसी अवस्था में उन्हें समझाना पड़ेगा। यदि राजा साहब को बात अच्छी लगी तो झंझट ही क्या! यदि उन्होंने ज़िद्द ही बाँध ली तो अवश्य कुछ परेशानी होगी। पर मानेंगे क्यों नहीं, आखिर मान ही जायंगे।

रानी को इस बात का ध्यान था कि उस रात कोई असाधारण बात या व्यवहार न हो, न उदासी, न अधिक उत्सुकता। किसी बात की कमी न खटके और न ही जान पड़े कि वह बही जा रहीं हैं। उनकी प्रकृति उचित संतोष की सीमा लांघकर अति से ऊब की ओर कभी नहीं जाती थी। अलबत्ता साहब का व्यवहार कुछ दूसरा-सा लग रहा था; उखड़ा हुआ-सा।

रानी चौड़े तकिए पर सिर रक्खे लेटीं थीं। वू साहब ने उनकी आँखों में आँखें डालकर कहा—"क्या बात है ? आज तुम बहुत ही सुन्दर लग रही हो। दूसरे लोग भी यही कह रहे थे।" रानी के पतले होठों पर अभ्यस्त मुस्कान खेल गई। उनकी आँखों में नित्य की तरलता थी, परन्तु साहब की आंखें गहरी हो रहीं थीं। समीप मेज़ पर जलती मोमबत्ती के मध्यम प्रकाश में उनकी आँखों की सुर्खी कुछ अधिक ही जान पड़ रही थी। रानी ने आँखें मूंद लीं, हृदय धड़कने लगा। ख्याल आया अपने निश्चय के लिए पछताना तो नहीं पड़ेगा………।

दो घंटे बाद भी वे सेज पर उसी प्रकार लेटी हुईं थीं। उनका शरीर डाल से तुरन्त तोड़े फूल की तरह ताज़ा और सुगन्धित था। वही प्रश्न मन में बार-बार उठ रहा था। दो घंटे तक सोचकर उन्होंने निश्चय कर लिया, नहीं, पछताऊँगी नहीं।

साहब के सो जाने पर रानी आहिस्ता से उठीं और स्नानागार में चली गईं। एक बार फिर ठंडे जल से स्नान किया। स्नानागार से आकर वह सेज पर नहीं गईं। मेज़ पर से छोटा पाइप ले तम्बाकू भर सुलगा लिया और खिड़की के सामने जाकर पाइप पीती हुई आकाश की ओर देखती रहीं। चांद सामने हवेली की बड़ी इमारत की छत को छू रहा था। कुछ पल के लिए ही वह आँखों के सामने था। रानी ने संतोष और निश्चय से एक गहरी साँस ली, इस कमरे में यह अन्तिम रात है, अपने लिए दूसरी जगह भी उन्होंने निश्चित कर ली थी; अपने स्वर्गीय ससुर के आँगन में रहने का निश्चय कर लिया था। कह देगीं, वहाँ रहने से वे दिन या रात में सभी समय वृद्धा की देख-भाल कर सकेंगी। ससुर के कमरे और आँगन अच्छे, बड़े और सुन्दर थे। वहाँ एकान्त में वे अपने जीवन का नया क्रम शान्ति से निबाह सकेंगी।

सेज पर लेटे हुए साहब ने एक अंगड़ाई लेकर आँखें खोल दीं। रानी की ओर देखकर बोले—"तुम्हें नीद नहीं आ रही ? दिन भर की थकी हो तुम लेटो। मैं अपने कमरे में सो रहूँगा।" ऐसी बात वू साहब प्रायः ही कहते थे। विनय उनका स्वभाव था, कारोबार में हो अथवा स्नेह में। वू साहब की बात के उत्तर में रानी उत्तर देतीं थीं—"तुम क्यों जाओगे; लेटो ना, मैं सो तो रहीं हूँ।"

परन्तु उस रात उनका उत्तर दूसरा ही था। बोलीं—"बहुत अच्छा, हाँ मैं थक गईं हूँ, अब सोऊँगी।"

रानी का उत्तर सुन राजा साहब भौंचक रह गए। तुरन्त सेज पर उठ कर बैठ गए और सेज के नीचे फर्श पर अपने स्लीपर टटोलने लगे। उनके पाँव स्लीपर पा नहीं सके। रानी सेज के समीप आ गईं। झुककर स्लीपर उठा लिए और पति के पाँवों में पहना दिए। साहब ने बालक की

तरह अधीर होकर बाहें रानी के कन्धों पर रख दीं और उन्हें समेट लिया।

"आज तुम कितनी सुन्दर लग रही हो, नई खिली चमेली की तरह ताज़ी और सुवासित।"—साहब बोले।

रानी मुस्करा दीं और स्नेह से पूछा—"नशा [illegible] अभी उतरा नहीं ?"

"नशा ?"—साहब ने विस्मय से दोहराया, "नशा ?"

वू साहब ने रानी को फिर अपनी ओर खींच लिया। "सुनिए"—रानी ने टोका, "उठा दूँ आपको ?" वे सहसा खड़ी हो गईं और सशक्त कोमल बाहों से सहायता देकर साहब को खड़ा कर दिया।

"क्या तुम कुछ परेशान हो ?" उनके स्वर और आँखों से चिंता और विस्मय प्रकट हो रहा था।

"नहीं," "नहीं तो।"—रानी ने उत्तर दिया, "परेशान क्या होऊँगी ? चौबीस वर्ष तक परेशान नहीं हुई, पर सुनिए अब और नहीं।"

"अब और नहीं ?"—साहब ने रानी की ही बात को दोहराकर प्रश्न किया।

"हाँ अब और नहीं। मैं अब चालीस वर्ष की हो गई।"—रानी ने उत्तर दिया। मन में निश्चय कर लिया—यही उचित अवसर है। जब सब लोग सो रहे हैं, मैं अपनी बात कह डालूँ। वू साहब को सेज पर बैठाकर वे मेज़ की ओर गईं। मेज़ पर रक्खी तीन मोमबत्तियों को उन्होंने जला दिया। कमरा प्रकाश से भर गया। रानी सेज के समीप रखी चौकी पर बैठ गईं। साहब से आँखें मिलाकर उन्होंने कोमल परन्तु निश्चय के स्वर में कहा—"कई वर्ष पहले से मैंने यह निश्चय कर लिया था कि चालीस वर्ष की हो जाने पर यह क्रम समाप्त कर दूँगी।" साहब ने कुछ झुक अपने घुटनों का सहारा लेते हुए रानी की आँखों में विस्मय से देखा।

"आपके प्रति स्नेह या सेवा में तो मैंने कभी त्रुटि नहीं की।"—रानी ने पति की दृष्टि का उत्तर दिया।

"क्या कभी मैंने तुम्हारे प्रति अवहेलना या अन्याय किया है ?"—साहब ने पूछा।

"नहीं, कभी नहीं।"—रानी ने उत्तर दिया, "हम लोगों से अधिक सुख और संतोष का जीवन शायद ही दूसरे किसी पति-पत्नी का हो सकेगा। परन्तु मैं तो आज अपने जीवन के आधे में पहुँच गई।"

"आधे में ही तो!"—बू साहब बोले।

"परन्तु तुम तो अभी आधे में नहीं पहुँचे।"—रानी ने कहा, "तुम्हारे आधे तक पहुँचने में अभी बहुत समय है। स्त्री-पुरुषों के जीवन में यह अन्तर विधाता ने ही बना दिया है।"

साहब पत्नी की बात ध्यान से सुन रहे थे। उनकी बात की उपेक्षा उन्होंने कभी नहीं की थी।

"आप अभी जवान हैं।"—रानी ने समझाया, "आपके शरीर में अभी शक्ति और इच्छा भी है। अभी आपके दो-चार संतानें और होनी चाहिएं। मैं तो हो चुकी। अब मेरे बस का नहीं।"

साहब संभलकर बैठ गए, चेहरा गम्भीर हो गया। "क्या कह रही हो तुम? हम समझे नहीं।"—उन्होंने पूछा।

"आप ठीक समझ रहे हैं, मैं यही कह रही हूँ।"—रानी ने उत्तर दिया।

कुछ पल के लिए पति-पत्नी एक-दूसरे की ओर देखते सन्नाटे में रह गए। चारों ओर रात के तीसरे पहर का मौन छाया हुआ था। विशाल हवेली में उनके पुत्र और बहुएँ सोईं हुईं थीं। साहब की वृद्धा माँ भी ऊंघती हुई अपने अन्तिम दिन की प्रतीक्षा कर रही थीं। पति-पत्नी मौन एक-दूसरे की ओर देखते रहे। चौबीस वर्ष तक एक साथ बिताए जीवन का पारदर्शी पर्दा उनके बीच लटक रहा था।

"नहीं, मैं और ब्याह नहीं करूँगा।"—साहब के स्वर में कुछ भर्राहट-सी थी। हमने किसी दूसरी स्त्री की बात कभी सोची ही नहीं। हमारे लिए तुम्हीं सब कुछ रही हो और तुम ही रहोगी।"

बू साहब की आखें झुक गईं। अपने हाथों की ओर देखते हुए उन्होंने कहा—"आज उस लड़की को हमने देखा था,······हमें तो वह कुछ जँची नहीं। तुम से किसी का क्या मुक़ाबिला।"

रानी समझ गईं, साहब किस लड़की की बात कर रहे हैं। "नहीं, लीनी है तो बहुत सुन्दर।"—उन्होंने कहा। परन्तु मन ही मन यह भी सोच लिया कि पति के लिए दूसरी स्त्री वे स्वयं ही चुनेंगी। कई बातों का ध्यान रखना होगा। ऊपर-नीचे की पीढ़ियों में उलझन न पड़ने पाये। लीनी की बड़ी बहन ही तो उनके बड़े बेटे लिग्रांगमो की बहू थी। लीनी और उनकी बहू मेंग दोनों ही रानी की अपनी सहेली की बेटियाँ थीं।

राजा साहब ने सिर हिलाकर दृढ़ निश्चय से इनकार किया—"नहीं यह नहीं होगा। दूसरा विवाह मैं कैसे कर सकता हूँ। लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे। किसी दूसरी स्त्री की बात मैंने कभी सोची ही नहीं।"

राजा साहब की बात से रानी के ओठों पर हलकी मुस्कान आ गई। उन्होंने सोचा, लोगों के कहने-सुनने की बात कर रहे हैं। लोगों की राय पर चलेंगे तो इन्हें दूसरा विवाह करने में संकोच ही क्या होगा। इस बात से एक मीठी-सी चुभन भी हृदय में अनुभव हुई।

"आप ही सोचिए, चालीस वर्ष की स्त्री के बाल-बच्चे होना क्या अच्छा लगता है।"—रानी ने पति की ओर देखकर कहा, "तब तुम्हारे मित्र ही तुम पर हँसेंगे।"

"पर तुम्हारे और बच्चे होने की ज़रूरत ही क्या है?"—साहब बोले।

"यह अपने बस तो होता नहीं······हो ही जायं?"—रानी ने उत्तर दिया, "इसलिए मैं अब बचना चाहती हूँ। तुम्हारी हंसी क्यों हो?"

कुछ देर पति-पत्नी में बात चलती रही। साहब अपने मित्रों की नज़रों में गिर जाने की बात कहते रहे और रानी उस उम्र में संतानवती होकर अपना और पति का परिहास न बनाने की बात समझाती रहीं। रानी के मन में निश्चय था कि तर्क चाहे जो हो, अपने जीवन का क्रम वे बदल ही डालेंगी।

रानी के आग्रह से खिन्न होकर साहब ने पूछा—"सच बताओ, क्या तुम्हारा मन हमसे फिर गया है?"

रानी पति की ओर तनिक झुक गईं। कुछ आर्द्र स्वर में उत्तर दिया—

"क्या कह रहे हैं आप ? क्या शरीर में प्राण रहते यह सम्भव है ? आपके सुख के लिए ही यह चाहती हूँ।"

"ऐसी बात से क्या मुझे सुख होगा ?"—साहब ने एक गहरी साँस ली।

"आपको सुखी रखने के लिए जो कुछ भी कर सकती थी मैंने किया।"—रानी ने अपने दोनों सुन्दर हाथ फैलाकर पति की आंखों में देखकर कहा, "आपकी सेवा में जिस दिन से आई हूं किसी बात में मैंने चूक नहीं होने दी। जब तक शरीर में प्राण हैं, चूक होने भी न दूंगी, आपको सुखी ही रखूंगी।"

"हमारा सुख तुम पर निर्भर करता है।"—वू साहब ने उत्तर दिया, "तुम नहीं रहोगी तो हमारा सुख भी नहीं रहेगा। तुम्हारे बिना मैं शरीर में प्राण रहते भी मुर्दा ही बन जाऊंगा।"

"न, ऐसा न कहिए। स्वयं मर जाने से पहिले मैं आपके सुख की व्यवस्था कर जाऊँगी। मैं स्वयं आपके लायक स्त्री ढूंढ़कर आपका सुख उस के हाथों में सौंप जाऊंगी।"—रानी ने विश्वास दिलाया। साहब ने निरुत्तर हो सिर झुका लिया। रानी अनुभव कर रही थीं, पति उनकी बात की अवहेलना नहीं कर सकेंगे। अभी तक ऐसा उन्होंने कभी नहीं किया। रानी दोनों हाथों की अंजली पति के सम्मुख बढ़ाकर बोलीं—"आपने सदा मेरा विश्वास किया है, अब भी मेरा विश्वास कीजिए।"

"हमारा तो तुम पर अटूट विश्वास है।"—साहब ने उत्तर दिया।

रानी ने संतोष का सांस लिया।

साहब चौंककर बोल उठे—

"नहीं, दूसरा ब्याह हम नहीं करेंगे, देखो मैंने कोई वचन नहीं दिया है......"

"मैं आपसे वचन नहीं मांग रही हूं।"—रानी बोलीं, "आपकी इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं करूंगी, कभी किया भी नहीं। आप ही बताइए, कभी मैंने ऐसा किया भी है ? खैर, अभी जल्दी ही क्या है फिर सही। आप लेट

दो

रात की घटनाएं और विचार सुबह होने पर ही पूर्ण होते हैं। इन घटनाओं और विचारों का औचित्यानौचित्य सुबह होने पर ही स्पष्ट हो सकता है। चालीसवीं वर्षगांठ के अगले सुबह रानी बू की नींद खुली तो जान पड़ा कि कोई बोझ कंधों पर से टल गया हो। उनकी दृष्टि नए कमरे की दीवारों की ओर गई। गत चौबीस वर्ष के लगातार बिलकुल दूसरे ही वातावरण में रही थीं। उनका वह शयनागार और सेज बड़े घराने की सास ने, अपने एकमात्र पुत्र की नववधू के लिए सजाए थे। सब ओर समृद्धि और बढ़ती के चिह्न थे। बहू वंश-वृद्धि के कार्य के लिए ही घर में आई थी। सेज की मसहरी के पर्दों में फलों और फूलों की सोजनकारी हुई थी। सेज की छत का कपड़ा और पर्दे सब बहुत ही बढ़िया साटिन और रेशम के थे। चौबीस वर्ष बाद भी उनके रंग तक में भी कोई अन्तर नहीं आया था। उन्हें बदलने का कारण या नई चीज ला सकने की गुंजाइश ही नहीं थी। रानी बू ने केवल एक ही चीज, पर्वत-शृंग पर जूझने वाले आरोही का चित्र लाकर वहां लगा दिया था। उसी चित्र की उन्हें याद आई। सोचा दिन में अपने कपड़े और शृंगार का सामान यहां मंगवायेंगीं तो वह चित्र भी मंगवा लेंगीं। शेष यह नई जगह उनके मन की नई स्थिति

के अनुकूल थी। समृद्धि और सृजन के प्रतीकों, फलों और फूलों, की सजावट से गंजा हुआ उनका पुराना शयनागार अब उनके अनुकूल नहीं था। वह शयनागार और सेज पति की नई आनेवाली बहू या नवयुवती रखेल के लिए ही उपयोगी होगा। नींद खुल जाने पर भी रानी कुछ देर सेज पर लेटी ही रहीं। यह सेज उनके पुराने शयनागार की सेज से कुछ बड़ी ही थी। सोच रही थीं उनकी सुहागरात की सेज की लाल-गुलाबी साटिन की छत के नीचे जब दूसरी नवयुवती स्त्री आकर उनके पति के साथ लेटेगी तो कैसा लगेगा। यह कल्पना सुखद तो नहीं थी, परन्तु वह विक्षिप्त भी नहीं हुईं। भाग्य में जो कुछ बदा है उसके प्रति व्यक्ति के असंतोष से क्या लाभ? यदि उनके पति की आयु अथवा स्वास्थ्य ऐसा होता कि उन्हें भी भविष्य में यौन-आकर्षण और आवश्यकतायें न रहतीं तो बात दूसरी होती। पति-पत्नी दोनों एक साथ ही जीवन के उत्तरार्द्ध का क्रम आरम्भ करते तो अच्छा ही था। पर ऐसी बात तो थी नहीं।

वे और कुछ देर सोचती रहीं। विधाता का यह क्या विधान है कि स्त्रियों का यौवन और सौंदर्य पुरुषों के तृप्त और संतुष्ट हो जाने से पहिले ही समाप्त हो जाता है। पत्नी के थककर जीर्ण होने पर भी पुरुष की कामना-पूर्ति की शक्ति बनी ही रहती है। यदि स्त्रियों का यौवन और शक्ति भी पुरुषों के सामर्थ्य और कामना के साथ-साथ निभ सकता तो अच्छा ही होता। पर ऐसा है तो नहीं, इसलिए उन्होंने सोचा—स्त्रियों को अपने जीवन में वैराग्य स्वीकार कर लेने की मजबूरी हो ही जाती है। वह उन्हें स्वीकार करना ही पड़ेगा। विधाता का विधान ऐसा ही है।

गहरी सांस लेकर रानी बू ने सोचा—इस निरर्थक उधेड़बुन से क्या लाभ? विधाता के विधान में परिवर्तन सम्भव नहीं। विधाता का प्रयोजन है सृष्टि करना। इस प्रयोजन से विधाता ने पुरुष को बीज सौंपकर कर्ता बना दिया है और स्त्री को धरती। धरती की तो कमी नहीं है, परन्तु बीज के बिना धरती निष्फल है। कौन नहीं जानता कि पुरुष के अंग शिथिल हो जाने पर और रक्त निःशक्त हो जाने पर भी उसकी वासना मर नहीं

जाती। पुरुष की यह प्रकृति स्वाभाविक है, क्योंकि विधाता ने उसे सृष्टा बनाया है। पुरुष के शरीर में विधाता जितना बीज सौंप देते हैं, उसका अन्तिम अंश भी उपयोगी और सफल होना ही चाहिए। पुरुष वृद्ध और जर्जर होकर भी श्रेष्ठ और सबल सृष्टि कर सके, इसके लिए उसे और भी अधिक उर्वरा और सशक्त धरती की [illegible] होती है। किसी स्त्री के शिथिल और सृजन के अयोग्य हो जाने पर भी अपने पति से चिपटे रहना विधाता के विधान की अवज्ञा करना है। कुछ समय तक विधाता के विधान से निश्चित अपने भविष्य के विषय में सोचकर रानी बू के मन का उद्वेग जाता रहा। पीड़ा में अन्त से मिली शांति में पीड़ा की स्मृतिमात्र रह गई, जिससे स्वयं संतोष मिलता है। मुक्ति की भावना भी अनुभव हुई। जान पड़ा पत्नी के दायित्व से मुक्त होकर वे फिर कुमारी बन गईं। वे अपनी इच्छा से निश्चित सेज पर अकेली मन चाहे ढंग से सोती रहने की कल्पना करने लगीं। नींद न आने पर स्वच्छन्दता से जागते रहने का सुख। इस बात की कोई आशंका नहीं कि उनका सोना या जागना दूसरों के असंतोष का कारण बन जायगा। अनुभव हुआ जैसे उन्होंने अपने आपको फिर पा लिया। अपनी ढीली आस्तीन हटाकर उन्होंने अपनी बांह पर नजर डाली। उनके अंग अब भी वैसे गोल कोमल और गदराए हुए थे। नयी पाई स्वतन्त्रता की भावना से उनमें नयी ही स्फूर्ति अनुभव हुई। सोचा...चिंता से मुक्त विश्राम का जीवन पाकर वे खूब वृद्धा अवस्था तक जीती रहेंगी, परन्तु जीवन में कलख न आने देने के लिए पति से अपने सम्बन्ध और आकर्षण को भी शिथिल न होने देना होगा। पति का सामीप्य बनाए ही रखना होगा। शारीरिक सम्बन्ध समाप्त हो जाने पर केवल भावना से ही आकर्षण और सामीप्य बनाए रखना उतना सहल तो न होगा। ऐसा उपाय करना ही होगा कि उनके प्रति पति का भरोसा और निर्भरता शिथिल न हो सके। और शायद आनेवाली नई स्त्री को साहब को पूर्णरूप से अपना लेने का अवसर न देना उसके प्रति अन्याय भी होगा।

जैसे भी हो मुझे तो सभी के प्रति अपना कर्तव्य निबाहना होगा—

गहरी सांस लेकर रानी बू ने अपने आपको समझाया और अपनी कोमल बांह आस्तीन से ढंक ली।

……कौन स्त्री राजा साहब के लिए उपयुक्त होगी ……कई दिन से रानी साहिबा के मन में यह समस्या थी। अब फिर वे वही बात सोचने लगीं……नई बहू मुझसे कुछ दूसरे ही ढंग की हो तो ठीक रहेगा। जवान तो होनी ही चाहिए परन्तु उम्र बहुओं से कम न हो, वरना झंझट होगा। बाइस-तेईस वर्ष की हो तो ठीक रहेगा। कुछ पढ़ी-लिखी भी हो…… रानी स्वयं पढ़ी-लिखी थीं। अपने से अधिक शिक्षित स्त्री का घर में आ जाना उन्हें पसन्द नहीं था। आधुनिक ढंग की स्त्री नहीं चाहिए, वह रखेल बनकर कभी संतुष्ट न होगी। वह मुझे भी ढकेलकर पति और घर को मालकिन बनना चाहेगी। यह बेटों और बहुओं के सामने क्या अच्छा लगेगा ? कोई प्रौढ़ भला आदमी उचित ढंग से रखेल रक्खे तो ठीक ही है, परन्तु रखेल का मालकिन बन जाना तो ठीक नहीं। सुन्दर तो होनी चाहिए, पर इतनी मोहक भी नहीं कि जवान लड़के ही उसके पीछे पागल होने लगें, या साहब ही उसके लिए अपनी सुध-बुध खो बैठें। बस थोड़ा बहुत रूप चाहिए, हां जवान हो। रानी स्वयं बहुत सुन्दर थीं। इस स्त्री की सुन्दरता दूसरे ही ढंग की हो; ज़रा भरा हुआ गदबदा शरीर। बदन की काठी चाहे कुछ चौड़ी ही हो।

रानी जैसी स्त्री साहब के लिए चाहतीं थीं, शहर की अपेक्षा देहात में ही मिलती। देहात की स्त्री बदमिजाज़ नहीं होगी। स्वास्थ्य अच्छा होगा, और बच्चे स्वस्थ होंगे। बच्चे तो होने ही चाहिएं। संतान के बिना स्त्री का मन नहीं भरता। संतान न होने से स्त्री चिड़चिड़ी हो जाती है और सदा पति के सिर पर सवार रहती है। रखेल लाकर राजा साहब के लिए मुसीबत ही न हो जाय, कुछ सीधी-सी होना अलबत्ता अच्छा रहेगा। ……अपनी अवस्था से संतुष्ट रहेगी। मुझसे ईर्षा तो नहीं करेगी।

रानी ने पति के लिए उपयुक्त रखेल की रूपरेखा निश्चित कर ली— देहात के साधारण परिवार की लड़की, स्वस्थ चेहरा-मोहरा। सुन्दर कुछ

गहरी सांस लेकर रानी वू ने अपने आपको समझाया और अपनी कोमल बांह आस्तीन से ढंक ली।

······कौन स्त्री राजा साहब के लिए उपयुक्त होगी ······कई दिन से रानी साहिबा के मन में यह समस्या थी। अब फिर वे वही बात सोचने लगीं······नई बहू मुझसे कुछ दूसरे ही ढंग की हो तो ठीक रहेगा। जवान तो होनी ही चाहिएं परन्तु उम्र बहुओं से कम न हो, वरना झंझट होगा। बाइस-तेईस वर्ष की हो तो ठीक रहेगा। कुछ पढ़ी-लिखी भी हो······ रानी स्वयं पढ़ी-लिखी थीं। अपने से अधिक शिक्षित स्त्री का घर में आ जाना उन्हें पसन्द नहीं था। आधुनिक ढंग की स्त्री नहीं चाहिए, वह रखेल बनकर कभी संतुष्ट न होगी। वह मुझे भी ढकेलकर पति और घर की मालकिन बनना चाहेगी। यह बेटों और बहुओं के सामने क्या अच्छा लगेगा ? कोई प्रौढ़ भला आदमी उचित ढंग से रखेल रक्खे तो ठीक ही है, परन्तु रखेल का मालकिन बन जाना तो ठीक नहीं। सुन्दर तो होनी चाहिए, पर इतनी मोहक भी नहीं कि जवान लड़के ही उसके पीछे पागल होने लगें, या साहब ही उसके लिए अपनी सुध-बुध खो बैठें। बस थोड़ा बहुत रूप चाहिए, हां जवान हो। रानी स्वयं बहुत सुन्दर थीं। इस स्त्री की सुन्दरता दूसरे ही ढंग की हो; ज़रा भरा हुआ गदबदा शरीर। बदन की काठी चाहे कुछ चौड़ी ही हो।

रानी जैसी स्त्री साहब के लिए चाहतीं थीं, शहर की अपेक्षा देहात में ही मिलती। देहात की स्त्री बदमिज़ाज नहीं होगी। स्वास्थ्य अच्छा होगा, और बच्चे स्वस्थ होंगे। बच्चे तो होने ही चाहिएं। संतान के बिना स्त्री का मन नहीं भरता। संतान न होने से स्त्री चिड़चिड़ी हो जाती है और सदा पति के सिर पर सवार रहती है। रखेल लाकर राजा साहब के लिए मुसीबत ही न हो जाय, कुछ सीधी-सी होना अलबत्ता अच्छा रहेगा। ······अपनी अवस्था से संतुष्ट रहेगी। मुझसे ईर्षा तो नहीं करेगी।

रानी ने पति के लिए उपयुक्त रखेल की रूपरेखा निश्चित कर ली—देहात के साधारण परिवार की लड़की, स्वस्थ चेहरा-मोहरा। सुन्दर कुछ

बुद्धू-सी, खाने-पीने का चाव। सुभाव की जिद्दी और घमंडी न हो। साधारण परिवार की होगी तो इस घर के रंग-ढंग का रोब उसके मन पर बना रहेगा। ऐसी लड़कियों की क्या कमी है, रानी ने सोचा।

रानी ने सेज से उठते हुए निश्चय कर लिया कि घर-बार की आवश्यक बातों सें अवकाश मिलते ही वे बूढ़ी नाइन लू मा को बुला भेजेंगी। लिआंगमो से मेंग की सगाई रानी ने इसी बुढ़िया नाइन से करवाई थी। सेठानी कांग रानी की पुरानी सहेली थीं। परन्तु उनकी लड़की से अपने लड़के के विवाह की बात उन्होंने नाइन से ही चलवाई। उन्होंने सोचा कि कांग शायद संकोचवश या मित्रता के नाते लड़की के उचित दाम न मांग सके और बाद में इसी बात पर दोनों परिवारों में अनबन हो जाय। उन्होंने सोचा लू मा को बुलाकर बता दिया जाय। वह लड़की ढूंढ़ लेगी। ठीक दाम दिए जायंगे तो लड़की क्यों नहीं मिलेगी।

पति के लिए आवश्यक जवान स्त्री के बारे में निश्चयकर रानी वू अपने नए स्थान की बाबत सोचने लगीं। यहां वे अधिक परिवर्तन नहीं करना चाहतीं थीं। स्वर्गीय ससुर राजा साहब के लिए उन्हें बहुत आदर और श्रद्धा थी। वृद्ध की अपनी कोई बेटी नहीं थी। बहू के सुन्दर होने के अतिरिक्त, शिक्षित और प्रतिभावान् पाकर वे बहू को ही बेटी की तरह स्नेह करने लगे। परम्परा के अनुसार बहू का ससुर से बातचीत करना शिष्टाचार नहीं था, उन्होंने इस प्रथा को तोड़ दिया था। प्राय: ही बहू को अपने पुस्तकालय में बुला लेते और पुरातन ग्रंथों में से पड़कर उसे सुनाते। रानी ससुर के जीवनकाल में पुस्तकालय में आने लगीं थीं, उनके स्वर्गवास के पश्चात् भी आती रहीं। वृद्ध ने कुछ पुस्तकों को अलग एक ओर रख दिया था और समझा दिया था कि यह पुस्तकें स्त्रियों के पढ़ने-योग्य नहीं। रानी ने उन पुस्तकों को कभी न छुआ था। अब गृहस्थ का समय पूरा हो चुका था। उन्हें एकान्त जीवन बिताना था। अब यह पुस्तकें भी पढ़ी जा सकतीं थीं।

पिछले कई वर्षों से रानी को पढ़ने का अवसर बहुत कम मिला था।

वू साहब की पढ़ने-लिखने में बहुत कम रुचि थी। पत्नी को पुस्तक में ध्यान लगाए देखकर भी उन्हें बहुत अच्छा नहीं लगता था, इसलिए रानी मन मारकर पुस्तकों से दूर ही रहती थीं। अब वह बन्धन नहीं था। उनका शरीर और मस्तिष्क वर्षों तक पति के निमित्त रहकर अब फिर अपना हो गया था। अब वे यथेष्ट पढ़ सकेंगी। पुस्तकालय में चारों ओर पुस्तकें भरी देखकर उनका मन मानसिक आनन्द की सम्भावना से विभोर हो गया।

कुछ ही घंटों से रानी वू को अपने नए स्थान से मोह हो गया। ससुर को मरे बहुत वर्ष बीत चुके थे। उनके शरीर की आकृति भूलकर उनकी बुद्धिमत्ता और गम्भीर शान्त स्वर की स्मृति ही शेष रह गई थी। स्थान को पूर्णत: अपना लेने के लिए पुरानी स्मृति के चिह्नों को मिटाने की आवश्यकता नहीं थी। सेज की मसहरी के नीले रेशम के झीने पर्दों पर ज़री का काम बना था। उसमें न शृंगार का संकेत था, न सृजन की भावना। दीवारों की सफ़ेद पुताई में कुछ बादामीपन आ गया था। दरवाज़ों और खिड़कियों के किवाड़, मेज़, कुर्सियां और चौकियां सब गहरे कत्थई रंग की ख़ूब भारी-भारी थीं। फ़र्श पर हलकी नीली शतरंज बनी हुई थी। फ़र्श पर समय के प्रभाव से दरवाज़े और सेज के समीप की जगहें घिसकर कुछ गहरी पड़ गई थीं। शयनागार के एक ओर पुस्तकालय और दूसरी ओर कुछ बड़ी-सी बैठक थी। बैठक के सामने आंगन था। अलबत्ता आंगन में कुछ ठीक करवाना जरूरी था। पेड़ बहुत घने हो जाने से धूप नहीं आ पाती थी और उनके नीचे पत्थरों पर सीलन से काई जम गई थी।

दरवाज़े पर दस्तक सुनाई दी। "आ जाओ!"—रानी ने उत्तर दिया।

इंग भीतर आई। वह सहमी हुई थी। "हुजूर को अपने कमरे में नहीं देखा तो मैं घबरा गई। सभी जगह खोजती फिरी। आपके कमरे में जाकर देखा तो साहब की नींद टूट गई। वह बहुत बिगड़े!"

"अब हमारी जगह यहीं है, यहीं मरेंगे भी।"—रानी बू ने शान्त स्वर में बता दिया।

× × ×

ज्यों-ज्यों दिन चढ़ता जा रहा था रानी साहिबा के अपना स्थान बदल लेने की ख़बर फैलती जा रही थी। बड़े बेटे ने अपनी बहू से कहा, बड़ी ने छोटी बहू से। इंग ने अपने पति बड़े बाबरची को बताया, बड़े बावरची ने रसोईघर में काम करने वाले दूसरे लोगों को। संध्या तक हवेली में बात सभी लोगों तक पहुंच गई। वृद्धा सास की नौकरानी ने सुना तो अपनी मालकिन तक बात पहुंचा दी। सास को इस बात पर विश्वास न हुआ। रानी साहिबा ने सास से स्वयं बात न करना ही उचित समझा। जानती थीं कि नौकरानी सास को बता ही देगी। जो पहले समाचार देगा, सास उसी पर बरस पड़ेंगी। उनका गुस्सा नौकरों पर ही उतर जाय सो भला। वृद्धा का क्रोध एक बार बरस लेगा, तो फिर सोचने लगेंगी कि ग़लती किसकी है। मेरी ग़लती समझेंगी तो पहले मुझे ही बुला लेंगी। यदि साहब को बुलाया तो क्रोध उन पर ही उतरेगा।

दोपहर के समय रानी साहिबा अपनी नई बैठक में महीने के खर्चे का हिसाब देख रही थीं। आंगन में दिखाई दिया कि वृद्धा सास एक हाथ से अपनी नौकरानी की बांह का सहारा लिए, दूसरे हाथ से अपनी लाठी टेकती चली आ रही थीं। आंगन में पेड़ों की छंटाई और फर्श के पत्थरों की सफ़ाई तब तक हो चुकी थी। वृद्धा की निगाह उस ओर गई और उन्होंने क्षण भर ठहरकर उस परिवर्तन को देखा।

रानी उठकर सास के आदर के लिए आंगन में आ गईं। वृद्धा ने बहू की ओर देखकर असंतोष प्रकट किया—"यह क्या, इतने बढ़िया पेड़ कटवा डाले, सब बरबाद कर दिया।"

"अम्माजी यह तो जंगली पेड़ हैं, आंगन में खुद ही उग आए थे, ज़रा छंटवा दिए हैं। फिर घने हो जायंगे।"—रानी ने उत्तर दिया। वृद्धा आंखें

झुकाए आंगन में बने जलकुंड की ओर देखती रहीं। पानी पर धूप आ जाने के कारण मछलियां तल पर जा बैठी थीं। रानी ने वृद्धा को सहायता देने के लिए कोहनी से थाम लिया। "बस रहने दे, हमें मत छुओ। हम तुझ से नहीं बोलेंगी।"—कहकर वृद्धा बैठक की ओर बढ़ गईं।

रानी चुपचाप सास के पीछे-पीछे बैठक में आ गईं। सास उनकी ओर घूम गईं। "तुमने मुझसे तो नहीं कहा कि तुम इस जगह आ गई हो।"—बुढ़ौती के कारण चिचियाती हुई आवाज में उन्होंने कहा, "हमसे तो कोई कुछ पूछता ही नहीं। हमें तो कोई कुछ गिनता ही नहीं।" वृद्धा थककर चौकी पर बैठ गईं।

"अम्माजी बड़ी भूल हुई मुझसे, पूछ नहीं पाई आपसे, क्षमा कर दीजिए।"—रानी बू ने अपना अपराध स्वीकार किया।

वृद्धा ने क्रोध में पूछा—"आखिर हुआ क्या ? लड़के से किस बात पर झगड़ा हो गया ?"

"नहीं अम्माजी"—रानी ने उत्तर दिया, "झगड़ा तो किसी बात पर नहीं हुआ।"

"हमारे सामने बातें न बनाओ।"—वृद्धा ने धमकाया। "हमें सब मालूम है। हम सब जानतीं हूं।"

"नहीं अम्माजी, बात नहीं बना रहीं हूं।"—रानी ने विश्वास दिलाया, "कल मैं पूरे चालीस की हो गई। बहुत दिन से सोच रही थी कि चालीसवां पूरा हो जायगा तो अलग रहूंगी। साहब के लिए दूसरी स्त्री हो जायगी। वे तो अभी जवान हैं, अभी पैंतालिस के ही तो हैं।"

वृद्धा अपने दोनों हाथ लठिया की मूठ पर टेके विस्मय से बहू की ओर देखती रह गईं और बोलीं—"लड़का यह क्या करने जा रहा है ?······ क्या उसे तमाशबीनी का शौक लगा है ? हम······हम······"

"नहीं अम्माजी, ऐसी कोई बात नहीं।"—रानी ने समझाया, "साहब तो बहुत भले आदमी हैं। उनमें कोई ऐब नहीं। पर अम्माजी अब मेरा अपना जी नहीं है। साहब तो मुझे वैसे ही चाहते हैं, पर मेरी इस उम्र में

बाल-बच्चा होते अच्छा नहीं लगता। ऐसा डर बना रहे, यह भी अच्छा नहीं लगता। चाहती हूं हम लोगों की प्रीति और चाह बनी रहे। वे अभी जवान हैं। में बिलकुल ही ढल जाऊं तो उन्हें क्या अच्छा लगेगा······"

"लोग यह थोड़े ही समझेंगे।"—वृद्धा ने विरोध किया, "सब कहेंगे, वह इस उमर में बिगड़ गया, तुम लोगों से लड़ाई हो गई। हम क्या कहें, तुम ही जानो······"

"नहीं अम्माजी, हम लोगों में कोई लड़ाई नहीं हुई। अब भी वैसा ही प्यार है।"—रानी ने अपनी बात दोहराई।

'मर्द-औरत जुदा-जुदा रहें तो उनका प्यार क्या ?"—वृद्धा झुंझला उठीं।

रानी बू चुप रह गईं और सोचकर बोलीं—"अम्माजी, क्या कहूं······में नहीं जानती।"

वृद्धा ने चेतावनी दी—"नहीं, यह सब झगड़ा-झंझट नहीं होगा, खबरदार! किसी दूसरी औरत के आने की ज़रूरत नहीं है।"

"अम्माजी, उसमें तो मेरा अपना ही नुक़सान है।"—रानी बू ने स्वीकार किया।

"मुझ से अब नहीं निभता तो में किसी को क्या दोष दूं।"

"कौन है यह नौजवान औरत ?"—वृद्धा ने खिन्नता से पूछा, परन्तु अब उनका क्रोध बह चला था। वह स्वयं जानती थीं कि चालीस पूरे हो जाने पर संतान होना स्त्री के लिए मुसीबत हो जाती है। वे स्वयं यह झेल चुकी थीं। बच्चा जन्म के समय ही जाता रहा था, तो उनकी जान बची थी, पर तीस वर्ष पहले की यह बात उन्हें खूब याद थी, जैसे कल-परसों की ही बात हो। उस उम्र में संतान होने की लज्जा के दुःख के कारण पति से नित्य ही झगड़ा हो जाता था। वे पति पर बिगड़ उठतीं—"जा किसी रंडी के यहां मुंह काला कर आ! ······मेरी जान छोड़, कोई रंडी ढूंढ़ ले अपने लिए।"

इस घटना से स्वर्गीय राजा साहब को भी प्रबल मानसिक आघात

पहुंचा था। उन्होंने अपमान और आत्मग्लानि भी अनुभव की थी। वे पत्नी से अलग रहने लगे थे। आपस में बोलचाल भी कम हो गई थी। उन्हें पढ़ने का व्यसन था, पुस्तकों में ही रमे रहते। अध्ययन की लगन को वृद्धा क्या समझतीं ? वृद्धा का यही अनुमान था कि पति रूठ गया है। पर अब वे समझती थीं कि यह एक आकस्मिक घटनामात्र थी। संतान की इच्छा तो दोनों में से किसी को न थी। स्वर्गीय राजा साहब के प्रति अपनी कटुता यादकर उन्हें खेद भी होता कि एक आकस्मिक घटना के लिए वे पति को इतना खिन्न करती रहीं।

वृद्धा ने एक गहरी सांस ली और पूछा—"कौन है वह औरत ?" उन्हें याद नहीं था कि यह प्रश्न वह एक बार और पूछ चुकी हैं।

"अम्माजी अभी सोच रही हूं, देख-भाल कर ही किसी को आने दूंगी।"—रानी बू ने उत्तर दिया।

वृद्धा की नौकरानी आंखें फिराए कभी मालकिन को पंखा झलने लगती, कभी उनके लिए प्याली में चाय ढालने लगती, कभी दरवाजे से आती धूप रोकने के लिए पर्दा खींच आती। मानो मालकिन की बातचीत की ओर उसका ध्यान नहीं था। कान उसके बातचीत की ही ओर थे। रानी यह सब समझ रही थीं और सोच रही थीं; ठीक ही है नौकरों-चाकरों को पता लग जायगा कि यह काम मेरी स्वीकृति से ही हो रहा है।

"कहां मिलेगी तुम्हें ऐसी औरत ?"—वृद्धा ने फिर अपना असंतोष प्रकट किया।

"अम्माजी, ढूंढ़ना तो पड़ेगा।"—रानी ने उत्तर दिया, "किसी ऐसी-वैसी को तो मैं आने देना नहीं चाहती।"

"हम जानते हैं, यह सब लड़के की ही करतूत है।"—वृद्धा ने क्रोध में कहा।

"नहीं अम्माजी,"—रानी बू ने अनुरोध किया, "इसमें उनका कोई दोष नहीं, उनका मन बहुत कोमल है। ऐसी बात सुनेंगे तो उन्हें बहुत दुःख

"यह अकेलेपन से डरता तो पहाड़ों पे जाता ही क्यों?"—वू बोलीं।

वृद्धा को जहां उदासी अनुभव हुई कि भूख भी मालूम होने लगती थी। एकाएकी आरोही के चित्र ने उन्हें उदास कर दिया था। वू की ओर देख कर बोलीं—"भूख-सी मालूम हो रही है। जाने कितनी देर से कुछ खाया नहीं।"

रानी ने नौकरानी को आदेश दिया—"अम्माजी को उनके आंगन में पहुंचा दो और तुरन्त जो कहें खाने के लिए लाओ।"

सास लौट गई तो रानी वू फिर हिसाब देखने लगीं। संध्या तक कोई दूसरा नहीं आया। नये परिवर्तन से हवेली में उदासी छाई हुई थी। उन्हें ख्याल आया शायद साहब भी इस जगह उन्हें देखने आवें? इस ख्याल से कुछ संकोच-सा अनुभव हुआ। स्वयं ही सोचा इसमें संकोच की क्या बात। पर साहब आए नहीं। हवेली में क्या हो रहा होगा, वू जानतीं ही थीं। उनके बेटों और बहुओं ने आपस में चर्चा की होगी कि अब क्या किया जाना चाहिए और फिर यही चर्चा भतीजों, भांजों और उनकी बहुओं ने की होगी। इस विषय में वे लोग क्या निश्चय कर सकते थे? कुछ निश्चय कर पाते तो उनसे कहने आते। बड़े और जवान उनके आंगन की ओर नहीं गए तो बच्चे उधर कैसे जा सकते थे। हवेली में उलझन और तनाव का वातावरण था, इसलिए नौकर लोग भी चुप थे। इंग अलबत्ता दिन भर वहीं थी। पर आज वह भी चुप थी, आंखों में लाली! जब-तब मालकिन की नज़र बचाकर दामन से आंसू पोंछ लेती। रानी उस ओर से आँखें चुराए रहीं। दिन हिसाब में ही बीत गया। बहुत दिन का हिसाब देखने को था।

हिसाब के कई खाते थे। पहले उन्होंने कारिन्दे का घरेलू हिसाब देखा, फिर कपड़ों का, इसके बाद हवेली और फर्नीचर की मरम्मत का। उतने बड़े परिवार में यह खर्चा भी कम नहीं था। इसके बाद जमीनों की आमदनी का खाता। वू-परिवार की बहुत बड़ी पैत्रिक भू-सम्पत्ति थी। जमीनें खूब उपजाऊ थीं। जमीनों और नगर की दुकानों की आय से

ही खानदान का निर्वाह होता था। राजा साहब अथवा उनके पुत्र कोई दूसरा काम नहीं करते थे। दूर के कुछ भतीजे-भाँजे अलबत्ता निर्वाह के लिए दूसरे नगरों में जाकर व्यापार या नौकरी-चाकरी करने लगे थे। यह लोग कभी संकट में आ जाते तो कुछ दिन के लिए हवेली की शरण ले लेते। सम्पत्ति और हवेली का सब प्रबन्ध रानी के ही हाथ में था।

कई बरस से साहब केवल वर्ष के अन्त में सालाना हिसाब पर सरसरी नज़र भर डाल लेते थे। परन्तु रानी घर के हिसाब की हर पन्द्रह दिन और ज़मीनों के खातों की हर महीने जांच-पड़ताल करतीं थीं। चावल, गेहूं, सब्जी, तरकारियों और अंडे, मुर्गियों की पैदावार का लेखा-जोखा उन्हें ही मालूम रहता था। ज़मीनों के कारिन्दे सब बातों की सूचना उन्हें देते रहते। ज़रूरत समझतीं तो वे साहब से कह देतीं या न भी कहतीं। प्राय: ही उलझन बचाने के लिए स्वयं ही निर्णय कर लेतीं।

वह दिन हिसाब में ही गया। बस, आंगन के पेड़ों की छंटाई देखने के लिए और चित्र लगवा लेने के लिए ही ज़रा देर को उठी थीं। हवेली में ऐसी स्तब्धता छाई हुई थी कि रानी साहिबा के सिवा दूसरा कोई प्राणी वहां न हो। उन्हें तो ऐसी शान्ति खूब भाती थी। परन्तु ऐसी स्तब्धता की आशा नित्य तो की नहीं जा सकती थी। निरन्तर स्तब्धता तो मृत्यु से हो सकती है। फिर भी चालीस वर्ष पूरे कर लेने पर एक दिन की ऐसी स्तब्धता से उन्हें सांत्वना ही मिली। किसी ने भी कोई भी, बात पूछने के लिए उनकी शान्ति भंग नहीं की। हिसाब सब चौकस था, खर्च आमदनी की अपेक्षा कम। खत्तियों में अभी पिछले साल का गल्ला भी काफ़ी था और नई फसल तैयार थी। मांस का भंडार भी भरा हुआ था। तरबूज पक चुके थे और ठंडे करने के लिए कुंओं में लटका दिए गए थे।

कारिन्दे ने अपने खाते में महीन अक्षरों में लिखा हुआ था—"उन्नीस बड़े तरबूज़, सात पीले और बारह लाल गूदे के उत्तर के दोनों कुवों में···" रानी ने सोचा—आज संध्या एक तरबूज़ मंगवा लेंगी। तरबूज़ गुर्दे की स्वच्छता के लिए उपयोगी रहता है।

हिसाब के खाते भुगताकर रानी बिलकुल निश्चल लेट गईं। इस एकांत और विश्राम से जान पड़ रहा था कि शरीर से थकावट बूंद-बूंद कर बहती जा रही है और मधुर शांति उसका स्थान ले रही है। इस थकावट को पहले उन्होंने कभी अनुभव नहीं किया था, परन्तु वह अचेतन में शरीर को जड़ और शिथिल बनाये दे रही थी। आज उन्होंने पहचाना कि यह थकावट शरीर के अंगों में थी या मस्तिष्क में; वे जान न पातीं थीं। आज स्पष्ट जान पड़ा कि मस्तिष्क में थकावट बिलकुल नहीं थी, बल्कि मस्तिष्क उपयोग का अवसर ही नहीं पा रहा था। खातों के हिसाब की पड़ताल, घरेलू झगड़ों और बच्चों को इस स्कूल में भेजा जाय या उस स्कूल में; इसके अतिरिक्त मस्तिष्क के लिये कोई काम ही नहीं था। वू ने आज पहचाना कि यह थकावट मस्तिष्क में नहीं बल्कि उनके अन्तरतम में, उनके उदर और गर्भाशय में भरी थी। चौबीस वर्ष से उनका गर्भाशय सृजन-कार्य में लगा हुआ था। संतानों के जन्म से पहले उन्हें अपने शरीर में रखने और जन्म के बाद उन्हें बनाते रहने का उत्तरदायित्व उन पर ही था। अब उनकी संतानें स्वयं संतानों का सृजन कर रहीं थीं। वू से पहले वू की दादी और मां यही काम करते-करते थक गई थीं और अब वे स्वयं भी थक गई थीं।

कदमों की आहट सुनाई दी। फर्श के पत्थरों पर यह आहट चमड़े के जूतों की थी, लकड़ी के जूतों की नहीं। रानी ने सोचा यह कौन होगा? क़दम जनाने थे। स्त्रियों में चमड़े के जूते रुलन, दूसरे बेटे त्सेमो की शंघाई में रह चुकी बहू, ही पहनती थी। रानी वू को अच्छा नहीं लगा कि कोई आकर उनके नीरव एकांत में विघ्न डाले। परन्तु उन्होंने स्वयं ही अपनी प्रतारणा की—लोग यह क्यों समझें कि मैं सबको छोड़कर अलग हो बैठी हूं? अब तो इस आंगन में ही सबको आना होगा; मैं जो यहां आ गई हूं।

"आओ रुलन, यहां आओ।" स्वर में स्नेह की मधुर झंकार दे रानी वू ने पुकारा। रुलन दरवाज़े में आकर ठिठक गई। विस्मय से रानी की ओर देखती रही। रुलन लम्बे छरहरे शरीर पर विलायती काट का कमर पर

चुस्त गाउन पहने हुए थी। शंघाई में ऐसे गाउन का ही रिवाज़ था। उसके सीने सपाट-से और गालों की हड्डियां उभरी हुई थीं। चेहरा भवों पर अधिक चौड़ा और ठुड्डी बिलकुल नुकीली। होंठ कुछ अधिक मोटे और रूखे-से। रानी के परम्परागत सौंदर्य के अनुरूप अण्डाकार, सुचिक्कण मुखमण्डल और रुलन के चेहरे में कोई साम्य नहीं था।

रानी ने रुलन की उदासी और विस्मय की उपेक्षा कर फिर पुकारा—"यहां आ जाओ, बैठो। हम हिसाब के खाते देख रहे थे। फस्लें अच्छी ही हुई हैं। विधाता की कृपा समझो······।"

रुलन रानी के समीप आ दूसरी कुर्सी पर बैठ गई। वू उस की ओर देखकर सोच रही थीं, लड़की सुन्दर न सही पर चेहरे पर अपने ढंग की फबत जरूर है। उसका ढंग भी अपना ही है। रुलन के व्यवहार में परिवार की दूसरी स्त्रियों-जैसा शिष्टाचार, विनय और सलीका नहीं था। विपरीत इसके वह जान-बूझ कर कुछ रूखा और अहंमन्यता का ही व्यवहार करती थी। रानी कौतूहल से रुलन को भांपने का यत्न कर रही थीं। रुलन पहली बार ही उनके यहां अकेली आई थी।

"बेटी, तुम्हारे होंठ बड़े सुन्दर हैं पर तुम इनका ध्यान रखना।"—वू चेतावनी और दुलार के मिले-जुले ढंग से बोलीं।

"क्या मतलब आपका?"—रुलन उतावली में हकला बैठी और उसके होंठ थिरकते रह गये।

"तुम्हारे थिरकते हुए होंठ बड़े प्यारे लगते हैं।"—वू बोली, "उम्र बढ़ती है तो लड़कियों के मुंह का ढब बदल जाता है। तुम्हारे होंठ तो हमारा ख्याल है और भी सुघड़ हो जायंगे, पर ख्याल न किया तो बिगड़ भी सकते हैं।"

रानी वू की बात का ढंग ऐसा था कि अपना कुछ मतलब न रहने पर भी उन्होंने सच बात सुझा दी हो। यदि इस बात में उनकी कोई आसक्ति जान पड़ती तो रुलन अवश्य ही टका-सा उत्तर दे देती—"होगा, मुझे

परवाह नहीं।" लेकिन रानी के निरपेक्ष ढंग से रुलन भवें सिकोड़कर, लाल होंठ दबाए निरुत्तर ही रह गयी।

रानी बू सीधी पीठ की कुर्सी पर बैठी हुई थीं। उठकर वे मेज़ के पास दूसरी आरामदेह कुर्सी पर बैठ गईं। पीठ उनकी अब भी वैसी ही सीधी तनी हुई थी। उन्होंने मेज़ पर रक्खे अपने छोटे पाइप में तम्बाकू भरकर सुलगा लिया। अभ्यास के अनुसार दो कश खींचे, पाइप मेज़ पर रख दिया और फिर रुलन की ओर देखा—"कहो बेटी, कुछ कहना चाहती हो?"

"अम्माजी! ······?"—रुलन तुरन्त बोल उठी, परन्तु और कुछ कह न सकी। समझ नहीं पा रही थी क्या कहे।

"हां बेटी?"—रानी ने उसे उत्साहित किया।

"अम्माजी!"—रुलन ने दुबारा साहस किया, "यह आपने, क्या गड़बड़ कर डाला ······?"

"क्या कर डाला हमने बेटी?"—रानी ने बहुत शान्ति से विस्मय प्रगट किया।

"गड़बड़ तो हो ही रहा है।"—रुलन उत्तेजना से बोली, "आपके बेटे कह रहे हैं कि मैं बीच में न बोलूं। बड़े भाई हैं। जो बात करनी होगी वही करेंगे। बड़े कुछ बोलने को तैयार नहीं। वह कहते हैं, हमारे किए कुछ नहीं होगा। भाभी तो बस बैठकर रोना जानती है। मुझे तो रोना-धोना आता नहीं। मैंने कहा किसी को तो जाकर बात करनी चाहिए।"

"बहुत अच्छा किया बेटी, तुम आ गईं।"—रानी तनिक मुस्करा दीं।

रुलन प्रत्युत्तर में मुस्करा न सकी। उसके चेहरे की आयु से अधिक गम्भीरता में झेंप और साहस खेल रहे थे। "अम्माजी!"—वह फिर बोली, "मैं जानती हूं, आप तो मुझ से यों ही नाराज़ रहतीं हैं। कोई दूसरा ही आकर बात करता तो अच्छा होता।"

"क्या कहती हो बेटी, हमें तुमसे क्या नाराज़गी?"—रानी बोलीं,

"हम तो किसी से भी नाराज़ नहीं, उस बेचारी ग़रीब मिस हिसा से भी मैं नाराज़ नहीं हूं।"

"मैं जानती हूं आप मुझसे नाराज़ हैं।"—रुलन ने अपनी बात दोहराई, "मेरी उम्र आपके पुत्र से अधिक है, इसलिए आप मुझसे नाराज़ हैं। आपको यह अच्छा नहीं लगता कि शंघाई में हम लोगों का प्यार हो गया और उन्होंने मुझसे विवाह कर लिया। आप अपनी पसन्द की बहू उनके लिए लातीं तभी आपको अच्छा लगता।"

"बेटी जो हो गया, ठीक है।"—रानी वू ने आश्वासन दिया, "हम तो अपने बेटे का सुख ही चाहती थी। तुम दोनों सुखी हो, मुझे और क्या चाहिए। लड़के की उम्र तुमसे ज़रा कम है तो इसमें तुम्हारा क्या कसूर? पुराने लोगों को यह ज़रा अजीब-सा लगता है। पर ऐसी क्या बात है? मतलब तो निबाहने से है। आदमी करे तो सब निभ जाता है।"

"अम्माजी, भाभी और पुराने ख्याल के लोगों की बात दूसरी है। वे तो सब कुछ सह सकतीं हैं, लेकिन मैं तो कहूंगी कि ऐसा कभी नहीं होने देना चाहिए। पिताजी हवेली में कोई दूसरी औरत कैसे ला सकते हैं?"

"उनके ला सकने का प्रश्न नहीं।"—रानी ने मुस्कराकर धीमे से कहा, "हमारा ही ख्याल है कि उनके लिए दूसरी स्त्री आनी चाहिए।"

रुलन की आंखें फटी ही रह गईं। "अम्माजी, जानतीं हैं आप, आप क्या कर रहीं हैं?"

"हां, ख्याल तो है कि हम जानतीं हैं।"

"लोग हँसेंगे हम पर।"—रुलन कुछ ज़ोर से बोली, "यह तो पुरानी कुरीति थी, अब ऐसा कौन करता है।"

"शंघाई में शायद लोग ऐसा नहीं करते होंगे।"—वू निरपेक्ष भाव से बोलीं। मानो शंघाई के लोगों की राय का कोई महत्त्व न हो।

रुलन बेबस रानी की ओर देखती रह गई। सामने बैठी उसके पति की मां, यह महिला, इस आयु में भी कितनी सुन्दर और स्वस्थ थी और उत्तेजना और प्रतारणा के प्रभाव से निर्विकार। रुलन खूब जानती थी

कि उसका पति अपनी मां की अवहेलना नहीं कर सकता, मां की किसी बात का विरोध नहीं कर सकता, मां की बात ही उसके लिए सर्वोपरि थी।

ससुर के लिए रखेल के आने की खबर से स्त्रियों में हंगामा मचा हुआ था। लिआंगमो उदास होकर एक ओर जा बैठा। त्सेमो भी इस उलझन में पड़ना व्यर्थ समझकर अपने छोटे भाई येनमो के साथ बैठकर शतरंज खेलने लगा। शतरंज पर बैठे हुए उसने केवल इतना कहा—"अम्माजी पिताजी के लिए रखेल बुलवाने के लिए कह रहीं हैं तो ठीक है। वे सोच-समझ कर ही कुछ कहतीं हैं। हां, येनमो अब तुम्हारी चाल है।"

येनमो का ध्यान घर में उठ खड़े हुए बवंडर की अपेक्षा शतरंज में ही डूबा हुआ था। उसके लिए जो त्सेमो कह दे, ठीक था।

"खाक़ सोच-समझ कर कहतीं हैं।"—ऊंचे स्वर में रुलन ने पति का विरोध किया।

"ज़बान सँभाल कर बोल!"—त्सेमो ने शतरंज की फड़ से आंखे उठाए बिना ही डांट दिया।

रुलन चुप रह गई। पति चाहे उससे कुछ छोटा ही था पर वह उसकी अवज्ञा नहीं कर सकती थी। त्सेमो के व्यवहार में मां की अविचलित शान्ति का ऐसा भाव था कि रुलन के विक्षोभ को उसके आगे परास्त हो जाना पड़ता। इसलिए रुलन ने निश्चय किया कि वह जाकर रानी साहिबा से स्वयं ही बात करे।

रुलन बहुत जोश और उत्तेजना में सास से बात करने आई थी। अब भी विक्षोभ से उसके हाथ पसीज रहे थे, कुछ कहते नहीं बन रहा था। बहुत सोचकर बोली—"अम्माजी आपको मालूम नहीं है, रखेल रखना अब कानूनन भी अपराध है।"

"कैसा कानून?"—रानी बू ने पूछा।

"नया कानून"—रुलन ने ऊंचे स्वर में उत्तर दिया, "क्रान्तिकारी पार्टी के कानून के अनुसार वेश्यावृत्ति और रखेल रखना अपराध है।"

"यह नए कानून,"—रानी साहिबा ने कहा, "यह सब नए कानून तो नए विधान की तरह अभी काग़ज़ी चीज़ें ही हैं।"

रानी साहब ने भांपा कि उनके मुख से 'विधान' शब्द सुनकर रुलन को कुछ विस्मय-सा हुआ। जैसे उनके मुख से यह शब्द सुन पाने की आशा बहू को न थी।

"वेश्यावृत्ति ग़ैरकानूनी करार दी जाने के लिए हम लोगों ने इतना बड़ा आन्दोलन किया था,"—रुलन ने अभिमान से बताया, "शंघाई के बाज़ारों में हम लोग गर्मियों की आग बरसाती धूप में हज़ारों लोगों के बड़े-बड़े जलूस निकालते थे, चोटी का पसीना एड़ी तक बह जाता था। हम लोगों ने नारा लगाया कि चीन में योरुप की तरह बहु-विवाह ग़ैरकानूनी हो! मैं नीला झंडा लेकर जुलूस में आगे-आगे चलती थी। झंडे पर बड़े-बड़े सफ़ेद अक्षरों में लिखा था 'वेश्यावृत्ति का नाश हो!' और अब हमारे अपने ही घर में, मेरे पति की मां, वही कुरीति, वही अन्याय,······ हां, अन्याय ही तो है यह! ·········"

"सुनो बेटी"—रानी वू ने स्नेह से समझाया, "अच्छा बताओ, अगर त्सेमो कुछ दिन बाद एक और ब्याह करना चाहे; मेरा मतलब है कि लड़का तुम्हारी अपेक्षा कम पढ़ी-लिखी स्त्री से, जो इतनी चुस्त न हो, ज़रा सीधी-सादी हो, उसकी हर बात चुपचाप मान ले; ऐसी लड़की से विवाह करना चाहे तो तुम क्या करोगी?"

"मैं उसे उसी समय तलाक दे दूंगी।"—रुलन ने विरोध में सिर ऊंचा कर उत्तर दिया, "मैं सौत कभी नहीं झेल सकती।"

रानी वू ने अपना पाइप फिर सुलगा लिया। दो कश खींचे और बोलीं—"देखो बेटा, इनसान की ज़िन्दगी में बहुत-सी बातें-आती जाती हैं। ज्यों-ज्यों उम्र बढ़ती है, बहुत-सी नई बातें समझ में आने लगती हैं।"

"हम तो कहते हैं कि जैसे पुरुष, वैसी स्त्रियां, दोनों बराबर हैं।"—रुलन ने आग्रह किया।

"हां ठीक कहती हो बेटी।"—रानी वू ने स्वीकार किया, "स्त्री-पुरुष

बराबर तो हैं पर स्त्री-पुरुष एक ही चीज़ तो नहीं हैं। दोनों का महत्त्व है। जीवन न स्त्री के बिना चल सकता है, न पुरुष के बिना। पर स्त्री पुरुष नहीं है और पुरुष स्त्री नहीं है। दोनों एक-दूसरे से भिन्न हैं। ठीक है न?"

"हम लोग यह नहीं मानते,"—रुलन ने विरोध किया, "स्त्री यदि एक पुरुष से संतुष्ट रहती है तो पुरुष को भी एक स्त्री से संतुष्ट रहना ज़रूरी है।"

रानी वू ने अपना पाइप मेज़ पर रख दिया और विचार की मुद्रा में रुलन की ओर देखा—"बेटी अभी तुम्हारा खून गर्म है। तुम्हें कैसे समझा सकूंगी। बेटी, संतोष सबसे बड़ी चीज़ है। सोचो, क्या यह उचित होगा कि यदि एक आदमी संतुष्ट हो जाय तो वह दूसरे पर बंधन लगा दे—'मैं संतुष्ट हो गया हूं, इसलिये तुम्हें भी संतुष्ट हो जाना चाहिये'।"

"पर बड़े भाई तो कह रहे हैं कि पिताजी ने तो दूसरी स्त्री की बात नहीं की।"—रुलन ने तर्क किया।

रानी वू सोचने लगीं—इसका मतलब है कि लिआंगमो साहब से बात करने गया होगा। वू के मन में अपने पति के लिये सहानुभूति अनुभव हुई—बेटे उन्हें परेशान कर रहे होंगे। चौबीस वर्ष तक किसी पुरुष की पत्नी बनकर जीवन बिता लेने के बाद जानने के लिये शेष क्या रह जायगा? वू ने रुलन को समझाया और उठकर खड़ी हो गईं कि रुलन समझ ले कि बात समाप्त हो गई। मन में उन्हें रुलन पहले की अपेक्षा अच्छी ही लगी। माना कि लड़की कुछ ज़िद्दी, मुंहफट और अल्हड़ है परन्तु उसने यहां आकर बात करने का साहस तो किया।

"बेटी, हम तो समझती हूं यह स्त्रियों के प्रति विधाता की दया ही है।"—रानी वू ने रुलन की ओर झुककर समझाया, "स्त्री जीवन के अंत तक तो सन्तान धारण नहीं कर सकती। इसलिये स्त्री के चालीस वर्ष की हो जाने पर विधाता दयाकर उसे मुक्ति दे देते हैं—जाओ अब विश्राम करो। तुम ने अनेक बार अपने शरीर का भाग देकर सृजन किया है। जो कुछ बच रहा है, वह अब तुम्हारा है। जाओ अब विश्राम करो। अब तक

तुम्हारा काम देना ही था। अब तुम्हारे पाने का समय आया है। अब हमारे जीवन में विश्राम और शांति का संतोष पाने का अवसर आया है। अब हम अपने स्वास्थ्य और शरीर की रक्षा करेंगी, परन्तु अब हमें किसी दूसरे को संतोष देने की चिंता न होगी। अब यह शरीर हमारा अपना है। हमारे अपने संतोष का साधन है। अब यह हमारे अपने लिये है।"

"इसका मतलब है आप हम लोगों से घृणा करतीं हैं?"—रुलन ने अपना दृढ़ निश्चय प्रगट किया। उसकी आंखें स्थिर हो गईं। रानी ने देखा लड़की की आंखें सुन्दर थीं।

रानी वू ने आश्वासन दिया—"नहीं, हम तुम सबसे स्नेह करती हैं... और सदा करेंगी।"

"क्या पिताजी से भी?"—रुलन ने विस्मय से पूछा।

"क्या पूछती हो?"—रानी ने मुस्कराकर विस्मय प्रकट किया, "उन्हें तो सबसे अधिक। इसीलिये तो हम उनकी प्रसन्नता और संतोष चाहती है।"

"अम्माजी, जाने आप क्या कह रहीं हैं।"—रुलन ने पल भर सोचकर कहा, "मुझे तो आपकी बात समझ में नहीं आई।"

"बेटी अभी तुम्हारी उम्र ही कितनी है?"—रानी स्नेह से बोलीं, "बेटी समय अपने आप सिखा देता है। अपने आप ही तुम हमारी बात समझने लगोगी।"

"अम्माजी क्या आप सचमुच अपनी ही इच्छा से यह सब कर रहीं हैं।"—रुलन ने आंखें फैलाकर सन्देह प्रकट किया।

"हां बेटी, विश्वास करो, अपनी ही इच्छा से।"—रानी ने अनुरोध के स्वर में उत्तर दिया।

"आप कहतीं हैं तो मैं जाकर उन लोगों से कह दूंगी। परन्तु ऐसी बात पर कोई कैसे विश्वास करेगा?"—रुलन ने चलते-चलते कहा।

"तुम उन लोगों से कहना धैर्य रखें। उन्हें स्वयं ही विश्वास हो जायगा।"—रानी ने आत्मविश्वास से मुस्कराकर कहा।

"जैसा आप कहतीं हैं मैं उनसे कह दूंगी।"—रुलन ने सास की ओर देख विवशता प्रकट की।

"बस यही ठीक है।"—रानी ने अंतिम बात कही।

रुलन के चले जाने के बाद अपने आंगन की नीरवता रानी वू को और भी अधिक शांतिप्रद मालूम होने लगी। मन ही मन कल्पना करने लगीं कि परिवार के सब लोग इकट्ठे होकर उनके बिना घबराकर कैसे तर्क-वितर्क कर रहे होंगे। अब तक परिवार के लोग सदा उनसे ही निर्देश पाते रहे हैं। उन्होंने कभी कोई बात स्वयं अपने ही लिये नहीं की थी, परन्तु इस घटना का सम्बन्ध केवल उन से ही था। यह बात सोचते हुए भी शांति की एक मुस्कान उनके होंठों पर आ गई।

नहाने के समय में दो घंटे थे। इंग अभी बाहर थी। उठकर उन्होंने स्वयं हा स्नान किया और रात में पहनने के सफ़ेद महीन रेशम के कपड़े पहन लिये। गहरे नीले रंग की मसहरी में बड़ी सेज पर जा लेटीं। एक घंटे बाद इंग भीतर आई। रानी साहिबा बैठक में नहीं थीं। सब ओर स्तब्धता का सन्नाटा था। इंग डर गई, झपटकर शयनागार में पहुंची। भारी सेज पर मसहरी में रानी वू का दुबला-सा शरीर निश्चल, नीरव पड़ा था। आंखें मुंदी थीं। इंग ने समीप आकर ध्यान से देखा, रानी निश्चल बनी रहीं और उनकी आंखें मुंदी रहीं।

"हाय विधना, रानी साहिबा चल बसीं।"—इंग चीख उठी। रानी वू सो रहीं थीं, मरी नहीं थीं। इंग ने उन्हें इस तरह गहरी नींद में निश्चल सोते कभी नहीं देखा था। इंग की पुकार से भी उनकी नींद नहीं खुली। इंग ने मसहरी के पर्दे से आंखें सटाकर फिर ध्यान से देखा और समझी। झेंप से उसका श्वास रुक-सा गया। परन्तु विस्मय से सोचा—हाय इनकी नींद तो चिड़ियों के बोलने से ही खुल जाती थी। इंग पल भर रानी के शांत निर्दोष सौंदर्य की ओर देखती रही और फिर बिना आहट किये पीछे हट गई।

"हाय, घर भर की चिंता और कारोबार के बोझ से कितनी थक गईं

हैं!"--इंग धीमे से बड़बड़ा उठी, "कैसे न थकतीं, दुनियां भर को संभाले थीं। और सब तो इनकी गोद में दुधमुंहे बच्चों की तरह निश्चिंत हैं।"

इंग आंगन के दरवाजे पर आ खड़ी हुई। चौकसी से उसने सामने और दायें-बायें देखा। मालकिन की नींद में बाधा डालने वह किसी को नहीं आने देगी, वू साहब को भी नहीं।

× × ×

रात गहरी हो चुकी थी। घड़ी में रात के दो पहर बीत चुके थे। लिआंगमो के आंगन में दोनों बड़े भाई और दोनों बहुयें अब भी समस्या पर विचार कर रहे थे। दोनों भाई प्रायः चुप ही थे। अपने पिता के सम्बन्ध में विचार करते उन्हें झेंप अनुभव हो रही थी। यह भी ख्याल था कि वह दोनों जवान हो चुके हैं। अधेड़ अवस्था आने पर सम्भव है उनकी भी ऐसी ही स्थिति हो जाय। ऐसी ही समस्या उनके बारे में भी उठ खड़ी हो, कोई क्या कह सकता है!

बड़ी बहू मेंग भी कम ही बोल रही थी। उसके जीवन में कोई असंतोष नहीं था। वह किसी से किस बात के लिए क्या झगड़ा करती! उसकी कल्पना में लिआंगमो संसार का आदर्श पुरुष था। लिआंगमो की पत्नी बन जाने से बड़े सौभाग्य और महत्वाकांक्षा की कल्पना वह कर ही न सकती थी। मेंग को लिआंगमो का सबल, सुघड़ शरीर, उसकी सहृदयता, धैर्य, बुद्धिमत्ता, हंसमुख स्वभाव, उसके घने चमकीले काले बाल, चौड़ा माथा, लम्बा चेहरा, होंठों की सुन्दर आकृति, उसके समर्थ परन्तु कोमल हाथ सभी कुछ सौन्दर्य और पूर्णता के प्रतीक जान पड़ते थे। लिआंगमो ही उसका संसार था और स्वप्न भी। पति से पृथक् उसका कोई अपना अस्तित्व नहीं था, न वह चाहती ही थी। उसकी बातों में बेसुध हो जाने, उसके लिए स्वयं भोजन परोसने, उसके लिए चाय बनाने, उसके लिए सिगरट सुलगा देने, उसके कपड़े तहाकर रखने, उसके लिए गर्म मदिरा अपने हाथ से पिलाने और उसके प्रत्येक शब्द को ध्यान से सुनने से बड़ा सुख मेंग के लिए हो ही नहीं सकता। इन सबसे बड़ा सुख मेंग के लिए लिआंगमो की

संतानों को जन्म देना था। मेंग की महत्वाकांक्षा थी कि अधिक से अधिक संतानें हों। वह अपने आपको लिआंगमो की वंश-परम्परा को अमर बना देने का साधन समझती थी।

उस रात गहरी समस्या पर विचार के समय अपनी आदत के अनुसार मेंग पति के ही ध्यान में डूबी हुई थी। बेसुधी के उस माधुर्य में वह दूसरों की बात क्या सुनती। ससुर रखेल रखने जा रहे थे, मेंग मन ही मन कल्पना कर रही थी कि ससुर की तुलना में उसका पति कितना सच्चरित्र और निष्ठावान् है। बुद्धिमत्ता और सच्चरित्रता में लिआंगमो के पिता भी उसकी बराबरी नहीं कर सकते, और लिआंगमो उसे कितना प्यार करता है।

जब रुलन उत्तेजित होकर अपनी बात कह रही थी, मेंग लिआंगमो की ही बात सोच रही थी। रुलन ने पूछा—"आप बड़ी बहू हैं, आप बताइए आपकी क्या राय है?" मेंग ने लिआंगमो की ओर देखा कि क्या उत्तर दें।

रुलन को मेंग के बुद्धूपन से बहुत खीझ आती थी। अपने पति को तो वह भी प्यार करती थी। एकांत में कभी-कभी त्सेमो से कह भी देती कि तुम बड़े भाई की तरह बुद्धू होते तो मेरी मुसीबत हो जाती। मन ही मन असंतोष था कि उसका पति छोटा भाई है। रुलन के विचार में त्सेमो कहीं अधिक बलवान, समर्थ, बुद्धिमान और व्यवहार-कुशल था, परन्तु बेचारा था छोटा भाई। लिआंगमो की प्रकृति पिता पर और त्सेमो की मां पर गई थी। रुलन प्रायः ही त्सेमो से झगड़ने-उलझने के बावजूद उसे प्यार करती ही थी। झगड़ा हो जाने पर रुलन उत्तेजना में बावली हो उठती परन्तु बाद में पछताती भी। रुलन के मन में आशंका का कीड़ा कुरेदता रहता—मैं पति से आयु में बड़ी हूं, त्सेमो ने मेरा प्यार देखकर ही मुझसे प्यार किया था, स्वयं नहीं। एक लज्जा-सी मन में खटकती रहती। शंघाई के स्कूल में रुलन का मन त्सेमो की ओर खिंच गया था। वह बेबस हो गई थी। कभी कोई पुस्तक मांगने के बहाने, कभी कुछ समझने

के लिए, कभी यह कहकर कि उसकी लेक्चर के नोट लिखने की कापी गुम हो गई है, त्सेमो से कापी मांगने पहुंच जाती। उसने ही पहले स्नेह और मित्रता का संकेत दिया था और उसने ही पहले त्सेमो का हाथ छुआ था।

रुलन का विचार था, ऐसी बातों में हर्ज ही क्या है।—मैं क्या रूढ़ियों में फंसी हुई अनपढ़ लड़की हूं? मैं पढ़ी-लिखी समझदार हूं। मेरे विचार आधुनिक हैं, मैं क्या मर्दों से डरती हूं? स्त्री और पुरुष सब तरह बराबर हैं।—रुलन यह भी जानती थी, त्सेमो भोला लड़का था, उसे प्रेम का अनुभव नहीं था, तब वह अछूता था। उसे प्यार तो करता था परन्तु उतना नहीं……। वह त्सेमो को उलाहना देती थी—"……तुम तो अपनी संकीर्ण विचार मां से इतना डरते हो।"

त्सेमो रुलन की बात का उत्तर देता—"मैं मां से डरता नहीं, उनका आदर करता हूं क्योंकि वे ठीक बात कहतीं हैं।"

"ऐसा कौन है जिससे कभी भूल न हो?"—रुलन ने असंतोष प्रकट किया था।

"तुम अम्माजी को जानतीं नहीं,"—त्सेमो ने मुस्कराकर उत्तर दिया था, "कभी उनकी बात अच्छी नहीं लगती तब भी मानना पड़ता है कि बात उनकी ही ठीक है। संसार में उनसे बढ़कर बुद्धिमती स्त्री हो नहीं सकती।"

त्सेमो ने अपनी मां की बात भोलेपन में कह दी थी, परन्तु रुलन के हृदय में बरछी-सी गड़ गयी और वह घाव कभी न भरा। रुलन बहू बनकर वू-परिवार में आई तो मन सास के प्रति क्रोध और ईर्षा से भर गया। वह क्रोध और भी बढ़ता गया क्योंकि सास के प्रति क्रोध और ईर्षा प्रकट करने का कोई अवसर ही न आया। रानी वू की सहृदयता और निष्पक्षता का विरोध कैसे किया जाता! रानी छोटी बहू के व्यवहार में अहंकार और उद्दण्डता भांपकर भी न देखतीं। रुलन परास्त होकर सोचने लगी—… इन्हें तो न आदर की परवाह है न निरादर की।

रुलन सास से ईर्षा भी किस बात के लिए करती ! खिन्न होकर एक दिन पति के सामने भभक उठी—"······तुम तो अम्माजी के लिए मरे जाते हो, वे तो तुम्हारी ज़रा भी परवाह नहीं करतीं।"

"बहुत ज़्यादा परवाह से मुझे तो उलझन ही होती है।"—त्सेमो ने निरपेक्ष भाव से कहा। पति पर चलाये शब्द-वाण ने पलटकर रुलन का ही हृदय बींध दिया। रुलन किसी भी आघात की उपेक्षा नहीं कर सकती थी। मामूली-सी बात भी उसे घाव कर जाती। बल्कि वह सदा ही आघात की आशंका में रहती और प्रतिकार के लिए उबलती हुई।

"तुम समझते होगे मैं तुम्हारी परवाह में मरी ही जा रही हूं।"—प्रतिकार में रुलन कह बैठी।

त्सेमो ने उत्तर भी नहीं दिया। ऐसे निर्विकार बना रहा मानो कुछ सुना ही नहीं। उसके शरीर की सुन्दर मुद्रा, पतली-सी कमर से उठता हुआ गज भर चौड़े सीने का त्रिकोण निश्चल ही बना रहा। यूं तो चारों ही भाई सुडौल और दर्शनीय थे। येनमो की तो खैर अभी उमर ही क्या थी ! लड़कपन की फूली-फूली गोलाइयां धीरे-धीरे रूप ले रहीं थीं। चारों में सबसे बढ़कर था त्सेमो। त्सेमो का यह सौन्दर्य भी रुलन के लिए मानसिक यातना थी। वह सोचती त्सेमो का सुडौल सुन्दर रूप उसकी आत्मा की गरिमा का प्रतिबिम्ब था, अथवा उसके मस्तिष्क की धूर्त्तता को ढंकने के लिए सुडौल हड्डियों के ढांचे पर सुचिक्कण सुनहरी रेशम-सी त्वचा चढ़ा दी गई थी। रुलन पति को कभी समझ ही न पाई थी। त्सेमो कभी समझाने का प्रयत्न भी न करता। रुलन समझती यह सब धोखा है।

"क्यों, तुम क्या सोच रहे हो ?"—कभी पति को मौन देख रुलन पूछ बैठती।

कभी तो त्सेमो मौन ही रह जाता और कभी टका-सा उत्तर दे देता—"अभी बात करने की इच्छा नहीं है।"

"असल बात तो यह है तुम मुझे जरा नहीं चाहते।"—रुलन झुंझला उठती।

"सचमुच ?"–त्सेमो मुस्कराकर चुप रह जाता। रुलन अपनी झुंझलाहट और जली-कटी बातों के लिए पछताने लगती। कभी ऐसा भी होता कि त्सेमो अपने स्नेह और उदारता से रुलन को विभोर कर देता। रुलन त्सेमो के इन हृदय-उद्‌गारों को भी सम्हाल न पाती। उसका मन व्याकुल होने लगता। क्यों वह इतनी असहाय है ? क्यों वह इस नौजवान पर इतना निर्भर करती है ? परन्तु स्वयं धारण किए बंधनों से वह कैसे मुक्त होती ? उसका मस्तिष्क असंतोष के बवण्डर से गूंजता रहता। अपने जीवन की जो मधुर कल्पनायें उसने बनाईं थी, अब टूट चुकी थीं। वह बन्दीगृह में तड़प रही थी। स्वयं उसने ही अपने को बन्दी बनाया हुआ था।

रुलन अपने मन की अशान्ति छिपाये रहने का यत्न करती परन्तु छिपा न पाती। उसकी उग्रता और क्रोध उसके बस के नहीं थे। ज़रा-ज़रा-सी बात पर नौकरों से चिढ़ जाती। वू-परिवार के नौकर भी शिष्टाचार और विनय की आशा करते थे। प्रतिकार में वे रुलन की उपेक्षा करने लगते और पीठ पीछे उसका मज़ाक उड़ाते और किसी ढंग से बात रुलन के कानों तक भी पहुंचा देते। रुलन के लिए वू-परिवार की हवेली की सुव्यवस्था और शिष्टाचार यातना ही थी।

"शंघाई में बिजली और नल को कितनी सुविधायें थीं······।" रुलन शंघाई की तुलना में हवेली में स्नान के लिए बाल्टियों से जल ढोये जाने, मोम बत्तियों और तेल के लैम्पों की शिकायत करती। उसकी बात पर कौन ध्यान देता ! हवेली के साठ प्राणियों में वह अकेली थी और अभी उसकी गोद भी सूनी थी।

रुलन आधी रात तक बकती ही रही तो त्सेमो ऊब गया। उसने बाहें उठाकर जम्हाई ली और खूब हंसकर बोला—

"हमारे ग़रीब बाप के पीछे तुम क्यों पड़ी हो। वे किसी का क्या बिगाड़ रहे है। नई औरत आयगी तो हमें-तुम्हें महीने-पखवाड़े में दो-चार बार दिखाई ही तो दे जायगी। रात-दिन तो उन्हीं के सिर पर सवार

रहेगी।" त्सेमो ने रुलन की ओर देखा। "अच्छा आ चल आधी रात हो गई। चल सो और मुझे भी सुला।"

त्सेमो उठ कर खड़ा हो गया। उसने एक अंगड़ाई ली। दरवाज़े की ओर बढ़ते हुए रुलन को बुलाने के लिये मुंह से सीटी बजाता चला गया मानो कुतिया को पुकार रहा हो। रुलन बेबस हो उसके पीछे चल दी।

तीन

रात भर गहरी नींद और विश्राम के बाद रानी वू की नींद तड़के ही खुल गई। सुबह उनका मस्तिष्क बहुत साफ़ और सुलझा हुआ रहता था। दिन भर का कार्यक्रम उसी समय बना लेती थीं।

"साहब के लिये दूसरी स्त्री का प्रबन्ध तुरन्त ही हो जाना चाहिये।" —वू ने निश्चय किया। जब तक यह काम हो नहीं जाता परिवार में प्रतीक्षा और आशंका बनी ही रहेगी। आज ही बुढ़िया नाइन को बुलाकर किसी देहाती ढंग की स्त्री के लिये बात करनी होगी। जिन दो-चार स्त्रियों को वे स्वयं जानती थीं वे उन्हें जंच न रही थीं। वे या तो बहुत ही ग़रीब घर की थीं या अमीर घर की लड़कियां, बहुत ऊंचे मिज़ाज की, या अंगरेज़ी स्कूलों में पढ़ी हुईं। यहां आकर रानी को ही ठुकराने की कोश्शि करतीं। या फिर ऐसी कि जिन्हें भले घरों का शिष्टाचार या क़ायदा समझ ही न आ सकता था, आकर गले की मुसीबत बन जातीं। रानी वू ने सोचा कि मंझली स्थिति की देहाती स्त्री ही ठीक रहेगी। इस हवेली से उसका पहले का कोई परिचय न हो। उसके घरवाले भी अपरिचित ही हों। यहां से दूर की हो तो और भी अच्छा, ताकि उसकी सुध अपने घर और लोगों की तरफ़ ही न बनी रहे। यहां आये तो पिछले संबंध तोड़कर और यहां की ही बन जाय।

इंग सुबह की चाय लेकर आई। वू ने उससे कहा—"हम नाश्ता कर लें तो बुढ़िया नाइन लू मा से ज़रा बात करेंगे।"

"जैसा हुक्म, हुज़ूर।"—अभिप्राय समझ कर इंग ने कुछ उदासी से कहा।

रानी को बिस्तर में चाय देकर इंग ने उन्हें गुसलखाने में पहुंचाया। उनके कोमल बाल काढ़कर जूड़ा बांधा और कपड़े पहना दिये। इंग सब काम करती रही परन्तु उदासी के कारण कुछ बोल न सकी। रानी भी चुप थीं। ताज़ी पोशाक में उनका स्वस्थ छरहरा बदन गुड़िया जैसा लग रहा था। इंग उनके लिये नाश्ता ले आई। रानी साहिबा तब भी कुछ न बोलीं परन्तु नाश्ता उन्होंने अच्छी तरह संतोष से किया।

नाश्ते के बाद रानी साहिबा ने चाय समाप्त कर प्याली चौकी पर रखी ही थी कि इंग लू मा को भीतर ले आई। लू मा को सब भेद मालूम था कि उसे क्यों याद किया गया है। सभी बड़े और अमीर घरानों में उसके दूत और दूतियां थे, जिन्हें वह इनाम-इकराम देती रहती। कहीं पति-पत्नी में मनमुटाव हुआ कि लू मा तक बात पहुंचने में देर न लगती थी। देखने में तो लू मा की नाक इतनी बैठी हुई थी कि मालूम ही न पड़ती थी, पर कामातुर स्त्री-पुरुषों की गंध उसे मीलों से मिल जाती, जैसे शिकारी कुत्ता छिपे हुए शिकार की गंध से नथने फुलाने लगता है। लू मा को खूब मालूम था कि वू साहब के लिये रखेल की ज़रूरत है। परन्तु वह इतनी मूर्ख तो नहीं थी कि यह बात प्रकट हो जाने देती। आकर उसने अनुमान प्रकट किया कि रानी के तीसरे पुत्र फेंगमो की सगाई के लिये लड़की ढूंढ़ने की ज़रूरत होगी।

रानी वू भी आदमी पहचानती थीं। जानती थीं कि नौकरों से कानो-कान बात निश्चय ही लू मा तक पहुंच चुकी होगी। परन्तु उन्होंने लू मा का पर्दा बना रहने दिया। लू मा ठिगनी और मुटापे से फूली हुई थी। हांफती हुई भीतर आई। चढ़ती जवानी में निर्वाह के लिये उसे वेश्याओं के एक अड्डे में रहना पड़ा था, परन्तु जल्दी ही मोटापा चढ़ जाने से वह रसिकों की नज़रों में गिर गई। लू मा ने देखा कि अपने शरीर से लोगों

को संतुष्ट करने की अपेक्षा रसिकों के लिये दूसरी स्त्रियां ला देने से आमदनी कहीं अधिक हो सकती है। लू मा ने बड़े यत्न से बचाकर रखी छोटी-सी रक़म एक मामूली-से दुकानदार को दहेज में देकर उससे ब्याह कर लिया और भले घर की गृहिणी बन गई। उसने बड़े लोगों के लिये दूती और घटकी का व्यवसाय आरम्भ कर दिया था। हांफते हुए भीतर आकर उसने रानी को प्रणाम किया—"हुजूर ने बहुत सुबह ही याद किया?"

"हमें कुछ सुबह ही सुविधा रहती है।"—रानी ने मुस्करा दिया। लू मा के आदर के लिये आसन से उठने की आवश्यकता नहीं थी। उन्होंने लू मा को एक चौकी पर बैठने का संकेत किया। इंग ने एक प्याली चाय बनाकर उसके सामने कर दी और बाहर चली गई।

लू मा सुड़क-सुड़क कर चाय पीने लगी। रानी साहिबा के स्थान बदल लेने के संबंध में उसने कोई बात न कही। अलबत्ता बोली—"क्या कहना हुजूर की तन्दुरुस्ती का; उम्र ज़रा भी मालूम नहीं होती। विधाता साहब को तन्दुरुस्त रखें।"

लू मा ने रानी के यौवन और स्वास्थ्य का प्रसंग इसलिये उठाया था कि वे स्वयं ही कहेंगी कि उनका स्वास्थ और यौवन अब किस काम का, साहब तो रखेल चाहते हैं, परन्तु लू मा की आशा के विपरीत रानी ने मुस्कराकर धन्यवाद भर दे दिया।

लू मा ने एक रूमाल निकाल मुंह पर रखा और धीमे से खांसा। कमरे के फर्श पर थूक देने की धृष्टता नहीं की। सभी लोग जानते थे कि ऐसे मुआमलों में रानी का मिजाज़ अंगरेजों से कम नहीं था।

लू मा फिर बोली—"मैं समझ गई थी कि हुजूर छोटे मालिक की सगाई की बात सोच रही होंगी। कुछ लड़कियों की तसवीरें मेरे पास हैं।

लू मा नीले रूमाल में लिपटा एक छोटा-सा बस्ता अपनी गोद में रख खोलने लगी। लू मा ने रूमाल में से एक अंगरेज़ी सिनेमा-पत्रिका एकट्रेसों के चित्रों से भरी हुई निकाली। पत्रिका में से उसने तीन फ़ोटो निकाल

लिये और बोली—"हुजूर, इस समय मेरी नज़र में तीन लड़कियां हैं, एक से एक बढ़कर।"

"बस तीन ?"—रानी वू ने मुस्कराकर पूछा।

लू मा खुशामद में जोर से हंस दी। उसका व्यापार स्त्रियों और पुरुषों के शरीरों का था। अपने सौदे का भाव तो लू मा अनाज और तरकारी के मोल-तोल की तरह ही निस्संकोच करती थी।

"हुजूर तीन ही नहीं।"—लू मा ने तुरन्त उत्तर दिया।

"जितने रिश्ते मेरे हाथ में हैं, कोई घटक-घटकी ला दे तो मैं जानूं। मैं तो बड़े लोगों की बात कह रही हूं। यह खानदानी लड़कियां हैं, जिनके यहां से मुनासिब दाज-दहेज की आशा हो सकती है।"

"वह अंगरेज़ी की किताब तो दिखाओ!"—रानी बोलीं। पति के लिये दूसरी स्त्री चुन लेने का क्षण आ ही पहुंचा तो मन कुछ सहमा। जान पड़ा काम उतना सहज नहीं।

लू मा ने पत्रिका के चित्रों की ओर संकेतकर कहा—"हुजूर मैं इन लड़कियों की बात नहीं कर रही हूं। यह तो अमरीका की लड़कियों की बिजली से बनाई हुई छायाएं हैं।"

"जानती हूं,"—रानी ने मुस्कराकर कहा, "देखूं तो अंग्रेज़ों में सुन्दरता किसे कहते हैं। रानी ने पत्रिका हाथ में ले ली। पत्रिका मैली ज़रूर थी पर फटी नहीं थी। लू मा इस बहुमूल्य वस्तु को बहुत सम्भालकर रखती थी। अंग्रेज़ी दोनों ही नहीं पढ़ सकती थीं इसीलिये एक्ट्रेसों के नाम जान न सकती थीं।

वू ने सिनेमा-पत्रिका के पन्ने पलट-पलट कर खिलखिलाते-मुस्कराते चेहरों पर नज़रें दौड़ाकर विस्मय प्रकट किया—"यह तो सब एक ही-सी लगती है।" और फिर बोलीं—"मेमें सब होती भी तो हैं एक ही जैसी; ··· नहीं क्या ?"

लू मा हो-हो कर हंस पड़ी। "हुजूर क्या कहती हैं, मिस हिसा भी क्या ऐसी ही लगती है?" और फिर बोली, पत्रिका के चित्रों की ओर

संकेत कर—"इन सबको मैं ठिकाने लगा दूं, पर हुज़ूर हिसा के लिए ग्राहक ढूंढ़ लेना मेरे बस का नहीं।"

हिसा को पूरा नगर जानता था। सभी घरों, दूकानों, चायख़ानों और बाज़ारों में लोग हिसा पर हंसते थे। यह सब मानते थे कि कुंआरी बुढ़िया भली और दिल की अच्छी है, लेकिन उस पर हंसने से बाज़ नहीं आते थे। हिसा का एक चीनी बूढ़ा नौकर ही मालकिन के प्रति शिष्टाचार निबाहता था।

एक दिन हिसा का बूढ़ा नौकर मालकिन की खिल्ली होती देख बुरा मान गया। कूंजड़ी और भी हंसकर बोली—"मियां बनते क्यों हो? मिस पादरिन की बात तो तुम्हारे पल्ले भी नहीं पड़ती होगी?"

"पल्ले क्यों नहीं पड़ती? यह मालूम हो कि मिस साहिबा क्या कह रही हैं तो मैं सब-कुछ समझ जाता हूं; समझने में दिक्कत ही क्या?"

रानी वू ने लू मा को उत्तर दिया—"हिसा की बात दूसरी है वह तो साधनी है बेचारी। मैं तो स्त्रियों की बात कर रही हूं। ख़ैर, यह पुस्तक तुम्हें मिल कहां से गई?"

"हुज़ूर दाम देकर खरीदी है।"—लू मा ने गर्व से उत्तर दिया, "छः बरस हुए मेरा एक मिलनेवाला शंघाई गया था, उसे समझा दिया था कि ऐसी किताब चाहिए। पूरे बीस रुपए दिए हैं मैंने इसके।"

"यह तो विलायती स्त्रियों को तसवीरें हैं। तुम्हें इससे क्या फ़ायदा?" रानी ने पूछा।

"हुज़ूर, कुछ लोगों को यह चेहरे अच्छे लगते हैं।"—लू मा ने समझाया, "इन्हें देखकर लोगों की तबियत मचल उठती है और अपना काम चलता है। कुछ लोग नए ढंग की औरतें पसन्द करते हैं। तस्वीर देखकर कह देते हैं कि इस-जैसी औरत लाओ। मैं मिलते-जुलते चेहरे की कोई ढूंढ़ लेती हूं। दूसरे कपड़े-लत्ते पहना दिए, सिर के केश दूसरे ढंग से संवार दिए। ऐसे ही काम चलता है।"

रानी वू ने किताब बन्दकर लू मा की तरफ़ सरका दी और बोलीं—

"अच्छा वह तीन फ़ोटो देखें।" रानी ने लू मा का हाथ न छूने के लिए फ़ोटो कोने से पकड़ लिए।

"यह तीनों भी तो एक ही जैसी लग रही हैं, यह क्या बात है?"—रानी ने पूछा।

"जवान लड़कियां एक ही-सी तो होती हैं हुज़ूर।"—लू मा ने तुरन्त उत्तर दिया।

"घने काले बाल, भरा हुआ चिकना चेहरा, उभरा हुआ छरहरा बदन! किसी ने लाल कपड़ा पहन लिया, किसी ने हरा, नहीं तो लड़की-लड़की में क्या फर्क?"

बहुत ज़ोर के क़हक़हे से लू मा की बड़ी तोंद थलथल हिलने लगी। आंखों में पानी आ गया। समझाने के लिए अगुंली उठाकर बोली—"लेकिन यह बात मर्दों को थोड़े ही बताई जाती है हुज़ूर, नहीं तो अपना कारोबार कैसे चले? मर्दों को तो यही समझाती हूं कि औरतें सब जवाहिर हैं, पर कोई मोती तो कोई नीलम। हाय! मैं बलिहारी जाऊं......" हंसी से आ गए आंसू लू मा ने रूमाल से पोंछ लिए, परन्तु उसकी तोंद हिलती ही रही।

लू मा के अट्टाहास के समर्थन में रानी वू के होंठों पर भी फीकी-सी मुस्कान आ गई। उन्होंने जवान लड़कियों के तीनों फ़ोटो मेज़ पर डाल दिए और बोलीं—"कोई ऐसी लड़की बताओ जिसका घर-बार बहुत नज़दीक न हो!"

"हुज़ूर, पहले मालूम तो हो कि आपको कैसी लड़की चाहिए?"—रानी की बात की ओर एकाग्र होकर लू मा ने पूछा।

"जैसी लड़की हम चाहती हूं हमारे ख्याल में तो हैं।"—रानी ने कुछ झिझकते हुऐ उत्तर दिया।

"हुकुम कीजिए हुज़ूर, फिर दिक़्क़त ही क्या है?"—लू मा ने विश्वास दिलाया, "लड़की धरती पर ज़िन्दा हो, सही आ जायगी।"

"यही,......कोई जवान लड़की।"—रानी वू बोलीं और रुक गईं। पति

के लिए स्त्री के सम्बन्ध में बात करते उन्हें संकोच अनुभव नहीं हुआ था। परन्तु नर-नारियों के शरीरों का सौदा करने वाली इस खूंसट बुढ़िया के सामने ऐसी बात करते वह झिझक गई। लू मा की पैनी आंखे वू के चेहरे पर गड़ी हुई थीं। रानी नज़रें बचाए रहने के लिए आंगन में देखने लगीं। आंगन में उजली धूप फैल गई थी, और पिछले एक दिन पहले साफ़ किए गए फ़र्श के रंग-बिरंगे पत्थर चमक रहे थे।

"स्त्री खूबसूरत होनी चाहिए।"—रानी वू साहस कर बोलीं, "मतलब है देखने में खूब अच्छी हो, नख-शिख चाहे जैसे हों पर फबत खूब हो! उम्र लड़की की, यानि···यानी औरत की, बाईस-चौबीस ठीक रहेगी। मुखड़ा गोल, कोमल और स्वभाव की भोली। ज़िद्दी नहीं चाहिए; मतलब है कि बहल सके, ज़िद करके न बैठ जाय। बाल-बच्चों को चाहती हो। स्वभाव की अच्छी हो। घर-बार कहीं दूर ही हो तो अच्छा है, मां-बाप को ही न बिसूरती रहे······"

"हुजूर लड़की तो है, जैसी आप चाहती हैं,"—लू मा प्रसन्नता से बोली और फिर सहसा गम्भीर होकर बोली, "नहीं हुजूर, वह लड़की आपके मतलब की नहीं। अनाथ है बेचारी, उसके मां-बाप का पता नहीं, वह आपकी बहू कैसे बन सकती है। आपके यहां तो खानदानी ही लड़की चाहिए।"

रानी वू ने लू मा से आंखें मिलाकर शान्त स्वर में उत्तर दिया—"हम फेंगमो की बहू की बात नहीं कर रहे हैं। उसके लिए लड़की हमारे मन में है। यह औरत तो साहब के लिए चाहिए।"

लू मा की आंखें और होंठ विस्मय से फैल गए। रूमाल आंखों पर रख उसने सिर झुका लिया और फिर सम्भलकर बोली—"हा, हाय! विधना, राजा साहब भी······"

रानी वू ने धीमे से इनकार में सिर हिलाया—"नहीं, यह बात नहीं, साहब यह नहीं चाहते। यह हमारी ही इच्छा है।"

लू मा ने रूमाल आंखों से हटाकर कुर्ते के गिरेवान में खोंस लिया।

और संभलकर बोली—"हुज़ूर ऐसी बात है तो मेरा ख़्याल है कि वह अनाथ लड़की बिलकुल ठीक रहेगी। तन्दुरुस्त है और सब तरह से अच्छी है।"

"नहीं, नहीं, हमें नौकरानी नहीं चाहिए।"—रानी वू ने लू मा को टोक दिया, "हवेली में नौकरों की कमी नहीं। मेरे यहां इंग वर्षों से चली आ रही है। वह किसी दूसरी को नहीं सहेगी। नौकरानी नहीं चाहिए।"

"नहीं हुज़ूर, मैं नौकरानी की बात थोड़े ही कर रही हूं!"—लू मा ने विस्मय से कहा, "लड़की बेचारी बड़ी भोली-भाली और भली है......"

"नहीं, ऐसी नहीं। औरत तन्दुरुस्त और हंसमुख होनी चाहिए।"—रानी ने आग्रह किया।

"यही तो मैं कह रही हूं हुज़ूर!"—लू मा ने रानी वू की ओर सरक कर समझाया, "जैसा आप चाहती हैं, वैसी ही है। हजारों में एक है। वह तो कभी की ब्याही गई होती, लेकिन बड़े लोग तो ख़ानदानी लड़कियां चाहते हैं। उसे ऐरे-ग़ैरे के गले को कैसे मढ़ दूं। असल में तो बेचारी भले ही घर की लगती है। जीवन के पूरे ज्वार पर है, इसके बाद ढल ही तो जायगी। तन्दुरुस्त है और चेहरे पर फबत का क्या कहना! मैं तो इसी ख़्याल में थी कि कोई पक्की उम्र का बड़ा आदमी उसे रख ले।

"यह ही समझिये कि विधना ने ग़रीब को आपके लिए ही रोक रक्खा था।"

"उसकी फ़ोटो है?"—रानी ने पूछा।

"उसका फ़ोटो भला मैं क्या लेकर आती, क्या मालूम था उसकी बात उठ सकती है। असल बात तो यह है, उस ग़रीब ने फ़ोटो खिंचवाई कब?"—लू मा ने रूमाल मुंह पर रखकर खांसा। "गऊ-सी सीधी है बेचारी! मैं पहले ही कह दूं, पढ़ना-लिखना नहीं जानती वह हुज़ूर, यह सब तो नई बातें हैं। पहले भले घरों में भी लड़कियां पढ़ती-लिखती कहां थीं? यह तो नया ज़माना है कि अंगरेज़ों की देखादेखी लड़कियां भी पढ़ने लगी हैं।"

"पढ़ने-लिखने की ऐसी कोई ज़रूरत नहीं।"—रानी वू बोलीं।

लू मा ने हाथ उठाकर निर्णय के स्वर में कहा—"तो बस हो गया हुज़ूर। इससे बढ़कर औरत आपके लिए नहीं मिलेगी। देहात में एक बुढ़िया के यहां है। जब हुक्म होगा जाकर ले आऊंगी।"

"कौन है वह बुढ़िया ? क्या करती है बुढ़िया ?"—रानी ने पूछा।

"क्या है बेचारी ! ऐसे लोगों की बात आप क्या सुनेंगी।"—लू मा ने उपेक्षा-सी दिखाई।

"यह लड़की उसे सड़क किनारे पड़ी मिल गई थी। बाइस-तेईस वर्ष पहले की बात है। बुढ़िया अपने भाई के साथ ब्याह-कारज में गई थी। अंधेरी रात में दोनों लौट रहे थे। भाई भी उसका ऐसा-वैसा ही है हुज़ूर, क्या सुनेंगी, दुकानदारी करता है। दुकानदारी भी क्या करता है, गांव-गांव फेरी लगाया करता है। उन लोगों ने सड़क किनारे अंधेरे में रोते बच्चे की आवाज़ सुनी तो देखा चार-छः महीने की बच्ची कपड़े में लिपटी पड़ी थी। औरत ने कहा हाय ग़रीब मर जावेगी, पर इसे घर ले जाऊँ तो खिलाऊँगी क्या ? मेरे यहां तो अपना पेट भरने को भी नहीं। उसके भाई ने कहा, तू इसे पाल ले में कुछ मदद कर दूंगा। मेरा लड़का है उसके लिए बहू हो जावेगी। नहीं तो मैं लड़के की बहू के दाम कहां से दूंगा। औरत उसे उठा लाई। भाई का लड़का चौदह-पन्द्रह बरस का था तो प्लेग में मर गया। सो लड़की यों ही पड़ी है।"

रानी ने आंखें लू मा के चेहरे पर गड़ाए हुए पूछा—"लड़की वह दे देगी ? बाद में कोई हक़ तो नहीं जतायगी ?"

"दे क्यों नहीं देगी हुज़ूर।"—लू मा ने उत्तर दिया, "बेचारी बड़ी ग़रीब है और लड़की कौन उसके अपने पेट की है !"

रानी साहिबा ने कुर्सी पर करवट बदली और बोलीं—"औरत देख लें।" फिर सोचकर बोलीं—"देखने की क्या ज़रूरत है ? तुम हमारे साथ धोका थोड़े ही करोगी ! तुम ठीक ही कह रही हो, लड़की जैसी एक वैसी दूसरी, स्वभाव की अच्छी होनी चाहिए।"

"हुज़ूर क्या दे देंगी उसके लिए।"—लू मा ने पूछा।

"कपड़ा-लत्ता तो वह साथ कुछ लायगी नहीं। उसके लिए हमें ही बनवाना होगा।"—वू ने सोचकर कहा।

"हुज़ूर, ठीक फ़रमा रही हैं, पर लड़की बुढ़िया के पेट की तो है नहीं। उसे क्या परवाह कि यहां लड़की को क्या दिया जायगा!"—लू मा ने कहा, "उसे तो अपने लिए पैसा चाहिए।"

"देहात की लड़की है, उसके लिए चार-पांच सौ रुपया बहुत है।"—वू ने साधारण ढंग से उत्तर दिया, "हम कुछ और दे देंगे, हजार रुपया दे देंगे।"

"हुज़ूर दो सौ और बढ़ा दीजिए।"—लू मा ने प्रार्थना की। उसके माथे पर पसीना आ गया। "हज़ार रुपया तो बुढ़िया को ही दे देना होगा। लड़की, हुक्म हो तो, आज ही हाज़िर कर दूं।"

लू मा के पसीने से चिकने चेहरे और आंखों में याचना का भाव झलक आया। उसने हाथ जोड़ दिए, वू ने सांत्वना दी।

"वह भी हो जायगा, तुम्हारा हक़ तुम्हें मिल जायगा। उसकी चिन्ता मत करो।"

"ग़रीब परवर आपका ही आसरा है।"—लू मा ने संतुष्ट होकर धन्यवाद दिया और अंगरेजी पत्रिका और फ़ोटो समेटने लगी। और फिर रानी की ओर हाथ जोड़कर बोली—"हुज़ूर, हुक्म हो तो छोटे कुंवर के लिए भी कोई खूबसूरत खानदानी लड़की बताऊं। दो सौदे एक साथ हो जायं तो कुछ सस्ते में बन जायगा।"

"नहीं, अभी जरूरत नहीं है।"—वू ने कुछ रुखाई से उत्तर दे दिया, "फेंगमो की अभी उम्र ही क्या है।"

"ठीक फ़रमा रही हैं आप हुज़ूर,"—लू मा ने रानी का समर्थन किया, "बिलकुल सही कह रही हैं। लड़कों के लिए क्या जल्दी! बेचारे बूढ़ों का ही ख्याल पहले किया जाना चाहिए। क्या कहने हुज़ूर के, हमेशा ठीक ही बात कहती हैं!"

लू मा अपना बस्ता संभालकर उठ खड़ी हुई और पूछा—"हुजूर, हुक्म हो तो लड़की को आज ही पहुंचा दूं।"

"सांझ सूरज डूबते समय ले आना।"—रानी ने अनुमति दी।

"बहुत ठीक, क्या कहना!"—लू मा ने फिर समर्थन किया।

"सही फरमा रही हैं। दिन में नहा-धो लेगी, सिर और कपड़े भी धो लेगी।"

"उसे अपने साथ कोई चीज़ लाने की ज़रूरत नहीं है।"—वू ने चेतावनी दी।

"कोई सन्दूकची-बक्सा या चीज़-वस्तु कुछ न लाये। बदन पर कपड़ों के सिवा कुछ नहीं।"

"ऐसा ही होगा हुजूर, पूरा ख्याल रक्खूंगी।"—लू मा ने झुककर बड़-बड़ाया और बचपन में बांधकर बढ़ने न दिए गए अपने छोटे-छोटे लुंजे पैरों पर डगमगाती हुई चली गई।

लू मा के जाते ही इंग ताज़ी चाय लिए भीतर आई। इंग कुछ बोली नहीं, रानी भी चुपचाप देखती रहीं। इंग ने मेज़ को फिर साफ़ किया। जिस कुर्सी पर लू मा बैठी थी उसे भी झाड़ दिया। लू मा के जूठे प्याले को घृणा से उठाकर इंग लौट रही थी, तो रानी ने कहा—"सांझ सूरज डूबते समय एक लड़की डचोढ़ी पर आयगी।" इंग जूठा प्याला हाथ में लिए चुपचाप सुनती रही। "उस लड़की को सीधे हमारे यहां ले आना। साथ के कमरे में उसके लिए एक खाट डाल देना।"

"जो हुक्म हुजूर।"—इंग रुंधे हुये कंठ से बोली और आंखों में छलक आए आंसू छिपाने के लिए बाहर खिसक गई।

× × ×

रानी वू दोपहर के भोजन के बाद कुछ देर विश्राम के लिए अपने शयनागार में चली जाती थीं। उस दिन भी जाकर मसहरी के पर्दों में अपनी सेज पर लेट गईं, परन्तु नींद न आई। बेचैनी-सी अनुभव हो रही

थी। बेचैनी का कारण नया स्थान नहीं था। स्थान को तो उन्होंने एक ही दिन में अपना लिया था। बेचैनी उनके मन में थी।

"आज हम सोयेंगे नहीं।"—वू ने कहा। इंग ने चिंता से रानी की ओर देखकर अनुरोध किया—"हुज़ूर सो जातीं तो अच्छा था। रात साथ वाले कमरे में यहां कोई और भी रहेगा तो हुज़ूर को नींद नहीं आ पायगी।"

"नींद आ नहीं रही है,"—वू बोलीं। इंग की आंखों में ममता और चिंता देख उन्हें कुछ झेंप-सी लगी। इंग की बांह पर हाथ रख उसे परे हटाते हुए बोलीं—"हट, अब तू जा। मैं कुछ पढ़ूंगी।"

"जो हुक्म हुज़ूर।"—इंग ने उत्तर दिया और कुछ मान में तुरन्त बाहर निकल गई। वू कमरे के बीचोबीच खड़ी रह गईं। एकांत में उंगली होंठों पर रख ज़रा मुस्कराईं और फिर [illegible] के कमरे की ओर बढ़ गईं। विचार आया—कितने ही लोग पहले यहां इन पुस्तकों को पढ़ते रहे होंगे, पर वे सब पुरुष थे। एक बार फिर झीनी मुस्कान होंठों पर आ गई। सोचा, अब मैं अकेली हूं, स्वतन्त्र हूं, बिलकुल आत्म-निर्भर और स्वच्छन्द। दृष्टि ससुर द्वारा निषिद्ध पुस्तकों की ओर गई—अब इन्हें भी पढ़ूंगी।

स्वर्गीय ससुर को जब यह मालूम हुआ कि बहू पढ़-लिख भी सकती है तो उन्होंने स्वयं ही नीली जिल्दें बंधी इन पुस्तकों की ओर संकेत कर कह दिया था—"बेटी, यह पुस्तकें तुम्हारे काम की नहीं हैं।" वे पुस्तकें पढ़ना मना करके भी ससुर ने उन्हें ताले में बन्द नहीं कर दिया था। वैसे ही एक ओर पड़ी रहने दिया।

रानी ने पूछा—"क्यों, क्योंकि मैं स्त्री हूं?"

"हां! लड़के को भी मैंने लड़कपन में यह पुस्तकें न पढ़ने के लिये कह दिया था।"

"उन्होंने तो शायद अब पढ़ ली होंगी?"—बहू ने निस्संकोच पूछ लिया।

ससुर को कुछ झेंप-सी अनुभव हुई, परन्तु उत्तर दिया—"हां मेरा अनुमान है कि पढ़ ली होंगी। मैंने उससे कभी पूछा तो नहीं, परन्तु सभी

नौजवान ऐसी पुस्तकें जरूर पढ़ते हैं। पुस्तकें हैं तो पढ़ी ही जायंगी। मैंने लड़के से कह दिया था—"इन पुस्तकों को पढ़ना चाहते हो तो सोलह वर्ष की आयु से पहले मत पढ़ना और यहां इसी कमरे में बैठकर पढ़ लेना। चोरी से स्कूल की पुस्तकों में छिपाकर पढ़ने की जरूरत नहीं है।"

बहू ने एक और टेढ़ा प्रश्न पूछा था—"पिताजी मैं क्या सोलह वर्ष के लड़के-जितना भी नहीं समझ सकती?"

स्वर्गीय राजा साहब विद्वान् और बुद्धिमान् तो थे ही पर स्पष्टवादी भी थे। गम्भीर मुद्रा में उन्होंने उत्तर दिया था—"बेटी समझ की कमी तुम में नहीं है। लाखों स्त्रियों में एक हो। तुम्हारा मस्तिष्क किसी पुरुष का होता तो बड़ी से बड़ी परीक्षा पास कर देश का शासक होता, परन्तु तुम हो तो स्त्री ही। तुम्हारा रक्त स्त्री का है, हृदय स्त्री का है और शरीर स्त्री का है, तुम्हें स्त्री का जीवन बिताना है। स्त्री के शरीर में मस्तिष्क और समझदारी बहुत अधिक बढ़ जाना भी ठीक नहीं रहता।"

और इसके बाद जो प्रश्न रानी ससुर से पूछ बैठी थीं धृष्टता ही मान लिया जाता, परन्तु स्वर्गीय राजा साहब बहू को समझ चुके थे और वत्सलता से सभी कुछ क्षमा कर सकते थे। बहू ने पूछ लिया था—"पिताजी, आपका मतलब है कि नारी के मस्तिष्क की अपेक्षा शरीर का ही महत्त्व अधिक है।"

बहू का प्रश्न सुनकर वृद्ध पुस्तकालय की मेज़ के समीप पड़ी भारी कुर्सी पर बैठ बहुत देर चुपचाप सोचते रहे थे। रानी साहिबा आज उसी कुर्सी पर बैठी हुई थीं। बीस वर्ष पहले की घटना उनकी आंखों के सामने फिर रही थी। वृद्ध ने सहारे के लिये अपनी सफ़ेद दाढ़ी को थाम विचार-मग्न हो जो उत्तर दिया था वह भी उन्हें अक्षरशः याद था। वृद्ध ने कहा था—"जीवन का अनुभव तो यही है। हां यह ठीक है नारी के मस्तिष्क की अपेक्षा उसके शरीर का ही महत्त्व अधिक है। पुरुष तो मनुष्य को जन्म नहीं दे सकता। नारी के बिना मनुष्य का अस्तित्व कैसे चलता! विधाता ने नारी-शरीर के पात्र में ही सृजन की शक्ति सौंप दी है। इसीलिये नारी

का शरीर मनुष्य के लिये अमूल्य है। पुरुष यदि सृजन न कर सके तो उसका जीवन निरर्थक है। पुरुष बीजमात्र है, नारी-शरीर ही उस बीज से फूल और फल उत्पन्नकर पुरुष की सृष्टि कर सकती है।"

रानी बू को याद आ रहा था—वे उस विद्वान् वृद्ध के सामने खड़ी ध्यान से उनकी बातें सुन रही थीं और उन्होंने प्रश्न किया था—

"पिताजी मैं तो नारी हूं, तो फिर मेरे शरीर में मस्तिष्क है ही क्यों ?"

वृद्ध के होंठों पर मुस्कान आ गयी। "मैं क्या उत्तर दे सकता हूं ?"— उन्होंने उत्तर दिया, "तुम इतनी सुन्दर हो, वास्तव में मस्तिष्क की ज़रूरत तो तुम्हें थी नहीं।"

वृद्ध के उत्तर से दोनों एक साथ हंस पड़े थे। नवयुवती बहू की हंसी का जल की कोमल धार के समान स्वर और वृद्ध के गले का थका हुआ और रूखा शब्द एक साथ मिल गए थे। वृद्ध कुछ देर के लिए सोच में पड़ गए।

"बेटी, तुमने जो प्रश्न पूछा उसके बारे में मैं स्वयं भी कई बार सोचता रहा हूं, खासकर जब से तुम इस घर में आई हो।"—वृद्ध ने बहू से कहा, "हम लोगों ने लड़के के लिए तुम्हें पसन्द किया था, क्योंकि तुम सुन्दर और सहृदय हो और तुम्हारे दादा इस प्रान्त के गवर्नर थे। यह तो विवाह के बाद ही पता लगा कि तुम इतनी बुद्धिमती भी हो। सोने में सुगन्ध हो गई। पर बेटी तुम बुद्धिमती न होतीं तो भी काम तो चलता ही, कोई नुक़सान नहीं होता। इस घर में तो इतनी ही बुद्धि आवश्यक है कि बहू हिसाब-किताब देख सके, नौकरों-चाकरों पर निगाह रख सके और प्रबन्ध सँभाल सके। परन्तु तुम तो तर्क और विचार करती हो। इनका गृहस्थ में क्या उपयोग हो सकेगा, मुझे तो नहीं मालूम। यदि तुम इतनी गम्भीर और समझदार न होती तो तुम्हारी चेतना और बुद्धि से इस परिवार में झंझट खड़ा हो जाने की सम्भावना रहती, परन्तु तुम गम्भीर और समझदार भी

हो इसलिए आशंका नहीं। तुम सीमायें पहचानकर अपने आपको वश में रख सकोगी।"

बहू बहुत देर से शिष्टाचार में दोनों हाथों को सामने एक-दूसरे पर रखे वृद्ध के सामने खड़ी थी। वृद्ध का ध्यान उस ओर गया, बोले—"बेटी बैठ जाओ, थक जाओगी। तुम्हारे लिए इस तरह खड़े होना जरूरी नहीं है।"

बहू विचार में गहरी डूबी हुई थी। ससुर की बात कान में न पड़ी, वैसे ही खड़ी रही और उन्होंने पूछा—"पिताजी, तो मेरे स्वामी को मेरा बुद्धिमान् होना अच्छा नहीं लगेगा ?"

वृद्ध का सिर विचार में झुक गया। अपने दुबले-पतले कोमल सूखे पत्ते की तरह पीले पड़ चुके हाथ से उन्होंने फिर अपनी दाढ़ी थाम ली। गहरी साँस लेकर उन्होंने उत्तर दिया—

"हां यह समस्या हो तो सकती है। बुद्धि विधाता की बहुत बड़ी देन है परन्तु इस बोझ को सम्हालना भी आसान नहीं है। धनी और निर्धन के भेद से कहीं बड़ा भेद बुद्धिमान् और बुद्धिहीन लोगों में होता है। प्रायः ही लोग अधिक बुद्धिमान् लोगों से द्वेष और ईर्षा करने लगते हैं। बुद्धिमान् चाहे कितना उदार बन जाय, कम समझ आदमी में बुद्धिमान् के प्रति कुछ संकोच बना ही रहेगा।"

"क्यों पिताजी ?"—बहू ने सहमकर पूछा। एक आतंक-सा मन पर छा गया था—क्या वह पति का आदर और स्नेह नहीं पा सकेगी? उसकी बुद्धि भी उसका साथ न दे सकेगी ?

"देखो बेटी,"—वृद्ध ने विचार से बोझल दबे शान्त स्वर में समझाया, "मनुष्य वास्तव में अपने आपको ही प्रेम करता है। विधाता मनुष्य को जीवन की प्रेरणा देने के लिए ही उसके हृदय में प्रेम उत्पन्न करता है, ताकि दुःख और सन्ताप में भी जीवन की कामना बनी रहे। जिस बात या कारण से किसी के आत्म-प्रेम या अहंभाव ो ठेस लगे उसे मनुष्य सह नहीं सकता। आत्म-प्रेम या अहंभाव पर चोट पड़ने से जीवन की प्रेरणा या

इच्छा ही समाप्त हो जाती है। ऐसी वस्तु से प्रेम कर सकना अप्राकृतिक है।"

"पिताजी, तो क्या मेरे स्वामी मुझसे घृणा करने लगेंगे ?"—बहू ने घबराकर पूछा। स्पष्ट शब्दों में न कहने पर भी ससुर का अभिप्राय स्पष्ट था कि बहू उनके पुत्र की अपेक्षा अधिक बुद्धिमती थी, इसलिए वे उसे चेतावनी दे रहे थे।

"बेटी,"—वृद्ध ने उत्तर दिया, "पुरुष जिस पत्नी को आश्रय देता है और जिससे संतोष पाता है उसे अपने से अधिक समर्थ और बुद्धिमती कैसे स्वीकार कर सकता है। ऐसा मानना पड़ेगा तो पुरुष में हीनता का भाव आ जायगा। वह पत्नी से श्रद्धा करेगा भी तो प्यार नहीं कर सकेगा। बेटी, जीवन का संतोष श्रद्धा से नहीं प्यार से चलता है। लोग मन्दिरों में नहीं घरों में ही रह सकते हैं। पुरुष देवी को आलिंगन में नहीं ले सकता, इतनी सामर्थ्य उसमें नहीं है।"

बहू ने निषिद्ध पुस्तकों की ओर संकेतकर सहसा पूछ लिया—"पिता जी, मैं इन पुस्तकों को क्यों न पढ़ डालूं ?" वृद्ध पल भर को सहम से गए और उनकी आंखें बहू की ओर उठ गयीं, परन्तु चुप ही रहे। उत्तर न देकर वे समीप रक्खी चाय प्याले में डालने लगे।

बहू ने आगे बढ़कर कहा—"पिताजी मैं बना दूँ ?" और चाय बनाने लगी। वृद्ध ने चाय के दो-तीन घूंट लिये और फिर आंखें झुकाये ही बोले—"बेटी, मेरी बात शायद तुम्हारी समझ में न आये। समझ में न आने पर भी तुम मेरी बात मान लो। यह पुस्तकें न ही पढ़ो तो अच्छा है। नारी भोली या अबोध जान पड़े तो पुरुष या पति को अच्छा लगता है। तुम यूं ही इस उम्र में भी इतनी समझदार हो, इतना अधिक जानती हो। तुम्हें इन पुस्तकों को पढ़ने की जरूरत नहीं। बस, एक बात का ध्यान रखो, पति को संतुष्ट रखना है, उससे प्यार करना है। पुस्तकें क्या बतायेंगी !"

वृद्ध के उत्तर से बहू का समाधान नहीं हुआ। मेज का सहारा लिये खड़ी वह वृद्ध की ओर देखती रही और सोचा—इनसे अधिक समझदार

और बुद्धिमान् तो मैंने कोई दूसरा देखा नहीं। मेरी अपेक्षा अधिक ही समझते हैं। जब मैं स्वयं समझूंगी देखा जायगा, अभी इनकी ही बात मानूं।

"पिताजी जैसी आपकी आज्ञा, इन पुस्तकों को नहीं पढ़ूंगी।" रानी वू ने कहा और बीस वर्ष तक उस आज्ञा का पालन किया। परन्तु उस दिन फिर उसी कमरे में ससुर की कुर्सी पर बैठकर रानी वू को अनुभव हुआ कि वे ससुर के समान ही बुद्धिमान् और समझदार हो गई हैं। उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा भी पूरी कर दी है। आज उनपर किसी का भी नियन्त्रण नहीं—स्वर्गीय वृद्ध का भी नहीं।

रानी वू उठकर निषिद्ध पुस्तकों की ओर बढ़ीं। उनका हृदय धड़क रहा था। उनमें से अनेक उपन्यासों और कहानियों के नाम उन्हें मालूम थे। सुना था कि विद्वान् और पंडित लोग ऐसी पुस्तकें नहीं पढ़ते। ऐसी पुस्तकें उनके योग्य नहीं। ऐसी पुस्तकों से केवल असंस्कृत और अपरिमार्जित रुचि के लोगों, जो वास्तविक ज्ञान की गहराई तक नहीं पहुच सकते, का ही विनोद होता है। परन्तु इन पुस्तकों को पढ़ते सभी लोग हैं—ज्ञानी और विद्वान्। वृद्ध ने स्वयं उन्हे पढ़ा था और अपने पुत्र को भी पढ़ने दिया था। जानते थे कि पुत्र को पढ़ने नहीं देंगे तब भी वह पढ़ ही लेगा।

सब पुरुष जो बात जानते हैं यदि एक स्त्री भी जान जाय तो क्या?—रानी वू ने सोचा।

कपड़ा मढ़े बक्स में बहुत-सी जिल्दें पड़ी थीं। रानी ने एक जिल्द खींच ली। इस पुस्तक का नाम उन्होंने पहले नहीं सुना था। उनके अपने मायके में और वू-परिवार जैसे बड़े घरानों में सभी तरह के लोग होते हैं, कुरुचि के लोग भी होते ही हैं। 'हसी मेन और छः पत्नियां' की कहानी काफ़ी प्रसिद्ध थी। 'बेर के फूलों का गुच्छा' की जिल्द साटिन की थी और नाम बहुत सुन्दर ढंग से लिखा हुआ था। देखने से ही मालूम होता था कि पुस्तकें कई हाथों से गुज़री हैं। वू-परिवार की अनेक पीढ़ियों के पुरुषों ने

उन्हें पढ़ा था परन्तु स्त्रियों में केवल रानी बू ही उन्हें हाथ लगा रही थीं। रानी उन पुस्तकों को मेज़ पर ले आईं और एक पुस्तक के पन्ने पलट चित्र देखने लगीं। चित्र कलापूर्ण थे। कलाकार ने रेखाओं द्वारा कामुकता की भावना का प्रदर्शन सफलतापूर्वक किया था। रानी 'हसो मेन' का चेहरा अनेक चित्रों में ध्यान से देखती रहीं। काम-वासना में अत्यन्त आसक्ति से हसी मेन का यौवन से खिला चेहरा उत्तरोत्तर डूबकर मरे अदमी के फूले हुए चेहरे की तरह हो गया था। रानी चित्रों को ध्यान से देखकर कथानक का क्रम समझने का यत्न कर रही थीं। कहानी के पात्र ने अपनी आत्मा और मस्तिष्क की उपेक्षाकर केवल शारीरिक तृप्ति के लिये ही यत्न किया था।

रानी पढ़ने लगीं और घंटों पढ़ती रहीं। संध्या हो गई परन्तु उन्हें सुध न थी। इंग ने कई बार दरवाजे पर आकर भीतर झांका और विस्मित हो लौट गई। रानी बू को कुछ पता न था। अंधेरा हो जाने पर पढ़ा नहीं गया तो पुस्तक बन्दकर चारों ओर देखा। चारों ओर ऐसे देखा कि अपरिचित स्थान में आ गई हों।

"बाबा के कहने से इन पुस्तकों को इतने दिन नहीं पढ़ा था।"—धीमे स्वर में रानी के होंठों से निकल गया, "पढ़ना ही चाहिये था।" परन्तु उस समय फिर पढ़ने की इच्छा नहीं हुई जैसे मन भर गया हो या कुछ ऊब गया हो। पुस्तकें उठाकर बक्स में रख ताला लगा दिया। उठकर कमरे में टहलने लगीं। सोचा, जवानी में इन्हें न पढ़ना ही अच्छा था; पुस्तक अच्छी नहीं है। लेखक ने इस चतुरता से लिखा है कि पाठक उसमें मनचाही भावना पा सकता था, चाहे तो वासना और चाहे तो वासना के परिणामों की शिक्षा। बू को ख्याल आया वृद्ध का कहना ठीक-ही था। पुस्तक नवयुवकों के योग्य नहीं। यदि बीस साल पहले पढ़ ली होती तो क्या सीख लिया होता। शायद पढ़ने का यह प्रभाव होता कि पति के साथ सेज पर जाने के विचार से मन कांप उठता। वृद्ध का कहना ठीक ही था। नौजवान और कमउम्र ऐसी बातों को समझ नहीं सकते। आयु और अनुभव बढ़ने के

साथ ही उन्हें ऐसा परिचय भी मिलना चाहिये। ज्ञान भी आयु के अनसार ही पच सकता है।"

भीतर दरवाज़े की ओर से एक छाया पड़ी। रानी का ध्यान उस ओर गया। इंग के पीछे आंगन में कोई और भी था।

"हुजूर नाइन लू मा आई है······लड़की आ गयी।"–इंग ने बताया।

रानी वू ने दोनों हाथों में चेहरे को थाम लिया। पल भर के लिये सन्न रह गईं। फिर तुरन्त हाथ नीचे कर कुर्सी पर बैठ गई और इंग की ओर देखकर बोलीं—"रोशनी कर दो। लड़की को यहां ले आओ, बुढ़िया की ज़रूरत नहीं।"

इंग लड़की को लाकर दरवाज़े पर छोड़ गई। लड़की के चेहरे पर मोमबत्ती का कोमल प्रकाश पड़ रहा था। लड़की का चेहरा और शरीर रानी साहिबा की कल्पना के अनुरूप ही निकला। चेहरे पर स्वास्थ्य की ताजगी और सुर्खी, बड़ी-बड़ी काली भोली आंखें। काले बाल देहातिनों की तरह चुटिया में गुंथे हुए। रूमाल में बंधी हुई एक छोटी गठरी हाथ में थी।

"यह हाथ में क्या है?"—रानी वू ने पूछा, "हमने तो कहा था, कुछ साथ लाने की ज़रूरत नहीं।"

लड़की ने बच्चों के-से भोलेपन से उत्तर दिया—

"अण्डे हैं। मैंने सोचा शायद आपको अच्छे लगें। मेरे पास और कुछ नहीं था। बिलकुल ताज़े हैं।"—लड़की का स्वर मधुर था परन्तु मुद्रा में देहातियों की-सी झिझक थी।

"देखें, कैसे अण्डे हैं।"—रानी वू ने उसे बुलाया।

लड़की छोटे-छोटे क़दमों से सहमती हुई आगे बढ़ी कि उसके क़दमों से घर की स्तब्धता भंग न हो जाय। रानी वू ने उसके पैरों की ओर देखा और पूछा—"क्यों, तुम्हारे पांव नहीं बांधे गये थे?"

लड़की शरमा गई। "कोई था ही नहीं बांधनेवाला।"—उसने उत्तर दिया, "और मुझे तो खेतों में काम करना पड़ता था।"

इंग पीछे से बोल पड़ी—"हुज़ूर देखिये तो कितने बड़े-बड़े पांव हैं। गंवार बच्चों की तरह नंगे पांव रही है तभी तो ऐसे भद्दे हैं।"

लड़की चिंता से कभी रानी की ओर और कभी इंग की ओर विस्मय से देखती खड़ी रह गई।

"हां, अण्डे देखें।"—रानी फिर बोलीं। लड़की आगे बढ़ आई, रूमाल मेज़ पर रख दिया। गांठ खोलकर उसने एक-एक अण्डे को उठाकर ध्यान से देखा और बोली—"कोई नहीं टूटा। मैं डर रही थी रास्ते में कोई टूट न जाय। पन्द्रह हैं······।" लड़की आगे बोल न सकी। वू भांप गई—सोच रही है क्या कहकर सम्बोधन करे।

"देखो, हम तुम्हारी बड़ी बहन हैं।"—रानी बोलीं।

लड़की और शरमा गई। रानी को जीजी सम्बोधन करने का साहस उसे न हुआ। उसने केवल इतना कहा—"पन्द्रह अण्डे हैं। सभी ताजे हैं, आपके लिये लाई हूं।"

"धन्यवाद!"—रानी ने स्वीकार किया, "हां ताजे ही तो लगते हैं।"

रानी ने इतनी ही देर में समीप खड़ी लड़की को बहुत कुछ जांच लिया। उसके श्वास में प्यारी भीनी गंध थी। शरीर से स्वास्थ्य फूट रहा था। दांत मोतियों-जैसे उजले और सुन्दर थे। रूमाल की गांठ खोलते समय रानी ने देखा कि मेहनती हाथ कड़े ज़रूर थे परन्तु सुन्दर थे। धुले हुए नीले सूती कुरते और पैजामे के भीतर लड़की के छरहरे शरीर की सुघड़ गोलाइयां झलक रही थीं। गर्दन सुथरी और कोमल थी। चेहरा भोला और प्यारा।

रानी वू ने मुस्करा कर पूछा—"तुम यहां रहोगी; अच्छा लगेगा?" रानी के होंठों पर मुस्कान थी परन्तु मन में लड़की के प्रति सहानुभूति। बेचारी पशु की तरह खरीद कर उस घर में लाई गई थी। लड़की के भद्दे मोटे कपड़े, तथा धूप और कठिन परिश्रम से रूखे शरीर में भी उन्हें नारी का लावण्य और कोमलता की झलक दिखाई दे रही थी।

रानी की सहानुभूति से लड़की का साहस बढ़ा। रानी के प्रति आदर

से उसने कहा—"लू मा कह रही थी आप बड़ी मेहरबान हैं। आप दूसरी औरतों-जैसी नहीं हैं। लू मा ने कहा था—-आप को खुश रखना। मैं ऐसा ही करूंगी।"—लड़की एक साथ कह गई।

"अच्छा, तुम हमें सब कुछ सच-सच बता दो।"—रानी ने लड़की को सान्त्वना दी, "कुछ छिपाना नहीं। सच बोलोगी तो हम तुम्हारा बहुत ख्याल करेंगे।" अपने प्रति लड़की की श्रद्धा और आदर देखकर रानी को कुछ विस्मय और संकोच-सा अनुभव हुआ।

"मैं सब कुछ सच-सच कह दूंगी,"—लड़की ने वचन दिया, "पहले यह अण्डे रसोई घर में दे आऊँ।"

"नहीं रहने दो।"—वू ने कहा। सोचा नौकर-चाकर इसे देखेंगे तो हैरान होंगे। उनके होंठों पर मुस्कान आ गई। "अण्डे इंग ले जायगी। तुम सामने कुर्सी पर बैठ जाओ। हम दोनों बात करेंगे।"

लड़की ने अण्डे फिर रूमाल में बांध दिये और कुर्सी के किनारे पर अटक कर बैठ गई। उसके चेहरे पर कुछ परेशानी-सी दिखाई दे रही थी।

"भूख तो नहीं लगी ?"—रानी वू ने पूछा।

"नहीं जी।"—लड़की ने संभलकर हाथ गोद में रख उत्तर दिया।

"सच बताओ, भूख नहीं लगी ?"—-वू ने मुस्करा कर पूछा।

लड़की हंस पड़ी। उसकी हंसी भी भोली और प्यारी थी। "क्या करूं मुझे बात करनी नहीं आती। लू मा ने कहा था खाने के लिये पूछें तो न कर देना। नहीं तो समझेंगे बड़ी लालची है।"

"क्यों सुबह कुछ खाकर नहीं चली थी ?"—-रानी ने पूछा।

लड़की शरमा गई। "हम लोग एक ही बार खाते हैं। मां ने कहा था कि तुझे वहाँ खाना........"

रानी वू ने उसे टोककर इंग को हुक्म दिया—-"खाना लाओ।"

लड़की ने गहरी सांस ली और जरा आराम से हो गई, पर आंखें झुकाये रही।

वू सोचती रहीं बस ज़रा लम्बी कुछ ज़्यादा है। कहीं उत्तर की तरफ़

की है। उत्तर में पीली नदी की बाढ़ या अकाल से भागकर आ रहे होंगे। बच्चों को संभाल पाना कठिन होगा। इसे लड़की समझ कर मरने के लिये छोड़ दिया होगा।

"लू मा कहती है कि तुम्हारे मां-बाप नहीं हैं?"—रानी ने पूछा, "तुम्हें कुछ मालूम है उन लोगों का?"

लड़की ने इनकार में सिर हिलाया। "मुझे होश कहां आया था। यह मुझे मालूम है, मुझे कहां छोड़ गये थे। हम शहर आते थे तो मां यह बताती थीं कि तुम्हें यहां पड़े पाया था। मां बताती हैं कि मेरे साथ ऐसी कोई चीज़ ही नहीं थी जिससे मेरे घर-बार का पता चलता। कहती हैं कि मैं चीथड़ों में लिपटी हुई थी। कहते हैं चीथड़े सूती नहीं थे रेशमी थे।"

"वह रेशमी चीथड़े तो तुम्हारे पास हैं न?"—रानी ने पूछा।

लड़की ने सिर हिलाकर स्वीकार किया और विस्मय से पूछा—"आपने कैसे जाना?"

"हमने सोचा वह चीथड़े तुम्हारी अपनी चीज़ थे। शायद तुम उन्हें अपने पास रखना चाहो।"—रानी ने लड़की की आंखों में मुस्कराकर उत्तर दिया।

"हैं तो, पर मेरे मन की बात आपने कैसे जान ली?"—लड़की ने आग्रह किया।

"दिखाओ तो वह कपड़ा!"—रानी ने कहा। यह रहस्य वे कैसे भांप गई थीं बताना आवश्यक नहीं समझा।

लड़की ने तुरन्त अपने कुर्ते के भीतर हाथ डाल कर रेशम का एक साफ़-सुथरा तहाया हुआ टुकड़ा निकाल कर बाहर रख दिया। कपड़ा धुला हुआ था। धुलने से उसका रंग फीका गुलाबी हो गया था। वू ने कपड़े की तह खोल कर देखा, जनाने कुर्ते का टुकड़ा था। आस्तीनें चौड़ी रही होंगी और पहनने वाली का क़द कुछ लम्बा।

"यह तुम्हारी मां का होगा; वह भी लम्बी ही थीं।"—रानी ने अनुमान प्रकट किया।

"होंगी, आप को कैसे मालूम हुआ?"—लड़की ने विस्मय प्रकट किया।

रानी वू कुछ देर रेशमी कुर्ती के टुकड़े के गले और पल्लों की कढ़ाई को ध्यान से देख कर बोलीं—"बहुत महीन कढ़ाई है! यह तो पेकिंग की कढ़ाई है। कितना महीन टांका है।"

"मुझे तो नहीं मालूम।"—लड़की ने धीमे से अज्ञान प्रकट किया।

"हमें भी और क्या मालूम।"—रानी बोलीं। रानी ने कपड़े का टुकड़ा तहा कर लड़की की ओर बढ़ा दिया।

"आप रख लीजिये, मैं क्या करूँगी।"—लड़की ने कहा।

"अच्छा मैं रख लूंगी। जब चाहो हम से ले लेना।"—रानी ने कहा।

"आप मुझे यहां रख लेंगी तो मुझे इसका क्या करना।"—लड़की ने फिर कहा।

बात टाल कर रानी बोलीं—"तुमने तो अपना नाम भी नहीं बताया।"

लड़की की आंखें झुक गईं। "मेरा कोई नाम ही नहीं है।"—धीमे से उसने कहा, "वे लोग पढ़े-लिखे तो नहीं हैं। मैं भी कुछ नहीं जानती।"

"पर तुम्हें कुछ पुकारते तो होंगे?"—रानी ने पूछा।

"कभी पुकारते थे तो 'अनाथ' कह कर पुकार लेते थे।"—लड़की ने कहा।

"यह भी कोई नाम है?"—रानी ने सहानुभूति प्रकट की, "अच्छा हम तुम्हारा नाम रख देंगे।"

"मेहरबानी है आपकी।"—लड़की की आंखों में कृतज्ञता छलक आई।

इंग खाना ले आई। रानी वू ने तिरछी आंखों से खाने की ओर देख लिया कि इंग नौकरों की रसोई का ही तो खाना नहीं ले आई है। ऐसा होता तो वह तुरन्त खाना लौटा देतीं, परन्तु इंग इतनी मूर्ख नहीं थी। खाना परिवार के योग्य तो नहीं था परन्तु नौकरों का भी नहीं था। मिला-जुला-सा—दलिया, दो तरह का मांस, तरकारी और चावल। खाने को कमचियां भी चांदी मढ़े हाथी दांत की नहीं; मामूली बांस की भी नहीं,

जैसी नौकरों को दी जाती हैं; बल्कि लकड़ी की लाल रोगन की हुई, जैसी कि बच्चों को दी जाती हैं।

"ठीक ढंग से परोसो!"—रानी ने आज्ञा दी।

इंग को यह सुहाया नहीं। होंठ दबा कर चावलों का कटोरा उसने लड़की की तरफ़ बढ़ा दिया। लड़की ने कुर्सी से उठ, गवई गांव के विनय से तनिक सिर झुका कर प्याला दोनों हाथों से ले लिया। "यह तो बहुत ज़्यादा है।"—लड़की ने सब चीज़ों की ओर देखकर कहा। रानी समझ गईं, लड़की भूखी तो है पर शिष्टाचार के नाते खाने से झिझक रही है। वे उठ खड़ी हुईं। "हम अभी आते हैं।"—रानी ने मुस्करा कर कहा, "तुम अच्छी तरह खाना, और भी मंगवा लेना।"

रानी बैठक में आ गईं। इंग ने लड़की के लिए यहां ही खाट पर बिस्तर लगा दिया था। उस ओर देख रानी ने सोचा दो-चार रात यहां ही सोये तो ठीक है, बल्कि जब तक लड़की परिवार का रंग-ढंग और अपनी स्थिति ठीक से न समझ ले यहीं रहे। लड़की को वू साहब के यहां भेज देने से पहले उन दोनों का आपस में समझ समझा लेना ठीक होगा, ताकि बाद में मन-मुटाव का कारण न हो। रानी के सामने आसान समस्या नहीं थी, अब उसे चतुरता और सद्भावना से सुलझाना आवश्यक था। सूक्ष्मता और साहस दोनों की आवश्यकता थी। वू होंठ को चुटकी में पकड़े विचार में डूबी हुई थीं। याद आ रहा था बचपन में वे घर के गांव में जाकर शौक़ से रेशम बनाने के काम में सहयोग दिया करती थीं। रेशम का कीड़ा अपने चारों ओर तार लपेंटते-लपेटते कब तार पूरा कर लेगा और उसे काट कर स्वयं ही बरबाद कर देगा, ऐसे संधि-क्षण को पहचान लेना गहरी सूझ का काम है। उसमें प्राय: ही चूक हो जाती है। रानी बचपन में इस काम में बहुत दक्ष थीं। बड़ी-बड़ी अनुभवी स्त्रियां भी उनकी सूझ से चकित हो जाती थीं। आज भी उनके सामने निर्णय की ऐसी ही घड़ी उपस्थित थी; सूक्ष्मता और साहस की आवश्यकता थी। ज़रा-सी चूक से उनका और वू साहब का भविष्य बरबाद हो सकता था।

रानी चिंता में सिर झुकाये और निचले होंठ को चुटकी में लिए अपने शयनागार में चली गयीं और विचार में डूबी चहल क़दमी करती रहीं। पांव में साटिन के जूते थे। चिकने फर्श पर पद-चाप का शब्द स्वयं उनके कानों तक भी नहीं पहुँच रहा था।

लड़की बच्चे की तरह भोली थी। उसे अभी बहुत कुछ सीखने को था। सीख कर जाने क्या रंगत पकड़े! लड़की मूर्ख नहीं थी। आंखों में बुद्धि की चमक थी। भरे हुए कोमल होंठ। अगर ज़्यादा ही बुद्धिमान् निकली तो?—रानी ने सोचा। कढ़े हुये रेशम की कुर्ती के टुकड़े से भी अनुमान होता है कि लड़की किसी अच्छे खानदान की है। सहसा ख्याल आया यह भी हो सकता है कि किसी अमीर घर की नौकरानी की अपने मालिक से पैदा संतान हो। मालकिन ने फटी रेशमी कुर्ती नौकरानी को दे दी हो, या कोई अवारा कुंआरी लड़की इसे फेंक गई हो। निश्चय से तो कुछ भी नहीं कहा जा सकता······। ऐसी अनजानी लड़की को घर में रख लेना उचित होगा?

कुछ देर बाद रानी वू पुस्तकालय में लौट आई। लड़की बड़े कमरे मे घुटनों पर हाथ रखे अकेली सहमी हुई-सी बैठी थी। खाना खा चुकी थी और इंग बर्तन ले गई थी। वू को देख कर सान्त्वना का भाव लड़की के चेहरे पर झलक आया।

"जीजी, कोई काम बताओ।"—लड़की ने निस्संकोच रानी की ओर देखा। रानी के मन में अपनापन-सा उमड़ आया, परन्तु प्रकट न होने दिया।

"सांझ को घर में तुम क्या करती थीं?"—रानी ने पूछा।

"खा कर सो जाती थी, रात में दिया जलाने के लिए तेल ही नहीं था।"—लड़की ने उत्तर दिया।

रानी हँस पड़ीं। "तो फिर सो जाओ"—उन्होंने कहा। और उसे साथ ले जाकर बैठक में लगा बिस्तर दिखा दिया। स्नानागार की ओर संकेत कर बताया—"नहाना हो, कपड़े बदलने हों, तो वहां जगह है।"

"मैं तो नहा कर ही चली थी, कपड़े तो यही हैं।"—लड़की ने उत्तर दिया।

"तो फिर सो जाओ।"—रानी बोलीं।

"जीजी, रात में कोई काम हो तो मुझे बुला लेना।"—लड़की ने एक बार फिर कहा।

"ज़रूरत होगी तो बुला लेंगे।"—कहकर रानी चली गईं।

रानी बहुत देर तक लेटी रहीं, पर नींद न आई। आधी रात में उठकर उन्होंने एक मोमबत्ती जलाई और बैठक में आ गईं। लड़की गहरी नींद में दाईं करवट सोई हुई थी। एक हाथ गाल के नीचे। सांस धीमे-धीमे चल रही थी। मुंह बन्द था। चेहरा गुलाबी। खर्राटे नहीं ले रही थी। नींद में और भी प्यारी लग रही थी। कुर्त्ता पैजामा उतार कर उसने एक ओर रख दिया था, एक सूती बनियाइन पहने थी। नाभि से कुछ ऊपर तक कम्बल ओढ़े थी। गर्दन और छाती उघड़ी हुई थी। रानी ने ध्यान से देखा गर्दन खूब गोरी और कोमल थी और छाती गोल और गद्दर।

लड़की बेसुध सोई हुई थी। देख कर वू को बहुत अच्छा लगा। उनकी अपनी नींद बहुत कच्ची थी। वू साहब करवट भी ले लेते तो नींद उतर जाती और फिर न आती। सोचा यह गहरी नींद सोएगी तो सुबह तरोताज़ा उठेगी। रानी मोमबत्ती की लौ को हाथ की ओट में कर लड़की के चेहरे पर झुक गईं और ध्यान से देखा। सांस प्यारी लग रही थी। वू अपने शयनागार में लौट गईं और मोमबत्ती बुझा कर लेट गईं।

आहट पाकर रानी की नींद टूट गई। अभी सूर्योदय में काफ़ी समय था। बैठक से खाट के चरचराने और कपड़ों के झाड़ने की आहट आ रही थी। वू ने सोचा—क्या छोकरी सुबह-सुबह भाग जाने की तैयारी कर रही है? उन्होंने चोगा पहन लिया और मोमबत्ती जलाकर बैठक की ओर गईं। लड़की पूरे कपड़े पहन कर एक स्टूल पर बैठी अपने लम्बे-लम्बे बालों को कंघी कर रही थी।

"कहां जा रही हो तुम?"—लड़की भौंचकी रह गई। लड़की की कंघी

हाथ से फर्श पर गिर पड़ी। काले लम्बे बाल दोनों कंधों पर सामने लटक आये। वह उठ कर खड़ी हो गई। मोमबत्ती के प्रकाश से उसकी बड़ी-बड़ी काली आंखें चमक रही थीं।

"कहीं नहीं जा रही,"—लड़की ने उत्तर दिया, "जाग गई हूँ।"

"इतनी जल्दी क्यों जाग गई?"—रानी ने विस्मय से पूछा।

"सुबह हो गई, मुर्गा बोल चुका।"—लड़की ने भी विस्मय से कहा।

वू हंसी न रोक सकीं। "मुझे क्या मालूम था कि तुम इतनी जल्दी उठ जाती हो। गांव से आई हो न? यहां इतनी जल्दी उठ जाने की क्या जरूरत थी। यहां तो नौकर भी अभी घंटे भर बाद उठेंगे। तुम दो घंटे बाद उठना।"

"तो फिर सो जाना होगा?"—लड़की ने पूछा।

"तो और क्या करोगी?"—रानी वू ने भी पूछा।

"कमरे बुहार दूँ?"—लड़की बोली, "या आंगन में झाड़ू लगा दूँ।"

"जो चाहे कर।"—रानी ने उत्तर दिया।

"जीजी तुम सो जाओ, मैं खटपट नहीं करूंगी।"—लड़की ने विश्वास दिलाया। रानी जाकर सेज पर लेट रहीं। बुहारी लगाने का शब्द सुनाई दे रहा था। लड़की इधर-उधर जाती थी तो बहुत दबे पांव। रानी की फिर आँख लग गई। नींद खुली तो खिड़की से फर्श पर धूप आ रही थी और इंग प्रतीक्षा में सेज के सिरहाने खड़ी थी।

रानी के उठने पर इंग उन्हें कपड़े पहनाने लगी। इंग ने लड़की के विषय में कुछ नहीं कहा। रानी वू भी चुप थीं। सब ओर सन्नाटा था। सन्नाटे को तोड़ने के लिए उन्हें ही बोलना पड़ा—"लड़की कहां है?"

"आंगन में बैठी जूते गांठ रही है।"—इंग ने उत्तर दिया, "खाली बैठ नहीं पाती। बार-बार पूछ रही थी क्या करूं? मैंने बच्चों के जूते दे दिये, इन्हें ठीक कर दे।"

रानी को इंग के स्वर का तिरस्कार अच्छा नहीं लगा। लड़की खाली

नहीं बैठ सकती इससे इंग उसे ओछी समझ रही है। इंग के समझने से उन्हें क्या मतलब था।

रानी नाश्ता कर आंगन में आईं। लड़की बांस के पेड़ों की छांव में एक छोटी तिपाई पर बैठी कपड़े के जूतों के तले गांठ रही थी। रानी को देख वह उठ खड़ी हुई और आज्ञा के लिये उनकी ओर देखने लगी।

"बैठो न!"—वू ने लड़की की ओर देखकर कहा और आंगन में बनी संगमरमर की चौकी पर बैठ गईं।

चौकी पर बैठी रानी वू की पीठ आंगन के गोलाई में बने दरवाज़े की ओर थी। लड़की उसी ओर मुंह किये तिपाई पर फिर बैठ गई। उसने फिर सुई सम्हाली ही थी कि एक व्यक्ति दरवाज़े से आता दिखाई दिया। लड़की की बड़ी-बड़ी आंखें पल भर को उठीं और झपक गईं और गालों पर आड़ू की-सी सूर्खी आ गई। यह देखकर रानी ने अनुमान किया शायद बावरची या कोई दूसरा नौकर आया होगा। उन्होंने घूमकर देखा।

दरवाज़े में नौकर नहीं उनका तीसरा पुत्र फेंगमो किवाड़ पकड़े खड़ा एकटक लड़की को देख रहा था।

"कहो फेंगमो क्या है?"—रानी ने पूछा। पुत्र का अचानक बिना पूछे आ जाना उन्हें अच्छा नहीं लगा। रानी फेंगमो से बहुत प्रसन्न भी न थीं। फेंगमो न तो लिआंगमो और त्सेमो की भांति समझदार ही था और न छोटे भाई येनमो की तरह भोला-भाला। बचपन में वह नौकरों-चाकरों में ही जमा रहता था। रानी को यह लड़के की मानसिक हीनता का चिह्न जान पड़ता था। यह सब देखकर भी वे प्रकट में उसके साथ भी ठीक दूसरे पुत्रों के समान ही व्यवहार करती थीं। परन्तु फेंगमो अन्तरानुभव करता रहा था। पन्द्रह वर्ष का हो जाने के बाद वह बिना बुलाये मां के पास कभी न जाता।

"बोलो क्या काम है?"—पुत्र को चुप खड़े देख रानी ने अपना प्रश्न फिर दोहराया।

फेंगमो लड़की की ओर ही देखता रहा। लड़की को फेंगमो की तीखी

दृष्टि अनुभव हो रही थी। उसने एक बार और सामने देखने का यत्न किया और फिर पलकें झुका लीं।

"अम्माजी, मैं देखने चला आया कि······कि आप की तबियत कैसी है।"--फेंगमो ने झिझककर उत्तर दिया।

"हमारी तबियत बिलकुल ठीक है।"--रानी बोलीं।

"एक और भी बात है।"--फेंगमो ने कहा।

"तो आओ, पुस्तकालय में आओ।"--रानी फेंगमो को भीतर ले गईं। दोनों खड़े ही थे। फेंगमो ने लड़की की ओर संकेत कर पूछा—"अम्माजी यही हैं वह······"

"फेंगमो, तुम्हें इन बातों से क्या मतलब।"—रानी का स्वर गम्भीर हो गया।

"मतलब क्यों नहीं, अम्माजी।"—फेंगमो ने कुछ आग्रह से कहा, "सभी को मतलब है। मेरे मित्र मेरा मजाक बनायेंगे······"

"तुम हमें यही बताने आये थे?"--रानी ने पूछा।

"ज़रूर,"--फेंगमो ने ऊंचे स्वर में कहा, "हम लोगों को यह नहीं अच्छा लगता। और फिर देखकर तो और भी हैरानी हुई, इस लड़की की उम्र क्या है और पिताजी तो बूढ़े हैं।"

"तुम अपने आंगन में लौट जाओ।"--वू ने रूखे और निरपेक्ष ढंग से कहा, "बिना इजाज़त लिये तुम्हें यहां नहीं आना चाहिये। तुम्हारे पिता के लिये क्या उचित और क्या अनुचित है--यह सोचना तुम्हारा काम नहीं है।"

फेंगमो के सुन्दर चेहरे पर सुर्खी आ गई। उसके होंठ फड़क उठे। वह तुरन्त घूम गया और एक बार भी पीछे न देख आंगन लांघ दरवाज़े से बाहर हो गया। फेंगमो स्वभाव का ज़िद्दी था। उसे इस प्रकार दब जाते देखकर रानी को आश्चर्य हुआ। रानी वू बहुत-सी प्राचीन प्रथाओं को नहीं मानती थीं, परन्तु जवान लड़के और लड़कियों को आपस में न मिलने देने के नियम की उपेक्षा नहीं करती थीं। इसलिये फेंगमो के बिना पूछे

वहां चले आने से उन्हें बहुत खिन्नता हुई। हवेली में लड़के और लड़कियों के सात वर्ष के हो जाने पर उन्हें एक-दूसरे से मिलने न देकर अलग-अलग रखने के नियम का पालन कड़ाई से किया जाता था। लड़के-लड़कियां आपस में मिलने और साथ खेलने के लिए कारिन्दों और नौकरों से ज़िद्द करते तो बच्चों को बहला देने के लिए नौकरों को ऊटपटांग बहाने बनाने पड़ते। एक दिन फेंगमो सात वर्ष की आयु में कारिन्दे से उलझ पड़ा—"क्यों ? लड़कियों के साथ हम अब क्यों नहीं खेल सकते ?"

"नहीं भइया, बड़े लड़के-लड़कियां साथ खेलें तो उनके पांव सूज जाते हैं।"—कारिन्दे ने फेंगमो को बहका दिया था।

साधारणत: रानी बच्चों को बहकाने या उनसे झूठ बोले जाने पर बहुत नाराज़ होती थीं और नौकरों को डांट देती थीं। परन्तु इस घटना की उपेक्षा कर गईं, क्योंकि लड़के और लड़कियों को अलग-अलग रखने का महत्त्व उनकी दृष्टि में अधिक था।

परिवार में लड़की के अपने उचित स्थान पर जम जाने से पहिले ही उसकी फेंगमो से देखा-देखी हो गई। यों आंखें चार हो जाने के परिणाम में जाने क्या बवंडर उठ खड़ा हो······? रानी चिन्ता में सिर झुकाए पुस्तकालय में चहलक़दमी करती सोचती रहीं। उनकी दृष्टि दरवाज़े से कई बार आंगन में बैठी लड़की पर पड़ी। लड़की सिर झुकाए जूता गांठने में व्यस्त थी। सहसा रानी ने निर्णय कर लिया—लड़की यहां ही रहेगी और उसे अभी ही सब बात समझा देना ठीक होगा। रानी उत्तेजना में तुरन्त आंगन में आ गईं।

"सुनो, हमने तय कर लिया है तुम यहां ही रहोगी।"—रानी बोल पड़ीं।

लड़की ने जूते के तले में नया टांका भरने के लिए सुई उठाई ही थी उसका हाथ वैसे ही रह गया। आंखें रानी की ओर उठ गईं। वह उनके प्रति आदर में तिपाई से उठ खड़ी हुई।

"आपकी बड़ी मेहरबानी।"—लड़की ने धीमे स्वर में संतोष प्रकट किया।

"लेकिन तुम्हें जैसे कहा जाय, करना होगा।"—रानी ने कहा, "यह समझ लो कि तुम्हें बड़े मालिक के साथ रहना होगा······उनके अपने आंगन में।"

लड़की रानी की ओर निर्वाक् देखती रही और फिर धीमे से उसने उत्तर दिया—"जी हां।"

"एक बात याद रखना,"—रानी ने चेतावनी दी, "हमारे यहां पुराने रिवाज चलते हैं। स्त्रियों-पुरुषों का आपस में मिलना नहीं होता।"

"जी, बहुत ठीक।"—लड़की कातरता से रानी की ओर देखती रही और उसने विनय से दोनों हाथ एक-दूसरे पर रख लिए।

"तो बस ठीक है।"—वू के व्यवहार में उत्तेजना प्रकट नहीं होती थी, परन्तु उस समय कुछ ऐसा आभास आ ही गया। उन्होंने कह दिया—"तो बस फैसला हो गया।"

"लेकिन आपने मेरा कोई नाम नहीं रक्खा।"—लड़की ने विनय से कहा, "इस घर में मेरा कोई नाम हो जाता।"

लड़की की कातरता रानी के मन को छू गई। "हां, तुम्हारा नाम तो होना ही चाहिए।"—रानी ने उसे आश्वासन दिया, "अच्छा, हम तुम्हें च्यूमिंग बुलाया करेंगे, जानती हो क्या मतलब? इसका मतलब है 'सुहावना पतझड़।' बड़े मालिक के पतझड़ का समय आ गया, तुम्हें उसे सुहावना बनाए रखना है। यही तुम्हारा काम है। समझ गई।"

"च्यूमिंग"—लड़की ने अपना नाम बोलकर देखा। होंठों पर झीनी-सी मुस्कान आ गई। 'मैं च्यूमिंग हूं?"

चार

बू साहब रानी से मिलने उनके आंगन में नहीं आए, रानी भी चुप रहीं। इतने वर्षों में रानी बू साहब को खूब समझ चुकी थीं। यदि बू साहब रखेल रखना पसन्द न करते, लड़की बुला ली जाने से नाराज़ होते, तो रानी के यहां आए बिना न रहते। चाहे हंस कर, चाहे बिगड़ कर इस सम्बन्ध में बात जरूर करते। उनके चुप रह जाने से रानी समझ गईं कि उन्हें एतराज़ नहीं है। चुप इसलिए हैं कि मन ही मन झेंप भी रहे हैं। झेंप भी रहे हैं, पर इतनी दृढ़ता भी नहीं है कि इनकार कर दें।

रानी पति की प्रकृति और भावना से खूब परिचित थीं।

बू साहब उदारता, नैतिकता और संयम का आदर तो बहुत करते थे परन्तु अपनी प्रकृति के कारण निबाह नहीं पाते थे। जैसे बढ़िया मज़ेदार खाना देख कर उनके मुंह में पानी आ जाता था, वैसे ही नवयौवना कामिनी की उपेक्षा करना भी उनके लिए सम्भव नहीं था। दृढ़ता उनकी प्रकृति में थी ही नहीं। उनके दाम्पत्य जीवन में उच्छृंखलता नहीं आई थी। इसके लिए कोई गर्व न प्रकट करके भी रानी खूब जानती थीं कि यदि वे इतनी सुन्दर न होतीं, पति को पूर्णता सन्तुष्ट करने के लिए इतनी सतर्क न रहतीं, तो बू साहब जाने क्या करते? रानी पति की सभी आवश्यकताओं और

इच्छाओं को सन्तुष्ट रखने के लिए सचेत रहती थीं। पति को कोई साहित्यिक अथवा वैज्ञानिक जिज्ञासा भी हो जाती तो वे स्वयं पुस्तकें पढ़ कर उसका समाधान करने का प्रयत्न करतीं। कभी देश-विदेश की किसी बात के प्रति उत्सुकता होती तो उसका भी पता दे सकतीं। चौबीस वर्ष के सह-चर्य में उन्होंने पति को कभी विक्षिप्त और असन्तुष्ट नहीं होने दिया था। कभी वू साहब की कोई इच्छा या भावना स्वयं उनके अपने मन या मस्तिष्क में अस्पष्ट रहती तो रानी बात-चीत और सुझाव द्वारा उसे स्पष्ट कर देतीं। वू साहब न समझ पाते कि बात क्या थी, और बात पूरी हो जाती।

रानी ने स्वयं भी पति से सन्तोष पाया था। उनके क्षुब्ध होने का अवसर ही नहीं आया। आते ही उन्होंने पति की प्रकृति और प्रवृतियों को समझ लिया था; मां के एकलौते और बचपन में मां के लाड़ से बिगड़ा व्यक्ति कैसा हो सकता है। वू साहब के सात भाई-बहिनों में से वे अकेले ही बच रहे थे। मां उन्हें अपनी आंखों में ही रक्खे रहना चाहती थीं। स्वर्गीय राजा साहब पुत्र की शिक्षा या अनुशासन के सम्बन्ध में कुछ भी करना चाहते तो मां कोहराम मचा देतीं।

वू साहब की आयु सात वर्ष की हो जाने पर साधारण नियम के अनु-सार स्वर्गीय राजा साहब ने पुत्र को ज़नानी ड्योढ़ी से लाकर अपने साथ रखना चाहा। मां ने अपत्ति की—

"यह कैसे हो सकता है। लड़के को खांसी है. रात-बिरात उसे सर्दी लग जायगी। लिहाफ़ बदन से गिर गया तो कौन ओढ़ा देगा।" गला ठीक हुआ तो मां ने कहा—"लड़के का मेदा खराब है। बाहर नौकर-चाकर उसे जाने क्या खिलाते रहेंगे, अभी हम नहीं जाने देंगे।" स्वर्गीय राजा साहब कड़ाई बरतना चाहते तो वृद्धा रोना-धोना मचा देतीं। स्वर्गीय राजा साहब नाराज़ होते तो वृद्धा उनसे भी अधिक नाराज़ हो जातीं। दो वर्ष ऐसे ही टल गए। बेटे की आयु नौ वर्ष की हो जाने पर स्वर्गीय राजा साहब उन्हें अपने आंगन के साथ के छोटे कमरे में ले ही गए।

भाग्य की बात, वू साहब को जिस छोटे कमरे में रक्खा गया था उसमें

एक दरवाज़ा बाहर भी खुलता था। क़द सुडौल और रूप सुन्दर था, पर स्वभाव वू का मनमौजी और ज़िद्दी बन चुका था। रात में मां के पास भाग जाते। पिता तो संतोष और प्यार से पुत्र को आत्मसंयम की शिक्षा देते परन्तु मां लाड़ में उलटी सीख देती। पिता अध्ययन पर ज़ोर देते, मां खेलने के लिए उकसाती। मां उन्हें समय-असमय मिठाइयां और चटपटी चीज़ें खिलाती रहती। बेटे के पेट में अपच से कष्ट होता या तबियत ख़राब हो जाती तो मां चुपके से मदक का दम लगा लेने की सीख दे देती। सौभाग्य की बात, वू साहब का शरीर स्वथ्य और स्वभाव चुलबुला होने के कारण मदक पीने की बात से भी बचे रहे। बेटे के बीस वर्ष के हो जाने पर स्वर्गीय राजा साहब ने समझ लिया कि मां ने बेटे को इतना बिगाड़ दिया है कि अब समझाना-बुझाना व्यर्थ ही है। एक दिन उन्होंने पुत्र को समझाया—"पुत्र, तुम हमारी सीख न मानकर मां के लाड़ में ही रमे रहे, पुरुष का मार्ग न अपना कर स्त्री की राह ही चले, तुम पुरुषार्थी न होकर आराम-तलब बन गए हो। जो होना था हो गया, अब इस कुल का कल्याण इसी में है कि तुम्हारे लिए ऐसी पत्नी ढूँढ़ी जाय जो तुम्हे सद्मार्ग पर रख कर सहायक बन सके।"

वू साहब पिता की गम्भीर मुद्रा से घबरा गए। पिता का गम्भीर चेहरा देख कर वे सदा ही घबरा जाते थे। उन्होंने वही किया जो वे सदा ऐसी अवस्था में करते थे। वे मां के पास जा बैठे।

उपर्युक्त घटना के तुरन्त बाद वू साहब का विवाह हो गया और रानी वू दुलहन बन के परिवार में आ गईं। विवाह के दसवें दिन वृद्ध स्वसुर ने उन्हें अपने पुस्तकालय में बुला कर समझाया—"हमारे बेटे का बनना-बिगड़ना तुम्हारे हाथ है। कुछ लोग अपने पांव खड़े हो सकते हैं, परन्तु कुछ स्त्रियों के ही सहारे चलते हैं। तुम उसे यह अनुभव भी न होने देना कि तुम्हीं उसे चला रही हो, वरना वह बिलकुल ही असहाय और निकम्मा हो जायगा। उसे अपनी निर्बलता अनुभव न करने देकर ही उसे बल देना, ताकि उसका आत्मसम्मान बना रहे। उसमें कुछ अच्छी बातें भी तुम्हें मिल

ही जावेंगी। उन्हें प्रोत्साहन देना; ऐसा न हो तो तुम्हीं संभालना, परन्तु वह समझ न पाए। उसका आत्मविश्वास बना रहे······"

उस समय रानी वू नवयौवन की उमंग में थीं। पति सुडौल और रूपवान् था। वे विवाह की मस्ती के खुमार में थीं। साहस से उन्होंने ससुर को उत्तर दिया—"मेरी जान और सब कुछ उनके लिए है।"

वृद्ध ससुर बहू के शब्द सुनकर स्तम्भित रह गए। भले घर की लड़की से उन्हें ऐसे अविनय की आशा नहीं थी, परन्तु बहू के स्वर और मुद्रा में धृष्टता का लेशमात्र भी न था। बिलकुल भोली-भाली बच्ची की तरह वे निश्शंक ससुर के सामने खड़ी थीं।

वृद्ध ने सिर झुका लिया और धीमे से उत्तर दिया—"बेटी, नारी की सब से बड़ी शक्ति यही है।"

रानी वू संतोष, शान्ति और स्नेह से दस वर्ष तक पति को समझ पाने की साधना निबाहती रहीं। इतनी शान्ति और संतोष तथा स्नेह था कि पीड़ा और असंतोष अनुभव करने का कोई अवसर ही नहीं आया। शनैः-शनैः पति की भावनाओं और विचारों के पूरे क्षेत्र पर उनका अधिकार हो गया। आरम्भ में कुछ बातों में पति की जिज्ञासा और कौतूहल देख जान पड़ता था कि वह बहुत बुद्धिमान् हैं और उनकी सूझ गहरी है, परन्तु धीरे-धीरे वे समझ गईं कि यह जिज्ञासाएं और कौतूहल सब थिथले ही थे। वू साहब किसी भी बात की गहराई में न जा सकते थे।

रानी समझ गई थीं कि पति के मानसिक क्षेत्र की परिधि बहुत सीमित थी। उनकी अपनी पहुंच और दौड़ उनसे कहीं दूर तक थी, पति को यह बता देने की आवश्यकता नहीं थी। बताने से वे समझते भी क्या! पति के क्षेत्र में उनके सहयोग और सहचर्य के लिए तो वह मौजूद थीं ही, परन्तु अपने संतोष के लिए उस सीमा से आगे बढ़ सकने का अवसर उन्हें कैसे मिलता। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि यह अवसर आयगा उनके चालीस वर्ष पूरे हो जाने पर। उस समय की कल्पना वह मन ही मन में करती रही थीं।

रानी ने निश्चय कर लिया कि जाकर पति से रखेल आ जाने के सम्बन्ध में बात कर लें। उन्होंने नौकरों से सुन ही लिया होगा, पर स्वयं बात कर लेना भी ज़रूरी है। इस मामले में विलम्ब ठीक नहीं। फेंगमो ने लड़की को देख लिया है। किसी नौजवान के लड़की से आंखें चार हो जाने से चाहे कुछ भी न हो पर बहुत कुछ भी हो सकता है। उठते यौवन में ऐसे भी क्षण आते हैं जब देख लेना और मिल जाना एक ही बात हो जाती है।

वू साहब से बात करने में विलम्ब नहीं होना चाहिए। यदि उचित जंचे तो च्यूमिग को उनके यहां जल्दी ही भेज देना ठीक होगा।

च्यूमिग उस समय खूब प्रसन्न थी। रानी वू ने इंग को बाज़ार भेजकर बजाज़ को बढ़िया सूती छींट और रेशमी छींट के थान उनके यहां ले आने को कहला दिया था। रानी ने च्यूमिग को दो सूती पोशाकों और एक रेशमी पोशाक के लिए कपड़ा पसन्द करने के लिए कह दिया। रानी को बहुत अच्छा लगा कि च्यूमिग ने हलके रंग और छोटे-छोटे फूलों के कपड़े पसन्द किए थे। लड़की तुरन्त ही अपने कपड़े सी डालने के लिये तैयार हो गई, तो उन्हें और भी संतोष हुआ।

च्यूमिग ने सूती छींट का कपड़ा मेज़ पर फैला दिया और कैंची हाथ में ले काटने लगी थी कि रानी की ओर देखकर पूछ लिया—"जीजी, कैसी काट काटूं; आपके कपड़ों के फैशन की या देहाती?"

"इसी घर के फैशन से बनाओ, इंग तुम्हे सब बता देगी।"—रानी ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

इंग ने च्यूमिग के छरहरे शरीर के उतार-चढ़ाव का ध्यान रख कर सावधानी से नाप लेकर सफ़ेद खड़िया से कपड़े पर निशान कर लिए। लड़की विस्मय और प्रसन्नता से यह सब देख रही थी। "नए थान से बना कपड़ा अभी तक मैंने कभी नहीं पहना।"—लड़की के मुंह से निकल गया।

कपड़ा कट चुका तो च्यूमिग तुरन्त सुई में धागा पिरो कर सीने बैठ गई। उसके प्रफुल्ल चेहरे पर सुख का एक स्वप्न खेल रहा था। इंग ने

झुककर देख लिया कि बखिया मोटा या गड़बड़ तो नहीं। रानी भी तिरछी आंख से उस ओर देख रही थीं। पीड़ा की एक बिजली-सी उनके मन में कौंध गई—"हाय इस ग़रीब लड़की के साथ क्या होने जा रहा है?" मन ने दृढ़ निश्चय कर लिया—अभी इसी समय जाकर साहब से बात कर ली जाय। कमरे से निकलते हुए उन्होंने इंग को साथ आने का संकेत किया। कुछ दूर च्यूमिंग के कानों की पहुँच से परे ले जाकर बोलीं—

"मदद देकर इसके कपड़े सिलवा दो। भीतर पहनने के कपड़ों के भी दो-एक जोड़े मंगवा दो। हमारा ख्याल है कल ही इसे उधर भेज दें। हम एक बार बात कर लें।"

"जैसा हुकुम हुजूर"—इंग अपना स्वर संभाले रही कि खेद या प्रसन्नता कुछ भी प्रगट न हो।

रानी इस आंगन में आकर पहली बार बाहर निकली थीं। एक बार सास के यहां भी जाना ज़रूरी था। वृद्धा धूप में बैठी पांवों में तेल की मालिश करवा रही थीं। उनके टखने कुछ सूजे हुए जान पड़ रहे थे, परन्तु वे प्रसन्न थीं। बहू को देखकर बोलीं—"बाई है! बाई से सूज गए हैं टखने। कबर में पांव लटकाए बैठी हूं, बाई को भी जो करना है कर ले। कितनी शराब चढ़ा जाती थी मैं, वह कहीं निकलेगी भी तो! और टखने सूज ही गए तो क्या है......"

रखेल की बात पर बहू से हुआ झगड़ा वृद्धा भूल चुकी थीं। रानी ने भी याद नहीं दिलाया। उन्होंने झुक कर सूजे टखने को ध्यान से देखा और वृद्धा की नौकरानी को समझाया कि मालिश नीचे से ऊपर की ओर करे कि जमा हुआ खून हिल जाय और वे लौट गईं।

रानी का अनुमान था कि वू साहब इस समय बाहर की बैठक के बजाय रानी के भीतर के आंगन में ही होंगे। वे उधर ही गईं। आंगन में उनके लगवाए आर्किड के फूल मुरझाए-से दिखाई दिए। ख्याल आया कि पेड़ों को कीड़ा तो नहीं लग गया। कीड़ा दिखाई नहीं दिया। साहब भीतर के कमरे में बैठे दिखाई पड़े। वे अभी रात के ही कपड़ों में थे। कमीज़ के बटन

भी खुले हुए थे। उनके हाथ में एक छोटा रेशमी पंखा था। पंखे पर हरे रंग में बांस के पेड़ों का चित्र बना हुआ था। सामने चौकी पर नाश्ते की खाली तश्तरियां पड़ी थीं। एक हाथ में चाय का प्याला थाम्मे थे और दूसरे से पंखा हिला कर हवा ले रहे थे। रानी को उनके भरे-पूरे चेहरे पर कुछ उदासी और चिंता-सी दिखाई दी, परन्तु वे अपने सदा प्रसन्नता से किलकते स्वर में बोलीं—"सोच रही थीं आप कहे तो यहां आंगन में फिर गेंदी लगवा दें। क्या ख़्याल है आपका ?"

"हमें तो यह रूखे-फीके आर्किड कभी पसन्द आए नहीं।"—साहब ने उत्तर दिया, "रंग ही न हुआ तो फूल क्या !"

"ठीक कहते हैं आप। आज ही गेंदी लगवाए देती हूं।"—रानी ने समर्थन किया, "बल्कि आप कहें तो खिले-खिलाए फूलों के गमले मंगवा कर रख दिए जायं।"

साहब चौकी से उठकर रानी के साथ-साथ बाहर आंगन में आ गए। आर्किड की क्यारी के पास खड़े हो बहुत विचारपूर्ण ढंग से बोले—"लाल और पीली गेंदी ही होनी चाहिए। गेंदी के चार-चार पेड़ों के बाद एक पेड़ सफ़ेद फूल का, तब खिलेगा !"

"बहुत ठीक फरमाया आपने। ऐसे ही लगवा दिए जायंगे। बहुत सुन्दर लगेगा।"—रानी ने दुबारा समर्थन किया और फिर अपने सबसे छोटे पुत्र के विषय में पूछा, " येनमो नहीं है यहां ?"

"लड़के को हमने गांव भिजवा दिया है।"—साहब ने गम्भीरता से उत्तर दिया, "हवेली में जो झंझट मचा हुआ है, बच्चे पर उसका क्या प्रभाव पड़ेगा !"

"यह आपने बहुत ही उचित किया"—रानी बोलीं, "ठीक ही ख्याल किया आपने।" रानी ने स्नेह से पति की ओर देखा। तन कर खड़ा उनका ऊंचा बदन भला लग रहा था। खाने-पीने का शौक होने के कारण बदन दोहरा गया था। "तबियत तो ठीक है न आपकी ?"—रानी ने फिर पूछा।

"ठीक ही है।"—साहब ने उपेक्षा की शिकायत-सी की।

"मैं तो आप ही के लिए फिक्र कर रही थी।"—रानी ने स्नेह से कहा।

"क्या मालूम, ऐसा ही होगा!"—साहब धीमे से गुर्राए। उन्होंने कमीज़ की जेब से विलायती सिगरेट की डिबिया निकाल कर सिगरेट सुलगा ली और गहरे-गहरे दो कश खींच कर धुएं का बादल-सा छोड़ दिया और बटन खुले सीने पर पंखे से हवा लेते हुए बोले—"देखो, हमने तुम्हारा बहुत ख्याल किया। तुम जाने क्यों चली गईं, तुम अच्छी तरह सोच लो! एलिन, हमने तो इतना ख्याल किया, दूसरा कोई यह सब नहीं सह सकता था। हम कह रहे हैं, तुम सोच लो।"

"मैं तो आप ही के लिए फिक्र कर रही थी।"—रानी ने उत्तर दिया, "बहुत ढूंढ़-ढूंढ़ कर आप के लिए एक नौजवान लड़की बुलवाई है।"

साहब के चेहरे पर हलकी-सी सुर्खी आ गई। आंखें फिरा कर उन्होंने कहा"—एलिन······यह सब हम नहीं सुनना चाहते।"

"आपने लड़की की बावत सुना तो होगा?"—रानी ने निस्संकोच पूछा।

"हम नौकरों की गप्पें नहीं सुनते।"—साहब ने उत्तर दिया और उनकी गर्दन कुछ और तन गई। परन्तु सचाई रानी साहब को खूब मालूम थी। साहब अपने नौकर की खूब सुनते थे, उससे गप्प भी लड़ाते थे। उनका नौकर बड़ा हंसोड़ था। साहब को हंसा-हंसा कर खूब रिझाए रखता था।

रानी एक चौकी पर बैठ गईं। "लड़की बहुत अच्छी है।"—उन्होंने शान्त निरपेक्ष भाव से कहा। उनके दोनों कोमल हाथ घुटनों पर निश्चल थे। फिर बोलीं—"लड़की बहुत सीधी है, स्वास्थ्य अच्छा है और देखने में सुन्दर है।······"

"ऐसी बात से तुम्हें ईर्ष्या नहीं होती?"—साहब ने कड़े स्वर में पूछा। साहब के काले केश, स्वच्छ सुनहरी त्वचा, भरे हुऐ होंठ और बड़ी-बड़ी आंखें सुबह की धूप में बड़ी भली लग रही थीं। स्नेह से उनकी ओर देख कर रानी ने मुस्कराकर कहा—"आप का चेहरा कितना रोबदार है!

ऐसे मामले में ईर्ष्या तो मुझे ज़रूर होती पर यह लड़की इतनी सीधी, बिलकुल बच्चा-सी है, मेरा उससे कुछ बिगाड़ नहीं हो सकेगा।"

"हमें तो कुछ समझ नहीं आता तुम्हें जाने क्या हो गया......।"—साहब ने शिकायत की, पिछले हफ़्ते तक तो ऐसी कोई बात नहीं थी, बस चार दिन में ही तुम्हें हम से कोई मतलब ही नहीं रहा।"

"अब मैं चालीस पार भी तो हो गई।"—रानी ने मुस्कराकर उत्तर दिया और चौकी पर एक ओर सरक कर बोलीं, "अच्छा आइए, बैठिए तो।"

साहब चौकी पर बैठे ही थे कि दरवाज़े पर फेंगमो दिखाई दिया। माता-पिता को एक साथ देख कर वह तुरन्त हट गया और क़दम बढ़ाता हुआ निकल गया।

"फेंगमो!"—रानी ने पुकारा, परन्तु लड़का आया नहीं।

"मेरा ख़्याल है, इस लड़के का विवाह अब हो जाना चाहिए। आपकी क्या राय है?"—रानी ने साहब से पूछा, "आप इजाज़त दें तो कांग सेठानी से उनकी छोटी बेटी लीनी के लिए कल ही बात कर डालूँ।"

"तुम जानो। दूसरे लड़कों के ब्याह भी तुम्हीं ने किए हैं।"—साहब ने निरपेक्ष उत्तर दिया।

"त्सेमो ने तो अपना ब्याह ख़ुद ही किया है।"—रानी ने याद दिलाया, "मैं नहीं चाहती कि ऐसी नौबत फिर आये।"

"तुम जानो।"—साहब ने बात समाप्त कर दी। रानी को यह जान कर संतोष ही हुआ कि साहब को अब लीनी का ध्यान नहीं रहा था। वे उसे भूल चुके थे। उन्हें ध्यान केवल अपना ही रहता था और किसी का नहीं। रानी ने सीधे दो टूक बात करना ही उचित समझा, मानो नए कपड़े या जूता जोड़ा खरीद लेने की बात हो। "आप कुछ और न समझें तो लड़की को कल आप के यहाँ भिजवा दूँ?"

साहब का चेहरा फिर ज़रा सुर्ख़ हो गया। सिगरेट के दो गहरे कश लेकर बोले—"हम तो जानते हैं तुम बड़ी ज़िद्दी हो। कोई सिर पटक कर

मर जाय, तुम अपनी बात से टल नहीं सकतीं। हम अपना सिर क्यों फोड़ें ?"

"क्या कह रहे हैं आप ?...जो कुछ करती हूँ आप ही के लिए।"—रानी ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

"खैर, इस सब बात से क्या लाभ ! इस मामले में हम से बात करने की कोई ज़रूरत नहीं।"—साहब ने कह दिया और सिगरेट पीने लगे।

"ठीक है, इस बारे में बहस की क्या ज़रूरत ! कल उसे आप के यहाँ भेज दूगीं।"—रानी ने स्वीकार कर लिया।

आंगन के दरवाज़े से फिर कोई जाता हुआ दिखाई दिया। रानी ने पहचान कर पुकारा—"लिआंगमो !" लिआंगमो भी माता-पिता को एक साथ देख कर भीतर न आया बाहर से ही चला गया।

साहब सहसा उठ खड़े हुए। "हमें याद नहीं रहा था, चायखाने में एक आदमी से मिलना है।"—साहब ने रानी की ओर देख कर कहा, "मुख्तार ने बताया है कि हमारे गाँव के बीच की ज़मीन, जो हमारे दादा ने एक नौकर को इनाम में दे दी थी; —उस आदमी ने दादा की जान बचाई थी ना ? हां, तो वह जमीन अब बिकाऊ है। उसे ले लें तो पूरा चक अपना हो जाय।"

"यह तो बहुत अच्छा है।"—रानी ने समर्थन किया, "लेकिन पचहत्तर रुपया बिस्वा से अधिक दाम नहीं होना चाहिए।"

"नहीं, नहीं"—साहब ने भूल सुझाई, "अस्सी रुपये बिस्वा से कम क्या होगा !"

"अस्सी में हो जाय तो क्या कहना !"—रानी बोलीं, "हम लोगों को लड़कों का भी तो ख्याल करना है।"

"अस्सी से ज़्यादा तो हम हरगिज़ नहीं देगें।"—साहब ने दृढ़ निश्चय प्रगट किया और कमरे की ओर चल दिए। रानी भी जाने के लिए उठीं। साहब ने दरवाज़े से घूम कर पुकारा—"एलिन, हम कहे देते हैं. फिर हमें किसी बात का दोष न देना !"

लगाना। साहब अस्सी रुपए बिस्वा देने के लिए कह रहे हैं, परन्तु सौदा सत्तर में भी हो जायगा। लोगों का तो ख्याल है कि हमारे यहां बहुत पैसा है, लूट लो। बेटा लुटाने के लिए तो किसी के पास भी नहीं होता।"

"अम्माजी मैं ज़रूर जाऊँगा। हां······"—लिआंगमो ने कहा और फिर झिझक कर चुप रह गया। रानी भांप गई कि बेटा च्यूमिंग की बाबत बात करना चाहता है। वे निश्चय कर चुकी थीं कि रखेल के विषय में लड़कों से बात करने की ज़रूरत नहीं। नई पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी के विषय में बहस और विचार करने का अधिकार नहीं।

"मेंग कहां है?"—रानी ने पूछा, "दावत के बाद से वह दिखाई ही नहीं दी। बेटा, तुम दोनों से राय लेनी है कि फेंगमो का ब्याह लीनी से हो जाय तो कैसा रहे?"

"लीनी?"—लिआंगमो को कुछ विस्मय हुआ। उसने इस विषय में सोचा ही नहीं था। उसने पूछा--"पर फेंगमो तो अपने मन की करना चाहेगा न?"

"मन की करना चाहेगा तो अपने मन से ही वह लीनी से ब्याह कर ले।"—रानी ने मुस्कराकर कहा, "हम किसी को मन की करने से कब मना करते हैं!"

मेंग अपने कमरे से आंगन में आ गई। मेंग की बुरी आदत थी कि सुबह उसे देर तक ऊंघ आती रहती और बिस्तरे से उठने के घंटे दो घंटे बाद तक उस पर मनहूसत छाई रहती। आंगन से सास का स्वर सुनाई दिया तो वह अभी रात के ही कपड़ों में थी, कंघी भी नहीं की थी। तुरन्त उठकर जैसे-तैसे केश संवारे और कपड़े पहने। बाहर निकली तो गुलाब की अधखिली कली की तरह ताजी और टटकी थी। नए गर्भ की शिथिलता के कारण और भी कोमल लग रही थी। आंखें भी कुछ तरल-सी। कानों में सास से उपहार में पाई मोतियों की बालियां पहने थी।

"अम्माजी आई हैं!"—मेंग ने स्नेह से सास का स्वागत किया।

"देखो, यह मोती इस पर कैसे फब रहे हैं।"—रानी बोलीं ही हिलन

"नहीं अम्माजी, बहुत थक गई हूं।"—रुलन ने उत्तर दिया।

"क्यों क्या कुछ खुशी की बात है?"—मुस्कराकर रानी ने पूछा।

रुलन ने सिर हिला कर इनकार किया—"नहीं अम्माजी, थक गई हूं।" और गले तक ओढ़ी हुई रेशमी चादर पर हाथ फेरने लगी।

"तो बेटी आराम करो। तुम्हें फिकर ही किस बात की है? काम-काज के लिए यहां लोगों की कमी नहीं है।"—रानी रुलन को सांत्वना देकर मुस्कराईं और वापिस त्सेमो की ओर चली गईं।

त्सेमो के हाथ में एक विलायती कलम था और वह काग़ज़ पर अंगरेज़ी में कुछ लिख रहा था। मां को देख कर वह कलम हाथ में लिये उठ खड़ा हुआ।

"क्या लिख रहे हो?"—रानी ने पूछा।

"अंगरेज़ी का अभ्यास कर रहा हूं अम्माजी।"—त्सेमो ने उत्तर दिया।

"किस से पढ़ते हो?"—मां ने पूछा।

त्सेमो के चेहरे पर सुर्खी आ गई। "रुलन से"—उसने उत्तर दिया। बेटे को झेंपते देखकर रानी ने बात बदल दी।

"रुलन बहुत थक गई है। आराम क्यों नहीं करती?"—उन्होंने पूछा।

"उसे कहूंगा, अम्माजी।"—त्सेमो ने तुरन्त उत्तर दिया, "दिन भर चैन नहीं लेती। कल शहर की राष्ट्रीय [illegible] की बैठक हुई थी। यह भी वहां गई थी। इसे लोगों ने प्रधान चुन लिया है। वहां से लौटी तो बहुत थक गई थी।"

"राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का आन्दोलन फिर चलने लगा?"—रानी के स्वर में कौतूहल की खनक थी, "उसमें तो थकेगी ही।"

"मैंने भी इसे यही समझाया है, अम्माजी।"—त्सेमो ने समर्थन किया।

रानी त्सेमो के आंगन से निकल कुछ तेज़ क़दमों से अपने आंगन में लौट आईं।

च्यूमिंग आंगन में तिपाई पर बैठी अपने नये कपड़े सी रही थी। रानी आकर उसके समीप खड़ी हो गईं। लड़की सुई हाथ में थामे आदर के लिये उठने लगी। रानी उसके कंधे पर हाथ रख उठने न देकर बोलीं—"सी डालो, सी डालो अपने कपड़े। कल तुम्हें उधर जाना भी तो है। सब कुछ तैयार कर लो।"

लड़की के हाथ से सुई छूटकर धागे से लटक गई। मुख से कुछ न बोल सिर झुकाये वह फिर सीने लगी। सधी हुई उंगलियां जल्दी-जल्दी बखिया करने लगीं। रानी की बात से झेंप अनुभव कर च्यूमिंग की गरदन और गालों पर ख़ून दौड़ गया। रानी उस ओर देख सोचती रह गईं।

× × ×

दूसरे दिन संध्या से पहले ही रानी वू ने निश्चय कर लिया कि च्यूमिंग को वू साहब के आंगन में किस तरह पहुंचाना ठीक होगा। उपयुक्त समय रात का ही था। कुछ दिखावा करने की आवश्यकता नहीं थी। यह बुज़ुर्ग लोगों के बीच का मामला था, नौजवानों को परेशान करने की ज़रूरत क्या थी!

दूसरे दिन रानी ने इंग को कह दिया कि च्यूमिंग को ढंग से केश बांधने और तैयार हो जाने का तरीका समझा दे। देहातिन लड़की यह सब बातें क्या जानती! स्वयं वे पुस्तकालय में बैठी पढ़ती रहीं। निषिद्ध पुस्तकों की ओर मन नहीं गया। वह आकर्षण समाप्त हो चुका था। अब उन्हें मर्दों से क्या लेना-देना था! इतिहास की एक पुस्तक निकाल ली और सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन—जब अभी आकाश और पृथ्वी पृथक्-पृथक् नहीं हो पाये थे—पढ़ने लगीं।

दिन बीतते पता न लगा। पढ़ते समय वे अपने शरीर से भी बेसुध रहीं। कोई विघ्न डालने भी नहीं आया। वे जानती थीं कि पूरी हवेली विक्षिप्त थी। जब तक रखेल की समस्या का निबटारा न हो जाय कोई आकर उनसे बात कैसे कर सकता था! दोपहर बाद जमीनों के मुख़्तार ने

सलाम भिजवाया। वह नइ जमीन की खरीद के बारे में बात करना चाहता था। रानी ने उसे पुस्तकालय में ही बुलवा लिया। उसके आने पर रानी ने हाथ में थमी पुस्तक मूंदे बिना ही उसकी ओर देखा।

मुख्तार ने एक काग़ज़ आगे बढ़ाते हुए विनय से कहा—"हुज़ूर यह वांग की जमीन की खरीद का काग़ज़ है। हुज़ूर अस्सी रुपये बिस्वे का दाम साहब ने दिलाया है। सेवक तो सत्तर रुपये में ही निबटा देता। साहब ने हुक्म दिया कि यह दान में दी हुई धरती है, बहुत कड़ाई मत करो।"

रानी ने मुख्तार की शिकायत की ओर ध्यान न दे हाथ बढ़ा दिया—"लाओ काग़ज़ दे दो।"

"कुछ और कहना है?"—रानी ने पूछा। जानती थीं कि हवेली में उठी हुई समस्या की भनक इसके कान में भी पड़ चुकी होगी। मुख्तार की दबी हुई नज़रों की उत्सुकता और होंठों और नथनों का फड़कना भी उनसे छिपा न रहा। एक बार फिर मुख्तार को संबोधन किया—"कुछ और कहना है?"

मुख्तार को निरुत्तर देख रानी ने उसे चले जाने का संकेत कर दिया। "बहुत अच्छा", और आंखें पुस्तक पर झुका लीं।

रानी के रोबीले ढंग से मुख्तार की आंखें झुक गई। फिर भी उसने साहस किया—"हुज़ूर और तो कोई बात नहीं, पर हुज़ूर इजाज़त दें तो उस जमीन में सेम लगवा दूं। दूसरी फसल का तो मौका निकल गया।"

"ठीक है, बहुत अच्छा।"—रानी ने स्वीकार कर लिया।

"हां हुज़ूर यही ठीक रहेगा।"—मुख्तार ने रानी की स्वीकृति का समर्थन किया।

रानी ने सिर हिलाकर हामी भरी और सोचा—आदमी इनाम की आशा कर रहा है। किताब मेज़ पर रख वे उठीं। ज़ेब से चाबी निकाल दिवाल के साथ लगी अलमारी खोली और लोहे से मढ़ी एक छोटी संदूकची

खोली। मुख़्तार के सामने मेज़ पर चांदी के दस रुपये गिनकर धीमे से कहा—"धन्यवाद, अब आराम करो।"

मुख़्तार ने झिझककर इनाम लेने की अनिच्छा प्रकट की। दोनों हाथों की उंगलियों को आपस में फंसाकर मरोड़ा, मानो उस पर बहुत ज़्यादती हो रही हो। सकुचाते हुए आगे बढ़कर उसने रुपये उठा लिये और कई बार झुक-झुककर धन्यवाद देते हुए पीठ दिखाए बिना झुकते-झुकते बाहर निकल गया।

पुस्तकालय से निकल आंगन में से लौटते समय मुख़्तार की आंखें इधर-उधर खोजती रहीं परन्तु च्यूमिंग को देख न पाईं। लड़की मर्द को आया देख ओट में हो गई थी। लड़की के व्यवहार में यह लाज देख रानी को संतोष हुआ। मेज़ पर खुली पुस्तक मूंद और उसे अलमारी में रख वे बैठक में आ गयीं। इंग संध्या का भोजन ले आयी थी। च्यूमिंग के लिये भी खाना साथ ही था। रानी ने च्यूमिंग के लिये आये खाने को ध्यान से देखा और फिर झुककर सूंघ लिया।

"लड़की के खाने में लहसुन, प्याज़ या कोई दूसरी वैसी चीज़ तो नहीं डाली?"—वू ने इंग की ओर देखकर पूछा।

"हुज़ूर, ऐसी भूल नहीं होगी।"—इंग ने विश्वास दिलाया।

"मिर्च तो नहीं है?"—रानी ने फिर पूछा। "गले में जलन होने लगती है।"

"नहीं हुज़ूर, बच्चों के लायक खाना है।"—इंग ने उत्तर दिया। लड़की की इतनी अधिक चिंता की जाने की जलन से इंग का मुंह लटक गया। रानी को इंग के इस क्रोध पर हंसी आ गयी।

"इंग तू हमारे साथ इतने दिन से है,"—रानी बोलीं, "अब तक नहीं समझ सकी कि हम न चाहें तो कुछ नहीं हो सकता।"

इंग क्या उत्तर देती! बोली—"हुज़ूर का खाना दूसरे कमरे में लगा दिया है।"

वू अपने कमरे में शनैः-शनैः जो कुछ खाना था खाती रहीं। भोजन

समाप्त कर उन्होंने पाइप सुलगा लिया और आंगन में आ गईं और आर्किड की नई लगाई पौध की ओर ध्यान से देखने लगीं। सुबह ही उन्होंने माली को हुक़्म दे दिया था कि आर्किड के पौधों को पुराने आंगन से यहां बदल दे और साहब के आंगन में गेंदी लगा दे।

संध्या का अंधेरा गहरा होकर एक घंटे के लगभग और भी बीत गया तो वू भीतर गईं। च्यूमिंग ने नहा-धोकर नये कपड़े पहन लिये थे। केश भी नये ढंग से कंघी कर, कानों को ढंककर बांधे हुए थे। चुपचाप दोनों निष्क्रिय हाथों को गोद में रखे अपनी खाट की पटिया पर बैठे कुछ सोच रही थी। उसका भोला स्वस्थ चेहरा बिलकुल भावशून्य था, परन्तु कनपटियों पर से दोनों ओर पसीने की बूंदें चू रही थीं। लड़की की घबराहट देख रानी सहानुभूति से उसके साथ ही खाट पर बैठ गईं।

"घबरा क्यों रही हो?"—रानी बोलीं, "साहब बहुत भले आदमी हैं।"

लड़की ने आंख उठाकर उनकी ओर देखा और निगाहें झुका लीं।

"देखो, डरो नहीं बहुत भले आदमी हैं। तुम भी उनकी बात रखना।" —रानी ने समझाया, परन्तु मन में लगा कि बेचारी के साथ कितनी निर्दयता हो रही है। स्वयं ही तर्क किया, क्या निर्दयता है? कोई बच्चा तो है नहीं। इसका मंगेत्तर मर गया है। बुढ़िया के यहां ही रहती तो क्या होता? कुंआरे से तो इसका ब्याह हो नहीं सकता। दो-चार बच्चों वाले किसी रंडुए किसान के पल्ले ही तो पड़ती। उससे अब क्या बुरी है?

रानी मन में तर्क करती हुई कनखियों से च्यूमिंग की ओर देख रही थीं। लड़की ने चुपके से माथे पर आये पसीने को हाथ से पोछकर फ़र्श पर गिरा दिया। यह देख रानी का मन बल खा गया।

"अब इसे उधर पहुंचा दो।"—रानी ने इंग की ओर घूमते हुए आज्ञा दे दी।

इंग ने आगे बढ़कर च्यूमिंग की आस्तीन चुटकी में लेकर धीमे से कहा—"चलो!"

च्यूमिंग खड़ी हो गई। उसके लाल होंठ खुल गये। सांस जल्दी-जल्दी चलने लगी। आंखें फैल गयीं। क़दम उठ नहीं रहे थे।

"चलो!"—इंग ने दबे हुए स्वर में कड़ाई से कहा, "यहां तुम्हारा और काम ही क्या है!"

लड़की ने इंग की ओर देखा और फिर रानी की ओर। कहीं भी सहायता और शरण की आशा न थी। उसका सिर झुक गया। वह इंग के पीछे चल दी। कमरे से आंगन में और आंगन का दरवाज़ा लांघकर बाहर अंधेरे में।

रानी वू बहुत देर तक एकांत में बैठी रहीं। शरीर निश्चल और मस्तिष्क भी शून्य था। उन्होंने कुछ सोचने का भी यत्न नहीं किया। अब उनके हृदय में सहानुभूति या परिताप की पीड़ा भी नहीं थी। मन बिलकुल निर्विकार था; मानो शून्य में समाकर शून्य हो गया हो।

रानी ने चेतना अनुभव करने के लिये सिर हिलाया। उनके होंठ थिरक उठे—ऐसे शून्य में से भी; ······शून्य गर्भ में भी जन्म से पूर्व आत्मा का अंश विद्यमान रहता है। ऐसे ही इस शून्य से भी अब उनका नया जीवन आरम्भ हो सकता है······वे उठकर खुले आंगन में आ गईं और आकाश में घने अंधकार की ओर आंखे लगाये खड़ी रहीं। घने बादलों के कारण तारे दिखाई नहीं दे रहे थे। जान पड़ता था, वर्षा आने वाली है। वर्षा में उन्हें नींद अच्छी आती थी।

इंग लौटी तो अंधेरे में मालकिन को न देख सीधे भीतर चली गई। उन्हें भीतर न पाकर घबरा गई। "हाय विधाता!"—इंग चीख उठी, "मालकिन कहां चली गईं? ······ओ मालकिन!"

"ओ मूर्खा! यहां हैं हम।"—रानी ने दरवाज़े की ओर मुंह कर दबे स्वर में पुकारा, "देख तो, बारिश आ रही है।"

इंग और भी घबरा गई। धड़कते हुए हृदय पर हाथ रख उसने उत्तर दिया—"हां हुज़ूर······मैंने सोचा······मैंने समझा······।"

"तू बहुत न सोचा-समझा कर। सोच-सोच के न मरा कर।"—रानी हंस पड़ीं।

इंग ने गहरी सांस ली और उसका हाथ सीने से नीचे आ गया। "हुजूर अब बिस्तरे में जायंगी ?"

"और नहीं तो क्या !"—रानी ने उतर दिया, "बारिश आ रही है, छत पर बूंदों की आहट अच्छी लगेगी।"

रानी ने स्नान किया। रात के महीन रेशम के सफ़ेद कपड़े पहने और सेज पर जा लेटीं। इंग सेज के सिरहाने खड़ी फूट-फूट कर रो उठी—"हाय, कौन नवेली दुलहिन भी मेरी मालकिन से बढ़कर सुन्दर होगी !"

रानी ने उसकी ओर करवट लेकर दबे हुए स्वर में धमकाया—"हम नहीं रो रहे हैं तो तुझे क्यों रोना आ रहा है ?"

इंग होंठ दबाकर रुलाई पी गई। उसने मसहरी के पर्दे गिरा दिये। रेशमी मसहरी के एकांत में रानी बाहें सीने पर बांधे लेट गईं और आंखें मूंद लीं। छत की खपरैल पर पड़ती बूंदें उन्हें सुलाने के लिये लोरी दे रही थीं।

× × ×

रानी के आंगन से अंधेरे में निकलकर च्यूमिग अज्ञात स्थान की ओर चली जा रही थी। रानी के आंगन में आकर वह बाहर निकली ही नहीं थी। जान पड़ा था कि उसे शरण मिल गई है। उस आंगन से बाहर भेज दी जाने पर उसे जान पड़ा कि वह अनाथ हो गई है, जैसे एक बार उसकी मां उसे सड़क किनारे छोड़कर अनाथ कर गई थी। तब वह समझती नहीं थी, परन्तु इस समय समझ रही थी।

च्यूमिग का जीवन ऐसे ही बीता था कि उसने आरम्भ से ही चुप रहना सीख लिया था। वह यदि बोलती भी तो सुनता कौन ! इंग चुटकी में उसकी आस्तीन पकड़े उसे लिवाये लिये जा रही थी और वह बिना कुछ बोले चुपचाप चली जा रही थी।

इंग भी चुप थी। च्यूमिंग को लिये एक के बाद दूसरा आंगन लांघती चली जा रही थी। वृद्धा के आंगन में सन्नाटा था। वे सूर्यास्त के समय ही सो जाती थीं। पश्चिम की ओर से किसी बच्चे के रोने की आवाज़ आई। लिआंगमी का बच्चा रो रहा था। उत्तर की ओर से जान पड़ा कोई स्त्री रो रही है। इंग के क़दम रुक गये। "सुनो!"—मुंह से निकल गया, "यह कौन रो रही है रात में ?"

च्यूमिंग ने सुनने के लिये सिर उठाया।

"अब तो नहीं आ रही आवाज़।"—इंग ने अनुमान प्रकट किया, "घुग्घी बोल रही होगी।"

इंग च्यूमिंग को लेकर आगे चली। च्यूमिंग का हृदय धड़क रहा था। रोम-रोम कांप रहा था। वायु के स्पर्श से शरीर में सिहरन दौड़ जाती थी। स्त्री के रोने की आवाज़ इसे भी जान पड़ी थी। लेकिन क्या इस हवेली में भी स्त्रियां रोती होंगी? कौन होंगी? उसने नहीं पूछा। जान कर भी क्या होता! उसका मन स्वयं रो देने को हो रहा था। मन चाह रहा था, कुछ बोले, कुछ सुने, कोई उसे सान्त्वना दे। चाहे उसे लिवाये लिये जाती नौकरानी ही बोले।

"मुझे यहां क्यों लाये हैं? यहां क्या करूंगी?"—च्यूमिंग धीमे से बोली, "मालिक के लिये तो बाजार की लड़की चाहिये, जिसे आता हो······। मैं तो देहातिन हूँ।"

"हमारी मालकिन ऐसी लड़की हवेली में कभी आने दे सकती हैं?"—इंग ने गर्व से समझाया।

च्यूमिंग और कुछ बोल ही नहीं पाई कि इंग उसे साहब के आंगन में ले आयी। मेहराब से लटकती लालटेन के प्रकाश में गेंदी के फूल चमक रहे थे।

"यहां अभी कोई नहीं है।"—इंग बोली और भीतर के कमरे की ओर बढ़ी। च्यूमिंग उसके पीछे चलती गई। साहब की बैठक च्यूमिंग को बहुत बड़ी लगी। इतना बड़ा कमरा उसने कभी नहीं देखा था। फ़रनीचर भी भारी और क़ीमती था और दीवारों पर चित्र भी लटके हुए थे।

दरवाज़ों पर लटके साटिन के भारी-भारी पर्दे संध्या की हवा से हिल रहे थे। च्यूमिंग सहमते-सहमते क़दम रख रही थी। यहां ही उसे रहना होगा—अगर साहब को पसंद आ जाय। साहब वहां नहीं थे।

च्यूमिंग ने कुछ नहीं पूछा। इंग भी कुछ नहीं बोली। इंग चुपचाप च्यूमिंग को सेज के लिये तैयार होने में मदद देने लगी। लड़की को तैयार कर सेज के किनारे बैठा दिया तो इंग ने देखा कि लड़की का चेहरा काग़ज़ की तरह पीला पड़ गया था।

"देखो, यहां ढंग और क़ायदे से रहना होगा।"—इंग ने कुछ ऊँचे स्वर में समझाया, "ढंग से रहोगी तो किसी बात का डर नहीं है। साहब बहुत भले आदमी हैं। रानी साहिबा-जैसी मेहरबान और समझदार मालकिन तो कहां मिलेगी! तुम्हारी तो समझो क़िस्मत खुल गई। डर किस बात से रही हो? तुम्हारा कौन-सा घर है जहां मां की गोद में जा बैठोगी!"

च्यूमिंग ने सिर झटककर अपने आपको सम्हाला। चेहरा लाल हो उठा। सेज पर लेट गई और आंखें मूंद लीं। इंग ने मसहरी के पर्दे गिरा दिए और चली गई।

च्यूमिंग मसहरी में लेटी रही। मन भय से बैठा जा रहा था···घंटे दो घंटे में जाने क्या होने वाला है। वह विशाल हवेली में बंदी के समान असहाय थी। कहीं से पासा फेंकने का शब्द आ रहा था। शायद नौकर जुआ खेल रहे थे या घर के दूसरे आदमी खेल रहे थे; हो सकता है साहब मित्रों के साथ खेल रहे हों।···रखेल भला कहीं ऐसे, बिना देखे ही लाई जाती है? ऐसे लग रहा था कि वह बहू बनकर आई हो। परन्तु बहू तो बड़ी मालकिन थीं, च्यूमिंग नहीं। रानी के सौंदर्य से उसकी तुलना भी क्या थी! उनकी जगह आकर उसकी क्या क़दर होगी!

मैं तो देहातिन हूँ।—च्यूमिंग ने सोचा—मेरे हाथ भी कैसे हैं! अंधेरे में ही उसने अपने हाथों को उठाया और फिर लिहाफ़ पर रख दिया। लिहाफ़ के चिकने रेशम पर उसके खुरदरे हाथ अड़ रहे थे।

च्यूमिग को याद आया, इस आंगन की ओर आते हुए किसी स्त्री के रोने की आवाज़ आयी थी। सोचा—इस घर में न जाने कौन-कौन लोग होंगे! घर के लड़के होंगे, उनकी बहुएं होंगी। उसे तो किसी से कुछ नहीं कहना। लोग नाराज़ न हो जायं। कितने ही नौकर होंगे। जाने कैसे होंगे! बेचारी ढंग तो भली है। नौकरों को जाने कैसे बुलाते होंगे! उसके पास क्या था जो नौकरों को देती और नौकर उसका काम करते! उसे खुद अपना काम कर लेने देंगे!

च्यूमिग का मन रो पड़ा—हाय अपनी जगह लौट जाऊं। गांव में वह बुढ़िया की खाट के बग़ल में दो बेंचों पर तख्तियां रख, गुदड़ी बिछाकर सो जाती थी। वही उसका बिछावना और ओढ़ना था। समीप बंधे बैल का श्वास और टोकरों के नीचे मुंदी हुई मुर्ग़ियों की फड़फड़ाहट भी सुनाई देती रहती थी। झोंपड़ी की धन्नियों में चिड़ियों ने घोसले बनाये हुए थे। उसकी नींद प्राय: ही सुबह चेहरे पर चिड़ियों की बीट टपक पड़ने से खुलती थी।

च्यूमिग को बुढ़िया के भाई के लड़के का ख्याल आया। बचपन से ही उसे मालूम था कि उस लड़के के साथ ही एक दिन उसका ब्याह होगा। वह बचपन से ही उसे इतना अधिक जानती थी कि उसे प्यार क्या करती! किसानों के और लड़कों-जैसा लड़का था। गोल-गोल चेहरा, उभरे हुए गाल। फिर वह खूब लंबा हो गया तो दुबला गया। उसे देखकर वह कुछ लजाने ही लगी थी कि लड़का मर गया। ब्याह की तैयारी की बात भी अभी नहीं उठी थी। च्यूमिग ने अभी लड़के के प्रति पति की भावना अनुभव करना आरम्भ भी नहीं किया था। लड़का मर गया तो बुढ़िया च्यूमिग को कोसने लगी।

"हाय मैं इस डायन को क्यों ले आई?"—बुढ़िया कहती, "राह पड़ी बला को मैंने अपने गले ले लिया। मेरे लड़के के भाग्य में यही बदा था।"

बुढ़िया की बातों से च्यूमिग का कलेजा बिंध जाता। संसार में उसका था भी कौन! बुढ़िया ही उसकी मां थी और वह झोपड़ी उसका घर।

परन्तु वह उस घर की भी नहीं थी। जब लू मा आई और उसका सौदा हो गया तब भी वह चुप ही रही······यहां आने से इनकार कैसे करती ! मेरे बस में ही क्या था !—सेज पर लेटी च्यूमिंग सोचती रही।

च्यूमिंग को क़दमों की चाप सुनाई दी। उसकी सांस रुक-सी गई। लिहाफ़ ठुड्डी तक खींच लिया और मसहरी में से दरवाज़े की ओर झांका। पर्दा हटा। पक्की उमर का एक भारी-सा सुडौल चेहरा दिखाई दिया। चेहरे पर नशे की लाली थी। शराब की गंध मसहरी के भीतर तक आई।

साहब ने मसहरी का पर्दा हटाकर च्यूमिंग की ओर पल भर देखा और फिर पर्दा छोड़ पीछे हट गये। कुछ देर च्यूमिंग को कोई आहट न सुनाई दी। सोचा, शायद साहब चले गये। अंधेरे में मसहरी के अंदर चुपचाप लेटी रही। हिलने का भी साहस नहीं हुआ। अगर पसन्द न आई तो यहां से निकाल दी जायगी। निकाल दी गई तो जायगी कहां ? निकाल दिया तो कुछ पैसा भी देंगे या नहीं ? रखेलों को निकाल देते होंगे तो क्या करती होंगी ? च्यूमिंग का मन कांपने लगा···हाय निकाल न दी जाऊं।

च्यूमिंग लेटी न रह सकी। उठकर बैठ गयी। मसहरी का पर्दा हटाकर देखा, साहब एक कुर्सी पर निश्चल बैठे थे। कपड़े उतार दिये थे। केवल महीन श्वेत रेशम के भीतर के कपड़े शरीर पर थे। उसे विस्मय हुआ, जरा भी तो आहट नहीं आई थी।

दोनों पल भर एक दूसरे की ओर देखते रहे। च्यूमिंग ने मसहरी का पर्दा छोड़ दिया और लेटकर चेहरा दोनों हाथों में ढंक लिया। मसहरी की ओर आते क़दमों की चाप सुनाई दी······आ रहे हैं। मसहरी का पर्दा झटके से हट गया। दो हाथ चेहरे को ढंके च्यूमिंग के हाथों को हटाने लगे।

पांच

रानी बू गहरी नींद से उठीं। ऐसी निर्विघ्न गहरी नींद उन्हें कभी ही आई होगी। मसहरी के सिरहाने रात में इंग ने मेज़ पर नई मोमबत्ती लगा दी थी कि आवश्यकता पड़ने पर रानी प्रकाश कर सकें। मोमबत्ती का धागा अब भी सफ़ेद ही था।

रानो के शरीर और मन में पूर्ण विश्राम और हलकेपन की अनुभूति थी। सोचने लगीं—पहले भी तो कभी ऐसा हलकापन और विश्राम अनुभव किया था ? और याद आया कि नौ मास तक गर्भ धारण करने के बाद जब प्रसव से मुक्ति पाती थीं, ऐसा ही विश्राम अनुभव होता था। प्रत्येक प्रसव के बाद अनुभव होता था कि उन्होंने फिर अपने आपको पा लिया। जब प्रसव की उत्कट पीड़ा सहसा समाप्त होकर अपने शरीर से पृथक् शिशु का क्रन्दन सुनाई देता तो उन्हें बोझ से मुक्ति और स्वतन्त्रता की अनुभूति होती। शिशु को नहला-धुला और कपड़ा पहना कर उनके सामने लाया जाता तो वे स्नेह से उसकी ओर देखतीं, परन्तु उसी क्षण से बच्चे का एक स्वतन्त्र अस्तित्व अनुभव कर, अपने अंश के रूप में नहीं। अपने शरीर के अंश को पृथक् करने की भावना उन्हें अच्छी नहीं लगती थी। वे पूर्ण बनी रहना चाहती थीं।

उस दिन सुबह कुछ ऐसी ही पूर्णता वे अनुभव कर रही थीं, बल्कि कुछ और गहरी और व्यापक। अब वे सदा के लिये मुक्त और पूर्ण रह सकेंगी। उस परिवार में किसी को भी कोई अभाव नहीं था।···सहसा फेंगमो का ध्यान आया—अभी एक कर्तव्य और बोझ शेष था। फेंगमो के विवाह का उत्तरदायित्व उन पर था।

रानी सेज से उठ बैठीं। नीचे चौकी पर रखे काले कढ़े हुए स्लीपर, जिन्हें इंग हमेशा बिस्तर से लगी चौकी पर लगा दिया करती थी, पैरों में पहन लिये। रानी के पांव बहुत ही छोटे और सुन्दर थे। पांच ही बरस की अवस्था में उनकी मां ने पांव बढ़ने से रोकने के लिये पट्टियां बांध दी थीं। उन दिनों उनके पिता महाराज ली हुंग चांग के साथ विदेश की यात्रा कर रहे थे। समाचार-पत्रों में उनके चित्र छपते रहते थे। नर्स उन्हें वे चित्र दिखाकर पिता की बुद्धिमानी और उदारता की प्रशंसा किया करती थी। मां भी पिता की प्रशंसा करती और लड़की से कोई भूल-चूक हो जाने पर चेतावनी देतीं—पिताजी सुनेंगे तो तुम्हें क्या कहेंगे ! लड़की वह सुनकर चुप रह जाती और फिर भूल न करने का ध्यान रखती।

एक दिन मां ने बेटी को बुलाया। मां के हाथों में लम्बी-लम्बी सफ़ेद सूती पट्टियां देखकर वे रोने लगी थीं। अपनी बड़ी बहन की अवस्था वे देख चुकी थीं। बहन पहले दिन भर प्रसन्नता से किलक कर खेलती-कूदती रहती थी, परन्तु पैरों में पट्टियां बंध जाने के बाद उदास बैठी कसीदा काढ़ती रहने लगी। पैर पट्टियों से बंधे होने और सूज जाने के कारण बहन खड़ी भी न हो पाती थी। मां ने बेटी की ओर घूरकर देखा। "तुम्हारे पिताजी लौटकर देखेंगे कि तुम्हारे पांव गंवार औरतों की तरह लम्बे-लम्बे हो रहे हैं तो क्या कहेंगे !"

बच्ची ने होंठ भींचकर कलाई दबा ली और सिसकियां लेते हुए बांधे जाने के लिये पैर आगे बढ़ा दिये।

महीना भर तक पैरों में कितना दर्द रहा था, यह रानी वू को आज तक याद था। पत्र आया कि पिताजी लौट रहे हैं। बच्ची पिताजी को

प्रसन्न करने के लिये पट्टियों की यातना और पन्द्रह दिन सहती रही। पिता के आने पर वह अपने बांधे जाकर सूजे हुए पैरों पर लड़खड़ाती हुई पिता की ओर दौड़ चली। बच्ची पिता का चेहरा देखकर उन्हें पुकार भी नहीं पाई थी कि उन्होंने क्रोध में चीखकर बेटी को गोद में उठा लिया।

"इसके पांव अभी खोलो!"—पिताजी ने कड़े स्वर में हुक्म दिया। घर में कोहराम मच गया। उस झगड़े का कोई शब्द तो रानी को याद नहीं था, परन्तु वह झगड़ा वे कभी न भूल सकीं। उन की मां और दादी विरोध में चीखीं और चिल्लाईं, दादा भी नाराज़ हुए, परन्तु पिता ने किसी की बात नहीं सुनी। उन्हें गोद में लेकर पैरों की पट्टियां खोलकर फेंक दीं। पट्टियां खुलने से पैरों में तीखी पीड़ा हुई, पर बच्ची का मन आनन्द से किलक उठा। उस पीड़ा के आनन्द को वे कभी न भूल सकीं। पिता बहुत देर तक अपने हाथों बेटी के दोनों पैरों की मालिश करते रहे। क्रोध और दृढ़ निश्चय से उन्होंने हुक्म दिया—"नहीं, बच्ची के पैर नहीं बांधे जायंगे।"

बच्ची पिता के गले में बाहें डालकर रो पड़ी। उनके सीने में मुंह गड़ाकर सिसकियां लेते हुए उसने कहा—"पिताजी अगर आप न आते·········" पिता रक्षा के लिये समय पर ही आ गये थे। कुछ मास बाद पैर ठीक हो गये और बच्ची खेलने-कूदने लगी। बड़ी बहन के पैर भी खोल दिये गये, परन्तु उनके पांव की हड्डियां टूट चुकी थीं।

पिता के विदेश से लौटने के बाद तीन वर्ष तक घर में भयंकर तूफ़ान मचा रहा। पिता नये देशों से नई बातें सीखकर आये थे। उन्होंने ज़िद्द पकड़ ली कि बेटी को पढ़ाया-लिखाया जायगा। तीन वर्ष बाद गर्मियों में हैज़े से पिता का देहांत हो गया। तब तक बेटी के पैर बांधे जा सकने का समय बीत चुका था और वह पढ़-लिख भी गई थी। अधिक पढ़ने से उसे रोका भी नहीं गया, क्योंकि उसकी सगाई हो चुकी थी और लड़की के ससुर उसके पढ़ी-लिखी होने और पैर न बांधे जाने से प्रसन्न ही थे। मां ने

अपना भाग्य सराहा था—"भाग्य ही है हमारा कि लड़की के ससुराल के लोग इतना बड़ा घराना होने पर भी इतने भले हैं।"

अपने छोटे-छोटे पैरों में स्लीपर पहनते समय रानी बू को मां की बात याद आ गयी और उनके होंठ मुस्करा दिये। इंग की आंखें उनकी ओर ही थीं।

"हुजूर, बहुत खुश हैं आज।"—औचित्य की परवाह न करके इंग बोल उठी, "क्या सोच रही हैं हुजूर? कोई बात है जरूर!"

"तू यह सब सोच-सोच कर क्यों पागल हुआ करती है?"—रानी ने मुस्कराकर कहा, "इन झगड़ों में न पड़ा कर तू। देख, बादल तो नहीं हैं?"

"हुजूर, बादल का तो कहीं निशान भी नहीं।"—इंग ने उत्तर दिया।

"अच्छा,"—रानी बोलीं, "बाहर जाने लायक कपड़े पहनाना। नाश्ते के बाद हम जरा कांग-हवेली जायंगे। क्या ख्याल है तेरा, हमारे फेंगमो के लिये लीनी कैसी रहेगी?"

"दोहरा नाता हो जायगा हुजूर।"—इंग ने विचारपूर्ण ढंग से उत्तर दिया, "हुजूर बल्कि अच्छा ही है, जाना-पहिचाना खानदान है। बड़े कुंवर की सेठानी की बड़ी बेटी से खूब निभ रही है। छोटे कुंवर साहब ने तो हुजूर कल रात बहू को पीट दिया।"

"क्या, त्सेमो ने रुलन को मारा?"—रानी ने विस्मय से पूछा।

"मैंने सुना, रो रही थीं।"—इंग ने उत्तर दिया, "मार ही पड़ी होगी।"

रानी ने गहरी सांस ली—"क्या यह झगड़े कभी खतम न होंगे?"

रानी ने जल्दी में नाश्ता किया और त्सेमो के आंगन की ओर गईं। त्सेमो उनसे भी पहले उठकर बाहर चला गया था। नौकरानी ने बताया कि रुलन अभी सो रही थी। रानी लड़के और बहू के झगड़े की बात नौकरानी से न पूछ सकती थीं। बोलीं—"लड़के से कहना, रात हमारे यहां आयगा।"

रानी ने अपने नियम के अनुसार हवेली के सब भागों, रसोइखानों,

भंडारों और आंगनों का निरीक्षण किया। कहीं सराहना की, कहीं ठीक करने के दो शब्द कहे और अपने आंगन में लौट आईं।

दो घंटे बाद रानी बू हवेली के फाटक से निकलीं। साहब ने दो बरस पहले एक मोटर गाड़ी ख़रीद ली थी। शहर के बाज़ार और गलियां तंग थीं। उनमें से मोटर पूरा रास्ता रोककर गुज़रती तो पैदल चलनेवालों को दोनों ओर की दीवारों के साथ चिपक कर खड़े हो जाना पड़ता था। रानी को लोगों की यह असुविधा अच्छी नहीं लगती थी। साहब ने एक खुली रिक्शा बहुत दिन पहले उन्हें उपहार में दी थी। रिक्शा की बेपर्दगी भी उन्हें अच्छी नहीं लगती थी। उन्हें तो पुराने ढंग की कंधों पर ढोई जाने वाली कुर्सीनुमा पालकी ही पसंद थी। यह पालकी दहेज में ही उनके साथ आई थी। रानी ने इंग को रिक्शा में आने के लिये कह दिया। पालकी ढोनेवाले चार आदमियों में से एक ने आगे बढ़कर पालकी का पर्दा उठाया। रानी भीतर जाकर बैठ गईं। पर्दा गिरा दिया गया। पर्दे में कांच की खिड़की बनी हुई थी। रानी चाहतीं तो बाहर देख सकती थीं, परन्तु उन्हें नहीं देखा जा सकता था। पालकी बहुत सिमटी हुई थी। तंग गलियों और भीड़ में भी कम ही जगह रोकती थी।

रानी का विचार था इस पालकी में चार आदमियों के कंधों पर कहीं आने-जाने से उनके कारण किसी को असुविधा नहीं होती थी। पालकी को सामने से उठाने वाले आदमी का विनय से पुकारते चलना, "मेहरबान ज़रा रास्ता दीजिये। मेहरबान ज़रा इजाज़त दीजिये।" उन्हें अच्छा लगता था। उनकी धारणा थी कि अमीर और बड़े आदमियों को ग़रीबों और छोटे आदमियों के सामने विनय दिखाना ही शोभा देता है। रानी को किसी के साथ भी ज़्यादती की जाना पसंद नहीं था। जब से हवेली का प्रबन्ध उनके हाथ में आया था, किसी दास को पीटा नहीं गया था और न किसी नौकर का अपमान हुआ था। कभी किसी नौकर के बेईमान या निकम्मे होने पर उसे अलग कर देना आवश्यक ही हो जाता। ऐसी अवस्था में भी नौकरी से छुट्टी दे देने का कोई दूसरा ही कारण बना दिया जाता।

नौकर समझते तो थे परन्तु उन्हें भी संतोष रहता कि दूसरों की आंखों में उनका मान बना रहा। इसलिये जब इंग से सुना कि त्सेमो ने रुलन को मारा है तो उन्हें बहुत वेदना हुई।

"नहीं ऐसा नहीं होगा।"—रानी ने सोचा, "नौकरों की बातों का क्या है, मैं स्वयं पता लूंगी। यह कैसे हो सकता है! कुछ समय के लिये उन्होंने मन से चिंता दूर कर दी।"

वू-हवेली से कांग-हवेली काफ़ी दूर थी। लगभग पूरा नगर लांघकर जाना होता था। रानी वू को कोई उतावली नहीं थी। उनके स्वभाव में ही जल्दबाजी और उतावलापन नहीं था। रात की वर्षा के बाद खिलखिलाती धूप प्यारी लग रही थी। गलियों और बाज़ारों में धुले हुए फ़र्शों के पत्थर चमक रहे थे। आने-जाने वाले भी अच्छे कपड़े पहने हुए थे। बाजार में अच्छी-खासी भीड़ थी। किसान देहातों से ताज़ी सबज़ी-तरकारी की डलियां, अण्डे और ईंधन की घास के बोझ लिये चले आ रहे थे। रानी वू को जीवन की यह धारा देखकर संतोष होता था। नगर के हज़ारों परिवारों में एक वू-परिवार भी था। दूसरे परिवारों में भी स्त्री-पुरुषों की संतानें और उनकी संतानों के संतानें होती जा रही हैं। चीन देश में ऐसे हज़ारों ही नगर हैं। पृथ्वी पर चीन देश की तरह सैकड़ों ही देश हैं, जहां मानव-जाति अपनी-अपनी विभिन्न संस्कृतियों के अनुरूप जीवन-निर्वाह कर रही है। इतने बड़े विस्तार में उनका अपना भी एक स्थान है। इस निस्सीम विस्तार में किसी एक व्यक्ति के हर्ष अथवा शोक का क्या महत्त्व हो सकता है!

लगभग एक घंटे में रानी वू की पालकी कांग-हवेली में पहुंच गई। इंग ने एक नौकर भेजकर रानी साहिबा के आने की सूचना पहले ही भिजवा दी थी। पालकी पहुंचते ही हवेली का लाल रोगन किया बड़ा फाटक खुल गया। भीतर उनका नौकर प्रतीक्षा कर रहा था। इंग तुरन्त रिक्शा से उतर पालकी की ओर आ गई। इंग रानी का छोटा सिंगारदान उठाए थी कि ज़रूरत पड़ने पर असुविधा न हो। रानी वू-हवेली के पहले ही आंगन

में थीं कि सेठानी उनके स्वागत के लिये आ गयीं। सहेलियों ने एक-दूसरे के हाथ थाम लिये।

"बड़े भाग हमारे बहिन कि तुम आईं।"—सेठानी बोलीं। सेठानी का मन यह जानने के लिये उत्सुकता से तड़प रहा था कि वू-हवेली में क्या हुआ। वह सब बातें रानी के मुंह से सुनना चाहती थीं। दोनों घरों के नौकरों का आना-जाना था। सेठानी सुन चुकी थीं कि वू-हवेली में रखेल आ गई है और पिछली रात च्यूमिंग साहब के आंगन में भी चली गई थी।

"बहन तुमसे बहुत-सी बातें करनी हैं,"—रानी वू ने कहा, "लेकिन आज आ गयी हूं बहुत जल्दी ही। तुम्हारे काम में विघ्न पड़ेगा।"

"यह क्या कह रही हो!"—सेठानी ने उत्तर देकर रानी का चेहरा ध्यान से देखा। रानी की शांत आंखें, चेहरे की प्यारी ताजगी, मुस्कराते होंठों में कहीं भी परिवर्तन नहीं था।

"बहन तुम्हें देखकर बहुत संतोष होता है, कितनी अच्छी लगती हो!"—सेठानी स्नेह से बोलीं। यह भी ख्याल आया कि उन्होंने अभी कंघी भी नहीं की थी, परन्तु इस बात से कोई ईर्ष्या न हुई।

"मैं सुबह जल्दी ही उठ जाती हूं।"—रानी बोलीं, "चलो आओ भीतर चलो। तुम कंघी करवा लो, तब तक मैं बैठती हूं।"

"अरे मेरे कंघी हुई न हुई,"—सेठानी ने बेपरवाही से कहा, "मैं कभी दोपहर बाद भी करवा लेती हूं। सुबह समय ही कहां मिलता है!"

सेठानी ने पीछे घूमकर देखा और हंस पड़ीं। लगभग एक दरजन बच्चे उनके चारों ओर इकट्ठे हो गए थे। कुछ अपने बच्चे, कुछ पोते-पोतियां, मिले-जुले। वह झुकीं और सबसे छोटे बच्चे को उठा लिया। बच्चा अभी अपने पैरों चलना नहीं सीखा था। एक दासी उसे उंगली पकड़ाकर चला रही थी। बच्चा कुछ मैला-कुचैला सा था, दूसरे भी कुछ वैसे हीं थे, अलबत्ता बच्चों के कपड़े क़ीमती थे। सेठानी ने बच्चे को उठा कर चूमा और सूंघ लिया, मानो उसे अभी स्नान कराया गया हो।

दोनों सहेलियां आपस में बात करती हुई दो आंगन लांघकर सेठानी

के आंगन में पहुंच गईं। सेठानी ने गोद में लिये बच्चे को फर्श पर खड़ा कर दिया और सब बच्चों और दासियों को संबोधन कर बोलीं—"जाओ, भाग जाओ यहां से!" बच्चों के मुंह लटक गये। सेठानी विवश हो गईं। अपने कुर्ते की जेब में हाथ डालकर कुछ दाम निकाले। दाम सबसे बड़ी दासी के हाथ में देकर बोलीं—"जाओ, इन्हें मूंगफली ले दो।"

जाते हुए बच्चों को पीछे पुकारकर उन्होंने दासी को चेतावनी दी—"देखो, साबित मूंगफली लेकर देना, नहीं तो सब फांक कर फिर सिर पर आ खड़े होंगे।"

बच्चों को दासियों के पीछे भागते जाते देखकर वह प्रसन्नता और संतोष से हंस पड़ीं। सेठानी ने फिर रानी वू का हाथ थाम लिया, अपने कमरे में ले गईं और किवाड़ बन्द कर लिये।

"यहां कोई दूसरा नहीं है।"—सेठानी ने कहा। रानी को बैठाकर स्वयं बैठीं और जरा झुककर रहस्य के स्वर में पूछा, "हां बताओ तो क्या हुआ!"

रानी ने सहेली की ओर कुछ विस्मय से देखा, मानो प्रश्न समझीं न हों।

"हां बात तो कुछ अजीब-सी ही है,"—क्षण भर सोचकर वह बोलीं, "पर उसमें कहने की क्या बात है!"

"क्या कह रही हो?"—सेठानी ने ऊंचे स्वर में विस्मय प्रकट किया। "मैं तो कुछ समझ ही नहीं सकी। लड़की कौन है? तुम्हें कैसी लगी? वू साहब को कैसी लगी?"

"लड़की अच्छी है।"—रानी ने उत्तर दिया और फिर उन्हें ख्याल आया कि वे तो सुबह से दूसरी ही बातें सोच रही थीं, मालूम नहीं था कि च्यूमिंग साहब को पसंद आयी या नहीं।

"हमने उसका नाम च्यूमिंग रख दिया है। ग़रीब लड़की है पर अच्छी है। साहब को पसन्द क्यों नहीं आयगी। कोई ऐब तो उसमें है नहीं। कोई उससे नाराज़ क्यों होगा?"—रानी ने संक्षेप में कह डाला।

"हाय विधाता!"—सेठानी अपना फूला हुआ हाथ होंठों पर रख कर बोलीं, "तुम तो ऐसी बात कर रही हो जैसे घर में नई धाय रख ली हो। जब मेरे पिता ने पहली रखेल रखी थी तो मां ने रो-रो कर घर सिर पर उठा लिया था। गले में फांसी लगा लेना चाहती थीं। हम लोग रात-दिन चौकसी करते रहते थे। जब पिता दूसरी रखेल लाये तो पहली ने जलन में अफ़ीम खा ली। ऐसे ही एक के बाद एक पांच रखेलें आईं। घर में सदा झगड़ा बना रहता था।" सेठानी ज़ोर से हंस पड़ीं। "पांचों ही उनके जूते ढूँढ़ती रहती थीं। जिसके यहां रात रहना होता था, पिताजी अपने जूते उसी के कमरे में रख देते थे। दूसरियों को मौका लगता तो जूते चुरा लातीं। पिता ने तंग आकर सब का एक-एक दिन बांध दिया।"

"क्या बेवकूफ़ औरतें थीं,......हमारा मतलब है रखेलें।"—रानी ने धीमे से कहा, "हम तुम्हारी मां की बात नहीं कर रहे। मिशेन, तुम्हारी मां की बात दूसरी थी, आशा करती होंगी कि पति उन्हीं से प्यार करे, परन्तु रखेलें क्या चाहती थीं?"

"बहन एलिन, तुम्हारे जैसी औरत तो नहीं देखी।"—सेठानी ने स्नेह से पूछा, "अच्छा एक बात सुनो, रात तुम्हें नींद आ गई थी?"

"नींद?"—रानी ने उत्तर दिया, "खूब आई बारिश थी न!"

"बारिश थी!......छत पर बारिश की आहट!"—सेठानी को इतनी ज़ोर से हंसी आ गयी कि आंखों से पानी बह गया और वे आस्तीन से आंखें पोंछने लगीं।

रानी धीमे से मुस्करा कर चुप रहीं। सेठानी आंखें पोंछ चुकीं तो रानी ने गम्भीरता से कहा—"मिशेन, तुम से एक ज़रूरी बात करने आई हूं।"

रानी के स्वर की गम्भीरता से सेठानी तुरन्त गम्भीर होकर बोलीं—"हां, कहो, मै अब नहीं हँसूंगी।"

"तुम जानती हो न हमारे लड़के फेंगमो को?"—रानी ने पूछा, "तुम्हारा क्या विचार है उसे, स्कूल भिजवा दें?"

प्रश्न का अभिप्राय था कि सेठानी यदि लड़के को स्कूल भेजना निरर्थक समझें तो रानी तुरन्त लीनी की बाबत बात कर लेंगी और यदि……।

"यह तो सोचने की बात है। वैसे लड़का करना क्या चाहता है ?"— सेठानी ने बहुत गम्भीरता से कहा।

"ऐसा तो कोई इरादा उसने कभी बताया भी नहीं।"—रानी ने उत्तर दिया, "अभी उसकी उम्र भी क्या है! अब सत्रह बरस का हो गया है तो उसका ख़्याल रखा ही जाना चाहिये।"

"सो तो ठीक कह रही हो तुम।"—सेठानी ने समर्थन किया और कल्पना में उन्हें फेंगमो का बर्छे-सा सुता हुआ शरीर और ऊंचा माथा दिखाई देने लगा।

"सुनो!"—रानी ने स्पष्ट बात की, "बात यह है, हम सोचते हैं कि दोनों घरों का एक सम्बन्ध और हो जाय। फेंगमो और लीनो……। तुम्हारी क्या राय है ?"

सेठानी ने अपने फूले-फूले हाथ दो बार बांधे और बोलीं—"क्या कहना बहुत अच्छी बात है!" और फिर उनके हाथ लटक गये। "लेकिन यह लीनी?"—चिंता के स्वर में वह बोलीं, "मैं तो चाहती हूं हो जाय, लेकिन उस लड़की का क्या पता; जाने क्या कहे!"

"तुमने लड़की को फिरंगियों के स्कूल भेज कर ठीक नहीं किया बहिन।"—रानी बू ने याद दिलाया, "हम ने तो तभी मना किया था।"

"ठीक ही मना किया था बहिन।"—सेठानी ने उदासी से स्वीकार किया, "अब तो लड़की को इस घर की कोई बात ही अच्छी नहीं लगती। बाप फ़र्श पर थूक दे तो बिगड़ उठती है। कहती है कि थूकने के लिये कमरों में पीकदान रखो। बच्चे पीकदान उठा कर पटक देते हैं। नन्हे-नन्हे-से बच्चे भी जांघिया न पहनें तो बिगड़ उठती है। तुम बताओ तेरह पोते-पोतियां हैं। अभी तो बेचारों को मूत रोकना भी नहीं आता। मैं किस-किस का जांगिया खोलती-बांधती फिरूं? हमारे बुजुर्ग हमें बिना

आसम के पैजामे ही पहनाते थे। अब बड़ी अकल आ गयी है इस छोकरी को। तीन धोबिनों से तो पूरा नहीं पड़ता······।"

"हमारे यहां यह सब परेशानियां उसे नहीं होंगी।"––रानी बोलीं, "और फिर जब अपने बच्चे हो जाते हैं तो समझ भी आ जाती है।"

लीनी के प्रति सेठानी की नाराज़गी में रानी की सहानुभूति लड़की के प्रति ही थी। सेठानी के यहां दाइयां, धाएँ बच्चों को कमरों और आंगनों के फर्शों पर जहां-तहां छीछी करा देती थीं। कहीं पांव रखने भर को भी जगह न रहती। बू-हवेली में ऐसी बेपरवाही नहीं चल सकती थी। नौकरानियों को कड़ा आदेश था कि बच्चों को किसी कोने में या किसी पेड़ की आड़ में में ही बैठायें।

सेठानी झिझकते-झिझकते बोलीं––"बहिन, यह हो जाय तो क्या कहना! लड़की की उमर हो गई है। ब्याह हो जाय तो उसका दिमाग़ ठिकाने लगे। लेकिन बहिन, तुमसे उसके गुण क्या छिपाऊं! वह तो अंग्रेज़ी पढ़े लड़के से ही ब्याह करने को कहेगी।"

"पर अंग्रेज़ी पढ़ा लड़का अंग्रेज़ी बोलेगा किस से?"––रानी ने विस्मय से पूछा, "क्या बहू और दूल्हा बैठकर अंग्रेज़ी में बात करेंगे? यह तो अच्छा तमाशा होगा।"

"तमाशा ही तो होगा!"––सेठानी ने समर्थन किया, "और आजकल की लड़कियां तो गिटपिट मार कर ही मिजाज़ दिखाती हैं।"

दोनों सहेलियां कुछ पल चुप बैठी रहीं और फिर रानी साफ़-साफ़ बोलीं––"बहिन, लीनी माने तो फेंगमो तो जैसा है वैसा है। लड़ाई जाने कब शुरू हो जाय! ऐसी हालत में मैं तो लड़के को शंघाई भेजने से रही। तुम जानती हो यहां तब उतना खतरा नहीं। समुद्र सैकड़ों मील दूर है।"

"सुनो तो!"––सेठानी के चेहरे से चिंता उड़ गई। वे बोलीं––"मैं बता दूं? यहां शहर में एक फिरंगी पादरी है। फेंगमो को अंग्रेज़ी पढ़ाने के लिये उसे ही न मास्टर रख लो। मैं लड़की से कह दूंगी फेंगमो फिरंगियों की बोली सीख रहा है।"

"फिरंगी को ?"—रानी चिंता के स्वर में बोलीं, "फिरंगी को हवेली में आने देना ठीक होगा ? कोई बखेड़ा ही न उठ खड़ा हो। सुना है, ये लोग भरोसे लायक नहीं होते।"

"बहिन वह तो पादरी है।"—सेठानी बोलीं, "वह ऐसा क्या होगा !"

रानी कुछ पल और सोचती रहीं—"अच्छा, लड़की जिद्द करेगी ही तो यही सही। फेंगमो को शंघाई भेजने से यही अच्छा रहेगा।"

"हां ठीक ही तो है।"—सेठानी ने समर्थन किया।

उठते हुए रानी बोलीं—"बहिन, तुम लीनी से बात कर लेना, हम फेंगमो से पूछ लेंगे।"

"बहिन, फेंगमो न माना तो ?"—सेठानी ने पूछा।

"मान जायगा।"—रानी बोलीं, "हम समय देख कर बात करेंगे। मर्द बूढ़ा हो या बच्चा, समय देख कर ही बात करनी चाहिये।"

"बहिन तुम्हारा क्या कहना !"—सेठानी धीरे से बोलीं।

दोनो सहेलियां आपस में हाथ पकड़े आंगन में आ गयीं। आंगन में उनके लिये चाय लगा दी गई थी, कुछ मिठाइयां भी थीं।

"बहिन थोड़ी चाय पी लो। थकान कुछ मिट जाय।"—सेठानी बोलीं।

रानी ने इनकार में सिर हिला कर धन्यवाद दे उत्तर दिया—"नहीं बहिन, तुम बुरा न मानो तो इस समय रहने दो। मैं जाकर लड़के से बात कर लूं, इसी समय अच्छा मौका है।"

वू ने सेठानी को भी यह बताना उचित नहीं समझा कि च्यूमिंग के साहब के यहां चले जाने से पहले ही फेंगमो की उससे आंखें चार हो गई थीं और इस कारण उनके मन में कुछ आशंका थी। उन्हों ने सेठानी से बिदा ली और चाय तैयार करने वाली नौकरानी के लिये कुछ इनाम चौकी पर रख कर चल दीं। इंग नौकरानियों में बैठी गप्प लगा रही थी। मालकिन को चलते देख दौड़ी हुई आई। रानी अपनी हवेली को लौट गईं।

रानी लौट कर हवेली में आईं तो बड़े फाटक के भीतर आंगन में सामने

जाती हुई मिस हिसा दिखाई दी। रानी जानती थीं कि शहर भर के सभी नौकरों को वू-हवेली और कांग-हवेली की सब खबरें रहती थीं। शहर में यह दो परिवार ही सब से बड़े और समृद्ध थे। रानी जानती थीं कि हिसा के नौकर ने बात सुनी होगी और हिसा को भी सुना दी होगी।

हिसा ने मुड़ कर रानी की ओर देखा और विस्मय से आंखें फैला कर पुकार उठी—"ओ रानी साइबा टुम क्या सुना? अम बोला, ऐसा होने नाई सकटा।"

"आइये आइये!"—रानी ने हिसा को सम्बोधन किया, "कितनी सुहावनी धूप है। हम लोग बाहर ही बैठें। इंग चाय और कुछ खाने के लिये ले आवेगी। भूख लगी होगी! दोपहर का समय भी तो हो गया।" रानी हिसा को बड़े आंगन में से साथ ले चलीं।

हिसा को अपने आंगन में बैठने के लिये कुर्सी दे रानी ने कहा—"आप पल भर बैठिए। हम एक मिनिट में आते हैं। रानी मुस्कराती हुई भीतर चली गईं। इंग भी उनके पीछे भीतर आकर बोली—"अभी तो आकाश और बरसेगा। जाने विधाता क्या करेंगे?"

"शोर न कर।"—रानी ने मुस्करा कर इंग की ओर देखा और आईने के सामने बैठ गईं। एक-आध बिखर गया केश सम्भाल कर एक हाथ पाऊडर का फेर लिया। बाहर आते समय सोने की सादी बालियां पहन ली थीं, उन्हें बदल कर फिर सब्ज़े की बालियां पहन लीं। हाथ धोये और हाथों पर सुगन्ध लगा ली और आंगन में लौट आईं।

हिसा आदर के लिये तुरन्त उठ खड़ी हुई। उसके चेहरे पर सहानुभूति की उदासी छा गई और बोली—"ओ अच्छी रानी साइबा, आपका कैसा मुसीबत हो गया। अम सुनटा ठा राजा साब बोट बला आडमी है।"

"बहन आप आ गईं बहुत अच्छा हुआ।"—रानी मुस्करा कर बोलीं, "आप से कुछ मदद चाहिये थी।"

रानी कुर्सी पर बैठ गईं तो हिसा भी बैठी। विनय और आग्रह में रानी की ओर झुक कर बोली—"रानी साइबा अमारे लायक जो खिडमट।

चाहते हैं। आप जानती हैं, समय बदल गया है और पुराने समय की शिक्षा-दीक्षा ही काफ़ी नहीं है। देश-विदेश का ज्ञान और सम्बन्ध भी अब ज़रूरी है। आप शहर में कोई ऐसा आदमी बता सकती हैं?"

रानी ने ऐसा अप्रत्याशित प्रसंग छेड़ दिया था कि हिसा कुछ देर के लिये मौन रह गई।

"हम ने सुना है कि यहां एक अंगरेज़ पादरी है।"—रानी ने स्वयं ही पूछा, "आप उन्हें जानती हैं?"

"पाडरी?"—हिसा ने प्रश्न से ही पूछा।

"हां, सुना तो है।"—रानी बोलीं।

हिसा कुछ झिझकी, "ओ आप उस पाडरी का बाट बोलटा हय।" और बोली, "अम समझटा आप का बेटा को पड़ाने को ठीक नई हय।"

"क्यों, क्या विद्वान् आदमी नहीं है?"—रानी ने पूछा।

"आडमी ठीक नाई हय।"—हिसा ने उत्तर दिया, "ऐसा कि बगवान को बी कम मानटा।"

"ऐसा आप क्यों कहती हैं?"—रानी ने पूछा।

"अम बोलटा कि उसको बगवान में ईमान नहीं हय।"—हिसा ने गम्भीरता से सम्मति दी।

"हो सकता है, उसका कोई दूसरा धर्म हो।"—रानी ने सुझाया।

"सच्चा डरम तो एक है। दो नाई।"—हिसा ने दृढ़ता से उत्तर दिया।

रानी के होंठों पर मुस्कराहट आ गई। बोलीं—"आप उनसे कहियेगा कि हम से मिल लें।"

"उस आडमी का बियाह नाई। कुवारा हय।"—हिसा ने घबराहट से उत्तर दिया, "अम उसका गर जायगा टो वो कुछ और समजेगा।"

रानी ने आत्मीयता से हिसा का सूखा हाथ अपने कोमल हाथों में ले कर विश्वास दिलाया—"नहीं, नहीं, आपके बारे में ऐसा कोई नहीं सोच सकता।"

रानी की सहानुभूति से हिसा की झेंप दूर हो गई। उसने विश्वास दिलाया—"अमारा बहन रानी साइबा, आप का वास्टे अम सब कोछ करेगा।" मानो रानी के लिये बड़ी भारी आपत्ति का सामना करने के लिये तैयार हो गई हो।

हिसा की घबराहट दूर करने के लिये रानी ने उसका हाथ थपथपा कर फिर मुस्करा दिया। "आप तो हैं ही बहुत अच्छी, इसमें सन्देह नहीं।" उसी समय इंग एक बड़ी किश्ती में चाय और मिठाइयां लिये आ गई।

आधे घंटे के लगभग चाय चलती रही। मिस हिसा से छुट्टी लेने के लिये रानी ने पूछा—"चलने से पहले आप दुआ नहीं पढ़ेंगी ?"

"ज़रूर-ज़रूर बहन।"—हिसा ने उत्साह से स्वीकार किया।

हिसा ने आंखें मूंद कर सिर झुका लिया और विनय और करुणा के स्वर में अदृश्य शक्ति को संबोधन करने लगी। रानी उतनी देर चुप बैठी रहीं। उन्हों ने आँखें नहीं मूंदी बल्कि हिसा के चेहरे की ओर देखती-सोंचती रहीं—इस बेचारी की आत्मा कैसी अकेली और भूखी है। घर-बार से दूर समुद्र पार बेचारी दूसरों की सेवा के लिये यहां पड़ी हुई है। ग़रीबों की सेवा करती है। भीख मांगने वाली स्त्रियों को सिलाई और कसीदा काढ़ना सिखाती है। सब लोग जानते हैं कि वह अपना सब कुछ दूसरों की सहायता के लिये न्योछावर किये है, परन्तु स्वयं वह कितनी असहाय और असंतुष्ट है। रानी का मन करुणा से भीग गया। वे जानती थीं कि हिसा बेचारी अबूझ और अनजान-सी है, परन्तु बेचारी है सहृदय।

दुआ समाप्त कर हिसा ने आंखें खोलीं तो उसे रानी की सुन्दर बड़ी-बड़ी आंखों में तरल करुणा उमड़ी हुई दिखाई दी। उसे जान पड़ा भगवान् ने उसकी दुआ सुन ली और उन्होंने अपनी करुणा से उस नास्तिक महिला के हृदय को स्पर्श कर दिया है।

रानी फिर गम्भीर हो गईं। हिसा को विदा देने के लिये कुर्सी से उठ खड़ी हुईं। "अच्छा तो आप उस पादरी को जल्दी ही भेज दीजियेगा।"

—उन्हों ने अंतिम बात कही, मानो आज्ञा दे रही हों। हिसा के लिये सिर झुका कर हामी भर लेने और चल देने के सिवा और कोई चारा नहीं रहा।

रानी अंत में विनय से बोलीं—"आप हमारी इतनी मदद कर रही हैं, आपका बहुत धन्यवाद। हम यही कह सकते हैं कि जब आप का मन चाहे आप हमारे लिये दुआ कर सकती हैं।"

× × ×

इंग से सुनी बात कि त्सेमो ने रुलन को पिछली रात पीटा था और रुलन के रोने की आवाज़ सुनाई दी थी रानी के मन में कांटे की तरह खटकती रही। परन्तु वे जानती थीं कि उस बड़े परिवार की समस्याएं उनके महत्त्व के अनुसार उचित अवसर आने पर ही सुलझाई जा सकती हैं। महत्त्व सबसे अधिक त्सेमो-रुलन के झगड़े का ही था। सुबह सब से पहले वे त्सेमो के यहां ही गई थीं, परन्तु शायद वह उचित अवसर नहीं था इसलिये विधाता ने उस समय अवसर नहीं दिया। रानी अपने अभ्यास के अनुसार दूसरे छोटे-मोटे कामों को सुलझाती हुई इस बड़ी समस्या पर विचार करती रहीं।

बड़े बावरची का हिसाब दो दिन पहले ही जांच के लिये आ जाना चाहिये था, परन्तु हवेली में उठे तूफ़ान का ध्यान कर बावरची ने रानी साहिबा को परेशान करना उचित न समझा। रानी ने उसे स्वयं ही बुलवा भेजा और हिसाब में ईंधन के लिये लगाए गये ज़्यादा दामों पर टोक दिया।

बड़ा बावरची जब भी हिसाब बताने के लिये आता इंग भी समीप बनी रहती थी। वह समझती थी कि रसायन बनाने में बड़े बावरची की बराबरी का आदमी चाहे दुनियां में न मिले पर है वह कुछ बुद्धू ही। रानी ने ईंधन के ऊँचे दामों के बारे में टोका तो वह तुरंत ताड़ गई कि ज़रूर किसी दूसरे नौकर ने इस बारे में शिक़ायत की है। और तुरंत ही याद आ गया कि एक अधेड़-सी नौकरानी ने बड़े बावरची पर फंदे डालने की कोशिश की थी, परन्तु

इंग के डर से बड़े बावरची की हिम्मत न पड़ी। नौकरानी चिढ़ गई थी और बावरची और इंग के काम में मीन-मेख निकालती रहती थी।

रानी ने ईंधन के दाम ज़्यादा बताये तो इंग तुरन्त अपने पति पर बरस पड़ी—"यह है ही ऐसा बुद्धू। मैंने इसे बीस बार समझाया है कि पच्छिम दरवाज़े से ईंधन न खरीदा कर। वहां तो लोग लूटते हैं।"

"ईंधन इतनी जल्दी खरीदने की ज़रूरत ही क्या है!"—रानी ने समझाया, "जब तक बाज़ार में नया ईंधन नहीं आता, अपनी ज़मीनों से ही ईंधन की घास मंगवा लिया करो।" वही आठ माह तक काफ़ी होगा।

"हुज़ूर मुख़्तार ने इस बार ईंधन की घास की ज़मीन में भी खेत बनवा दिये हैं।"

ईंधन के विषय में कुछ और बात करना रानी ने आवश्यक नहीं समझा। बावरची के लिए रानी की चेतावनी ही काफ़ी थी। खाता मूंद कर उन्होंने बावरची की ओर बढ़ा दिया और उठ कर पिछले महीने चढ़ गया खर्चा और अगले महीने के लिए पेशगी रुपया बावरची को दे दिया। जानती थीं कि साठ आदमियों की रसोई बनती है, बड़े खर्चों में यह सब चलता ही है। बावरची के बाद कपड़ा-गोदाम और मरम्मत का इन्तज़ाम करने वाला कारिन्दा दोनों दर्जिनों के साथ हाज़िर हुआ। रानी ने उनसे परिवार और नौकरों के गरमी के मौसम के कपड़ों की बात-चीत की। इन लोगों के बाद बढ़ई ने आ कर सलाम किया। रानी ने टपकने वाली दो छतों के लिए सामान और खर्चे का ब्योरा बना लिया।

संध्या तक एक के बाद दूसरे, हवेली के भिन्न-भिन्न कामों से सम्बन्ध रखने वाले लोग आते रहे। रानी का व्यवहारिक ज्ञान सभी बातों में पूर्ण था। वे उन सभी बातों पर इतनी गहराई से बात-चीत करती रहीं मानो वही उनका धंधा था। सूर्यास्त तक यह सब समाप्त कर देने के बाद दूसरी समस्याएँ उनके मस्तिष्क में आ गईं। वे फेंगमो के विषय में सोचने लगीं।

रानी दिन भर पुस्तकालय में मेज़ के साथ रखी बड़ी कुर्सी पर बैठी काम करती रही थीं। अब भी वहीं बैठी सोच रही थीं—फेंगमो के लिए

निश्चय कर लेना ही उचित है। मन में निश्चय कर चुकी थीं कि लड़के का विवाह लीनी से ही करना है, परन्तु वह कुछ कहना चाहता है तो कह ले। इससे उसे संतोष हो जायगा कि उसके ऊपर कोई दबाव नहीं है। इंग शयनागार में सेज ठीक कर रही थी, रानी ने उसे पुकार लिया।

"सुनो, फेंगमो को बुला लाओ।"—रानी ज़रा झिझकीं। इंग ने उत्सुकता से उनकी ओर देखा। रानी ने कहा—"और,......जब लौटो तो छोटी मालकिन से कहना कि रात में वह सब लोगों के साथ ही भोजन करेंगी।"

इंग मुंह बनाकर चली गई और रानी कुर्सी पर बैठी अपना अधर चुटकी में लिए सोचती रहीं—रात के भोजन का समय हो रहा है, इस समय फेंगमो अपने कमरे में ही होगा। अगर फेंगमो लीनी से ब्याह की बात खुशी-खुशी मान जाय तो आज रात सब लोगों के साथ मिल कर ही भोजन करेंगी। इधर कुछ दिन से वे अकेले ही खाना खा रही थीं। उन्हें सब लोगों से मिलते-जुलते ही रहना चाहिये।

रानी को फेंगमो के क़दमों की आहट सुनाई दी। वे सब बेटों के क़दम पहचानती थीं। लिआंगमो धीरे-धीरे जमे-जमे क़दम रखता था, त्सेमो ज़रा जल्दी में लुढ़कता-सा और येनमो तो अभी उछल-कूद कर ही चलता था। फेंगमो के क़दम ताल से उठते थे। तीन क़दम तेज़ और चौथा मध्यम। फेंगमो भीतर आया तो अपने स्कूल की गहरे नीले रंग की वर्दी पहने था। वैसे ही नीले कपड़े की टोपी सिर पर थी। टोपी पर स्कूल के नाम का बिल्ला लगा हुआ था—राष्ट्रीय पुनर्निर्माण मिडिल स्कूल।

रानी ने मुस्करा कर उसे भीतर आने का संकेत किया और हंस कर पूछा—"राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का क्या अर्थ है?"

"अम्माजी यह तो नाम है स्कूल का।"—फेंगमो ने उत्तर दिया और समीप कुर्सी पर बैठ गया। सिर से टोपी उतार ली और उसे दोनों हाथों में पहिए की तरह घुमाने लगा।

"नाम ही है; तुम्हें उसके अर्थ से कुछ मतलब नहीं है?"—रानी

"क्यों नहीं, हम सब चाहते हैं कि राष्ट्रीय पुनर्निर्माण हो।"—फेंगमो ने उत्तर दिया।

"लेकिन तुम्हें मालूम नहीं कि राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का मतलब क्या ह?"—रानी ने हंस कर पूछा।

फेंगमो हंस पड़ा। "अम्माजी अभी मुझे अलजबरा समझ में नहीं आता।"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "अलजबरा सीख लूँ तो फिर राष्ट्रीय पुनर्निर्माण भी समझ लूंगा।"

"अलजबरा!"—रानी ने सोचते हुए धीमे से कहा, "योरुप के लोगों ने अलजबरा भारतवासियों से ही सीखा था।"

फेंगमो ने विस्मय से मां की ओर देखा। उसे आशा नहीं थी कि मां ऐसी-वस्तुओं के सम्बन्ध में भी जानती हैं। बेटे के विस्मय से रानी के होंठों पर मुस्कान आ गयी। "तुम कुछ कमज़ोर-से लग रहे हो, क्या बात है?"—मां ने कुछ याद कर पूछा, "हिरण के सींग का चूर्ण खाते हो?"

"नहीं अम्माजी, उसमें से तो सड़ी मछली-सी दुर्गन्ध आती है।"—फेंगमो ने मुंह बना कर कहा।

"अच्छा तो उसे रहने दो।"—रानी फिर मुस्करा कर बोलीं, "तुम्हें इतना बुरा लगता है तो जाने दो।"

"धन्यवाद अम्माजी।"—फेंगमो बोला, परन्तु उसे मां के ढंग से विस्मय भी हुआ।

रानी व दोनों कोमल हाथों के पंजे मिलाए कुछ आगे झुक कर धीमे से बोलीं—"फेंगमो, तुमने कुछ सोचा है ब्याह कब करोगे?"

"ब्याह कब करूँगा?"—मां की बात समझने के अभिप्राय से फेंगमो ने टोपी को दोनों हाथों में घुमाते हुए पूछा।

"हां"—रानी ने उत्तर दिया, "तुम्हारे पिताजी से तो बात हुई थी।"

"अम्माजी मेरे ब्याह के लिए आप लोग फिक्र न कीजिए। मैं अपने आप ही बता दूंगा।"

"हां ठीक है।"—रानी ने तुरन्त स्वीकार किया, "हम ज़बरदस्ती नहीं

कर रहे। तुम्हें कुछ नाम बता दें, सोच कर देख लो। उनमें से तुम्हें कोई पसन्द है? हमें भी तो मालूम हो कि तुम कैसी लड़की चाहते हो। लड़की का घर-बार भी तो देखना होगा। हम ऐसे पुराने ख्याल के घराने की लड़की, चेन-परिवार-जैसी, से तो ब्याह करने के लिए तुम्हें कह देगें नहीं।"

"ऐसी लड़की से मैं कभी शादी नहीं करूंगा।"--फेंगमो ने घोषणा की।

"ऐसी लड़की से शादी करने को तुम्हें कह ही कौन रहा है?"--रानी बहुत शांति से बोलीं, "लेकिन बेटा, आजकल लड़कियां भी तो बहुत कुछ कहने-सुनने लग गयी हैं। हम लोगों के समय की बात दूसरी थी। हमारे लिए तो जो मां-बाप ने कर दिया ठीक था, लेकिन आजकल की लड़कियां तो बढ़-बढ़ कर बातें करती हैं। जैसी लड़की तुम चाहते हो वह ज़रूर कह देगी--मैं अंग्रेज़ी न पढ़े लड़के से ब्याह नहीं करूंगी।"

"मैं स्कूल में अंग्रेज़ी पढ़ तो रहा हूं।"--फेंगमो ने गर्व से उत्तर दिया।

"लेकिन तुम अंग्रेज़ी अच्छी तरह कहां बोल पाते हो!"--रानी बोलीं, "अंग्रेज़ी हम खुद नहीं जानतीं, लेकिन तुम भी जब बोलते हो तो बहुत अटक-अटक कर। तुमने ठीक ढंग से पढ़ी भी कहां है!"

"ऐसी कौन है जो मुझे पसन्द नहीं करेगी?"--फेंगमो ने अकड़ कर पूछा।

फेंगमो की अकड़ देख कर रानी को अपनी बात कहने के लिए आधार मिल गया। लड़के के अहंकार को उकसाने के लिए बोलीं--"उदाहरण के तौर पर जैसे मेंग की छोटी बहन लीनी है।"

"वह लड़की?"—फेंगमो बड़बड़ाया, "वह तो फिजूल अकड़ती है। मुझे तो नहीं अच्छी लगती।"

"सुन्दर भी तो कितनी है!"—रानी ने फेंगमो की अकड़ का उत्तर दिया, "खैर, वही एक थोड़े ही है; और बीसियों हैं, परन्तु लीनी तो हम लोगों के घर-बार को जानती-बूझती है। अगर उसने ही न कर दी तो हमें न जानने वाली कोई अच्छी लड़की क्या मानेगी!"

"तो क्या है, मैं अंग्रेज़ी स्कूल में दाखिल हो जाऊँगा।"—फेंगमो ने गरदन उठा कर कहा।

"नहीं, यह तो नहीं होगा।"—रानी ने स्नेह से कहा, परन्तु उस स्नेह में भी चट्टान की-सी दृढ़ता थी।

"किसी भी समय युद्ध आरम्भ हो जाय, ऐसी अवस्था में लड़कों का अपने घर रहना ही ठीक होगा।"

"आप को कैसे मालूम हुआ अम्माजी कि युद्ध हो जायगा ?"—फेंगमो ने पूछा।

"वह तो स्पष्ट दिखाई दे रहा है।"—रानी ने चिंता के स्वर में उत्तर दिया, "कोई तुम्हारे घर में घुसता चला आये, तुम उसे न रोको तो वह और आगे बढ़ेगा ही।"

लड़का चुप रह कर मां की ओर देखता रहा। आंखें बेटे की भी मां की आंखों की तरह ही काली और बड़ी-बड़ी थीं, परन्तु उनमें अभी अनुभव की स्थिरता और गहराई नहीं आ पाई थी।

"सुना है, यहां शहर में एक बहुत विद्वान् पादरी हैं।"—रानी बोलीं। "तुम योरुपीय भाषा सीखना चाहते हो, तुम्हें पढ़ाने के लिये पादरी को रख लें, वह तुम्हें पढ़ा देगा। सिर्फ़ विवाह की ही बात नहीं, वैसे भी विदेशी भाषायें उपयोगी हो सकती हैं। समय बहुत बदल रहा है।"

रानी के स्निग्ध और मधुर स्वर में भी गम्भीर चेतावनी थी। फेंगमो मां से स्नेह करता था, परन्तु उस के हृदय पर उनका रोब भी था। उस ने उन का कहा सदा ठीक ही पाया था। कभी मां की बात की अवज्ञा कर देने पर भी उन्हों ने बेटे को कोई दण्ड नहीं दिया था, परन्तु दण्ड मिल ज़रूर गया था। उसे विश्वास हो गया था कि मां ज्ञान और बुद्धिमत्ता का भंडार हैं, परन्तु लड़काई ऐंठ दिखाने के लिये उसने आपत्ति की ही।

"पादरी ?"—फेंगमो बोला, "मैं धर्म-वर्म, कुछ नहीं मानता।"

"धर्म मानने के लिये तो नहीं कह रही हूँ।"—रानी बोलीं, "धर्म की क्या बात है ?"

"वह मुझे ईसाई बनाने की कोशिश करेगा।"—फेंगमो ने मुंह बना

कर कहा, "मिस हिसा भी सब को ईसाई बनाने की फिकर में रहती है। जब मिलती है इंजील की प्रार्थना का पर्चा थमा देती है।"

"तुम क्या इतनी जल्दी बहक जाओगे ?"—रानी ने पूछा, "तुम खुद भी समझदार हो। जो बात तुम्हें भली लगे मानो, जो भली नहीं लगती न मानो। महीने भर के लिये पादरी को रख लें, तुम्हें अच्छा न लगे तो हटा देंगे; ठीक है ?"

रानी के अनुशासन का रहस्य यही था कि वे दबाव से बात न मनवाती थीं। सुझाव के रूप में बात कहतीं और दूसरों को सोचने का अवसर देतीं। उन्हें उतावली न होती। इस बीच में घटनाओं के परिणामों से उनकी बात का समर्थन हो जाता।

फेंगमो ने अपनी टोपी उलटते-पलटते स्वीकार कर लिया—"[illegible] चाहती हैं तो महीने भर के लिये रख लीजिये। अम्माजी, फिर मैं पादरी से नहीं पढ़ूंगा।"

"हाँ, महीना भर देख लो।"—रानी ने कुर्सी से उठते हुए कहा, "आओ बेटा, खाना लग गया होगा, चलें। पिताजी आरम्भ कर देंगे तो बाद में जाना अच्छा नहीं लगेगा।"

वू-हवेली के भोजनालय में स्त्री और पुरुष दो बड़ी-बड़ी मेज़ों पर अलग-अलग बैठते थे। भोजनालय में आकर फेंगमो मर्दानी मेज़ की ओर, जहाँ पिता के साथ दूसरे भाई, भतीजे और भांजे बैठे थे, बढ़ गया। रानी ज़नाना मेज की ओर गईं। उनके सम्मान के लिये सब स्त्रियाँ खड़ी हो गईं। रानी ने आते ही एक नज़र देख लिया कि च्यूमिंग भी मेज़ पर थी। लड़की झेंप के कारण दूसरी स्त्रियों से ज़रा हट कर बैठी थी। उसने किसी बच्चे को गोद में ले लिया था। रानी के आदर में खड़ी हुई तो भी उस ने लजा कर बच्चे को सामने कर लिया, परन्तु रानी उसे देख चुकी थीं। च्यूमिंग कुछ गंभीर-सी थी। नई जगह में स्वाभाविक भी था। यही बहुत था कि बेचारी मेज पर आ गई थी।

"आप लोग बैठिये।"—रानी ने सभी को सम्बोधन किया और

के सिरे की कुर्सी पर बैठ कर उन्होंने खाना खाने की कमचियाँ संभाल लीं। मेंग अभी दूसरी स्त्रियों को परोस रही थी। रानी ने कमचियां मेज़ पर रख दीं और मेंग की ओर देख कर अनुरोध किया—"बेटी, हमारे लिये भी परोस दो। बहुत थकी हुई हैं हम।"

मेज़ के समीप ही धाय मेंग के मुन्ने को गोद में लिये खड़ी थी। रानी ने बच्चे की ओर मुस्करा कर पुचकारा। फिर दोनों बहुओं से हाल-चाल पूछा। बच्चा धाय की गोद में बहुत बेचैन हो रहा था। रानी ने कमचियों से मांस का टुकड़ा उठा कर बच्चे की ओर बढ़ा दिया और फिर च्यूमिंग की ओर देख कर बोलीं—"छोटी मालकिन, तुम्हें क्या अच्छा लगता है? संकोच न करना, मछली लो, अच्छी बनी होंगी।"

च्यूमिंग का चेहरा लज्जा से गहरा लाल हो गया। बच्चे को गोद में लिये ही उठ कर उसने विनय से सिर झुकाया—"जीजी धन्यवाद!" बहुत धीमे से उसने होंठों में ही कहा और वह बैठ गई। एक नौकर ने उसके सामने चावलों का कटोरा रख दिया। पहले उसने बच्चे के मुंह में ही कौर दिया।

रानी के इतने व्यवहार से परिवार में च्यूमिंग का स्थान बन गया। वह परिवार में सम्मिलित हो गई। पल भर के लिये चुप रह कर लोगों ने रानी के निर्णय को स्वीकार किया। फिर नौकर-नौकरों से बोलने लगे, दायियों ने बच्चों को पुचकारा और वातावरण स्वभाविक हो गया।

रानी छोटे-छोटे कौर ले शिथिल गति से खाने लगीं। उनके दुलार से मचल कर पोता उनकी गोद में जाने की ज़िद्द करने लगा था। मेंग ने उसे दुलार से झिड़का—"न बेटा, तेरे हाथ-मुँह कैसे सने हुए हैं!"

रानी ने मानो स्वप्न से चौंक कर पूछा—"क्या मेरे पास आयेगा?"

मेंग बोल पड़ी—"नहीं अम्माजी, बहुत सना हुआ है।"

"आ मेरे लाल!" रानी ने हाथ बढ़ा कर गरुए मुन्ने को ले गोद में बैठा लिया और फिर दूसरी साफ़ कमचियों से परोसने के लिये रखे बड़े प्याले में से मांस के छोटे-छोटे टुकड़े चुन कर बच्चे को खिलाने लगीं। वे

बोल नहीं रही थीं। बच्चे के मुँह में कौर देते समय केवल मुस्कराती जा रही थीं।

दादी की गोद में बैठा बच्चा मुस्करा भी नहीं रहा था। अपना छोटा-सा मुँह खोल बहुत संतोष से खाता जा रहा था, मानो परम संतोष की अवस्था में हो। रानी की गोद और स्पर्श ही बच्चों को संतुष्ट कर देते थे; उन्हें रिझाने का यत्न नहीं करना पड़ता था। पोते को गोद में ले रानी भी संतोष अनुभव कर रही थीं। वह बच्चा उनकी पूर्णता का प्रतीक था। उस बच्चे के रहते उनकी उदासी का अर्थ क्या! वह स्वयं उनके अपने शरीर का विस्तार था, परन्तु उनकी आत्मा तक किसकी पहुंच थी! उनकी आत्मा की उड़ान उनके शरीर और पार्थिव जीवन से बहुत दूर चली गई थी। उनके विचारों और अनुभूतियों का क्षेत्र निस्सीम होकर भूत-भविष्य में भी फैल गया था। उनकी आत्मा जब विश्राम चाहती तो उनके शरीर और इस परिवार में लौट आती। इस समय भी वे पोते को गोद में लिये अपना पार्थिव अस्तित्व अनुभव कर रही थीं। वंश का प्रवाह जारी था--उनकी पीढ़ी का अंत और नई पीढ़ी का आरम्भ······।

बच्चा पूर्ण विश्वास से बार-बार अपना छोटा-सा मुंह फैला देता था और वे उसे जो चाहतीं खिलाती जा रही थीं। बच्चे ने तृप्त होकर मुंह फेर लिया तो उन्होंने उसे मेंग की ओर बढ़ा दिया।

वे तृप्त होकर उठ गईं। दूसरी स्त्रियां अभी खा ही रही थीं। रानी ने उनसे खाते रहने का अनुरोध किया। मर्दानी मेज़ के पास से जाते हुए उन्हों ने वू साहब और दूसरे लोगों की ओर मुस्करा कर देखा। सब लोग उनके आदर में उठने को हुए। रानी ने मुस्करा कर सिर झुकाया और बाहर चली गईं। वे सब फ़िर बैठ गये।

उस रात भी रानी को ख़ूब गहरी नींद आई।

× × ×

भोजन की मेज़ पर आधे घंटे तक रानी साहिबा के साथ बैठना

रही थी। साहब के आने पर वह उठ खड़ी हुई और मुंह दीवार की ओर कर लिया। साहब पल भर ठिठके और कुर्सी पर बैठ गये। दोनों हाथ घुटनों पर रख गला साफ़ करने के लिये उन्हों ने खंखारा और बोले—

"तुम···ऐसे घबरा क्यों रही हो।"

च्यूमिग उत्तर न दे सकी। हाथों में लिये कपड़े को पकड़े पत्थर की मूर्ति की तरह निश्चल खड़ी रही।

"इस घर में तुम्हें कोई तकलीफ़ नहीं होगी।"—साहब बोले, "मालकिन बड़ी भली हैं। बहुत-सी दूसरी स्त्रियां हैं, बहुएं हैं, भतीजों और भानजों की बहुएं और बच्चे भी हैं। तुम भी भली जान पड़ती हो। तुम्हारा मन लग जायगा।"

च्यूमिग चुप ही रही। साहब ने एक बार और खांसा। आराम के लिये ज़रा पेटी ढीली की, कुछ अधिक खा जाने के कारण उनकी सांस घुट रही थी। फिर बोले—"यहां तुम्हें कोई ज़्यादा काम नहीं है। हम अबेर से उठते हैं। हम सोये रहें तो उठाना मत। रात में नींद खुल जाय तो चाय लेते हैं, बहुत कड़ी चाय नहीं। हमें गरमी ज़रा ज़्यादा मालूम होती है, जाड़ों में भी दो लिहाफ़ नहीं ओढ़ पाते······और धीरे-धीरे सब समझ जाओगी।"

च्यूमिग के हाथों में थमा कपड़ा गिर गया। सहसा साहब की ओर घूम गई और पूछ बैठी—"मुझे रक्खेंगे?" उसके प्राण छटपटा रहे थे जानने के लिये कि उसे पृथ्वी पर शरण मिल गई?

"हां हां,"—साहब बोले, "यही तो कह रहे हैं।" वे मुस्कराये और उनका चेहरा उत्तेजना में लाल हो गया। च्यूमिग चेहरे की लाली का अर्थ समझ गई, परन्तु अब उसे भय न लगा। यह मोल था एक दयालु के यहां शरण पाने का; कोई अधिक मोल तो नहीं था।

छः

मिस हिसा जो काम सिर लेती उसे पूरा कर डालने में देर नहीं करती थी। परन्तु रानी बू को इतनी शीघ्रता की आशा नहीं थी। सात-आठ ही दिन बीते होंगे कि इंग चिल्लाती हुई आंगन में आई। भय और विस्मय से उसकी आँखें निकली जा रही थीं।

"हुजूर, हुजूर!"--आंगन में क़दम रखते ही इंग चिल्ला उठी।

रानी नये लगाये आर्किड की क्यारी के पास टहल रही थीं। चौंक कर उन्हों ने डांटा—"चुप! क्यों चिल्ला रही है, जैसे कोई इसका गला काट रहा हो। धीरे बोल!"

इंग सहम गई और एक सांस लेकर बोली--'हुजूर इतना बड़ा; इतना ऊँचा; पेड़-जैसा फिरंगी आया है। कह रहा है हुजूर ने बुलाया है।"

"हमने······?" रानी सोचने लगीं। उन्हें याद आ गया और बोलीं—"हूं शायद······।"

"हुजूर आपने कुछ कहा नहीं था।"—इंग ने शिकायत-सी की, "मैंने तो चौकीदार से कहा, इसे भीतर मत आने दो। हमारी हवेली में फिरंगी कभी नहीं घुसा।"

"सब बातें हम तुझे बताया करें?"--रानी बोलीं, "जाओ, उसे ले आओ।"

इंग कुछ न समझ कर चुप-चाप लौट गई।

रानी आर्किड की क्यारी पर निगाहें झुकाये प्रसन्न थीं कि दुबारा लगाये आर्किड तुरन्त पनप गये थे। इस आंगन की छांव उनके अनुकूल थी। रानी सोच रही थीं कि दूसरे आंगन में लगाई गई गेंदी भी ऐसे ही लग गई होगी। तभी उन्हें पुकार सुनाई दी—

"रानी साहिबा!"

रानी पुकार की तो प्रतीक्षा में थीं, परन्तु इतने सशक्त और गंभीर स्वर का अनुमान न था।

रानी ने क्यारी से निगाह उठा कर देखा। सामने लम्ब-तड़ंग, खूब चौड़े सीने का व्यक्ति एक भूरे रंग का पांव तक लम्बा चोगा पहने खड़ा था। कमर पर एक रस्सी बंधी हुई थी। दायें हाथ से गले से सीने पर लटकती सलीब को थामे था। रानी ने अनुमान किया पादरी है। रानी जानती थीं कि सलीब ईसाइयों का प्रतीक है। रानी का ध्यान सलीब की अपेक्षा, उस सलीब को थामे बड़े और सबल हाथ की ओर ही गया।

"मुझे नहीं मालूम आपको किस प्रकार सम्बोधन किया जाना चाहिये,"—रानी ने मुस्कराकर कोमल स्वर में कहा, "इसलिये हम आप का स्वागत नहीं कर सकीं। आप भीतर आ जाइये!"

पादरी अपना विशाल और भारी मस्तक ज़रा झुका कर भीतर आ गया। इंग उसके पीछे-पीछे थी। उसका चेहरा अब भी भय से पीला पड़ा हुआ था।

"आप हमारे पुस्तकालय में बैठिये।"—रानी बोलीं और पादरी को रास्ता दिखाने के लिये दरवाज़े पर एक ओर खड़ी हो गईं। पादरी ने सलीब छोड़ कर दायां हाथ दरवाज़े की ओर बढ़ा कर कहा—"हमारे देश में पहले महिलाएं प्रवेश करती हैं।"

"बहुत अच्छा।"—रानी ने स्वीकार किया, "मैं जगह से परिचित हूँ, मैं ही आगे चलती हूँ। वे कमरे में जाकर अपनी कुर्सी पर बैठ गईं और पादरी को सामने की कुर्सी पर बैठने का संकेत किया। इंग चुपके से

आकर दरवाज़े के पास छिप कर खड़ी हो गई थी। रानी का ध्यान उस ओर गया। "इंग सामने आओ!"—उन्होंने पुकार लिया और पादरी की ओर देख कर मुस्करा कर बोलीं, "यह स्त्री बड़ी मूर्खा है। इसने कभी आपके क़द का आदमी नहीं देखा। आप को देख कर बहुत हैरान हो रही है। कृपया इसे क्षमा कर दीजिये।"

"भगवान् ने इतना बड़ा शरीर मुझे शायद इसीलिये ही दिया है कि लोगों का कुछ विनोद हो सके। हंसना तो बुरी बात नहीं है।"—पादरी की आवाज़ से पुस्तकालय गूँज उठा।

"हाय विधाता!"—कमरे की छत की ओर देख कर इंग बोली, "क्या बादल गरज रहा है?"

"इंग चाय लाओ!"—रानी ने आज्ञा दी और इंग चुपचाप चली गई।

नक्क़ाशीदार भारी कुर्सी पर पादरी निश्चल बैठा हुआ था। उसके बड़े शरीर से कुर्सी भर गई जान पड़ रही थी। ऊंचाई और विस्तार के ख्याल से पादरी का शरीर मोटा नहीं, दुबला ही लग रहा था। उसके गले से लटकी सलीब सोने की थी। रंग कुछ ढंका हुआ, आंखें बड़ी-बड़ी और उज्ज्वल परन्तु भौवों के नीचे कुछ धंसी हुई, सिर के कटे हुए केश कुछ घुंघराले। काली दाढ़ी के महीन कोमल केशों में छिपे होंठ कुछ अधिक लाल लग रहे थे।

"आपको कैसे संबोधन किया जाना चाहिये?"—रानी बोलीं, "मिस हिसा से हम ने आपका नाम नहीं पूछा था।"

"नाम मेरा कुछ भी नहीं है।"—पादरी ने उत्तर दिया, "मेरा नाम 'आन्द्रे' रख दिया गया है। यही नाम मान लीजिये। कुछ लोग मुझे 'आन्द्रे बाबा' कहते हैं। रानी साहिबा आप 'आन्द्रे भाई' कहें तभी ठीक होगा।"

रानी ने अनुमोदन या विरोध का कोई संकेत नही किया। संबोधन के लिये किसी शब्द का प्रयोग न कर उन्होंने पूछा—"आपका धर्म क्या है?"

"धर्म की बात आज रहने ही दीजिये।"—आन्द्रे भाई ने उत्तर दिया।

रानी ने मुस्करा कर कहा—"हमारा तो ख्याल था कि सभी पादरी सदा धर्म की ही बात करना चाहते हैं।"

आन्द्रे भाई ने एक नज़र रानी की ओर देखा। उस निगाह में उज्ज्वलता तो थी ही परन्तु धृष्टता नहीं। रानी को भी ऐसा अनुभव नहीं हुआ। आंखों की उज्ज्वलता दीपक के प्रकाश की तरह व्यक्तित्वहीन, मानो मार्ग दिखाने के लिए उसे सामने रख दिया गया हो।

"रानी साहिबा, आप मुझ से कुछ बात करना चाहती थीं?"—आन्द्रे भाई ने पूछा।

"जी हां।"—रानी ने स्वीकार किया, परन्तु पल भर के लिये चुप रह गईं। आंगन से उन्हें कुछ आहट-सी मिली। घूम कर देखा तो झुंड के झुंड बच्चे झाँक रहे थे। रानी समझ गईं—इंग ने हवेली में एक दानव के आ जाने की खबर फैला दी होगी। उन्हों ने बच्चों को पुकार लिया—"आओ, बच्चो, यहां आकर देखो।"

बहुत से बच्चे भीतर चले आये। नहाये-धोये और सुथरे बच्चे सुबह की ताज़ी धूप में बड़े भले लग रहे थे। रानी को हवेली के बच्चों के लिये गर्व था।

"ये बच्चे भी आप को देखना चाहते हैं।"—उन्हों ने पादरी को सम्बोधन किया।

"हाँ हाँ, क्यों नहीं।"—पादरी ने उत्तर दिया और बच्चों की ओर घूम गया। कई बच्चे घबरा कर पीछे हट गये, परन्तु पादरी को अपने स्थान पर निश्चल मुस्कराते देख वे आगे बढ़ आये।

"डरो नहीं, यह बच्चों को खाते नहीं हैं।"—रानी बच्चों की ओर देख कर बोलीं, "बल्कि शायद यह बौद्ध-साधुओं की तरह केवल फल और शाक-सबजी ही खाते हैं।"

"बिलकुल ठीक है।"—आन्द्रे भाई ने अनुमोदन किया।

परिवार का एक बच्चा साहस कर आगे बढ़ आया। उसने विस्मय से पूछा—"आप इतने बड़े कैसे हो गये?"

आन्द्रे भाई ने सलीब को अपने सीने पर लटका रहने दिया और दोनों हाथ घुटनों पर रख चुप बैठ गया।

इंग चाय लेकर बच्चों को पीछे हटाती हुई भीतर आई। बच्चों को संबोधन कर बोली––"भागो, भागो, तुम्हारी माताएं बुला रही हैं। भागो, अपनी माताओं के पास जाओ।"

"हां बच्चो अब जाओ, अपनी माताओं के पास जाओ।"––रानी ने धीमे से ही कहा। सब बच्चे तुरन्त चले गये।

आन्द्रे भाई एक गहरी नज़र से रानी की ओर देख कर बोला—"बच्चे आप से डरते नहीं पर आपकी बात मानते हैं।"

पादरी की गहरी समझ रानी को अच्छी लगी। बोलीं—"यह बच्चे बहुत भले हैं।"

"आप भी बहुत भली हैं"––पादरी ने उत्तर दिया, "परन्तु आप संतुष्ट तो नहीं जान पड़तीं।"

निर्विकार और शांत स्वर में कहे गये आंद्रे के इन शब्दों से रानी को गहरी चोट लगी, परन्तु समझ न सकीं कि शब्दों के इस बाण ने उनके मर्म को किस स्थान पर बेध दिया है। उन्हों ने तुरन्त विरोध किया—"नहीं, नहीं, मैं तो बहुत संतुष्ट और सुखी हूं। मैंने अपनी इच्छा के अनुसार अपने जीवन का क्रम निश्चित किया। मेरे चार पुत्र हैं······"

आन्द्रे भाई ने कुछ न बोल गहरी दृष्टि से रानी की आंखों में देखा और ध्यान से उनकी बात सुनता रहा। पादरी के चुपचाप सुनने में ऐसी गहराई थी कि रानी अपनी बात में ठिठक गईं। "हमारा मतलब है"—उन्होंने कहा, "हम तो पूर्णतः संतुष्ट हैं। हां यह बात ज़रूर है कि हम जानना और अध्ययन करना चाहते हैं। पर यह ठीक-ठीक नहीं कह सकते कि क्या जानना और अध्ययन करना चाहते हैं।"

"शायद आप का मतलब उतना अध्ययन से नहीं, जितना अच्छी तरह समझ लेने से है।"––आन्द्रे भाई ने सुझाया।

रानी चुप रह गईं। उन्हें अच्छा नहीं लगा कि वे अपने विषय में बात

करने लगी थीं। उन्होंने बात बदल दी। 'हम आप से स्वयं अध्ययन करने के लिये नहीं बल्कि अपने लड़के को विदेशी भाषा पढ़ाने के लिये अनुरोध करना चाहते हैं।"

"कौन विदेशी भाषा ?"––पादरी ने पूछा।

"कौन विदेशी भाषा सबसे अच्छी रहेगी ?"––रानी ने पूछा।

"सब से सुन्दर भाषा तो फ्रैंच है।"––आन्द्रे भाई ने बताया, "सब से अधिक काव्यमय इटैलिन है। सब से अधिक शक्ति रूसी भाषा में है। जर्मन सब से गम्भीर है, परन्तु कारोबार के लिये सब से अधिक उपयोगी अंग्रेजी है।"

"तो फिर अंग्रेजी ही पढ़ाइये।"—रानी बोलीं। और पादरी की आंखों में देखकर उन्होंने पूछा—"आप क्या वेतन लेंगे ?"

"मैं वेतन नहीं लेता।"—आन्द्रे धीमे से बोला, "मुझे रुपये-पैसे की ज़रूरत नहीं।"

"पादरी को रुपये-पैसे की ज़रूरत नहीं ?"—रानी ने मुस्कराहट और विद्रूप से पूछा।

"रुपये-पैसे की ज़रूरत मुझे नहीं है।"––दृढ़ निश्चय के स्वर में आन्द्रे ने उत्तर दिया।

"हम आप से मुफ़्त काम कैसे ले सकते हैं ?"—रानी बोलीं, "आप चाहें तो हम आप के धर्म या आप के शुभ कार्यों के लिये रुपया दे देंगे।"

"जी नहीं, धर्म को रुपये की ज़रूरत नहीं।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया और कुछ सोच कर बोला, "हां कभी-कभी आपके नगर में ही कोई बात ऐसी हो सकती है। शायद कभी किसी अनाथ के लिये ज़रूरत पड़ जाय। कभी-कभी मुझे अनाथ बच्चों को सम्हालना पड़ जाता है। जब कोई गोद लेने वाला मिल जाता है तो उन्हें सौंप देता हूं। ऐसे अवसर पर आप मदद कर दीजियेगा। बस वही मेरा वेतन हो जायगा।"

"परन्तु हमारे नगर के ऐसे कामों से आपका तो कुछ लाभ नहीं होगा।"––रानी बोलीं, "हम आप के लिये कुछ नहीं कर सकते ?"

"यह मेरे लिये ही है।"—पादरी के शब्दों से कमरा गूंज रहा था।

रानी ने विरोध नहीं किया। इंग ने आंगन से आकर भीतर झांका और उन दोनों को वैसे ही बात करते देख कर फिर लौट गई।

"आप कब से पढ़ाना शुरू कीजियेगा?"—रानी ने पादरी की बात स्वीकार कर पूछा।

"जब से आप कहिये।"—आन्द्रे भाई ने उत्तर दिया, "चाहे आज से ही।"

"हमारा लड़का दिन में तो राष्ट्रीय स्कूल में पढ़ने जाता है।"—रानी बोलीं, "आप संध्या समय आ सकेंगे?"

"जब आप चाहेंगी, मैं आ जाऊंगा।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

रानी ने कुर्सी से उठ कर इंग को आज्ञा दी—"फेंगमो को यहां बुलाओ।" वे स्वयं दहलीज में खड़ी रहीं। दायें हाथ आंगन की बगिया थी और बायें पुस्तकालय। रानी दो संसारों के बीच खड़ी थीं। पादरी को पुस्तकालय में बैठा छोड़ कर वे आंगन में आ गईं। मन में आशा थी कि शायद पादरी उन्हें पुकार लेगा, परन्तु पुकार सुनाई नहीं दी। आंगन की चारदीवारी पर एक बुलबुल आ बैठी थी। बुलबुल ने एक तान छेड़ी और फिर रानी को देख कर फुर्र से उड़ गयी। रानी के मन में सहसा ख्याल आया कि पादरी को बुलवा लेना ठीक नहीं हुआ। उनके लिये अबोध भाषा में पादरी लड़के को जाने क्या-क्या सिखा-पढ़ा जाय!······जल्दबाज़ी हो गयी। एक बार पुस्तकालय के दरवाज़े की ओर गईं। ख्याल आया पादरी को अकेले बैठे छोड़ आने से वह अपमानित न अनुभव कर रहा हो। भीतर झांक कर देखा। पादरी का सिर झुका हुआ और आंखें मुंदी हुई जान पड़ीं। सोचा सो गया है। नहीं, उसके होंठ हिल रहे थे, जैसे कोई पाठ कर रहा हो। रानी पीछे हट गईं। उसी समय फेंगमो आता दिखाई दिया। उनके प्राण बचे।

"फेंगमो!"—रानी ने पुकारा।

रानी की पुकार सुन कर पादरी का सिर उठ गया और आंखें खुल गईं। आंखों में फिर वही चमक थी।

"फेंगमो, यहां आ जाओ।"—रानी ने फिर पुकारा।

"कहिये अम्माजी!"—फेंगमो ने पूछा।

रानी फेंगमो को हाथ से पकड़ कर पुस्तकालय में ले गईं। पादरी की तुलना में फेंगमो बहुत ही छोटा और दुबला सा जान पड़ रहा था। रानी को आश्चर्य हो रहा था कि उनका बेटा इतना छोटा क्यों है। वे अब तक फेंगमो को अपने बेटों में क़द्दावर और सुडौल समझती रही थीं।

"यह हमारा तीसरा पुत्र फेंगमो है।"—रानी ने पुत्र का आन्द्रे से परिचय कराया।

"फेंगमो!"—लड़के का नाम याद करने के लिये पादरी बोला। विनय में पादरी भी खड़ा हो गया था। शिष्टाचार के नाते तो कहा जाना चाहिये था—'तीसरे कुंवर साहब फेंगमो' परन्तु पादरी ने केवल फेंगमो पुकार कर ही लड़के को अपना परिचय दिया। "मुझे आन्द्रे भाई कहते हैं।"—पादरी ने बैठते हुए कहा, "बैठ जाओ फेंगमो, रानी साहिबा की आज्ञा है कि तुम्हें विदेशी भाषा पढ़ाई जाय। वे तुम्हें अंग्रेज़ी पढ़ाना चाहती हैं।"

"केवल भाषा ही।"—रानी ने चेतावनी के ढंग से कहा। उन्हें फिर ख्याल आ रहा था कि अपने बेटे को शिक्षा देने का काम पादरी को सौंप कर उन्होंने भूल तो नहीं की। शिक्षा देने वाले का प्रभाव तो विद्यार्थी पर पड़ता ही है।

"केवल भाषा ही।"—आन्द्रे ने रानी की चेतावनी को ही दोहरा कर उन्हें सान्त्वना दी और उनकी आशंका दूर करने के लिये विश्वास दिलाया, "रानी साहिबा, विश्वास रखिये मैं धोखा नहीं दूंगा। आप के पुत्र के मस्तिष्क को मैं आप की अमानत समझूंगा।"

पादरी की गम्भीरता और गहरी सूझ से रानी को कुछ झेंप-सी अनुभव हुई। इस रीछ-जैसे गरांडील आदमी से रानी को इतनी सूक्ष्मता की आशा नहीं थी। विदेशियों से उनका परिचय भी नहीं था। वे अब तक केवल एक ही विदेशी स्त्री हिसा को जानती थीं। हिसा थी भी कुछ बुद्धू-सी। रानी विनय में ज़रा सिर झुका कर आंगन में आ गईं।

लगभग एक घंटे के बाद पादरी और फेंगमो पुस्तकालय से निकले। पादरी रानी के लिए अबोध भाषा के शब्द धीमे-धीमे परन्तु स्पष्ट उच्चारण से बोल रहा था और फेंगमो बहुत तन्मयता से सुन रहा था।

रानी आंगन में पेड़ों के नीचे बांस की कुर्सी पर बैठी हुई थीं। उन्होंने पूछा—"क्या इतनी जल्दी सिखा दिया?"

"जी नहीं, अभी यह अर्थ नहीं समझ सकता।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "परन्तु मैं बात-चीत से ही भाषा सिखाता हूं। कुछ ही दिन में देखियेगा कि यह बोलने भी लगेगा।" पादरी ने फेंगमो की ओर घूम कर कहा—"अच्छा अब कल।" और लम्बे-लम्बे क़दम धीमे-धीमे उठाता आंगन से चला गया। इस दैत्याकार पादरी के आंगन से जाते ही रानी को जान पड़ा जैसे कोई बोझ मन पर से उतर गया हो। उन्होंने फेंगमो को सम्बोधन किया—"कहो बेटा!"

फेंगमो अभी तक कुछ सम्मोहन की-सी अवस्था में था। बोला—"घंटे भर में वह मुझे कितना सिखा गया!"

फेंगमो ने कई शब्द दोहरा दिये।

"इन शब्दों के अर्थ क्या हैं?"—रानी ने पूछा।

सिर हिला कर फेंगमो ने उत्तर दिया—"अर्थ तो अभी नहीं बताये।"

"कल अर्थ बताये जाने चाहिए।"—गम्भीर स्वर में रानी बोलीं, "हम यहां ऐसे शब्द बोले जाने पसन्द नहीं करते जिनका अर्थ यहां कोई न जानता हो।"

× × ×

दैत्याकार फिरंगी पादरी के आने का समाचार हवेली भर में तुरन्त ही फैल गया। वू साहब ने भी सुना, अगले दिन दोपहर बाद रानी बच्चों के नए जूते बनवाने के लिए दर्जिन के साथ बैठी रेशम के टुकड़े पसन्द कर रहीं थीं कि वू साहब आंगन में आ गये।

'इस औरत से कह दो जाय।"—साहब रानी के समीप आते ही बोले।

रानी समझ गईं कि साहब झुंझलाये हुए हैं। उन्होंने रेशम के टुकड़े एक ओर समेट दिए और दर्जिन को आदेश दिया—"डेढ़ दो घंटे बाद आना।"

साहब समीप की कुर्सी पर बैठ कर अपने पाइप में तम्बाकू भरने लगे। "हमने सुना है कि तुमने फेंगमो के लिए कोई अंग्रेज़ मास्टर रख लिया है! तुमने हमसे तो इस बारे में कोई बात नहीं की।"—वे बोले।

"आप से पूछ लेना तो चाहिए था"—रानी ने स्नेह से स्वीकार किया, "भूल हो गई। यह भी ख्याल था कि इस ज़रा-सी बात के लिए आप को क्या परेशान करूं! बात असल में यह है कि मैं चाहती हूं, फेंगमो का ख्याल लीनी की तरफ़ हो जाय।"

"क्यों क्या बात है?"—साहब ने पूछा।

रानी का यह दृढ़ विश्वास था कि पुरुष के साथ सचाई से बड़ा दूसरा उपाय नहीं। साहब के साथ वे सदा सच ही बोलती थीं, इस समय भी वही किया। "बात यह है"—वह बोलीं, "कि च्यूमिंग जब यहां ही थी तो फेंगमो आया था। दोनों में देखा-देखी भी हो गई थी। फेंगमो की उम्र इस समय ऐसी है कि कोई भी पागलपन चढ़ सकता है। इसीलिए मैं चाहती हूं कि उसका मन लीनी की ओर लग जाय तो अच्छा है। घर में कोई उत्पात खड़ा होने देने से क्या फ़ायदा!"

कोई भी समस्या सामने आने पर साहब घबरा जाते थे। इस समय भी उनके माथे पर पसीना आ गया। बोले—"तुम तो सदा ज़मीन-आसमान के कुलाबे मिलाया करती हो। लोगों के जोड़े ढूंढ़ना ही तुम्हारा काम रह गया है। तुम जाने सब आदमियों को क्या समझती हो! हमें भी तुम ने अच्छा बेवकूफ़ बनाया।"

"हाय, आप ऐसा समझते हैं! कोई ग़लती मुझ से हुई हो तो क्षमा कीजिये।"—रानी बोलीं।

झुंझलाये हुए साहब के सामने रानी निर्विकार और शांत बैठी हुई थीं। वे समझ चुकी थीं कि अपनी भूल तुरन्त स्वीकार कर लेना और विरोध प्रकट न करना ही प्रबल आत्म-विश्वास, दृढ़ता है।

रानी अनुभव कर रही थीं कि साहब खिन्न थे। इसके लिए उन्हें मन ही मन खेद भी था। "बात क्या है; आज आप इतने सुन्दर लग रहे हैं?" —उन्हें उत्साहित करने के लिए रानी ने मुस्करा कर कहा, "बिलकुल नौजवानों-जैसे लग रहे हैं।"

साहब के चेहरे पर सुर्ख़ी दौड़ गई। "नहीं तो, सच कह रही हो?" —उन्होंने पूछा।

रानी की आंखों में उमड़ा स्नेह देख कर राजा साहब उनकी ओर झुक आये और बोले—"एलिन, कुछ कहो, तुम्हारी बराबरी नहीं हो सकती। दूसरी किसी स्त्री के साथ अच्छा ही नहीं लगता। तुम्हारी ज़िद्द थी, इसलिये हम मान गये।"

"मैं जानती हूं"—रानी ने उत्तर दिया, "आपकी मेहरबानी ही है मुझ पर। आपने सदा मेरी बात रखी है। मेरी ख़ातिर यह भी मान गये।"

साहब की आंखें भीग गईं। रानी की ओर और भी झुक कर वे बोले—"तुम्हारे लिए एक चीज़ लाये हैं।" और महीन काग़ज़ में लिपटी हुई कोई चीज़ जेब से निकाल कर खोलने लगे। जूड़े में लगाने की सोने की सूइयां थीं। सूइयों पर सब्ज़े और महीन मोतियों की जड़ाई से तितलियां बनी हुई थीं। "कल यह जौहरी के यहां देखीं तो तुम्हारी याद आ गई। हमें तो सदा ही तुम्हारी याद आती रहती है; रात में भी।"—साहब दबे स्वर में कह गये।

रानी का चेहरा गम्भीर हो गया। "रात में भी आप मुझे ही याद करेंगे तो च्यूमिंग के साथ बड़ा अन्याय होगा। उस बेचारी के लिए तो अब सब कुछ आप ही हैं।"

साहब चेहरा झुकाये रहे।

"क्यों, च्यूमिंग आप को पसन्द नहीं आई?"—रानी ने आंतरिकता से पूछा।

"पसन्द ही है"—साहब झिझकते हुये बोले, "लेकिन तुम तो हम से इतनी दूर हो गई हो! क्या हम लोग अब ऐसे ही दूर-दूर रहेंगे? तुम

जानती हो हमारे लिए तो तुम्हीं सब कुछ हो……"—साहब दांतों से होंठ दबा चुप रह गये।

रानी रह न सकीं। उठ कर साहब के समीप चली गईं। साहब ने अपनी बांह उनकी कमर में डाल कर उनके कंधे का सहारा ले लिया। रानी के शरीर में सिहरन दौड़ गई, मन कांप उठा। भय साहब से नहीं, अपने से ही था……इस क्षण की शिथिलता से क्या किया-कराया सब समाप्त हो जायगा?

"तुम……"—साहब रुंधे हुए कंठ से बोले, "तुम……मेरी मोती……मेरी सब्ज़ा……मेरी चंदन।"

रानी सम्हल कर परे हट गईं। केवल उनका हाथ ही साहब के हाथ में रह गया। स्वर सम्हाल कर वे बोलीं—"आप सुखी रहेंगे। पहले से भी अधिक सुखी रखूंगी आप को।"

"अच्छा, हम एक साथ ही रहेंगे न?"—साहब ने पूछा।

"हां, हमारे जीवन की कितनी ही बातें कभी अलग-अलग हो सकती हैं।"—रानी ने उत्तर दिया। शिथिलता का क्षण बीत चुका था। साहब के होंठ ज़रा बल खा गये थे। रानी के मस्तिष्क में साहब की प्रकृति की स्मृति स्पष्ट हो गई। उनका शरीर सहसा पत्थर की तरह ठंडा हो गया। धीमे से अपना हाथ छुड़ा कर वे कुर्सी पर जा बैठीं।

"फेंगमो के लिये चिंता करने की ज़रूरत नहीं।"—रानी बोलीं, "मास्टर मैंने इसलिये रख लिया है कि लीनी अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे लड़के के साथ ही ब्याह करना चाहती है। अभी तो लड़की फेंगमो को अपने लायक ही नहीं समझती, पर देखिएगा महीने भर में सब ठीक हो जायगा।"

"तुम्हारा पार पाना मुश्किल है।" साहब हंस पड़े। "तुम तो लोगों को जैसे चाहे चरा सकती हो।" साहब उठ खड़े हुए और हंसते हुए बाहर चले गये।

"इंग!"—रानी ने पुकारा और बोलीं, "सुनो, हमारे यहां से सुगंधित साबुन लेकर च्यूमिंग को दे आओ। उससे कहना कि इसी साबुन से नहायें।"

इंग विस्मय से चुप रानी की ओर देखती रह गई।

"खड़ी हमारा मुंह क्या देख रही है?"—रानी ने धमकाया, "कोई काम नहीं है तुझे? हमारी एक चन्दन की कंघी भी उसके लिये ले जा और उसके भीतर पहनने के कपड़ों में चन्दन का चूरा छिड़क देना।"

"जैसा हुक्म हुजूर।"—इंग ने होंठ दबा कर स्वीकार किया।

रानी ने देखा कि साहब अपना पाइप मेज़ पर ही भूल गये थे। समझ गईं, पुरुष स्त्री के यहां अपना पाइप भूल जाय तो यह लौट कर आने का संकेत है। उन्हों ने इंग को फिर पुकार लिया—"देखो, साहब अपना पाइप भूल गये हैं, इसे उनके यहां पहुँचा देना।"

इंग चुपचाप पाइप उठा कर ले गई।

× × ×

रानी वू बच्चों के जूतों के लिये रेशम के टुकड़े दे चुकीं तो संध्या का अंधेरा गहरा हो चुका था। वे मोमबत्तियां जला दी जाने के लिये आज्ञा देने ही वाली थीं कि फेंगमो आता हुआ दिखाई दिया। फेंगमो स्कूल की वर्दी नहीं बल्कि बादामी रंग के रेशम का एक चोगा पहने था। चोगे पर बादामी रंग का ही कशीदा कढ़ा हुआ था। सिर पर छंटे हुए केश पीछे की ओर संवारे हुए थे।

"कोट-पतलून की अपेक्षा तो यह अपनी पोशाक तुम पर कहीं ज्यादा खिलती है।"—रानी स्नेह से पुत्र के ऊँचे क़द और खुले हुए माथे की ओर देख कर बोलीं।

फेंगमो का मस्तक चौड़ा और ऊंचा था, परन्तु अभी उसके व्यक्तित्व का आभास स्पष्ट नहीं हुआ था। लड़काई का कच्चापन मौजूद था।

"रात क्या पढ़ा था, याद है?"—रानी ने मुस्करा कर पूछा। फेंगमो ने एक सिगरट सुलगा ली। त्सेमो और फेंगमो दोनों ही विलायती सिगरेट पीते थे। उसके मुंह से निकलती धुंयें की कुंडलियां बहुत भली लग रही

थीं। कुर्सी पर न बैठ चहलक़दमी करते हुए उसने पिछली रात सीखे हुए अंग्रेज़ी के कई शब्द दोहरा दिये।

"इन शब्दों के अर्थ भी जानते हो ?"—रानी ने पूछा।

"आज पूछूंगा न !"—फेंगमो ने उत्तर दिया और बाहर से आहट सुन कर बोला, "वह आ तो रहा है।"

आंगन से बड़े-बड़े जूतों की आहट सुनाई दी और दरवाज़े में फाटक का चौकीदार पादरी को साथ लिये दिखाई दिया। रानी को देख कर चौकीदार ने झुककर सलाम दिया और पीछे हट गया।

'भोजन हो चुका ?"—रानी ने साधारण चीनी प्रथा के अनुसार पादरी के स्वागत में पूछा।

"मैं तो एक ही बार दोपहर में ही खाता हूं।"—आन्द्रे भाई ने उत्तर दिया और एक भोली-लजीली-सी मुस्कान उसके होंठों पर आ गई। कमरे में उसके आकर खड़े हो जाने से रानी को फिर जान पड़ा कि कमरा, फेंगमो और वे स्वयं भी सिकुड़ कर बहुत छोटे हो गये हैं, परन्तु आन्द्रे के मन में अपनी विशालता की कोई चेतना नहीं जान पड़ती थी।

"फेंगमो अभी आप से सीखे हुए अंग्रेज़ी के शब्द बोल रहा था। उन शब्दों का मतलब तो हम लोग जानते नहीं।"—कुर्सी पर बैठते हुए रानी वू बोलीं।

"वे शब्द एक अंग्रेज के हैं।"—आन्द्रे ने बताया, "मेरा मतलब है कि वह आदमी इंगलैंड में पैदा हुआ था, वहीं रहा और उसकी मृत्यु हो गई, परन्तु उसकी आत्मा पूरे भूमंडल पर घूमती थी।" आन्द्रे ने पल भर के लिये चुप हो कर सोचा और फिर उन शब्दों का अर्थ चीनी भाषा में इस प्रकार गुनगुनाया—

"निकला सूरज पूरब से, हुआ उजाला चहूं ओर,
रहा सूरज पूरब में, चमके धरती के छोर।"

रानी वू और फेंगमो बहुत ध्यान से आन्द्रे के शब्दों को सुन रहे थे। प्रत्येक शब्द को वे निर्मल जल के घूंट की तरह पीते रहे।

"क्यों, क्या यह धर्म नहीं है।"—रानी ने सन्देह प्रकट किया।

"यह कविता है।"—फेंगमो बोल उठा।

"मैंने भी अंग्रेजी के यही शब्द सब से पहले सीखे थे। वही तुम्हें सिखा रहा हूं।"—आन्द्रे भाई ने फेंगमो की ओर मुस्करा कर कहा, "उस समय मैं इटली में बच्चा ही था।"

"तो यह सूर्य पूरे संसार को प्रकाश दे रहा है?"—कुछ सोच कर रानी हँस पड़ीं और बोलीं, "आन्द्रे भाई, आप मेरी बात पर हँसेंगे तो सही; बात हँसने की है भी। मुझे कुछ ऐसा जान पड़ता था कि यह सूर्य केवल हमारे ही देश में और हमारे ही लिये है।"

"सूर्य तो हम सब लोगों का है।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "और हम सब लोग पूर्व और पश्चिम में सम्पूर्ण पृथ्वी पर सूर्य से ग्रहण किये हुए प्रकाश को देते-लेते हैं।"

जान पड़ा कि कमरे की दिवारें लोप हो गईं और बड़ी हवेली को घेरे ऊंची चारदिवारी, जिसमें रानी वू का जीवन बीता था, अन्तरध्यान हो गई और रानी की दृष्टि चारों ओर दिग्दिगन्त तक फैल गई। उन्हें एक ही आकाश की छाया में अनेक देश दिखाई देने लगे; भू-मण्डल के सातों समुद्र, जिनमें एक ही जैसे ज्वार उठ रहे थे।

रानी की इच्छा हुई कि बैठी रहें और आन्द्रे जो कुछ बताये सुनती रहें, परन्तु यह सोच कर कि उनके बैठे रहने से फेंगमो का ध्यान पढ़ने में न लग पायगा वे उठ खड़ी हुईं। "आप मेरे बेटे को पढ़ाइये।"—कह कर रानी बाहर चली गईं।

× × ×

लगभग दिन ढले कांग सेठानी रानी से मिलने आई थीं। रानी वर्ष भर में तीन या चार बार कांग-हवेली हो आती थीं, परन्तु सेठानी सप्ताह भर में दो-तीन बार रानी के यहां आ जातीं। दोनों को आपसी सहेलपने

और मन में सोचने लगीं कि ऐसी ज़िद्दी और बड़बोली लड़की को, जो अपनी मां को ही टोकती रहती है, ब्याह लेना ठीक होगा! ?

"बहिन तुम ही उसे सम्भाल सकती हो।"—गहरी सांस ले सेठानी तुरन्त बोलीं, "वह तुम्हीं से डरती भी है। मुझे और अपने बाप को तो गिनती ही नहीं। बाप भी कितने सीधे हैं!" सेठानी आंखें पोंछ कर ज़ोर से हँस पड़ीं। "आज सुबह वह बात उन्हें बताई तो घबरा कर सिर के बाल नोच लिये और बोले--अब मै घर में नहीं रहूंगा। किसी दूसरी जगह चला जाऊंगा।"

रानी चुप रह गई। सेठानी को लगा कि उनके सौभाग्य से रानी उदास हो गई हैं। सहेली को सान्त्वना देने के लिये बोलीं--"बहिन, अच्छा ही है, तुम्हारी साहब से इतनी नहीं बनती तो झगड़ों से तो बची हो।"

रानी को सहेली की बात अच्छी नही लगी। गम्भीरता से बोलीं—"बात बनने की तो उतनी नहीं जितनी संयम की है।" और फिर तरबूज़ का एक टुकड़ा लेते हुए कहा—"जग हंसाई तो हमें अच्छी नहीं लगती।" फिर बात संभाली—"मिशेन, तुम्हारी सेहत भी तो अच्छी है।"

"नाराज़ क्यों होती हो बहिन?"—सेठानी बोलीं और उन्होंने अपने फूले हुए से गुलगुले हाथ में रानी का नन्हा-सा हाथ थाम लिया, "बहिन, हम स्त्रियों की तो क़िस्मत ही यही है। तुम उस तरह से संभालती हो, मैं ऐसे सम्भाल रही हूँ।"

"यह क्या सम्भालना हुआ?"—रानी ने सेठानी का हाथ थाम कर पूछा।

"जैसे तुमने किया, मेरे बस का तो नहीं।"—सेठानी बोलीं, "तुम कहोगी कि तुमने समझदारी की, पर बहन, मैं अपने मर्द के साथ दूसरी औरत कभी न देख सकूँ।"

रानी बू के मन में एक अज्ञात वेदना उठी। सेठानी का हाथ थामे हुए भी वे अकेली, मानो किसी पहाड़ की बर्फ़ानी चोटी पर अकेली खड़ी थीं। मन में क्रन्दन उठा, परन्तु गला रुंध जाने के कारण शब्द न निकल सका।

उनका शरीर ऐंठ कर चेहरा सफ़ेद पड़ गया। सेठानी अंधेरे के कारण न तो उनके चेहरे की सफ़ेदी और न शरीर की ऐंठन का अनुमान कर सकीं।

उसी समय आंगन के दरवाज़े में रानी की दृष्टि दरवाज़े से भीतर आते आन्द्रे भाई के विशाल शरीर पर पड़ी, मानो वह उनके एकांत में सहायता देने के लिये चला आ रहा है।

"आइए-आइए, आन्द्रे भाई!"—रानी ने आश्रय पा कर कहा, "मैं फेंगमो को अभी बुलाती हूँ।"

रानी ने सेठानी का हाथ छोड़ कर परिचय कराया—"मिशेन, यह फेंगमो के मास्टर साहब हैं।" और दूसरी ओर देख कर बोलीं—"आन्द्रे भाई, यह मेरी सहेली, बहन-जैसी ही समझ लीजिये।"

आन्द्रे भाई ने सेठानी की ओर बिना देखे ही सिर झुका कर विनय प्रकट की और पुस्तकालय में चला गया। भीतर प्रकाश में दिखाई दे रहा था कि आन्द्रे एक पुस्तक निकाल कर पढ़ने लगा।

"आदमी है या दैत्य!"—सेठानी ने स्वर दबा कर कहा, "तुम्हें इस से डर नहीं लगता?"

"बहुत भला दैत्य है।"—रानी ने उत्तर दिया, "चलो भीतर चलें। फेंगमो आता ही होगा। नहीं तो वह समझेगा कि हम उसी की बात कर रहे हैं।"

"मैं अब चलूं।"—सेठानी बोलीं, "यह बताओ कि लीनी और फेंगमो को मिला दिया जाय या नहीं?"

"हम फेंगमो से बात करेंगे।"—रानी ने उत्तर दिया, "अगर वह मान गया तो उसे तुम्हारे यहां ले आयेंगे। फिर एक दिन तुम लीनी को यहां ले आना। दो बार का मिलना काफ़ी होगा।"

"ठीक है।"—सेठानी रानी का हाथ थाम कर बोलीं और चली गईं।

× × ×

आन्द्रे पुस्तकालय की मेज़ पर पुस्तक रखे फेंगमो को पढ़ा रहा था।

सुनो,······लीनी तुम से कुछ बात करना चाहती है। पहले, यानि जब लिआंगमो तुम्हारी उम्र का था, मेंग ने यह बात कही होती तो हम कभी न मानते। मेंग इतना साहस भी नहीं कर सकती थी, परन्तु लीनी और मेंग में बहुत अन्तर है और लिआंगमो और तुम में भी बहुत अन्तर है।"

मां का संकोच और विनोद से तरल [illegible] स्वर फेंगमो को विचित्र-सा ही लगा।

"आप से किस ने कहा ?"—फेंगमो ने पूछा।

"उस की मां ने।"—रानी ने उत्तर दिया।

रानी ने सिर कुर्सी की पीठ पर टिका लिया और आंखें अंधकार के शून्य में गड़ाये वे फेंगमो के स्वर का भाव भांपने के लिये चौकस हो गईं। एक उत्तेजना-सी अनुभव हो रही थी, जैसी अपने से सबल व्यक्ति का सामना करते समय होती है, लेकिन उन्हें अपने ऊपर विश्वास था। फेंगमो उनके शरीर का अंश था, शरीर की मांग आत्मा से प्रबल होती है।

"तुम्हें यह बात अच्छी नहीं लगी ?"—फेंगमो को चुप रह जाते देख रानी बोलीं, "हमारा भी यही ख्याल था कि लड़की इतनी मुंहजोर है तो यहां उसकी कैसे निभेगी ?"

फेंगमो कुर्सी पर मां की ओर झुक आया। उसका स्वस्थ सबल श्वास रानी को अपने चेहरे पर अनुभव हो रहा था। निश्चय से वह बोल उठा—

"नहीं अम्माजी, आप नहीं समझतीं।"

"हूं!"—रानी ने हुंकारा दिया और सान्त्वना अनुभव की। जानती थीं कि मां को बेटों का यही उत्तर होता है।

"अम्माजी, आजकल लड़के-लड़कियां प्राय: आपस में मिलते रहते हैं।"—फेंगमो ने बताया, "आप लोगों के समय में या जब लिआंगमो भाई साहब का विवाह हुआ था, तब बात दूसरी थी।"

"अच्छा यही सही।" रानी ने एक गहरी सांस ली, "बेटा, हम तो चाहते हैं तुम खुश रहो। सोचा था कि तुम न चाहो तो ज़बरदस्ती क्यों

करें! हम सेठानी से कह देते कि अभी मौक़ा नहीं है। वे समझ जातीं कि लड़की तुम्हें पसन्द नहीं है।"

"नहीं, मैं मिल लूंगा।"—फेंगमो ने अभिमान से कहा, "मिल लेने में क्या डर है?"

"पर बेटा"—रानी ने कोमल स्वर में सुझाया, "बात ज़रा सोच कर करना। लड़की मन में कोई ख्याल ही न ले बैठे, तुम जानते हो कि बीसियों लड़कियां इस घर में आने को तैयार होंगी। सुनो, हमारा ख्याल है कि लीनी की आंखें कुछ भेंगी तो नहीं हैं?"

"मैं देख लूंगा अम्माजी।"—फेंगमो ने उत्तर दिया।

"तो हम उसकी मां से कह दें कि हम दोनों किसी रोज़ आ जायँगे?" रानी ने पूछा।

"आप वहां जाकर क्या करेंगी अम्माजी?"—फेंगमो ने तीखे स्वर में पूछा।

"फेंगमो!"—रानी ने विस्मय प्रकट किया, "तुम क्या लड़की से अकेले मिलोगे? नहीं, यह नहीं हो सकता।"

"क्यों नहीं हो सकता अम्माजी?"—फेंगमो ने विरोध किया, "मैं कोई बच्चा हूं?"

"तो फिर हम तुम्हें नहीं जाने देंगे।"—रानी ने अधिकार प्रकट किया।

"अम्माजी ऐसा क्यों कहती हैं आप?"—फेंगमो ने अन्याय के विरुद्ध दुहाई दी, "अब तक मैंने कभी आप की बात नहीं टाली है।"

कुछ देर मां और बेटा चुप रहे। रानी ने कुर्सी से उठकर पूछा—"तो तुम अकेले ही जाओगे?"

"हां अम्माजी, उसमें क्या हर्ज है?"—फेंगमो अपनी बात पर जमा रहा।

"जैसी तुम्हारी इच्छा।" कह कर रानी कमरे के भीतर चली गईं।

सात

लीनी बहू बन कर वू-हवेली में आ गई। दिन सुहावना था, बल्कि ऋतु ही विवाह और समारोह के अनुकूल थी। खेतों में फसल तैयार थी। बालें अनाज से भारी हो कर झुक गई थीं। गरमी कम हो गई थी और जाड़ा भी अभी अधिक नहीं था।

दोनों परिवारों में सम्बन्ध की एक और गांठ पड़ गयी। दोनों परिवार प्रसन्न और उत्साहित थे। लिआंगमो और मेंग फूले न समा रहे थे। मेंग का कोमल छोटा-सा शरीर नई आशा में भारी हो रहा था। अब उसे मतली न आती थी और दिन-रात खूब भूख लगा करती। देखने में वह बड़ी प्यारी लगती थी। बड़े उछाह से उसने बहन का स्वागत किया।

सहेली समधिनों ने निश्चय कर लिया था कि यह विवार लड़के-लड़की की इच्छा के अनुसार ही हो। तीन दिन तक विवाह की रस्में और दावतें निबाहते हुए प्रतीक्षा करते रहना फेंगमो और लीनी के बस का नहीं था। उन्हों ने नये ढंग का संक्षिप्त विवाह ही पसन्द किया। बुजुर्गों के सामने परस्पर पति-पत्नी होने की शपथ ले ली।

इतने बड़े घराने में इतने संक्षिप्त ढंग से विवाह हो जाने के कारण शहर और पड़ोस के लोगों को बहुत निराशा हुई। रानी को इसका भी

ध्यान था। उन्हों ने तीन दिन के लिये एक होटल ले लिया, जो चाहे आ कर इच्छानुसार खा-पी सकता था। इससे हवेली में भीड़-भाड़ की परेशानी से भी बचाव रहा। विवाह के अंतिम दिन संध्या समय सेठानी बोलीं—"नये तरीक़ों में कई बातें तो बड़ी अच्छी हैं।"

उस संध्या फिर बू साहब के आंगन में पुरुषों का और रानी के आंगन में स्त्रियों का समारोह जमा। स्त्रियों के लिये बढ़िया से बढ़िया मिठाइयां थीं और पुरुषों के लिये कई तरह के मांस। फेंगमो और लीनी जल्दी ही उठ कर अपने आंगन में चले गये थे। सौभाग्य से कुछ मास पहले साहब के एक चचेरे भाई चल बसे थे और दो कमरों का एक आंगन खाली हो गया था। रानी ने वह जगह नवदम्पति के लिये तैयार करवा दी थी। चेतावनी भी दे दी थी कि फ़र्श और फ़र्नीचर सब दुरुस्त हो जाना चाहिये।

उस रात रानी बहुत प्रसन्न और संतुष्ट थीं। उनका एक और उत्तरदायित्व पूरा हो गया था। सप्ताह भर तक फेंगमो की इच्छा पढ़ने की नहीं हुई, इसलिये आन्द्रे नहीं आया। रानी भी कुछ न बोलीं; यह स्वभाविक ही था। अब उन्हें सन्यासी आन्द्रे का भी भय नहीं था। वह आये या न आये। फेंगमो के भटक जाने की आशंका नहीं रही थी।

आंगन लाल कंडीली से जगमगा रहा था। अंधकार में से पतंगों के झुंड के झुंड उड़-उड़ कर आ रहे थे, कोई बड़े, कोई छोटे। कभी बड़े-बड़े रंगीन हरे-गुलाबी परों वाले पतंगे भी आ जाते थे। कभी कोई बहुत बड़ा सुनहरा पतंगा उड़ कर आ जाता तो सब स्त्रियां भय से चिल्लाने लगतीं। जब तक उस पतंगे को पकड़ न लिया जाता स्त्रियां घबराई रहतीं। पतंगे को दिवार या किवाड़ों पर सुई से गाड़ दिया जाता तो स्त्रियां निर्भय हो कर पतंगे के अद्भुत सौंदर्य की प्रशंसा करने लगतीं और फिर मिठाइयां खाने लगतीं। वृद्धा सास को इस विनोद में बहुत आनन्द आ रहा था। वह बार-बार ताली बजा कर किलक उठतीं।

च्यूमिंग आंगन में आई तभी एक ऐसा सुन्दर पतंगा पकड़ा गया था, परन्तु रानी ने उसे देख लिया था। च्यूमिंग चुपचाप आ कर एक ओर बैठ

गई। अब तक लोग उसे जान-पहचान चुके थे। वह चुप ही रहती थी और दूसरे भी रानी के सम्मुख उसके विषय में कोई बात न करते, परन्तु रानी का ध्यान सदा ही उसकी ओर रहता। कभी नींद टूटने पर रात में भी ध्यान आ जाता। रानी उसे भुला देने का यत्न करतीं। च्यूमिग कुछ दुबलाई हुई और पीली-सी लग रही थी, परन्तु देखने में और भी सुन्दर।

रानी को ख्याल आया कि बहुत दिन से इस लड़की का हाल-चाल नहीं पूछा, और फिर सोचा—विवाह के बाद सही।

च्यूमिग किसी न किसी काम में लगी ही रहती थी। आते ही अतिथियों के लिये गर्म चाय बनाने लगी। दिन भर भी वह लोगों की आंख बचा कर भोजन बनाने या बच्चों को सम्भालने में लगी ही रही थी। कभी कोई कह ही देता—"छोटी मालकिन, तुम अब आराम करो।" तो उस का उत्तर होता—"बहुत अच्छा, बस यह कर डालूँ।"

सब स्त्रियां एक नये पकड़े गये बड़े पतंगे को देखने लगी थीं। च्यूमिग भी उसे देखने के लिये समीप आ गई। पतंगा खूब बड़ा बदामी-पीले-से रंग का था। खूब बड़ी-बड़ी काली टांगें थीं, जिसे 'बुद्ध का पंजा' कहते हैं। पतंगे को सुई से गाड़ा जा रहा था तो वह बहुत जोर से फड़फड़ा रहा था। सुई शरीर से पार हो जाने पर वह बिलकुल निश्चल हो गया।

"बेचारा मर गया।" च्यूमिग के मुंह से निकल गया।

सब की आंखें च्यूमिग की ओर उठ गईं। तब उसे ख्याल आया मैं क्यों बोल उठी। झेंप कर पीछे हट गई और दूसरी स्त्रियों के बैठ जाने की प्रतीक्षा करने लगी। सब के बैठ जाने पर वह उनके पीछे से हो कर रानी वू के पास पहुंची और उनके चाय की प्याली छू कर देखा। "आप की चाय ठंडी हो गई है"—च्यूमिग ने कहा, "गर्म ले आऊं?"

रानी ने कहा—"धन्यवाद!" और चुप रहीं। च्यूमिग झुक कर उनके प्याले में गरम चाय बनाने लगी। उसका सिर रानी की नाक के नीचे था। उन्हें चन्दन की गन्ध लड़की के केशों से आई। आंखें च्यूमिग के चेहरे की ओर गईं। उसके चेहरे पर वही विनय का भाव था।

"जीजी, आप से कुछ बात करना चाहती हूं। सांझ को आप के यहां आ जाऊं?"—च्यूमिग ने धीमे से कहा।

"हां, हां, ज़रूर।"—रानी ने तुरन्त उत्तर दे दिया। और कहती भी क्या? परन्तु मन में चिन्ता जाग उठी—जाने क्या नया बखेड़ा उठ खड़ा हुआ है। वे चुपचाप चाय पीती हुई अतिथियों के विदा होने की प्रतीक्षा करने लगीं।

अतिथियों के चले जाने के बाद भी च्यूमिग प्रतीक्षा में बैठी रही। इंग भी वहीं खड़ी थी।

"तुम जाओ।"—रानी इंग की ओर देख कर बोलीं, "ज़रा ठहर कर आना।"

आंगन में ठंडक थी। रानी का मन भीतर कमरे में जाने को न हुआ। कंडीलों के प्रकाश में गुलाबी रंग के आर्किड के फूल बहुत भले लग रहे थे। मेंग सास के लिए कुछ ताज़ी कमल-छतरियां लेती आई थी। एक बड़ी-सी कमल-छतरी उठाते हुए रानी एक ओर खड़ी च्यूमिग की ओर देख कर बोलीं—"बैठो न, कमलगट्टे खायें और बात भी करें।"

"धन्यवाद जीजी! आप खाइये, मैं नहीं लूंगी।"

"अच्छा, हम खायेंगे, तुम बात करो।"—रानी अपनी कोमल पतली उंगलियों से कमल-छतरी चीर कर दाने निकालने लगीं। उन की कोमल सफ़ेद उंगलियां देख कर ऐसा जान पड़ता था कि वे उनसे कुछ बन नहीं पड़ेगा, परन्तु वे ख़ूब समर्थ थीं। कमल-छतरी का कड़ा जाला चीर डालने में भी उन्हें कोई असुविधा नहीं हुई। बीज निकाल कर वे अपने मोती-से दांतों से छील-छील कर खाने लगीं।

"जीजी मैं छील दूं?"—च्यूमिग ने पूछा।

रानी को यह बात अच्छी नहीं लगी। अपने खाने की चीज़ को च्यूमिग का हाथ लगाना उन्हें अच्छा नहीं लगा। "नहीं हम छील रहे हैं।"—उन्हों ने उत्तर दिया। च्यूमिग भी चुप रही।

रानी कमलगट्टे के दाने छील-छील कर खाती रहीं और च्यूमिग सामने

बैठी देखती रही। सहसा रानी ने फटे हुए कमलगट्टे को एक ओर फेंक दिया, मानो वे तृप्त हो गई हों।

"क्या तुम्हारे पेट में बच्चा है?"—रानी ने सहसा साधारण लोगों की बोल-चाल में पूछ लिया।

च्यूमिंग ने आंख उठा कर उन की ओर देखा। "जी, शुभ आशा है।"—उसने भद्र-परिवारों की भाषा में उत्तर दिया।

रानी ने अपने या च्यूमिंग के शब्दों की ओर ध्यान न दे कर पूछा—"इतनी जल्दी!"

च्यूमिंग सिर झुकाये निश्चल बैठी रही।

"क्यों; साहब तो बहुत खुश होंगे?"—रानी ने तीखे स्वर में पूछा।

च्यूमिंग ने बड़ी-बड़ी भोली आंखें उठा कर उत्तर दिया—"उन्हें मालूम नहीं है। मैंने अभी उन्हें नहीं बताया।"

"यह क्यों?"—रानी ने पूछा। उन्हें च्यूमिंग पर क्रोध आ गया, परंतु उन्हें अपने क्रोध पर झेंप भी अनुभव हुई। उन्होंने स्वयं ही तो लड़की को बुलवाया था। जिस काम के लिए लड़की को बुलवाया गया था वही काम वह पूरा कर रही थी। लड़की का अपराध क्या था! फिर भी रानी को अपने क्रोध पर वश नहीं रहा। बोल उठीं—"रखेल तो ऐसी बात तुरन्त मर्द से कह देती है, तुमने क्यों नहीं बताया?"

च्यूमिंग की आंखें डबडबा गईं। फूलदार कण्डीलों के प्रकाश में उसकी आंखों में छलक आये आंसू स्पष्ट दिखाई दे रहे थे।

"मैं पहले आप से बात करना चाहती थी।"—च्यूमिंग ने निराशा से टूटे हुए स्वर में कहा, "मुझे आशा थी कि आप प्रसन्न होंगी, परन्तु आप मुझ से नाराज़ हैं। अब एक ही उपाय है कि मैं आत्म हत्या कर लूं।"

च्यूमिंग की इस निराशा और दुस्साहपूर्ण बात से रानी का माथा ठनका। बड़े-बड़े परिवारों में रखेलें प्रायः ही फांसी लगा कर अथवा अफ़ीम खा कर आत्महत्या कर लेती थीं, परन्तु ऐसी बात से परिवार की बदनामी होती। परिवार की रक्षा और उसकी प्रतिष्ठा का प्रश्न उठते ही रानी

चौकन्नी हो गईं। बोलीं—"क्या कहती हो? आत्महत्या करने की कौन बात है! तूने क्या बुरा किया है?"

"मैं तो सोच रही थी कि आप सुन कर प्रसन्न होंगी तो मैं भी खुश होऊँगी।"—च्यूमिग दर्द भरे स्वर में बोली, "मैं तो आप ही की शरण हूँ। आप के नाराज़ होने पर मेरे लिये कहां आश्रय है?"

रानी बू डर गईं। उनका विचार था कि देहात से आई यह लड़की देहाती स्त्रियों की तरह गर्भवती हो जाने से ही संतुष्ट हो जायगी, जैसे जीवों की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। गाय कभी सांड़ की चिंता नहीं करती, वह बच्चा चाहती है। उन्होंने कभी च्यूमिग के बारे में सोचा था तो यही ख्याल आया था कि इसके बाल-बच्चा हो जायगा तो यह सन्तुष्ट रहेगी।

"पर हुआ क्या?"—रानी च्यूमिग से बोलीं, "तुम्हें स्वयं भी तो खुशी होनी चाहिये। बच्चे से तुम्हारा मन बहलेगा। तुम उसकी देख-भाल करोगी। लड़का हुआ तो यहां लोग तुम्हारा आदर करने लगेंगे। तुम विश्वास रखो, अगर लड़की भी हुई तो कोई तुम्हें भला-बुरा नहीं कह सकता। हमारे लिये तो लड़के-लड़कियां बराबर हैं। जब हमारी बच्ची मरी थी तो हमें ऐसा ही लगा जैसे लड़का ही गया हो।"

च्यूमिग मौन और निश्चल रानी की ओर आंखें लगाये उनकी बात सुनती रही।

"आत्महत्या का ख्याल कभी न करना।"—रानी ने चेतावनी के स्वर में कहा, "जाओ अब आराम करो। साहब आयें तो उन्हें भी यह शुभ सम्वाद देना।" रानी ने अधिकार के स्वर में यह चेतावनी च्यूमिग को दी, परन्तु मन ही मन भारी बोझ से पिसी जा रही थीं। चाहती थीं कि कुछ देर अकेली बैठकर सोचे। वे उठ खड़ी हुईं। च्यूमिग ने आगे बढ़ कर उनके कुर्ते का आंचल थाम लिया और गिड़गिड़ा कर बोलीं—"आज रात मुझे यहां ही रहने दीजिये, मैं उसी खाट पर सो रहूंगी जहाँ पहले सोई थी। यह बात आप ही उन से कह दीजियेगा। मेरी प्रार्थना है कि अब मुझे माफ़ कर दें।"

रानी बू अब सचमुच घबरा गईं। "क्या तेरा दिमाग़ ख़राब हो गया है?"—उन्हों ने धमकाया, "भूल गई तू कौन है? तेरे मां-बाप तो तुझे सड़क किनारे अंधेरे में फेंक गये थे। ग़रीब किसान बुढ़िया ने तेरी जान बचा ली। ब्याह के पहले ही तू विधवा हो गई। अब इस हवेली में तू छोटी मालकिन बनी हुई है। इस शहर में इस से बड़ा घर कौन है! तुझे पहनने के लिये रेशम और जवाहरात दिये हैं, तू और चाहती क्या है? इस आंगन में लौट आने का मतलब क्या? हम लोगों से क्या कहेंगे? जाओ लौट कर अपनी जगह। इसी मतलब से तो तुम्हें ख़रीदा गया था।"

च्यूमिंग के हाथों से रानी का आंचल छूट गया। वह पांव पर खड़ी हो गयी और सिर झुकाये धीमे-धीमे क़दम उठाती दरवाज़े की ओर चल पड़ी।

लड़की का निराश चेहरा देख कर रानी का मन पिघल गया। "देखो घबराने की कोई बात नहीं है।"—रानी अपने स्वाभाविक स्वर में बोलीं, "डरती क्यों हो? लड़कियों को पहली बार ऐसे ही डर लगता है, परन्तु तुम तो स्वस्थ हो, देहात की रहने वाली हो। अच्छा जाओ आराम करो; सो जाओ। मन न करे तो उठने की ज़रूरत नहीं। हम जानते हैं तुम्हारा मन जागने को नहीं करेगा तो साहब भी दिक़ नहीं करेंगे। भले आदमी हैं! डरो मत, कल हम भी उन से कह देंगे।"

रानी की बात से च्यूमिंग को कुछ सान्त्वना मिली। सिर झुका कर उस ने ओंठों ही ओंठों में उन्हें धन्यवाद दिया और शनैः-शनैः क़दम रखते दरवाज़े से निकल गयी।

रानी ने एक-एक कर सब कण्डील बुझा दिये। आंगन में अंधेरा भर गया। वे भीतर कमरे में चली गयीं। इंग ने उनके कपड़े बदलवा दिये, परन्तु कुछ बोलने का साहस उसे न हुआ। मालकिन के चेहरे पर ऐसी गहरी उदासी और चिंता छाई हुई थी कि इंग ने जब सेज की मसहरी के पर्दे गिरा दिये रानी तब भी कुछ न बोलीं।

इंग नौकरों के आंगन की ओर चली गई। अतिथियों का भोज समाप्त

हो जाने के बाद नौकर-नौकरानियां अपना भोजन कर रहे थे। आंगन कोलाहल से भरा हुआ था। इंग ने अपने बर्तन में खाना ले लिया और दर-वाज़े की चौखट के सहारे बैठ कर खाने लगी। दूसरे नौकरों की बातचीत भी सुनती जा रही थी। वह मालकिन की खास नौकरानी थी, इसलिए उसका स्थान नौकरों में ऊँचा था। उस से अधिक आदर था केवल पेंग का। पेंग साहब का बैरा था। पेंग भी समीप ही में बैठा खा रहा था। पेंग का शरीर भारी होने के कारण उसके माथे पर पसीना छलक आता था। पेंग के समीप ही उसकी दो-ढाई वर्ष की बच्ची खड़ी बाप की ओर भूखी आंखें लगाये थी। पेंग खाने की कमचियों से अपना मुंह अविराम गति से भरता जा रहा था। वह सांस लेने के लिए रुकता तो बच्ची चिल्ला देती। पेंग बच्ची के मुँह में भी बड़ा-सा कौर भर देता।

"भैया पेंग,"—किसी नौकरानी ने आंगन के दूसरे सिरे से पुकार कर पूछा, "साहब क्या अपने ही आंगन में सोते हैं?"

"और क्या; सुबह रोज़ मैं वहां ही उन्हें चाय देता हूँ।"—पेंग ने ऊँचे स्वर में उत्तर दिया।

उसी नौकरानी ने इंग को पुकारा—"कहो जीजी, मालकिन के आंगन के क्या हाल-चाल हैं?"

इंग ने कोई उत्तर नहीं दिया। अपना कटोरा समाप्त कर उसने कटोरे में एक घड़े से जल ले लिया। कटोरे से एक घूंट जल ले उसने प्रश्न करने वाली की ओर कुल्ला कर दिया और चुपचाप बाहर चली गयी।

इंग के व्यवहार से नौकर-नौकरानियां और बच्चे स्तब्ध रह गये। भीड़ छंट गयी। उस से सभी डरते थे। वह मालकिन की मुंहलगी थी।

× × ×

रानी वू प्रातः उठीं तो शरीर भारी था, मन भी कुछ बेचैन। पिछली रात नींद ठीक से नहीं आयी थी। वू उस विस्तृत परिवार का केन्द्र थीं, जैसे हृदय शरीर का केन्द्र होता है। शरीर में कोई भी अव्यवस्था होने से

हृदय कैसे चैन पा सकता है ! परिवार में फेंगमो के विवाह की हलचल थी। विवाह का उत्तरदायित्व तो मामूली नहीं होता।······उन लोगों की सुहागरात जाने कैसे बीती ! भगवान् करे भला ही हुआ हो। लड़के और बहू को देखे बिना तो कुछ जाना नहीं जा सकता, तुरन्त उस ओर चले जाना भी उचित न होता, ऐसी बातों के लिये उचित अवसर की प्रतीक्षा करनी ही होती है।

रानी ने एक दीर्घ निश्वास ली। मन पर एक और बोझ था। च्यूमिग को उन्होंने आश्वासन दिया था। वह आश्वासन पूरा करते बन नहीं रहा था, परन्तु कही बात को निबाहना भी आवश्यक था। च्यूमिग उनका भरोसा करके गयी थी। रानी इसी दुविधा में थीं कि इंग बौखलाई हुई-सी आ पहुंची।

"हुज़ूर, अम्माजी की तबियत बहुत खराब है।"—इंग बोल पड़ी, "कह रही हैं रात के खाने में कोई झींगुर पेट में चला गया। कह रहीं हैं झींगुर पेट में चल रहा है और काट रहा है। हुज़ूर कहीं ऐसा हो सकता है ! बावरची और बात में चाहे कितना सीधा हो, सफ़ाई के मामले में तो कभी चूक नहीं कर सकता।"

"हे विधाता,"—रानी घबरा कर बोलीं, "यह एक और मुसीबत सिर पर आयी।"

रानी तुरन्त सम्हल गयीं। कर्तव्य का ध्यान उन की थकान और निर्बलता को दूर कर देता था। तुरन्त कपड़े बदलने लगीं। इंग ने तत्परता से उन्हें सहायता दी। कुछ ही मिनिट में तैयार हो कर वृद्धा सास के आंगन में पहुंच गयीं। वृद्धा बड़े-बड़े तकियों के सहारे निश्चल पड़ी हुई थीं। आंखें उनकी पथराई हुई थीं। बहू को देख क्षीण स्वर में पुकार उठीं—"अरे बचाओ, मुझे बचाओ,······मैं नहीं बचूंगी।"

रानी सास की अवस्था देख कर घबरा गयीं। पिछली संध्या सास लड़कियों की तरह चहक रही थीं। जुए में जीत गयीं तो छत ही सिर पर

उठा ली थी। भोज के समय भी उनकी भूख का अंत नहीं था। रात भर में यह क्या हो गया !

"हमें पहले क्यों खबर नहीं दी ?"—रानी ने वृद्धा की नौकरानी से पूछा।

"हुजूर, अभी सुबह ही तबियत खराब हुई है।"—नौकरानी ने अपने दोष का मार्जन करने के लिये उत्तर दिया।

"क्या वमन हुआ है? ......पेट साफ़ हुआ है ?"—रानी ने पूछा।

"अरे, इतनी उल्टी हुई कि तीनों बच्चों के समय में नहीं हुई थी।"—वृद्धा क्षीण स्वर में बोलीं, "मेरे पेट में तो कुछ रहा ही नहीं। बहू, मुझे कुछ दो। मेरे पेट में तो हवा ही हवा भर गयी है।"

"आप कुछ खायेंगी ?"—रानी ने पूछा।

"खाऊंगी नहीं तो जिन्दा कैसे रहूंगी।"—बुढ़िया ने स्वर ऊंचा कर उत्तर दिया।

रानी को आश्वासन हुआ। उन्हों ने थोड़ा गरम शोरवा लाने की आज्ञा दी। शोरवे में महीन पिसी सोंठ मिला कर चम्मच से वृद्धा को पिलाने लगीं।

मामूली बीमारी से भी वृद्धा बिलकुल निराश और असहाय हो जाती थीं। एक भी दांत शेष नहीं था। लाल-लाल जबड़ों और जिह्वा से मुख असमर्थ और असहाय बच्चे के मुख-जैसा लग रहा था। रानी उस मुख में चम्मच से शोरवा देती हुई सोच रही थीं कि कितनी ही तरह की बातें और असंख्य शब्द इस मुख से निकले होंगे। वृद्धा का स्वभाव तीखा था। उन के वाक्य-बाणों का बहुत आतंक रहा था। ससुर भी उन से घबराते थे। रानी ने सोचा इस मुख से समय पर स्नेह और प्यार की बातें भी निकली होंगी। साहब तो उनके बहुत ही लाडले थे। इसी मुख ने बेटे के लिये लोरियां गायी होंगी और उसे हँसना सिखाया होगा।

शोरवा पी कर वृद्धा ने कहा—"अब जरा तबियत ठीक है। थोड़ी देर बाद और पिला देना। अब हमारे शरीर में रह ही क्या गया है ! यह

में धूल जमी हुई थी। रानी एक खिड़की के पास जा किवाड़ हटा कर कोने में देखने लगीं।

साहब खाकी रेशमी कोट के बटन बन्द करते भीतर आये और उन्होंने पुकारा--"कहो, वहां किवाड़ के पीछे क्या है?"

रानी ने घूम कर देखा। चेहरे पर झेंप आ गयी थी। "धूल है"--उन्हों ने उत्तर दिया और बोलीं, "बैरे को समझाना पड़ेगा। यहां सफ़ाई की ज़रूरत है।"

साहब ने चारों ओर निगाह दौड़ाई और "हूं" हुंकारा भर के बोले--"ज़रूरत तो यहां तुम्हारी है।" और खिलखिला कर हंस पड़े। रानी गम्भीरता से चुप रहीं।

साहब और रानी बैठ गये। साहब सन्तुष्ट दिखाई दे रहे थे। गाल और भी चढ़ गये थे। चेहरे पर रौनक थी। रानी यही तो चाहती थीं। फिर भी न जाने क्यों मन में पति को चोट पहुंचाने की इच्छा जाग उठी।

"अम्माजी की तबियत ठीक नहीं है।"--रानी सहसा बोलीं, "आप उन्हें देखने गये थे!"

साहब का चेहरा गम्भीर हो गया। "नहीं, हम जा नहीं सके, बहुत अफ़सोस है।"--उन्हों ने कहा, "क्या कहें, इतने काम हैं······।"

"अम्माजी की तबियत ज़्यादा खराब है।"--रानी फिर बोलीं।

"कोई वैसी बात तो नहीं?"--साहब ने पूछा।

"नहीं, अभी तो नहीं।"--रानी बोलीं, "लेकिन अब समय आया ही समझिये। मन उन का बहुत घबड़ा रहा है। पूछ रही थीं पुनर्जन्म होता है कि नहीं। ऐसी बातें मन में तभी आती हैं जब अन्त समीप जान पड़ता है।"

"तो तुमने क्या बताया उन्हें?"--साहब ने बहुत गम्भीरता से पूछा।

"मैंने कहा, लोग तो कहते हैं कि होता है लेकिन मुझे तो मालूम नहीं।"--रानी ने उत्तर दिया।

साहब नाराज़ हो गये। "कितनी निर्दय हो तुम!"--उत्तेजना में बोले,

"उस बेचारी बुढ़िया के सामने सन्देह की ऐसी बात कहने की क्या ज़रूरत थी?" उन्होंने गले के बटन खोल डाले और भीतर की जेब से पंखी निकाल कर जल्दी-जल्दी हवा लेने लगे।

"आप क्या उत्तर देते?"—रानी ने पूछा।

"हम उन्हें तसल्ली देते।"—साहब ने उत्तेजना से उत्तर दिया, "हम उन्हें कहते कि वे स्वर्ग में पीले झरनों के समीप सुख और शांति पायेंगी...।"

"तो आप अब जाकर उन्हें विश्वास दिला दीजिये।"—रानी कोमल स्वर में बोलीं। मन खिन्न होने पर उन का स्वर और भी कोमल हो जाता था।

"हां, हम ज़रूर उन्हें सांत्वना देंगे।"—साहब ने क्रोध में पांव पटक कर उत्तर दिया।

साहब और रानी दोनों मौन और निश्चल बैठे रहे। दोनों ही अपनी उत्तेजना दमन कर सकने का यत्न कर रहे थे। रानी के दोहों कोमल हाथ गोद में थे और सिर ज़रा एक ओर झुका हुआ। साहब भी निश्चल थे, परन्तु छोटी पंखी उनके हाथ में निरंतर चल रही थी। दोनों ही समझ नहीं पा रहे थे कि वे नाराज़ क्यों हो गये।

पहले रानी ही बोलीं—"आप से एक और बात भी कहनी थी। उन का स्वर बिलकुल मधुर और शांत था।"

"हाँ, कहो।"—साहब ने पूछा।

रानी ने बात सीधे और स्पष्ट कहना ही उचित समझा। "च्यूमिंग कल रात मेरे यहां आयी थी। वह आप को बता देना चाहती है कि वह बाल-बच्चे से हो गयी है।"—रानी ने साधारण बोलचाल का ही मुहावरा प्रयोग किया। वे वैसे ही सिर झुकाए चुपचाप निश्चल बैठी रहीं।

साहब के हाथ से पंखी फ़र्श पर गिर पड़ी। वे स्तंभित हो कर रानी की ओर देखते रह गये। उन के चेहरे पर झेंप की लाली आ गयी। कुछ देर सोच कर दायें हाथ से अपनी चांद खुजलाते हुए समझ ही नहीं पा रहे थे कि संतोष प्रकट करें या संकोच। रानी ने आँख उठा कर उन की ओर देखा।

रानी से आंखें मिलने पर साहब हंस कर बोले—"संखिया खिला दो मुझे। कहो तो फंदा लगा कर लटक जाऊँ। मेरा ही अपराध है, लेकिन यह सब तुम ने ही कराया है मुझ से।"

रानी के होंठों पर मुस्कान आ गयी। बोलीं—"इतना नखरा क्यों कर रहे हैं। खुश तो हैं आप ?"

"मैं बूढ़ा नहीं हो गया तो क्या करूं !"—साहब ने उत्तर दिया।

दोनों एक साथ हंस पड़े और हँसी में दोनों का क्रोध बह गया। मन शांत हो जाने पर रानी को नयी बात पता लगी—मिशेन ने ठीक ही कहा था कि उन्हें साहब से प्यार नहीं है, कभी था भी नहीं, इसलिये अब घृणा करने का भी कोई कारण नहीं, मानो उनकी आत्मा का अंतिम बंधन भी टूट गया। बार-बार इस बंधन को वह अपने ऊपर लगाती आयी थीं, परन्तु अब ऐसा नहीं करना होगा। आवश्यकता भी नहीं रही थी। अब वे पूर्णतः मुक्त थीं।

"एक बात तो सुनिये।"—रानी ने फिर साहब को संबोधन किया, "उस ग़रीब का ज़रा ख़्याल कीजिये।"

"हम तो सभी का ख़्याल करते है।"—साहब ने अहंकार से कहा।

"ज़रा मेरी बात सुनिये।"—रानी बोलीं, "यह उस का पहला बच्चा है। उसे तंग न कीजियेगा।······वह न चाहे तो परेशान न कीजियेगा।"

साहब ने ज़रा सिर हिलाया और फिर बोले—"मालूम होता है एक रखेल से काम नहीं चलेगा।" उन्हों ने जीभ निकाल कर रानी की ओर देखा, मानो चिढ़ा रहे हों।

रानी चिढ़ी नहीं बल्कि मुस्करा दीं। "अच्छा, अब आप अम्माजी के यहां हो आइये और उन्हें पुनर्जन्म की आशा के बजाय एक और पुत्र के जन्म की आशा का समाचार दे आइये।"—उन्हों ने कहा।

× × ×

एक और पुत्र की आशा के समाचार से भी वृद्धा सास का दुःख कम

न हुआ। रानी अपने आंगन की ओर जाती हुईं रास्ते में कुछ देर बच्चों से दिल बहलाती रहीं। ज्यों ही वे पहुंचीं, इंग दौड़ी हुई आई और बोली—"बड़ी अम्माजी की तबियत बहुत खराब हो गयी है। बहुत घबरा रही हैं। आप को बुला रही हैं। साहब भी वहां हैं, आप को बुला रहे हैं।"

रानी तुरंत सास के आंगन में पहुंच गयीं। साहब माँ की सेज के समीप चौकी पर बैठे मां के सूखे हुए हाथ को सहला रहे थे।

"अम्माजी की तबियत तो और खराब हो गयी।"—रानी को देख कर साहब बोले।

वृद्धा ने पलकें उठा कर बहू की ओर देखा। उन के होंठ हिले, परन्तु मुंह से शब्द न निकल सका। उन के होंठ लटक गये, मानो रो देना चाहती हैं, परन्तु न आंसू निकल सके और न मुख से शब्द ही। वे कातर दृष्टि से बहू की ओर देखती रह गयीं।

रानी समझ गयीं कि वृद्धा बहुत घबरा रहीं हैं। उन्हों ने इंग की ओर घूम कर धीमे से कहा—"जल्दी से शराब लाओ, कैंटन की शराब गरम कर के, ताकि शरीर में कुछ गर्मी आये और चौकीदार से कहो कि तुरन्त डाक्टर को बुलाये।"

वृद्धा निर्वाक् कातर आंखों से बहू की ओर देखती रहीं। रानी ने उनके कान के समीप झुक कर आश्वासन दिया—"इंग शराब गरम कर के ला रही है। घबराइये नहीं, अभी आप की तबियत ठीक हो जायगी। भय और चिंता की कोई बात नहीं। घबराइये नहीं, बच्चे बाहर धूप में खेल रहे हैं; नौकर-नौकरानियां अपना काम कर रही हैं। घर और परिवार का सब काम ठीक हो रहा है। हमारे बुजुर्गों ने [illegible] थी। हम लोगों ने अपना कर्तव्य निबाह दिया। आगे हमारे बच्चे निबाहेंगे। अम्माजी, जीवन का क्रम इसी प्रकार अमर बना रहेगा।"

रानी का शांत कोमल स्वर कमरे में छाये वीभत्स सन्नाटे में सब को सान्त्वना दे रहा था। वृद्धा के चेहरे पर छा गयी भय की ऐंठन कुछ दूर हुई। उन का श्वास समगति से चलने लगा।

इंग एक बर्तन में गरम शराब लिये दौड़ी हुई आयी। बर्तन उस ने रानी के हाथों में दे दिया। रानी झुक कर वृद्धा के खुले हुए होंठों में गरम शराब की बूंदें टपकाने लगीं। तीन घूंट पी कर वृद्धा की आंखों में कुछ चमक आ गयी। उन के होंठ खुले।

"अब अच्छा है।"—उन्होंने कहा।

वृद्धा के चेहरे का भाव फिर बदल गया। चेहरा भय और विस्मय से ऐंठने लगा। शरीर में कंपकंपी-सी आयी। शराब उनके मुंह से बाहर निकल कर बह गयी और उन का सिर तकिये पर एक ओर लुढ़क गया।

"हाय अम्माजी!"—साहब दोनों हाथों से मुंह ढक कर रो पड़े।

रानी ने शराब का बर्तन इंग की ओर बढ़ा दिया, "पकड़ो!" और स्वयं सेज पर झुक गयीं। आस्तीन से बड़ा रेशमी रूमाल निकाल कर उन्हों ने वृद्धा का मुंह पोंछा और सिर को तकिये पर सीधा कर के रख दिया। सिर फिर लुढ़क गया। "आत्मा प्रस्थान कर गयी।"—रानी ने धीमे से कहा।

"हाय अम्माजी!"—साहब चिल्ला उठे और फूट-फूट कर रोने लगे। रानी ने उस ओर ध्यान नहीं दिया। उन्हें और बहुत कुछ करने को था। वृद्धा-जैसे सांसारिक व्यक्ति के शरीर के सात भूत शरीर को तुरन्त ही त्याग देने के लिये तैयार न होते, इसलिये वृद्धा के शरीर को एकांत में रख कर भूतों की तुष्टि का उपाय करना आवश्यक था कि भूत शरीर को त्यागने के बाद परिवार को हानि न पहुंचायें। क्रिया-कर्म के लिये पुरोहितों को भी तुरन्त बुलवाना आवश्यक था। वास्तव में रानी का न तो पुरोहितों में विश्वास था और न भूतों में, फिर भी परिपाटी निबाहना तो आवश्यक था। साहब मां का हाथ अपने हाथों में थामे रो रहे थे। रानी को ख्याल आया कि वृद्धा की आत्मा की तुष्टि के लिये आन्द्रे भाई को ही क्यों न बुलवा भेजें, परन्तु ईसाई पुरोहित की पूजा से परिवार का समाधान न हो सकता था। इस के बाद साल भर में यदि कोई बच्चा परिवार में बीमार हो जाता तो उन्हें ही दोष दिया जाता कि यह मृतात्मा के

भूतों की संतुष्ट न करने का ही परिणाम है। परिवार के संतोष के लिये परिपाटी को पूरा करना आवश्यक था।

रानी ने इंग की ओर देख कर आज्ञा दी--"पुरोहितों को बुलवाओ और कफ़न तैयार करने वालों को भी आने के लिये कह दो।" साहब की ओर घूम कर उन्हों ने अनुरोध किया--"आप धैर्य रखिए, अब किया भी क्या जा सकता है! नौकरानियां शरीर को नहला कर कपड़े बदलवा देंगी। पुरोहित भी आ रहे हैं, वे पूजा आरम्भ कर देंगे।"

रानी साहब को लेकर आंगन से बाहर आ गयीं। साहब सिसकियां लेते हुए आस्तीन से आंसू पोछते जा रहे थे। रानी रो नहीं रही थीं, केवल दीर्घ निश्वास ले रही थीं। आंसू बहाये उन्हें कई वर्ष हो चुके थे। संभवतः आंखें सूख चुकी थीं। रानी का दीर्घ निश्वास सुन कर साहब ने उन की बांह थाम ली और दोनों साथ-साथ साहब के आंगन में लौट आये। साहब बैठे मां के स्नेह की स्मृतियां सुनाते रहे—पिताजी के नाराज़ हो जाने पर मां ही उन्हें सदा दंड से बचा लेती थीं; पिता उन्हें पढ़ने के लिये अलग बैठा देते थे, परन्तु मां शराब और मिठाइयां लेकर वहां पहुंच जातीं; छुट्टी के दिन उन्हें साथ ले जा कर थियेटर दिखातीं; वे बीमार पड़ जाते तो उनके विनोद के लिये बिस्तर के समीप ही जादूगर और मदारियों को बुलवा कर तमाशे दिखलातीं; जब कभी उन के दाँत में दर्द हो जाता तो मां उन्हें छोटे पाइप से मदक का दम लगवा देतीं।

"अम्मा का क्या कहना!"—साहब बोले, "बड़ी ज़िन्दा दिल थीं। उन्होंने ही हमें भी ज़िन्दा दिल बनाया।"

रानी कुछ बोली नहीं। उन्हों ने साहब के लिये शराब ~~और खाने के लिये~~ भी कुछ मंगवा दिया। साहब ने पिया तो रानी ने और भी पिलाया। रानी को अधिक शराब पीना नापसंद था, परन्तु इस समय उन्हों ने स्वयं पिलाया कि साहब का शोक डूब जाय। बढ़िया गरम शराब पी कर साहब की ज़बान लड़खड़ाने लगी और वे अपनी बातों को बार-बार दोहराने लगे। कुछ देर बाद उन्हें होश न रहा। वे सोफ़ा पर लुढ़क गये।

रानी उठीं और दबे पांव भीतर के कमरे में गयीं। चौबीस वर्ष तक यह कमरा उनका ही शयनागार था। सेज के समीप जा कर उन्होंने मसहरी के भीतर झांका। तकिये पर काले केशों से भरा सिर और छरहरे बदन की पीठ दिखाई दी।

"च्यूमिग!"—रानी ने दबे स्वर में पुकारा, "सो गयी हो।"

च्यूमिग ने करवट ली। मसहरी के पर्दे से झांकती दो काली आंखें रानी को दिखाई दीं।

"च्यूमिग आओ, आज हमारे यहां चली चलो।"—रानी बोलीं, "अम्माजी का स्वर्गवास हो गया है। साहब तो शोक और शराब में डूबे हुए हैं। आओ बहन, तुम हमारे साथ चलो।"

च्यूमिग बिना कुछ बोले मसहरी से बाहर आ कर खड़ी हो गयी। फिर उस ने पूछा—"मुझे कहाँ जाना होगा?"

रानी पल भर को ठिठकीं और सोच कर उत्तर दिया—"तुम हमारे यहां क्यों न चली जाओ। हमें तो अम्माजी के आंगन में देख-भाल के लिये रहना होगा। हम सो तो पायेंगी नहीं।"

"वहां कुछ काम होगा।"—च्यूमिग ने धीमे से पूछा, "मैं भी आप के ही साथ चलूं?"

"नहीं, नहीं, यह ठीक नहीं है। अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है। तुम्हारी तबियत भी ठीक नहीं है, तुम्हें सोना चाहिये।"—रानी ने समझाया।

"नहीं जीजी,"—च्यूमिग ने अनुरोध किया, "मुझे भी साथ ले चलिये।"

"जो जैसा तुम चाहो।"—रानी मान गयीं।

साहब को सेज पर लिटा दिया गया। रानी ने अपने हाथों मसहरी के पर्दे ठीक कर दिये और परिवार में अपना दायित्व सम्भालने के लिये चल दीं। जो सम्बन्धी अब तक वृद्धा के समीप बैठे थे विश्राम के लिये उठ गये, परन्तु नौकर और बुजुर्ग कुटुम्बी बैठे रहे। वृद्धा को नहला कर पोशाक बदल दी गयी थी। रानी देख-भाल कर रही थीं कि सब काम

उचित ढंग से हो रहा है कि नहीं। च्यूमिंग उन के साथ काम में हाथ बँटाने के लिये मौजूद थी। लड़की के हाथ-पांव फुर्तीले थे। स्थिति और संकेत तुरंत भांप लेती थी। च्यूमिंग भी गंभीर थी, परन्तु रानी को उसके चेहरे पर मृत्यु के शोक की छाया नहीं दिखाई दी। उन्होंने समझा--अभी यह इस परिवार की नहीं बन पायी है, संतान हो जाने पर परिवार से स्वयं ही इसका लगाव हो जायगा।

वृद्धा सास के साथ पुरानी पीढ़ी का अंत हो गया। अब हवेली की चारदीवारी में परिवार की मुखिया रानी बू ही थीं और समाज में परिवार के मुखिया थे बू साहब। वृद्धा को तुरंत ही समाधि नहीं दी जा सकी। ज्योतिषियों ने समाधि देने के लिये शुभ मुहूर्त दो मास पश्चात् बताया था। क्रिया-कर्म की रीतियां पूरी हो चुकी थीं। वृद्धा को सुगंधित लकड़ी के बक्स-जैसे कफ़न में बंद कर के हवेली के मंदिर में पहुंचा दिया गया। किसी को यह भास नहीं हुआ, घर के बच्चों को भी नहीं कि वृद्धा अब घर में नहीं हैं। बच्चे प्रायः खेलते हुए मंदिर में पहुंच जाते और पुकारने लगते—

"बड़ी दादी, बड़ी दादी, सुनती हो बोलती क्यों नहीं?" और फिर उत्तर सुनने के लिये चुप हो जाते। कभी कोई उत्तर न मिलता, परन्तु यदि हवा तेज़ चल रही हो तो बच्चों को बड़ी दादी का हुंकारा अथवा उत्तर सुनाई दे जाता।

एक दिन एक भतीजे की नन्हीं बेटी से रानी ने पूछ लिया—"बेटी, बड़ी दादी क्या कहती हैं?" नन्हीं ने उत्तर दिया—"बड़ी अम्माजी, बड़ी दादी कहती हैं—जाओ, बच्चो जाओ, खेलो। खूब खुश रहो!" और फिर नन्ही ने गंभीरता से पूछा—"बड़ी अम्माजी, बड़ी दादी इतने धीमे बोलती हैं। बक्से में उन्हें दर्द नहीं होता?"

"नहीं बेटी, उन्हें दर्द नहीं होता।"—रानी ने उत्तर दिया।

'हां अब तुम जाओ, बड़ी दादी का कहना मानो। खेलो और खूब खुश रहो।"

वृद्धा की मृत्यु के बाद कुछ दिनों के लिये परिवार में सन्नाटा-सा रहा। वृद्धा का स्थान साहब और रानी ने ले लिया और सभी पीढ़ियां एक-एक सीढ़ी ऊपर चढ़ गयीं, मानो सभी लोग मृत्यु की ओर एक-एक मंज़िल आगे बढ़ गये। उसी के अनुपात में उनके रूप और व्यवहार में गंभीरता आ गयी। रीति के अनुसार कुछ दिन साहब मां के शोक में महीन टाट के कपड़े पहने रहे। निश्चित समय के बाद साहब ने साधारण कपड़े पहन लिये, परन्तु उनके भरे और फूले चेहरे पर आ गयी गंभीरता और उत्तरदायित्व की छाया बनी ही रही। वे प्रायः ही रानी के आंगन में आ जाते और दोनों बहुत देर तक आपस में चिन्ता और परामर्श करते। अब वे आमदनी और खर्च की बाबत भी बात करते। सरकार के भारी-भारी करों के प्रति असंतोष प्रकट करते, लड़कों और पोतों के भविष्य के विषय में राय लेते-देते, और प्रायः ही मां को याद कर खेद प्रकट करते कि अम्माजी की उचित सेवा नहीं कर सके।

"तुम तो सदा अम्माजी का ख्याल रखती थीं,"—साहब प्रायः रानी से कहते, "परन्तु हमें तो ख्याल ही नहीं आता था।"

"आप भी क्या कहते हैं!"—रानी पति को सान्त्वना देतीं, "कोई कभी अपनी मां को भी भूल सकता है! यह प्राण आप को अम्माजी ने ही दिया है। आप श्वास भी लेते हैं तो उन्हीं को याद करते हैं। यह शरीर भी उन्हीं का दिया हुआ है। आप खाते-पीते हैं या शरीर से कोई काम करते हैं तो यह एक तरह उनको याद करना ही होता है। हमारे भी तो बेटे हैं। बेटे दिन भर हमें घेरे ही रहें तो हम परेशान नहीं हो जायँगे? हम यही चाहते हैं कि बेटे स्वस्थ-सुखी रहें। उन के ब्याह-शादियां हों और बाल-बच्चे हों। इसी में हम लोगों को संतोष है। इन्हीं लोगों में हमारी पूर्णता है। ऐसे ही आप और आप की संतानें अम्माजी के अंश हैं। यह उन की ही पूर्णता और सेवा है।"

"तुम ठीक कहती हो।"—रानी की बात सुन कर साहब संतोष से कहते। उन का समाधान हो जाता और वह अपने आंगन में लौट जाते।

रानी अकेली रह जातीं तो फिर अपने विचारों में डूब जातीं। अब तो उन के जीवन की दो स्पष्ट, पृथक्-पृथक् धारायें बन गयी थीं। एक था उन का पारिवारिक जीवन और दूसरा था उन की अपनी कल्पना और विचारों का लोक। घर में शांति और सुव्यवस्था रहती तो वे अपने विचारों और कल्पना के लोक में रमी रहतीं, परन्तु कोई उलझन पैदा हो जाने पर उस के सुलझाव के यत्न में अपने आप को भूल जातीं।

× × ×

आधे जाड़े बीते थे कि रानी को परिवार में झगड़े के चिह्न दिखाई देने लगे। उस ओर तुरन्त ध्यान देना आवश्यक था वरना बात बढ़ कर जाने कहां पहुंच जाती। लीनी और फेंगमो आपस में झगड़ने लगे थे, यह रानी ने एक दिन अवसरवश देख लिया था। बाहरी बनाव, सिंगार और सुघरता के बावजूद घर में लीनी की आदतें मैली और बेपरवाही की थीं। रानी ने लीनी को इस विषय में बहुत टोकना उचित नहीं समझा। जानती थीं कि लीनी की मां के यहां इतने बड़े परिवार और घर में लड़की को स्वच्छता और सुघरता का वैसा ख्याल तो हो नहीं सकता था, जैसा कि इस घर में किया जाता है।

परन्तु मेंग भी तो उसी घर की लड़की थी, इसलिये लीनी को कुछ कहने-सुनने की अपेक्षा रानी ने मेंग से ही बात करना उचित समझा। रानी मेंग के आंगन में पहुंचीं तो दिन चढ़ चुका था, परन्तु मेंग का आंगन अभी ऊंघ ही रहा था। मेंग अभी कंघी-चोटी से भी निपट नहीं पायी थी। मेंग सास को आंगन में देख झेंप गयी। लम्बे केशों को एक हाथ में संभालती हुई बोली—"आइये, आइये, अम्माजी, मैं पल भर में इन्हें समेटे लेती हूं। मुझे जरा देर हो गयी।" मेंग की नौकरानी उसके घने लम्बे काले केशों को संवार कर चोटी करती रही। रुलन और लीनी ने अपने केश छंटवा लिये थे, परन्तु मेंग की लम्बी चोटी पुराने ढंग की थी।

"नहीं बेटी, अच्छी तरह से चोटी करवा लो। हम बैठते हैं।"—रानी

ने उत्तर दिया। उन्हों ने मेंग को कुछ कहना अनावश्यक समझा; छोटी बहन के लिये कही हुई बात बड़ी के लिये भी पर्याप्त होगी।

"तुम्हारे अभी कितने दिन और शेष हैं?"--रानी ने पूछा।

"इस पूर्णमासी के बाद ग्यारह दिन।"--मेंग ने बताया, "अम्माजी, पहली बार तो बहुत तकलीफ़ हुई थी। मुझे तो बहुत भय लग रहा है।"

"मैं तो अपने आदमी के साथ खेत पर जाती थी।"—नौकरानी उत्साह से बोल उठी, "मेरे तो सभी बच्चे खेतों में ही हुए।"

मेंग की नौकरानी वू की ज़मीनों की रहने वाली थी। अब भी उस की थोड़ी बहुत खेती थी। परिवार के लोग उसे जानते ही थे। फ़सल बोने के मौक़े पर गांव चली जाती और फ़सल काटने के बाद ही लौटती थी। बेचारी विधवा थी। नौकरी बिना निर्वाह नहीं था। अपनी धरती भी नहीं छोड़ सकती थी।

"इस बार तुम्हें उतना कष्ट नहीं होगा।"--रानी ने आश्वासन दिया, "लेकिन किसान और देहात की स्त्रियों की बात दूसरी है।"

"अम्माजी, लीनी के बाल-बच्चा होगा तो क्या मेरी ही तरह वह भी परेशान होगी?"—मेंग ने भोलेपन से पूछा।

"उन्हें तो और भी तकलीफ़ होगी।"—नौकरानी ने राय दी, "छुटकी बहू इतनी पढ़ी-लिखी जो है!"

रानी हंस पड़ीं। "पढ़ने-लिखने से क्या होता है!"—वे बोलीं, "पढ़े-लिखे तो हम भी शायद उतना ही हैं। हमें तो तकलीफ़ नहीं होती थी। शायद हमारे भाग्य ही अच्छे हों।"

"हुज़ूर आप की बात दूसरी है। आप की बराबरी कौन कर सकता है!"—नौकरानी ने विचार प्रकट किया।

"अम्माजी, लीनी कहती है मुझे तो बच्चे नहीं चाहिये।"--मेंग ने बताया, "लड़की तो फेंगमो से ब्याह करके पछता रही है।"

रानी ने विस्मय से बहू की ओर देखा, "बहू क्या कह रही हो? समझ कर बोलो।"—रानी ने उसे टोक दिया।

"अम्माजी सच कह रही हूँ।"—मेंग बोली, और नौकरानी का हाथ झटक कर उसने डांटा, "गधी, केश क्यों खींच रही है ?"

"हुजूर, मैं तो सुन कर घबड़ा गयी।"—नौकरानी ने उत्तर दिया, "भला कोई औरत चाहती है कि बच्चा न हो ! वेश्या या रखेल की बात दूसरी है। उन्हें तो डर रहता है कि जोबन ढल जायगा। हुजूर, इस हवेली में तो रखेलों के भी होते हैं।"

रानी नौकर-नौकरानियों की बात नहीं सुनती थीं। उन्हों ने मेंग को संबोधन किया—"बेटी, हम तो आये थे कहने के लिये कि तुम्हारी बहन की आदतें मैली हैं। तुम ने तो कुछ और ही सुना दिया। यह तो मामूली बात नहीं। हम पहले ही ख्याल करते, लेकिन अम्माजी के क्रिया-कर्म में फंसे रहे। समय नहीं मिला। बताओ तो बात क्या है ?"

"अम्माजी लीनी ही कह रही थी······।"—मेंग बताने लगी। दोनों ने ही नौकरानी के सुनते रहने की परवाह नहीं की। छिपाने से फ़ायदा ही क्या था ! घर में जो हो रहा था उसे सब ही जानते थे। नौकरों से तो पर्दा हो भी नहीं सकता था।

"हां, क्या कह रही थी लीनी ?"—रानी ने प्रश्न किया।

"लीनी कहती है, इतना बड़ा परिवार और हवेली उसे अच्छी नहीं लगती।"—मेंग ने बताया, "इस घर में आ कर पछता रही है। कहती है फेंगमो उस की सुनता ही नहीं। फेंगमो उस का थोड़े ही है, घर का है। कहती है, उसे हर बात में दबना पड़ता है। कहती है कि अलग जा कर फेंगमो के साथ रहेगी।"

"अलग जा कर रहेगी ?"—रानी ने विस्मय से पूछा। वे कुछ समझ न सकीं।

मेंग ने समझाया—"लीनी कहती है, फेंगमो अंग्रेज़ी अच्छी तरह सीख ले तो उसे नौकरी मिल जायगी।"

"चाहती है कि फेंगमो और अंग्रेज़ी पढ़े?"—रानी ने पूछा।

"कहती है कि अंग्रेजी पढ़ जाय तो नौकरी मिल जाय और दोनों अलग घर बसा लें।"—मेंग ने उत्तर दिया।

"परन्तु उन्हें यहां क्या कमी है?"—रानी ने पूछा। यह जान कर उन्हें मानसिक कष्ट हो रहा था कि घर में कोई असंतुष्ट था और विद्रोह करना चाहता था।

"अम्माजी, उसे यहां का तरीक़ा पसंद नहीं।"—मेंग बोली, "कहती हैं कि यह त्योहारों के झंझट, मृत्यु के क्रिया-कर्म, किसी न किसी के यहां बच्चा होते रहना, बहुओं के उलटे-सीधे काम और इतने नौकर चाकर—यह सब उसे नहीं अच्छा लगता। और कहती है कि फेंगमो तो उसकी सुनता ही नहीं, घर के लोगों के ही कहने में है।"

"फेंगमो ठीक ही करता है।"—रानी बोलीं, "ऐसा ही करना भी चाहिये। क्या वह घर की नहीं है; वह क्या वेश्या है?"

मेंग ने देखा कि सास नाराज़ हो गयी थीं, इसलिये चुप रही। ऐसी गंभीर स्थिति में कुछ बोलने का साहस नौकरानी को भी न हुआ। मालकिन की चोटी बांध कर उसने दो मोती जड़ी सुइयां चोटी में खोंस दीं और कंघी में आ गये केशों को उंगलियों पर लपेटती हुई बाहर फेंक आने के लिये चली गयी।

नौकरानी बाहर चली गयी तो रानी ने मेंग से पूछा—"क्या तुम भी ऐसा ही सोचती हो?"

मेंग हँस पड़ी। उस ने मन की बात निष्कपट कह डाली—"नहीं अम्मा जी, मेरी इतनी हिम्मत कहां! मुझे तो इसी घर में अच्छा लगता है। मुझे कुछ करना नहीं पड़ता। खूब सफ़ाई रहती है। सब काम ठीक ढंग से चलता रहता है। बच्चा भी रोता है तो नौकरानी संभाल लेती है, परेशानी नहीं होती। दिन भर आराम करती हूँ। मैं पढ़ी-लिखी तो हूँ नहीं; ना मैं किताबें पढ़ती हूँ। ज़रूरत भी क्या! मुन्ने के पिता जो बता देते हैं मेरे लिये बहुत है, जो वह नहीं बताते उसकी ज़रूरत क्या!"

"लिआंगमो तो तुम्हारा खूब ख्याल करता है?"—रानी ने पूछा।

मेंग के कोमल गाल लज्जा से लाल हो गये। "हां अम्माजी, बहुत ख्याल करते हैं।"—मेंग ने स्वीकार किया, "इस से अधिक ख्याल कोई क्या कर सकता है!"

"फेंगमो क्या लीनी का ख्याल नहीं करता?"—रानी ने पूछा।

मेंग कुछ झिझकी और फिर धीमे से बोली—"अम्माजी मुझे क्या मालूम! अम्माजी, ताली एक हाथ से थोड़े बजती है!" कुछ और ठिठक कर मेंग ने कहा—"अम्माजी असल में तो रुलन ही लड़की को सिखाती-पढ़ाती रहती है। जब देखो दोनों आपस में अपने मर्दों की शिकायतें करती रहती हैं। एक जो कहती है, वही शिकायत दूसरी की भी अपने मर्द से हो जाती है।"

रानी को इंग से सुनी रुलन के रात में रोने की बात याद आ गई। उन्होंने पूछा—"क्या रुलन भी असन्तुष्ट है?"

मेंग ने सिर झुका कर उत्तर दिया—"लीनी तो मेरी बहन है। रुलन की बाबत मैं क्या जानूं!"

"रुलन से तुम्हारी नहीं बनती?"—रानी ने पूछा और चुप रह गयीं। सोचने लगीं कि घर में ऐसा भंवर-सा बनता जा रहा है। उन्हें तो इस की कभी कल्पना भी नहीं थी। कल बू-परिवार का उत्तरदायित्व इन्हीं बहुओं के तो हाथों में देना होगा। इन की आपस में बनती नहीं।

"रुलन मुझे अच्छी नहीं लगती।"—मेंग ने बिना क्रोध अथवा बनावट के कह डाला।

"औरतें झगड़े बिना रह सकती नहीं।"—रानी ने कड़े स्वर में पूछा।

मेंग ने सिर झुका लिया और उत्तर दिया—"अम्माजी, मेरा झगड़ा तो कोई नहीं है। मुझे वह अच्छी नहीं लगती। रुलन अपने आगे किसी और को कुछ समझती नहीं। वह तो त्सेमो को भी कुछ नहीं गिनती। अम्माजी, आप को मालूम नहीं है, मैंने तो आपके बेटे से कहा था कि आप से बात करें। उन्हों ने कहा अम्माजी को परेशान करने से क्या फ़ायदा! दादी जी को तो सब मालूम था। उन्होंने तो रुलन को कई बार मारा भी।"

"रुलन को मारा ?"—रानी ने विस्मय से ऊंचे स्वर में पूछा, "क्यों, हमें क्यों नहीं बताया ?"

"त्सेमो ने रुलन को मना कर दिया था ।"––मेंग ने बताया। अब उसे इस बात में रस आने लगा था। कहती गयी––"रुलन लीनी से बहुत अधिक पढ़ी हुई है। इसलिये लीनी उसी की बात सुनती है। रुलन सदा वही बातें करती है जो स्त्रियों के मतलब की नहीं।"

"कैसी बातें ?"—रानी ने पूछा।

"अम्माजी, वह तो विधान, राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और राष्ट्रीय दमन की बातें करती है।"––मेंग ने बताया।

"परन्तु तुम्हें भी तो इन बातों का पता है।"––रानी ने मुस्करा कर पूछा।

"लिआंगमो जानते हैं, मुझे तो नहीं मालूम ।"—मेंग बोली।

"लिआंगमो जानते हैं, तो तुम नहीं जानना चाहतीं ?"––रानी ने मेंग से पूछा।

"अम्माजी हम लोग दूसरी और बहुत-सी बातें भी तो कर सकते हैं।" —मेंग ने उत्तर दिया।

"कैसी बातें ?"—रानी ने पूछा।

मेंग कुछ उत्तर न दे दूसरी ओर देखने लगी। रानी ने भी और आग्रह नहीं किया, उठ खड़ी हुई और घर में नये उठे इस बखेड़े के बारे में सोचती हुई अपने आंगन में लौट आयीं। उन्हें थकान-सी अनुभव हो रही थी, जैसे सम्मुख कोई भारी बोझ पड़ा हो और उसे उठाने की सामर्थ्य न हो। उन नौजवान लड़के-लड़कियों को वश में रखना उनका उत्तरदायित्व था, परन्तु अब यह काम कठिन जान पड़ रहा था। वे लोग नयी-नयी बातें करते थे और रानी की समझ पुरानी और परम्परागत ही थी, जो परिवर्तन को स्वीकार नहीं करती थी। उन्हें आन्द्रे भाई की याद आयी––निश्चय ही उसे आधुनिक संसार के दूर-दूर के देशों का भी ज्ञान है। सोचा, फेंगमो को पढ़ाने के लिये आन्द्रे भाई को फिर बुला लें। इन नौजवानों की समस्याओं के बारे में पादरी की राय उपयोगी हो सकेगी।

रानी ने फेंगमो को बुला लाने के लिए इंग को भेजा। फेंगमो घर में बेकार बैठा था, तुरन्त ही आ गया। फेंगमो का चेहरा देख कर मां को विस्मय हुआ। यदि लड़के का ब्याह न हो चुका होता तो अनुमान कर लेंती कि लड़का किसी लड़की के पीछे दीवाना हो रहा है। ऐसी बात तो थी नहीं। उन्हें जान पड़ा उनका पुत्र खिन्न और असन्तुष्ट है। साथ ही कुछ थकावट और ऊब जाने का आभास भी।

"बेटा"—रानी स्नेह से बोलीं, "इतने दिन अम्माजी के क्रिया-कर्म में हम फंसे रहे। तुम्हारी कुछ खैर-खबर ही न ले सके। तुम दोनों का हाल-चाल क्या है, कुछ बताओ तो।"

"ऐसी तो कोई बात नहीं अम्माजी।"—फेंगमो ने उपेक्षा से उत्तर दिया।

"कुछ तो बताओ। तुम्हारा और लीनी का क्या हाल है?"—मां ने आग्रह किया।

"ठीक ही है अम्माजी।"—फेंगमो फिर टाल गया।

रानी चुपचाप पुत्र के सुडौल गठे हुए लम्बे शरीर को निहारती रहीं। उस के सुते हुए सबल शरीर पर चिड़चिड़ाहट की मुद्रा भी भली लग रही थी। मुस्करा कर रानी बोलीं—"इतने बड़े तो हो गए हो, परन्तु तुम्हारी मनुहार ज़रा भी नहीं बदली। अब भी बिलकुल वैसे ही लग रहे हो। लड़कियां कितना बदल जाती हैं! मेरे बेटे तो अब भी ऐसे ही लगते हैं जैसे बचपन में दीखते थे।"

"अम्माजी हम पैदा हुए ही क्यों थे?"—फेंगमो पूछ बैठा।

रानी स्वयं अनेक बार इस प्रश्न पर विचार कर चुकी थीं, परन्तु बेटे के मुख से यह प्रश्न सुन कर वह घबरा गयीं। "क्यों, यह तो सब लोगों का कर्तव्य ही है कि अपने वंश के लिए संतान उत्पन्न करें।"—रानी ने उत्तर दिया।

"पर अम्माजी क्यों?"—फेंगमो ने धीरे से पूछा, "हम लोगों की ज़रूरत ही क्या थी?"

"हम लोग हैं, यही हमारे होने की ज़रूरत है।"—रानी ने उत्तर दिया।

"हम यदि अपने ही-जैसे और लोग पैदा कर दें और भविष्य में हमारी सन्तान फिर ऐसे ही लोग पैदा करती रहें तो इस से मुझे या किसी दूसरे को लाभ ही क्या !"—फेंगमो मां से आंखें चुराये कहता गया, "मेरा इस शरीर को छोड़ कर आप से क्या सम्बन्ध और मेरी संतान हो जाय तो उस से ही मेरा क्या सम्बन्ध होगा !"

रानी स्वयं भी इस प्रकार की काल्पनिक उधेड़-बुन में उलझी रहती थीं, परन्तु पुत्र के मुंह से ऐसी बातें सुनने की आशा नहीं थी।

"यह तुम क्या कह रहे हो ?"—रानी ने खिन्नता से कहा, "यह क्या हमारा ही प्रभाव है ? तुम्हारे पिताजी ने तो कभी ऐसी बात नहीं की। यह बातें तुम ने कहां से सीखीं ?"

"मेरे मन में तो ऐसी बातें सदा ही आया करती हैं।"—फेंगमो बोला।

"हमें तो तुम ने कभी नहीं बताया।"—रानी ने पूछा।

"सोचा था, यह विचार अपने आप ही दूर हो जायंगे, परन्तु हुए नहीं।"

रानी गंभीर हो गयीं। उन्हों ने चिंता से पूछा—"सुनो, क्या तुम्हारी और लीनी की निभ नहीं रही है ?"

फेंगमो के माथे पर रेखायें बन गयीं। "मुझे कुछ नहीं मालूम कि वह क्या चाहती है। यों ही असन्तुष्ट बनी रहती है।"

'तुम लोग दो महीने से साथ-साथ ही हो।"—रानी बोलीं, "पति-पत्नी का सदा साथ ही बने रहना ठीक नहीं होता। हम ने उसे कभी दूसरी स्त्रियों में बैठ कर बात करते भी नहीं देखा, जैसे मैंग करती है, इसीलिये वह चिढ़ कर अनमनी हो जाती होगी।"

'यही बात होगी।"—उपेक्षा से फेंगमो ने कह दिया।

रानी बेटे की ओर कुछ देर चुपचाप देख कर बोलीं—"हमारा ख्याल है कि आन्द्रे भाई को फिर बुला लें। तुम उस से पढ़ते थे तो बहुत खुश थे।"

"उस से क्या हो जायगा?"—फेंगमो ने अनमना-सा उत्तर दिया।

"अच्छी बात, हम उसे बुला लेंगे।"—रानी ने निश्चय कर लिया। फेंगमो चुप ही रहा।

"फेंगमो सुनो।"—रानी सोच कर बोलीं, "अगर तुम लीनी के साथ दूसरी जगह जा कर रहना चाहो तो हमें कोई एतराज़ नहीं। हम तो चाहते हैं कि तुम लोग खुश रहो। तुम्हें इस घर की व्यवस्था नहीं रुचती तो जैसा चाहो करो। हमारे और लड़के भी तो हैं, तुम अलग भी रह सकते हो।"

"मेरी समझ में तो कुछ नहीं आता।"—फेंगमो ने वैसे ही शिथिलता से उत्तर दिया।

"तुम्हारी लीनी से क्यों नहीं बनती?"—रानी ने पूछा, "तुम इतने दुखी क्यों हो? तुम्हारे विवाह को तीन महीने हो गये। लीनी के अभी तक गर्भ नहीं ठहरा और तुम उदास रहते हो।—आखिर बात क्या है।"

"अम्माजी इन बातों में क्या रखा है।"—फेंगमो ने उपेक्षा दिखायी।

"बेटा यही तो असली बात है।" रानी ने शांति से समझाया, "यदि शारीरिक मेल न हो तो मानसिक मेल भी नहीं हो सकता। यदि शारीरिक आकर्षण और सहयोग हो जाय तो मानसिक मेल स्वयं ही हो जाता है। यदि मानसिक सहयोग में कुछ कसर रह भी जाय तो भी निभ सकती है। पति-पत्नी के सहयोग का आधार शारीरिक है। मानसिक और आत्मिक सम्बन्ध और मिलन पति-पत्नी के सम्बन्ध के भवन की शोभा है। इस भवन की नींव उनका शारीरिक मिलन और सहयोग ही है।"

"तो फिर पिताजी रखेल क्यों ले आये हैं?"—फेंगमो ने पूछ लिया।

रानी को यह उद्दंडता अच्छी नहीं लगी। "हर बात का एक निश्चित समय होता है।"—रानी ने कड़ाई से उत्तर दिया, "समय बदल जाने पर दूसरी आवश्यकताएं भी हो जाती हैं।"

फेंगमो अपनी उद्दंडता के लिये स्वयं ही लज्जित हो गया। सिर खुजलाते हुए बोला—"हां, आन्द्रे भाई को बुला लीजिये।" पल भर सोच कर उस ने कहा—"अब मैं आन्द्रे भाई से ही पढ़ूंगा, नेशनल स्कूल में नहीं जाऊंगा।"

"जैसा तुम चाहो।"—रानी ने स्वीकार कर लिया।

आठ

अन्द्रे भाई को वू-हवेली में फिर बुलाया गया। इस बीच हवेली में घटी घटनाओं की उन्होंने कोई चर्चा नहीं की। फेंगमो संध्या समय पढ़ने आया और पढ़ कर चला गया। आन्द्रे लौट रहा था तो रानी आंगन के अंधेरे में अपनी अभ्यस्त जगह पर बैठी हुई थीं। उन्हें संध्या समय आंगन में बैठने से संतोष मिलता था। जब तक सर्दी असह्य न हो जाती वे आंगन में बैठा ही करतीं। सर्दी तो खूब हो गयी थी, परन्तु रानी आंगन में बैठने का लोभ संवरण नहीं कर सकीं। इंग उन के सर्दी में बैठने की ज़िद्द से बहुत घबरा रही थी। जानती थी कि मालकिन ज़रूर सर्दी खा जायंगी, बाद में सर्दी का उपचार करना होगा, इसलिये इंग ने पुस्तकालय के कमरे में अंगीठी जल्वा दी थी।

आन्द्रे लौट रहा था तो रानी ने धीरे से पुकार लिया—"आन्द्रे भाई!"

आन्द्रे के क़दम रुक गये। रानी की ओर घूम कर पूछा—"रानी साहिबा, आप ने मुझे बुलाया?"

"जी हां।"—रानी कुर्सी से खड़ी हो कर बोलीं, "यदि आप दो मिनट ठहर सकें तो हम फेंगमो के विषय में आप से कुछ बात करना चाहते हैं। इस लड़के की वजह से हम परेशान हैं।"

आन्द्रे भाई ने सिर झुका कर हामी भरी।

"चाय लाओ"—रानी इंग की ओर देख कर बोलीं, "और फिर कमरे में ज़रा आग ठीक करती रहना।" रानी का अभिप्राय था आन्द्रे भाई पादरी हैं, शायद किसी स्त्री के साथ अकेले रहना उसे अच्छा न लगे।

रानी के बैठने का संकेत करने पर आन्द्रे कुर्सी पर बैठ चुपचाप उनकी ओर देखता रहा। देख कर भी वह उन्हें नहीं देख रहा था। वह केवल उनकी समस्या सुनने की प्रतीक्षा में था।

"फेंगमो इतना खिन्न क्यों है?"—रानी ने सीधे ही प्रश्न किया।

"क्योंकि वह बेकार है।"—आन्द्रे ने भी संक्षिप्त उत्तर दिया।

"बेकार कैसे?"—रानी ने विस्मय से विरोध किया, "सब लड़कों के लिए अपने-अपने काम हैं। नववर्ष के दिन हम लड़कों और बहुओं को काम बांट देते हैं। इस वर्ष बड़े बेटे को हमने ज़मीनों की देख-रेख का और त्सेमो को खरीद-फ़रोख्त का काम सौंपा हुआ है। फेंगमो ने जब से स्कूल छोड़ दिया है हम ने उसे ग़ल्ले की दुकानों की देख-रेख का काम दे दिया है। रोज कई घंटे उसे वहां रहना होता है।"

"वह बेकार ही है।"—आन्द्रे भाई बोला, "इतना काम इस लड़के के लिये पर्याप्त नहीं। उस की बुद्धि तीव्र है और उस में जिज्ञासा है। आपने उसे केवल अंग्रेज़ी पढ़ाने के लिये ही कहा था, परन्तु वह भाषा के साथ-साथ और चीज़ों को भी ग्रहण कर लेता है। इतने दिनों में वह पिछला पढ़ा हुआ कुछ भूला नहीं, बल्कि स्वयं भी उस का ज्ञान उस ओर बढ़ा ही है। उस की जिज्ञासा आगे बढ़ना चाहती है। बढ़ती हुई बेल की उंगलियों की तरह ऊंचे चढ़ने के लिये सहारा खोजती रहती है, और सहारा पाकर आगे बढ़ जाती है। आप उसे चाहे जितना काम दे दें वह बेकार ही रहेगा। उसे ऐसी वस्तु की आवश्यकता है जिस में उस का मन और आत्मा डूब सके।"

आन्द्रे की बात सुन कर रानी ने अविश्वास से पूछा—"तो क्या तुम उसे अपने धर्म की शिक्षा देना चाहते हो?"

"आप को तो मालूम नहीं कि मेरा धर्म क्या है?"—आन्द्रे भाई ने उत्तर दिया।

'हमें मालूम है।"—रानी बोलीं, "मिस हिसा ने हमें आप की धर्म-पुस्तकें पढ़ कर सुनायी हैं और फिरंगी लोगों के प्रार्थना करने का ढंग भी बताया है।"

"उन का धर्म और है, मेरा और।"—पादरी ने उत्तर दिया।

"तो बताइये न आप का धर्म क्या है?"

"बता नहीं सकता, क्या बताऊँ?"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "हिसा बहन आप को धर्म-पुस्तक पढ़ कर सुना सकती हैं और प्रार्थना करने का एक ढंग बता सकती हैं। मेरा वह तरीक़ा नहीं है। मैं बहुत-सी पुस्तकें पढ़ता हूं, प्रार्थना का भी खास मेरा कोई ढंग नहीं है।"

"तो आप के धर्म का मार्ग क्या है?"—रानी ने पूछा।

"मेरे धर्म का मार्ग रोटी है, पानी है।"—पादरी ने उत्तर दिया, "मेरे धर्म का मार्ग सोना और काम करना, घर को साफ़ करना और अपने बाग़ में काम करना है। मेरा धर्म मेरे यहां रहने वाले बच्चों को खिलाना-पिलाना है, आप के पुत्र को पढ़ाना भी है। कोई बीमार हो तो उसकी सेवा करना भी मेरा धर्म है। लोगों को मृत्यु के समय शांति की सान्त्वना देना भी मेरा धर्म है।"

"हम अपनी सास की मृत्यु के समय आप को बुला लेते तो अच्छा होता।"—रानी बोल पड़ीं, "हमारे मन में तो बात आई थी कि आप को बुलवा लें, परन्तु उस से घर के लोगों को संतोष न होता। वे लोग तो मंदिरों के पुजारियों में ही आस्था रखते हैं।"

"मंदिरों के पुजारियों के आने में मुझे क्या आपत्ति होती?"—आन्द्रे भाई ने कहा, "मुझे ऐसी किसी बात में आपत्ति नहीं है जिससे किसी को सान्त्वना मिल सके। हम सभी सान्त्वना चाहते हैं।"

"आप भी सान्त्वना चाहते हैं?"—रानी ने पूछा।

"हां, अवश्य, मैं भी सान्त्वना चाहता हूं।"—पादरी ने उत्तर दिया।

"परन्तु आप का तो आगे-पीछे कोई नहीं है।"—रानी बोलीं, "आप का कौन सम्बन्धी है। जिसकी आपको चिंता है?"

"मुझे तो सभी की चिंता है।"—आन्द्रे भाई बोला—"सभी मेरे संबंधी हैं।"

"हमारा और आप का क्या सम्बन्ध? क्या हमारा और आप का रक्त एक-जैसा है?"—रानी ने पूछा।

"मनुष्यमात्र का रक्त एक-जैसा है।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "उस में कोई अंतर नहीं हैं।"

"आप सन्यासी क्यों बन गये?"—कुछ देर सोच कर रानी ने पूछ लिया और फिर अपनी भूल संभालने के लिये तुरंत बोलीं, "क्षमा कीजिये, मैं जानती हूं, ऐसा प्रश्न किसी सन्यासी से नहीं पूछा जाना चाहिये। परंतु मेरा विश्वास है कि आप ने कोई पाप नहीं किया होगा, जिस के प्रायश्चित्त के लिये आप को सन्यासी बनने की आवश्यकता हो।"

"नहीं, क्षमा मांगने की कोई बात नहीं है।"—आन्द्रे भाई ने उत्तर दिया, "बात यह है कि मैं स्वयं यह नहीं जानता कि मैं सन्यासी कैसे बन गया। शायद यह कारण हो कि मैं पहले ज्योतिषी था।"

"आप ज्योतिष जानते हैं?"—रानी ने विस्मय से प्रकट किया।

"रानी साहिबा, जानता तो कोई भी नहीं।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "मैं आकाश में नक्षत्रों की गतिविधि का अध्ययन किया करता था।"

"आप अब भी अध्ययन करते होंगे!"—रानी ने पूछा। रानी को ऐसे प्रश्न पूछने में संकोच हो रहा था, परन्तु रह भी न सकीं।

"रानी साहिबा; रात में जब कोई काम नहीं रहता तो अब भी करता हूं। बादल घिर आयें तो दूसरी बात है।" आन्द्रे का निष्कपट और शांत व्यवहार रानी के मन में चुभ गया। केवल वह इसलिये उत्तर दे रहा था कि रानी पूछ रही थीं और उसे कोई संकोच नहीं था। अपनी बात सुनाने के लिये कोई आग्रह नहीं था।

"आप का जीवन कितना सूना है!"—रानी के मुंह से निकल गया, "दिन भर आप ग़रीबी में बिताते हैं और रात तारों में।"

"आप ठीक कहती हैं।"—आन्द्रे ने निरुद्वेग स्वीकार किया।

"कभी आप के मन में इच्छा नहीं होती कि अपना घर हो, अपनी स्त्री हो, अपने बच्चे हों?"—रानी ने पूछा।

"रानी साहिबा, एक समय एक स्त्री से मेरा स्नेह था।"—पादरी ने बताया, 'हम लोगों का विवाह भी हो जाता परन्तु मेरा विचार बदल गया, इच्छा हुई कि अकेला ही रहूं। मुझे उस स्त्री से प्यार नहीं रहा उसकी आवश्यकता भी नहीं रही।"

"हम समझते हैं यह तो आप ने अन्याय किया।"—रानी ने गंभीरता से कहा।

"हाँ, अन्याय तो हुआ।"—आन्द्रे ने स्वीकार किया, "आप ठीक कहती हैं, परन्तु उस स्त्री से झूठ बोलना भी उचित नहीं था। अकेले रहने की इच्छा थी, इसलिये मैं पादरी बन गया।"

"परन्तु आप का धर्म, आप का विश्वास क्या है?"—रानी ने पूछा।

रानी की आंखों में आंखें गड़ा कर आन्द्रे ने उत्तर दिया—"मेरा विश्वास पृथ्वी और आकाश में, सूर्य और नक्षत्रों में, मेघों और वायु में है।"

"क्या भगवान् में आप का विश्वास नहीं?"—रानी ने पूछा।

"है,"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "परन्तु मैंने कभी उन्हें देखा नहीं।"

"तो फिर विश्वास कैसे है?"

"वह सभी जगह हैं।"—गंभीर स्वर में आन्द्रे ने उत्तर दिया, "जल में, वायु में, जीवन में और मिट्टी में—वे सभी जगह हैं।"

"आप एकांत चाहते हैं, "—रानी ने प्रश्न किया, "तो अनाथ बच्चों को क्यों अपने यहां समेट लेते हैं?"

आन्द्रे की आंखें अपने बड़े-बड़े कड़े और खुरदुरे हाथों की ओर झुक गयीं। "यह हाथ है तो इन्हें भी कुछ करना ही चाहिये।"—आन्द्रे बोला,

मानो वे हाथ स्वतंत्र जीव हों, उनका पृथक् अस्तित्व हो--"शरीर को भी कुछ करते रहना चाहिये। तभी मन शात रह सकता है।"

रानी के विस्मय की सीमा नहीं थी। आन्द्रे की ओर देख कर उन्हों ने धीमे से पूछा—"आप-जैसे क्या और भी लोग हैं?"

"आदमी तो सब अपने-अपने ढंग के होते हैं।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया। कड़ी धूप से पके उस के चेहरे पर एक मुस्कान आ गयी, जैसे उस की अन्तरात्मा खिल उठी हो। धीमे से बोला—"परन्तु रानी साहिबा, हो सकता है कि आप का पुत्र फेंगमो मेरे-जैसा ही हो। संभव है वह मुझ-जैसा ही बन जाये।"

"नहीं, ऐसा नहीं होगा।"—रानी दृढ़ता से बोलीं।

"ओह!"—आन्द्रे भाई के मुख से निकल गया। उस के होंठों पर मुस्कान और आंखों में रहस्यमयी चमक आ गयी। वह उठ खड़ा हुआ और विदा ले कर चला गया। रानी आकाश में चमकते नक्षत्रों की ओर आंखें लगाये चुपचाप सोचती रहीं। इंग ने आ कर दो बार भीतर चलने के लिये कहा।

"हमें दिक़ न करो।"—रानी ने डांट दिया--"हम कुछ सोच रहे हैं।"

"हुजूर, यहां बहुत सर्दी है।"—इंग ने समझाया—"आप भीतर सेज पर लेट कर भी तो सोच सकती हैं।"

रानी ने इंग की बात नहीं सुनी तो वह भीतर जा कर एक शाल ले आयी और रानी को ओढ़ा दिया। रानी चुपचाप तारों की ओर आंखें लगाये रहीं। नीचे चारदीवारी से घिरा चौकोर आंगन था। सिर पर भी तारों भरे अंधियारे आकाश का चौकोर ही था। इस बीच रानी के विचार ऊपर-नीचे, इधर-उधर दौड़ रहे थे--

······इस हवेली में वू-परिवार की अनेक पीढ़ियां बीत चुकी हैं। वू-परिवार की अदृश्य जड़ों ने उस भूमि को गहराई तक दृढ़ता से जकड़ लिया है, परन्तु वू-परिवार से पहले भी लोग यहां रहते ही थे। ससुर ने रानी को बताया था कि उन के पिता ने और उन के पिता को उन के पिता ने

बताया था और उस से भी पहले कई पीढ़ियों से यह बात चली आ रही थी कि वू-हवेली की नींव यहां पुराने खंडहरों पर ही रखी गयी थी। ससुर ने रानी से कहा था—"किसी हवेली या मकान की नींव अछूती पृथ्वी में डाल सकना संभव नहीं। नगरों के खंडहरों पर ही नये नगर बसते आये हैं। यही नगर पांचवीं बार खंडहरों पर बसा हुआ है। मनुष्य की अस्थियों पर ही पांव रख कर मनुष्य जीवित है। हमारे बाद दूसरे लोग हमारी अस्थियों पर खड़े होंगे······।

······हज़ार वर्ष बीत जाने पर वू-हवेली भी खंडहर बनकर भूमि में समा चुकी होगी। यहां कोई और बैठा होगा और ऐसे ही इन नक्षत्रों को देख रहा होगा। यह नक्षत्र तब भी होंगे। रानी को आन्द्रे भाई की याद आ गयी—वह कितना अकेला है, परन्तु अकेला होकर भी संतुष्ट है। वैसे अकेलेपन के भय की सिहरन से रानी का शरीर कांप उठा।

"हुज़ूर!"—इंग ने निराशा भरे स्वर में फिर पुकारा।

रानी इंग की पुकार सुन ही नहीं सकीं।

इंग घबरा कर, आहट न करने के लिये पंजों के बल रानी के समीप आई और उन के चेहरे पर झुक कर ध्यान से देखा। रानी निश्चल बैठी नक्षत्रों की ओर देख रही थीं। पुस्तकालय के दरवाज़े से आते प्रकाश की रेखा में आकाश की ओर उठी उन की बड़ी-बड़ी निश्चल आंखें बहुत अधिक फैल गयी जान पड़ती थीं और उन का रक्तहीन चेहरा इतना सफ़ेद कि मानो पारदर्शी हो गया हो।

इंग घबरा गयी। बिना आहट किये ही पीछे हट गयी। एक दीर्घ निश्वास उस के होंठों से निकल गया—"हाय, मालकिन चल बसीं।"

रानी को इंग के क़दमों और निश्वास का आभास तो हुआ, परन्तु उन्हें उस से कुछ प्रयोजन न था; उस का कुछ अर्थ भी न था। ऐसे ही जैसे आंगन की दीवारों के कारण आकाश में दिखाई देने वाले अंधकार के चौकोर का कोई अस्तित्व नहीं था, वास्तव में तो अंधकार की कोई सीमाएं नहीं थीं। उन के विचार और कल्पनायें नक्षत्र-लोक में पहुंचे हुए थे। वे केवल

आंगन को ही नहीं, सम्पूर्ण पृथ्वी को, सागरों और दोनों ध्रुवों की कभी न पिघलने वाली बरफ़ को भी देख रही थीं। मन में विचार आया—

"उन तारों में पहुँच कर तो निश्चय ही सब कुछ देखा जा सकता है।"

मन में इच्छा हुई कि वे चारदीवारी की सीमाओं से मुक्त हो कर संपूर्ण पृथ्वी पर निर्विघ्न घूम सकें।

"फिर भी नक्षत्र तो ऊपर ही रहेंगे।"—रानी ने सोचा, "नक्षत्रों तक कैसे पहुंचा जा सकता है!"

रानी को वृद्धा सास की याद आयी। वृद्धा का शरीर तो कफ़न में बंद पड़ा था, परन्तु उन की आत्मा मुक्त हो चुकी थी। रानी ने सोचा, नहीं उन की आत्मा तो इसी हवेली में मँडरा रही होगी। मैं जिस दिन मुक्त हो जाऊंगी इस हवेली को छोड़ कर सीधी ऊपर जाऊंगी और देखूंगी कि ये नक्षत्र वास्तव में क्या हैं।

अपने विचारों में डूबी रानी को पता ही न लगा कि इंग कब दबे पांव आंगन से चली गयी और फिर तीनों बेटों को ले कर लौट आयी। तीनों पुत्र एक ओर खड़े उन की ओर ध्यान से देखते रहे। सब से पहले लिआंगमो ने पुकारा—

"अम्माजी!"—लिआंगमो ने बहुत ही कोमल स्वर में संबोधन किया। शरीर के पिंजड़े से मुक्त हो गयी आत्मा को लौटने के लिये अनुनय और विनय से ही पुकारा जाना चाहिये था। ऊँचे स्वर से विक्षिप्त हो जाने पर आत्मा भला क्यों लौटती! पिंजड़े से मुक्ति पा जाने वाले पक्षी को स्नेह व्यवहार से ही फुसला कर लौटाया जा सकता है, धमका कर नहीं।

"अम्माजी!"—लिआंगमो फिर विनय से कोमल स्वर में बोला, "आप के पुत्र सेवा में उपस्थित हैं······।"

लिआंगमो बहुत ही धीमे स्वर में बोला था और रानी अपनी कल्पना में कहीं दूर गयी हुई थीं। वे कुछ सुन न सकीं।

"जाओ, पिताजी को बुलाओ।"—मां को निश्चल देख लिआंगमो ने त्सेमो को आदेश दिया।

त्सेमो तुरंत बाहर चला गया। शेष दोनों भाई मां के शरीर की ओर आंखें लगाये चौकसी में चुप खड़े रहे कि मां की मुक्त आत्मा बहुत दूर न चली जाय। वू साहब तुरंत ही आ गये। उन के पीछे-पीछे च्यूमिंग भी थी। उस की ओर किसी का ध्यान नहीं गया।

"यह सब कैसे हुआ?"—साहब ने इंग से पूछा।

"जब से पादरी गया है, यही हालत है।"—इंग ने उत्तर दिया।

"मेरे पुत्रों की मां!"—साहब ने स्नेह से पुकारा। उन का चेहरा बादामी काग़ज़ की तरह पीला हो रहा था।

रानी निश्चल रहीं।

"एलिन!"—साहब ने फिर पुकारा। उन के दोनों हाथ कुम्हलाये हुए पत्तों की भांति शिथिल लटके हुए थे। रानी के शरीर को छूने का साहस उन्हें न हुआ।

च्यूमिंग कुछ बोली नहीं। वह रानी के सम्मुख फ़र्श पर बैठ गयी। उन के पांव से हलके जूते निकाल कर उसने रेशमी मोज़े उतार दिये और उनके तलुओं को मल ने लगी। पांव ठंडे थे। च्यूमिंग ने पांव अपने सीने पर दबा लिये।

"देखो घबरा न जायं।"—साहब ने धीमे से चेतावनी दी।

"नहीं, मुझ से नहीं डरेंगी।"—च्यूमिंग ने साहब और उन के पुत्रों की ओर देख कर उत्तर दिया।

"वह किसी से नहीं डरतीं।"—साहब गर्व से बोले।

"मैं इतनी तुच्छ हूं कि मेरी ओर उनका ध्यान भी न जायगा।"—च्यूमिंग ने रानी के पैरों पर सिर झुका दिया।

उसी समय रानी ने नक्षत्रों की ओर से आंखें नीचे झुका कर सामने देखा। पुत्रों को सामने खड़े देख उन्हों ने पूछा—"तुम तीनों?······क्यों क्या बात है?"

च्यूमिंग ने तुरन्त रानी के मोज़े और जूते पहना दिये। रानी का ध्यान

उस ओर नहीं गया, परन्तु उन्हों ने सामने खड़े साहब की ओर देखा और निरपेक्ष स्वर में पूछा--"कहिए, आप कैसे आए ?"

यह समझ लेने में किसी को दुविधा न हुई कि उन की आत्मा फिर से शरीर के पिंजड़े में बंध जाने के लिए अनिच्छुक है। स्थिति का उपाय करने के लिए और मां को पृथ्वी पर बने रहने का प्रलोभन देने के लिये लिआंगमो तुरन्त बोल उठा—

"अम्माजी, मेंग के बाल-बच्चा होने में अब देर नहीं।"

त्सेमो ने भी सहयोग दिया और बोला--"अम्माजी, रुलन को शहद के बड़े बनाना सिखा दीजिए न।"

"अम्माजी !"--फेंगमो ने भी धीमे से कहा, "क्षमा कीजिये, आज मैंने आप से झूठ कह दिया था।"

सभी लोग बारी-बारी से रानी को पृथ्वी पर लौटा सकने का यत्न कर रहे थे। साहब भी बोले--

"तुम्हीं तो इस घर की कर्ता-धर्ता हो। क्या भूल गयीं कि अभी तक नयी फ़सल के लिए बीज नहीं भेजा गया ?"

"तुम लोग तो घर को कभी नहीं सम्हाल सकोगे।"--रानी बोलीं, मानो लौट आने के लिए विवश हो गयी हों।

"नहीं अम्माजी, हम नहीं सम्हाल सकेंगे।"— लिआंगमो ने स्वीकार किया।

रानी शाल को कन्धों पर सम्हाल कर उठ खड़ी हुई। मानो कल्पना-लोक से लौटी हों, ऐसे चारों ओर देख कर वे बोलीं--

"इंग कहां है ? हम बहुत थक गये हैं, सोयेंगे।······अब कल सही।"

सब पुरुषों ने एक ओर हट कर रानी और इंग को भीतर जाने के लिए रास्ता दिया। च्यूमिंग भी अंधेरे में उन के साथ ही भीतर चली गयी। साहब और तीनों पुत्र पुस्तकालय में बैठ कर प्रतीक्षा करते रहे। इंग ने लौट कर समाचार दिया--"अब कोई भय नहीं, मालकिन सो गई हैं।"

आंगन से बाहर आ कर लिआंगमो ने साहब से पूछा--"पिताजी, यह

हुआ क्या······इस से पहले तो कभी मां की आत्मा हवेली से बाहर नहीं गयी।"

"हम क्या जानें, जाने क्या बात है!"—साहब उलझन में गुनगुना दिये, "चालीसवीं वर्षगांठ के बाद से उन्हें जाने क्या हो गया है!"

"आप लोग मां को नहीं जानते,"—फेंगमो सिर हिला कर बोला, "परन्तु मैं जानता हूं। उन में उड़ सकने की भी शक्ति ह, लेकिन उन्हें अवसर नहीं मिलता। वे इसीलिए बेचैन रहती हैं।"

साहब, लिआंगमो और त्सेमो आश्चर्य से फेंगमो की ओर देखते रहे, ······यह पागल क्या बक रहा है? और फिर एक दूसरे से विदा ले कर सो जाने के लिए चले गये।

× × ×

सुबह रानी वू की नींद खुली तो मन पर गत रात की घटना का गहरा आतंक था। पिछली संध्या कुछ समय के लिए उन का मन और कल्पना उन्मुक्त हो कर विचरण करती रही थी। उस विचरण की स्मृति बहुत ही लुभावनी और आकर्षक थी। वे कुछ समय के लिए सभी चिंताओं और पार्थिवता से मुक्त हो गयी थीं। उन्हें आशंका हो रही थी कि वे इस अभ्यास में फंस न जायं। यदि ऐसा हुआ तो यह अभ्यास उन्हें प्रबल नशे की तरह विवश कर देगा। मन और कल्पना की वह उन्मुक्त अवस्था सन्यास की अवस्था के समान थी, जैसे कोई साधुनी नारी जीवन के संकटों और विवशताओं को छोड़ कर मुक्त हो जाय, अथवा कोई सन्यासी सांसारिक दायित्वों से निर्बाद्ध हो जाय। उन्हें आन्द्रे भाई के प्रति क्रोध था—क्यों उस ने उन्हें यह मार्ग दिखाया और अपने प्रति भी खिन्नता थी कि वे उस ओर क्यों आकर्षित हो गयीं। मन में ऐसी ही ग्लानि थी, मानो उन्होंने अनुचित प्रणय में अपना हृदय दे दिया हो। सेज से उठते नहीं बन रहा था।

दृढ़ निश्चय कर वे सहसा सेज से उठ खड़ी हुईं। इंग को पुकारा और तत्परता दिखाने के लिए उसे दो-चार मामूली बातों के लिए डांट दिया—

"कोने में जाला क्यों लगा है......बड़ी कुर्सी के पीछे जमी हुई धूल तुझे नहीं दिखाई देती?" नाश्ता कर चुकने के बाद उन्हों ने बड़े बावरची को बुलवा लिया और हिसाब देखने लगीं और समझाया—"जाड़े का मौसम आ गया है, तुम अभी तक तरबूज़ का ही शोरवा बनाये जा रहे हो।......खीरे और दूसरी ठंडी चीज़ें खिला रहे हो। यह सब बन्द करो! अब भुना हुआ मांस और मटर वग़ैरह तैयार किया करो।......सब्ज़ी तरकारी में भी थोड़ा मांस डाल दिया करो!"

बावरची ने घबरा कर विनय से विस्मय प्रकट किया—"हुज़ूर, मालूम होता है कई दिन से खाने पर नहीं आ रही हैं। ग़रीबपरवर ग़ुलाम तो बहुत दिन से यही सब चीज़ें बना रहा है। हुज़ूर की खिदमत करते कई बरस बीत गये। बन्दा क्या अभी मौसम की बात भी नही समझता!"

"चुप रहो।"—रानी ने डांट दिया, "हम यह सब नहीं सुनना चाहते, जाओ अपना काम करो।" बावरची को काठ मार गया। वह हवेली का बहुत पुराना आदमी था। अच्छे बावरचियों की तरह उस में कुछ अनख भी थी बल्कि मालकिन का कुछ मुंहलगा भी था। बेचारा कुछ समझ ही न सका। सिर झुका कर बाहर चला गया।

दोपहर को भी रानी ने आराम और विश्राम की बात न सोची। एक के बाद दूसरे आदमी को बुलवाती रहीं। वे उसी उत्तेजना की अवस्था में थीं कि साहब आंगन में आ गये। रानी को लगा कि साहब साधारण से कुछ जल्दी ही आ गये हैं। मन को यथासंभव वश में कर बोलीं—

"आइये, आइये, घर का हिसाब देख रही थी।"—रानी बोलीं, "मेरा ख्याल है, इस बावरची से काम नहीं चलेगा। यह आदमी बहुत मुंहज़ोर हो गया है।"

"यह कैसे हो सकता है!"—साहब घबराहट में बोले, "यह कैसे हो सकता है! दूसरा कौन आदमी इस बावरची की तरह मछली बना सकता है? तुम्हे याद है, सात या आठ शहरों से खोज-खोज कर इसे

बुलवाया था और तुम्हारी नौकरानी से इस का ब्याह करा दिया था कि भाग न जाय ?"

"इंग भी बहुत मुंहज़ोर हो गयी है ।"--रानी बोलीं।

रानी ने अभी तक कभी भी इस तरह बात नहीं की थी। साहब घबरा गये। जेब से पाइप निकाल कर उस में तम्बाखू भरते हुए बोले— "आज तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है। आंखें भी कुछ गहरी-गहरी दिखाई पड़ रही हैं……।"

"मेरी तबियत बिलकुल ठीक है।"--रानी ज़िद्द से बोलीं।

साहब ने दो कश ले कर पाइप मेज़ पर रख दिया। धीमे से पुकारा— "एलिन!"…दायें और बायें देखा कि कोई सुन तो नहीं रहा और बोले-- "यह तुम्हारी बड़ी भूल है कि हमें छोड़ कर यहां आ गयी हो। सहवास के बिना स्त्री-पुरुषों का स्वास्थ्य ठीक नहीं रह सकता। प्रयोजन केवल संतान ही नहीं है बल्कि स्वास्थ्य को सम अवस्था में रखना भी है। तुम ज़रा अपना ख्याल तो करो। तुम बुढ़िया तो हो नहीं गयीं। तुम्हारा शरीर और रूप अब भी बिलकुल वैसा ही है। रक्त में जवानी की गर्मी है। तुम भूल गयीं कि हम लोग कितने मज़……।"

"बस रहने दीजिये।"--दृढ़ता से रानी बोलीं, 'आप जानते हैं मैं अपना निश्चय नहीं बदलती। जो करना था, कर चुकी। आप को क्या असंतोष है ? आप और क्या चाहते हैं ?"

"हम तो चाहते हैं कि तुम फिर लौट आओ।"—साहब ने स्पष्ट कहा, "हमारे लिये तो तुम से बढ़ कर कोई नहीं, परन्तु हम अपनी ही बात नहीं कहेंगे।"

"मेरी चिन्ता आप न कीजिये।"--रानी ने कह दिया।

"तुम्हारी चिन्ता कैसे न करें!"--साहब बोले। पल भर के लिये मन में संदेह की बिजली-सी कौंध गयी कि शायद किसी तरह, संभवतः आध्यात्मिक प्रभाव से ही, रानी के मन का लगाव पादरी से हो गया है, परन्तु लज्जा के कारण ऐसी बात होंठों पर न ला सके। वे जानते थे कि ऐसी बातों में रानी

का मिज़ाज कितना ऊंचा था। पादरी होने के अतिरिक्त वह आदमी विदेशी भी तो था। जवानी के दिनों में जब साहब अभी यौवन के उन्माद में पागल थे, तब भी वे स्नान किये बिना, शरीर पर सुगंध लगाये बिना और श्वास को सुगंधित बनाने के लिये कुछ चबाये बिना रानी के समीप नहीं जाते थे। विदेशियों के शरीर की दुर्गन्ध, उन की त्वचा का खुरदरा-पन, उन के मोटे और कड़े केश और उन के शरीर से छूटती पसीने की धाराओं को कोई भद्र महिला कैसे सह सकती है! उलटे वे डरने लगे कि कहीं रानी अपनी पैनी सूझ से उन के मन का संदेह भांप कर नाराज़ न हो जाय।

बू साहब के पास एक ही उपाय था। उस की सफलता में उन्हें पूरा विश्वास भी था। उन्हों ने मुंह लटका लिया, मानो वे स्वयं कष्ट में हों और बोले—

"तुम ठीक ही कहती हो। हम भी बूढ़े हो गये हैं।"—उन्हों ने एक गहरी सांस ली, "अब पेट ठीक भी नहीं रहता। रात में दो-तीन बार नींद टूट जाती है। सुबह उठते हैं तो शरीर टूटता-सा रहता है।"

रानी के चेहरे पर वही दृढ़ता का भाव बना रहा। "रात का खाना कम कर दीजिये, केवल थोड़ा शोरवा ले लिया कीजिये और कुछ दिन अकेले ही सोइये।"—उन्हों ने समझाया।

साहब निराश हो मुंह लटका कर बैठ गये। रानी अपने जूते से कुछ देर फर्श पर खट-खट करती रहीं और फिर एक गहरी सांस लेकर उठ खड़ी हुईं और साहब के लिये चाय बनाने लगीं। साहब ने देखा कि केतली का ढक्कन उतारते और लगाते समय रानी की उँगलियां तनिक कांप गयीं, परन्तु साहब कुछ बोले नहीं चुपचाप चाय पीते रहे और प्याली समाप्त कर उठ कर चल दिये। साहब आंगन में ही पहुँचे थे कि उन्हें रानी का स्पष्ट स्वर सुनाई दिया—

"आप का पाइप फिर यहीं रह गया।"

साहब लौट कर आये। चेहरा सुर्ख़ हो गया। बोले—

"हां सच, पाइप भूल गया था।"

रानी दरवाज़े में खड़ी रहीं। दूर से ही उन्हों ने मेज़ पर पड़े पाइप की ओर संकेत कर दिया, मानो उस गंदी चीज़ को वे छूना न चाहती हों। साहब का चेहरा और भी सुर्ख़ हो गया। दांत होंठों से दबा लिये। पाइप उठा कर सिर झुकाये लौट गये। रानी क्षण भर खड़ी बाहर जाते साहब की ओर देखती रहीं। एक गहरी टीस-सी मन में उठी, मानो कोई दबा हुआ दर्द उठ आया हो।

उसी समय आंगन के दरवाज़े से मिस हिसा ने प्रवेश किया। ऐसे समय इस स्त्री को आया देख कर रानी का मन खिन्न हो गया, परन्तु लाचारी थी; मुस्करा कर अतिथि का स्वागत करना ही पड़ा।

"रानी साइबा, आप का बहुट डिन से डेका नईं।"—मिस हिसा अपने विकृत उच्चारण में बोलीं। रानी हिसा के शब्दों को समझे बिना ही उस का अभिप्राय समझ जाती थीं।

"आप की तबियत तो ठीक है?"—रानी ने पूछा।

"अबी आप का फुरसत नई तो अम फिर आयेगा, अम माफ़ी बोलटा हय।"—हिसा ने कुछ संकोच-का प्रदर्शन किया।

"नहीं, नहीं, ऐसी बात नहीं। आप बैठिये। कहिये क्या बात है?"—रानी ने आश्वासन दिया।

"आप का बौट मेरबानी। अम एक बड़ा जरूर काम के वास्टे आया ठा। आप का मडड मांगटा हय।"—हिसा ने समझाया।

"हां, हां, आप कहिये।"—रानी ने आग्रह किया।

"आप उस प्राडरी को जानटा?" हिसा बोली।

"जो हमारे बेटे को पढ़ाता है?"—रानी ने पूछा।

"वो पाडरी का छोटा अनाथालय है"—हिसा बोली, "उस में लरकी बी हय। अमारा खयाल कि लरकी का ख़याल कोई औरट को करना चाइये। उडर बस एक मर्ड नौकर हय। आप उस को बोलेगा कि अम लड़कियों को पड़ायेगा।"

"आप स्वयं ही उस से बात क्यों नहीं करतीं।"—रानी ने पूछा।

"आप जानटा अमारा और उस का डरम एक नहीं हय।"—हिसा ने बताया।

"विलायत के लोगों के कितने धर्म हैं?"—रानी ने पूछा, "हम नित्य नये धर्म की बात सुनती हैं।"

"बगवान का सच्चा डरम एक हय।"—हिसा ने गंभीरता से बताया।

"आप उसी भगवान् को मानती हैं?"—रानी ने पूछा।

हिसा की नीली-नीली रूखी आंखें फैल गयीं। माथे पर उड़ आई केशों की एक लट को संभालती हुई गंभीरता से बोली—"उसी बगवान की सेवा लिये अम अपना गर छोड़ा, अपना डेस छोड़ा और इस विचित्र डेश में आया।"

"क्या हमारा देश विचित्र देश है?"—रानी ने विस्मय से पूछा।

"अमारे लिये टो बिचिट्र हय।"

"इस देश में आने के लिये आप के भगवान् ने कहा था?"—रानी ने पूछा।

"हां, अम को बगवान ने बोला।"—हिसा ने उत्तर दिया।

"आप को भगवान् की वाणी सुनाई दी थी?"—रानी ने जिज्ञासा की।

हिसा ने अपना खुश्क सूखा-सा हाथ हृदय पर रख कर उत्तर दिया—"अम को मालूम हुआ······अम मन में सुना।"

रानी ने पल भर हिसा की ओर देखा और पूछ लिया—"आप के माता-पिता ने आप का विवाह क्यों नहीं किया?"

हिसा ने हृदय पर रखे हाथ को और दबा लिया और बोली—"अमारा डेस में माटा-पिटा साडी नई करटा। मरड-औरट का मुअब्बट होटा टो साडी करटा।"

"आप ने भी तो कभी मुहब्बत की होगी?"—रानी ने समवेदना के स्वर में पूछा।

हिसा का हृदय पर रखा हाथ नीचे आ गया। "किया।"--उस ने एक शब्द में ही उत्तर दे दिया।

"पर विवाह नहीं किया ?"--रानी ने फिर पूछा।

"अमारा डेस में मरड औरट से साडी मांगटा।"--हिसा ने दर्द भरे स्वर में उत्तर दिया।

रानी चुप रह गयीं। और भी प्रश्न पूछ सकती थीं, परन्तु हिसा का मन दुखाना न चाहती थीं। स्पष्ट ही था कि हिसा से विवाह करने की इच्छा किसी मर्द ने प्रकट नहीं की होगी।

हिसा की आंखें भीग गयी थीं, परन्तु वह रानी की ओर देख कर साहस से बोली—"बगवान अमको उस से बड़ा काम डिया।"

हिसा की ओर देख रानी ने उत्तर दिया—"आप ठीक कहती हैं। हम जानती हैं।"

रानी ने अपना चांदी का छोटा पाइप भर कर सुलगा लिया। दो कश खींच कर पाइप मेज़ पर रख दिया और बोलीं--"हम लोग विवाह को बहुत महत्त्वपूर्ण समस्या समझते हैं, इसलिये विवाह की बात स्त्रियों, पुरुषों या भगवान् के भरोसे नहीं छोड़ देते। विवाह भी भोजन, वस्त्र और मकान की तरह ही आवश्यक है। इस की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिये, नहीं तो कुछ लोग बहुत अधिक पा जायंगे और कुछ खाली हाथ रह जायंगे। इस परिवार में सभी लोगों, नौकरों के भी विवाह की व्यवस्था हम ही करती हैं। सभी लोगों को उन का उचित भाग मिलना चाहिये। कुछ चीज़ें लोगों को बहुत पसंद आती हैं। यदि उचित व्यवस्था न की जाय तो बच्चे केवल मिठाइयां ही खाया करेंगे, हमारे साहब सिर्फ़ कबाब ही खायंगे, कुछ नौकर दूसरों का भी हिस्सा खा जायंगे और ग़रीब बेचारे भूखे ही रह जायंगे, इसलिये हम नौकरों की आवश्यकता और परिवार के लोगों की रुचि का ध्यान रख कर व्यवस्था करती हैं।"

हिसा अपने सूखे-सूखे हाथों के पंजे आपस में फंसा कर बोली—"अम

टो डूसरा बाट के वास्टे आप के पास आया ठा।······अम बूल गया, अम क्या बोलटा?"

"आप भूल गयीं, क्योंकि आप वास्तव में चाहती कुछ और हैं।"—रानी ने समवेदना के स्वर में समझाया, "बहिन, आप हमारी बात मानिये। आप आन्द्रे भाई के पीछे न पड़िये। वह बहुत बड़ा, पर्वत शिखर की तरह ऊंचा और दृढ़ आदमी है। उस से सिर मारने से कोई लाभ नहीं होगा। आप छिन्न-भिन्न हो जायंगी और उसे पता भी नहीं चलेगा। आप अपने भगवान् की ही चिंता कीजिये।"

हिसा का चेहरा और होंठ भी काग़ज़ की तरह सफ़ेद हो गये। बोली—"रानी साइबा! आप क्या बोलटा हय? अम ऐसा कुच नई जानटा। अमारा डिल पविट्र हय। आप का मन में पाप का बाट हय। अमारा मन आइसा नई हय।"

"मन की बात से लज्जित होने का कोई कारण नहीं है।"—रानी ने समझाया, "आप बहुत भली हैं। आप के मन में कोई बुरी बात नहीं है, परन्तु आप का जीवन सूना है। आप अपना सूनापन मिटाना चाहती हैं, पर यह हो नहीं सकेगा। आप का भाग्य ही ऐसा है। आप के देश के लोग बहुत विचित्र और निर्दय हैं। आप के माता-पिता ने भी आप पर दया नहीं की। यदि हो सकता तो हम आप का विवाह करा देते, परन्तु यहां आप की जाति का कोई आदमी नहीं है।"

हिसा के हृदय की धड़कन बढ़ गयी। वह होंठ खोल कर सांस लेने लगी। आंसू बह गये। वह क्रोध में चिल्ला उठी—"आप बहुट खराब, बेसरम औरट हय!······अम टुमारा-जैसा नई। टुम सब चीनी लोग एक जैसा। सब खराब ब्सट सोचटा।"

रानी कुछ देर विस्मय से हिसा की ओर देख कर फिर समवेदना के स्वर में बोलीं—"हम मनुष्य के जीवन की बात कहती हैं। स्त्री-पुरुषों के जीवन की बात कह रही हैं। अगर हम से हो सकता तो ज़रूर आप की मदद करती।"

"अम आप का मडड नईं मांगटा।"—सिसकियां भरते हुए हिसा बोली, 'अम बगवान का सेवा करना मांगटा।"

"अच्छा तो करो भगवान् की सेवा।"—रानी बोलीं।

रानी हिसा का हाथ थाम कर कुर्सी से उठ खड़ी हुईं। आंगन के दरवाज़े तक हिसा को पहुंचा कर उन्हों ने विदा दी। निश्चय किया, अब इस स्त्री से फिर नहीं मिलेंगे। लौट कर बैठीं तो मन हिसा के प्रति करुणा से भरा था।

इंग उतावली से आंगन में आयी और पुकार कर समाचार दिया—'बड़े कुंवर साहब की बहू के दर्द उठ रही हैं।"

रानी ने चौंक कर उस की ओर देखा और बोलीं—"मेंग की मां को संदेश भेज कर बुलवा लो। तब तक हम भी आते हैं।"

"रानी शयनागार में चली गयीं। हाथ धोये, रेशम का कोट उतार कर नीला सूती कोट पहन लिया और हाथों और चेहरे पर सुगन्ध लगा कर लिआंगमो के आंगन की ओर चली गयीं।

समाचार पा कर रानी को उत्साह ही हुआ था। प्रसव के समाचार से परिवार में सदा उत्साह ही होता है। चिन्ता का कोई कारण भी नहीं था। मेंग जवान और स्वस्थ थी। प्रसव के अवसर पर स्त्रियों का ही बोलबाला होता है। बड़े बेटे के मकान के बड़े कमरे में नौकरानियां और दूसरी संबंधी स्त्रियां भरी हुई थीं। बच्चे भी बहुत प्रसन्न थे। बहुत उत्साह से पानी और चाय इधर-उधर पहुंचा रहे थे। परिवार भरा-पूरा था। एक और सन्तान के आगमन से और भी उत्साह था। सब से बड़े बेटे के यहां सन्तान हुई थी, इसलिए और भी अधिक समारोह था।

रानी ने लिआंगमो के आंगन में क़दम रखा तो एक बुढ़िया सम्बन्धिन कह रही थी—"बेटा ही होना चाहिए। विधाता न करे, बड़े पोते को कुछ हो भी जाय तो यह दूसरा तो होगा। घर में जितने लड़के हों, उतना ही भला।"

रानी कमरे में आयीं तो सब स्त्रियां उन के आदर के लिये उठ खड़ी

हुईं। मुख्य आसन उनके लिये खाली था। वे आ कर उस पर बैठ गयीं। कमरे में कोलाहल शांत हो गया। रुलन दूसरे बेटे की बहू थी। वह उठ कर सास के लिए चाय बनाने लगी।

"कहो रुलन, क्या हाल है?"—रानी ने पूछा और बहू को एक निगाह से जाँच लिया।

रुलन कुछ दुबली सी दिखाई दे रही थी। बहू पर निगाह पड़ते ही रानी को उस के रात में रोने की बात याद आ जाती थी। रुलन से कुछ हट कर लीनी बैठी हुई थी। लीनी दांतों से खोंट-खोंट कर तरबूज़ के बीज खा रही थी और बीजों के छिलके फ़र्श पर ही थूकती जा रही थी। रानी ने देखा, परन्तु टोंका नहीं। कुछ ही देर में लड़की की मां आने वाली थी। रानी की निगाह लीनी पर पड़ी तो वह उठ कर खड़ी हो गयी।

"कहो लीनी, कैसे चल रहा है?"—रानी ने पूछा।

शयनागार के दरवाज़े से एक दायी ने कमरे में झांका। उसे सम्बोधन कर रानी ने पूछ लिया—"क्यों, क्या हाल-चाल है?"

"हुज़ूर, सब ठीक है।" दाई खूब हट्टी-कट्टी और क़द्दावर थी। वह नित्य ही प्रसव के कार्य में प्रसन्नतापूर्वक सहयोग देती थी। प्रसन्न रहना उस का स्वभाव बन गया था। बड़े घराने में प्रसव के अवसर पर वह और भी उत्साहित थी, क्योंकि अधिक नेग और इनाम की आशा थी; पुत्र होने पर और भी अधिक।

दाई ने प्रसन्नता से चमकती आंखों और किलकते स्वर से घोषणा की—"लड़का होगा सरकार।"

तभी साथ के कमरे से मेंग की चीखें और कराहटें सुनाई दीं। दाई तुरन्त उस ओर भाग गयी। प्राय: आधे घंटे में कांग सेठानी अपने भारी, फूले हुए शिथिल शरीर को घसीटती हुई आ पहुंचीं। अवसर और आवश्यकता का विचार कर वे ढीलेढाले ही कपड़े पहने हुए थीं। उत्सुकता और प्रसूता के प्रति समवेदना से कमरे में फिर सन्नाटा छा गया।

"आप सब बहिनें यहां हैं ही!"—सेठानी अवसर के अनुकूल बोलीं.

"मेरी बेटी को आप ही का भरोसा है।" फिर उन्हों ने रानी को सम्बोधन किया--"बड़ी दीदी, क्या हाल है लड़की का?"

"बहिन, राह देख रही थी कि तुम आ जाओ।"--रानी ने उत्तर दिया, "आओ भीतर चलें।"

रानी सेठानी को ले कर भीतर गयीं। मेंग एक छोटी खटिया पर लेटी थी। शरीर से पसीने की धारायें छूट रही थीं। उस के लम्बे केश पसीने से तर थे। दोनों महिलाओं ने खाट के दायें-बायें जा कर उसके हाथ थाम लिये।

"अम्मा!"—मेंग कराह कर बोली, "अम्मा, इस बार तो नहीं सहा जाता।"

"नहीं, नहीं, कोई बात नहीं।"--सेठानी ने आश्वासन दिया, "इस बार तो जल्दी हो जायगा, तकलीफ़ नहीं होगी।"

"चुप, बोलो नहीं।"--रानी ने मां और बेटी को सम्बोधन किया, "अब सम्हालने का समय है।"

मेंग एक हाथ में रानी का छोटा शिथिल हाथ थामे हुए थी और दूसरे हाथ में सेठानी का गुलगुला गरम-गरम हाथ। इच्छा हो रही थी कि अपना सिर मां के सीने पर रख कर रो दे। ऐसा कर नहीं सकी क्योंकि यह सास के प्रति अविनय होता। कमरा रक्त की गंध से भर गया था। दाई तत्परता से प्रसूता को सम्भाल रही थी। वह सहसा पुकार उठी--

"आ गया, आ गया।······सिर आ रहा है······।"

मेंग का शरीर बल खा गया और मुख से चीखें निकल गयीं। मां और सास के हाथों को उस ने बहुत जोर से खींचा। दोनों महिलाएं गंभीर बनी रहीं। मेंग ने मां के हाथ में थमे अपने हाथ में दांत गड़ा दिये। सेठानी ने उस का हाथ खींच कर अपने सीने पर दबा लिया।

"क्या करती है? पागल है?"—सेठानी ने बेटी को स्नेह से धमकाया।

मेंग और भी जोर से तड़प गयी। उस का शरीर कमान की तरह ऐंठ गया। बहुत जोर की चीख़ मुंह से निकल गई। सेठानी बेटी का हाथ

छोड़ आगे बढ़ गयीं। दाई को एक ओर धकेल कर उन्हों ने नवजात शिशु को दोनों हाथों में ले लिया।

"लड़का!"—उल्लास से सेठानी ने बच्चे की ओर देख कर पुकारा। बच्चे ने पहला श्वास खींचा और पहले ही श्वास के साथ रो भी पड़ा।

रानी शिशु के छोटे-से झुरियां पड़े मुख की ओर देख मुस्करा कर बोलीं—"क्यों रे, बाहर आ गया इसलिए नाराज़ है?" फिर उन्हों ने मेंग को सम्बोधन किया—"देख तो कैसा बिगड़ रहा है यह!" मेंग उत्तर न दे सकी। उस की पीड़ा समाप्त हो गयी थी। वह आंखें मूंदे शिथिल पड़ी रही, जैसे वर्षा से धरती पर झड़ गया फूल हो।

× × ×

उस सन्ध्या रानी और सेठानी पास-पास बैठी बहुत देर तक बातें करती रहीं। दोनों ही सन्तुष्ट थीं। बच्चा स्वस्थ था और मां शांति से सो रही थी। रानी का ध्यान बार-बार सेठानी की इस उम्र में बढ़ी हुई कोख की ओर चला जाता, परन्तु सहेली को झेंप से बचाये रखने के लिए उन्हों ने उस की चर्चा नहीं की। दोनों छोटी-मोटी पारिवारिक समस्याओं और जवानी की स्मृतियों की बातें कर रही थीं।

आन्द्रे भाई ने आंगन के दरवाज़े में क़दम रखा। वह फेंगमो को पढ़ाने आया था।

"पादरी है?"—सेठानी ने पूछा।

"हां, फेंगमो को पढ़ाने आता है।"—रानी ने उत्तर दिया। पिछली रात रानी का मन और कल्पना उन के शरीर को छोड़ कर नक्षत्र-लोक का विचरण करने चले गये थे, परन्तु अब वे परिवार में रमी हुई थी। एक और शिशु के भरण-पोषण और विकास के उत्तरदायित्व ने उन्हें परिवार से और भी बांध दिया था।

"बहिन, मैं तो न इन फिरंगी पादरियों और पादरिनों को समझती हूँ, न इन की भाषा को।"—सेठानी बोलीं।

"हाँ, ज़रूरत भी क्या है!"—रानी मुस्करा दीं।

सेठानी अपनी बढ़ी हुई कोख पर हाथ फेर कर हंसते हुए बोलीं--"अपने लिये तो यही ठीक है।……अच्छा है, एक और हो जायगा।"

रानी सेठानी के चेहरे की ओर देखती रहीं। चेहरा ढल चुका था, परन्तु उस पर एक अद्‌भुत गहरे संतोष का भाव था, जैसा पिछली संध्या उन्होंने आन्द्रे भाई के चेहरे पर देखा था। सेठानी से उन के स्नेह का केवल एक ही नाता था कि दोनों स्त्रियां थीं। सेठानी पढ़ी-लिखी नहीं थीं न इस विषय में उन्हों ने कभी सोचा ही था। उन्हें मतलब था केवल संतान प्रसव करते जाने से।

रानी आत्मीयता से मुस्करा कर बोलीं—"मिशेन, कभी तुम्हारा मन भरेगा? कभी इस झगड़े से छुट्टी लोगी? तुम तो अब पोते पैदा कर रही हो।……कभी छोड़ना नहीं न? नहीं यह काम ?"

"क्या करूँ बहिन!"--सेठानी ने झेंप दिखाते हुए कहा, "मुझे तो इसमें संतोष होता है।"

"सच कहना बहिन, किसी दूसरी तरफ़ कभी ध्यान ही नहीं जाता?"—रानी ने विस्मय से पूछा।

"सच ही कह रही हूँ बहिन।"--सेठानी ने उत्तर दिया, "मुझे तो यही अच्छा लगता है। औरत के बच्चा न हो तो और करे क्या?"

दरवाज़े से आन्द्रे भाई का लंबतड़ंग शरीर फिर दिखाई दिया।

"फेंगमो पढ़ने आया है।"--रानी ने सेठानी को बतलाया।

आन्द्रे भाई दरवाज़े के सामने से निकल गये।

"लीनी ……"--दोनों ही सहेलियों के मुख से एक ही शब्द एक ही साथ निकला और फिर एक-दूसरे की प्रतीक्षायें दोनों ही चुप हो गयीं।

"हां, कहो न।"--सेठानी बोलीं।

"नहीं, तुम्हीं कहो पहले। तुम्हारी लड़की है।"—रानी ने आग्रह किया।

"नहीं, नहीं, तुम्हीं कहो।"—सेठानी ने और भी अधिक आग्रह किया।

"बहुत अच्छा।"--पल भर सोच कर रानी ने स्वीकार किया, "बात

यह है कि फेंगमो और लीनी की निभ नहीं रही। फेंगमो बहुत उदास रहता है। मिशेन, तुमने लड़की को ढंग नहीं सिखाया।"

"फेंगमो?"—सेठानी विरोध के ऊँचे स्वर में बोलीं, "फेंगमो क्या उदास होगा? एलिन, असल में उदास तो है लीनी।"

रानी सेठानी के ढंग से विस्मित हो उन की ओर देखती रह गयीं और बहुत कोमल स्वर में पूछा—"मिशेन, तुम्हें अपनी बात याद है?"

"मुझे सब याद है।"—सेठानी बोलीं, "फेंगमो को तुम ने क्या सिखाया है? लीनी बेचारी रोती रहती है। निभती तो दोनों तरफ़ से है। तुम ने लड़के को क्या सिखाया?"

"हमने?"—रानी ने कड़े स्वर में पूछा।

"हां तुमने।"—सेठानी ने उत्तर दिया, "लिआंगमो तो अपने बाप पर गया है, जैसे मर्द होते हैं। मेंग भी उस से खुश है। फेंगमो तो तुम पर गया है।"

"तुम्हारा मतलब है कि फेंगमो बिलकुल मामूली आदमी नहीं है। उस में कोई खास चीज़ है?"—रानी के स्वर में कुछ तीखापन आ गया।

सेठानी ने हाथ हिला कर उत्तर दिया—"खास बात हुआ करे, उसे पढ़ना है तो पढ़ा करे, उस का समय नहीं कटता तो कुछ और कर ले; लीनी को क्यों परेशान करता है?"

"मिशेन, तुम क्या कह रही हो?"—रानी ने समझाया।

"तुम लीनी को कुछ दिन के लिये हमारे यहां भेज दो।"—सेठानी बोलीं, "तुम और फेंगमो अपनी किताबें पढ़ा करो। जब तुम लोगों की समझ में आ जाय, ज़रूरत हो, तो लड़की को बुलवा लेना।"

रानी कुछ उदास हो गयीं। "मिशेन, क्या हम लोगों में भी झगड़ा होगा?"—उन्हों ने आत्मीयता से पूछा।

सेठानी उत्तेजना में कहती गयी—"मैंने तुम्हारी कोई बात कभी दुलखी नहीं, न कभी कुछ कहा सुना, पर मैं जानती हूँ कि तुम्हारा दिमाग़ ऊँचा रहता है। औरतों के और घर-गृहस्थी के काम ऐसे थोड़े चलते हैं।

ऐसे दिमाग़ से कहीं घर बस सकता है। हम ने तो तुम्हारे साहब से भी यह बात कह दी थी……।"

"हमारी बाबत तुम लोगों में बात हुई थी ?"—रानी ने बहुत धीमे स्वर में पूछा।

"तुम्हारे ही भले के लिये।"—सेठानी ने उत्तर दिया और अपने ढीले-ढाले कपड़े समेट कर उठीं और चल दीं।

रात रानी सेज पर लेट गयीं तो इंग ने बताया—

"हुज़ूर को तो मालूम होगा, सेठानी छोटे कुँवर साहब की बहू को अपने घर लिवा ले गयीं हैं।"

"मालूम है।"—रानी ने उत्तर दिया।

रानी ने आंखें मूंद लीं, परन्तु उन्हें नींद न आयी। उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था कि सेठानी लीनी को इस तरह ले जा सकती थीं, मानो वह उन्हीं की बटी है, इस घर की बहू नहीं। क्रोध के कारण उन्हें रात भर नींद नहीं आयी।

रानी सेठानी को दोष दे कर और उन से रुष्ट होकर ही संतुष्ट नहीं हो गयीं। वे सोचती रहीं कि दोष उन का भी है। उन्हों ने स्थिति को क्यों नहीं सँभाला। यह भी सोचा कि सेठानी से उन का सहेलपना दो परिवारों के सम्बन्ध के रूप में ही था। सेठानी से अपने मन और विचारों की बात करने की क्या ज़रूरत थी ? ऐसी बातें सेठानी समझ ही कैसे सकती थीं ? उन की बेपरवाही में ही लड़के और बहू का झगड़ा बढ़ गया। बहू का मायके लौट जाना मामूली बात नहीं। फेंगमो को जा कर तुरंत लीनी को लौटा लाना चाहिये। उन्हों ने फेंगमो को बुलवा भेजा।

फेंगमो कुछ उदास और चुप-सा था।

"बेटा,"—रानी ने फेंगमो को संबोधन किया, "तुम्हें यह समझाने के लिये बुलाया है कि कल हम से बड़ी भूल हो गयी। हमारा लीनी की मां से झगड़ा हो गया। दोनों ही मूर्ख स्त्रियों की तरह अपने-अपने बच्चे की

तरफ़दारी करने लगीं। सेठानी लीनी को लौटा ले गयी हैं। अपराध बेचारी लीनी का नहीं है। तुम जा कर उसे लिवा लाओ।"

"नहीं अम्माजी, मैं उसे बुलाने नहीं जाऊंगा।"—फेंगमो ने इंकार में सिर हिला कर कहा, "मेरी उस से नहीं निभ सकती। उसे वहां ही रहने दीजिये।"

बेटे की बात सुन कर रानी बोलीं—"यह क्या कह रहे हो बेटा?" सुबह अच्छी-खासी ठंड थी, परन्तु रानी के माथे पर पसीना आ गया। उन्हों ने फेंगमो को समझाया—"यह समझदार आदमियों के ढंग नहीं हैं। समझदार आदमियों में न निभने की बात नहीं हो सकती। शादी-ब्याह तो पारिवारिक सम्बन्ध और कर्तव्य हैं। ऐसे मामले में मनमानी नहीं की जा सकती।"

"अम्माजी, यह सब पुराने विचार हैं।"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "आप के दो और भी पुत्र हैं। परिवार की बातें निबाहने के लिये वे दोनों हैं। मुझे तो आप क्षमा ही कीजिय।"

रानी बेटे की ओर झुक गयीं और बोलीं—"बेटा, मुझे बताओ तुम लोगों में क्या बात हुई? सच-सच बताओ!"

"कुछ भी नहीं अम्माजी।" फेंगमो ने टालना चाहा।

रानी बेटे की ज़िद्द का कारण न समझ कर विस्मय से बोलीं—"कुछ नहीं? क्या मतलब तुम्हारा? मामला क्या है? तुम लोग इतने दिन साथ रहे, सोये और कुछ नहीं हुआ?"

"अम्माजी क्या यही एक बात रह गयी है?"—चिढ़ कर फेंगमो ने उत्तर दिया, "स्त्री-पुरुष में और कोई बात नहीं हो सकती?"

"परन्तु वही तो पहली और बड़ी बात है।"—रानी ने आग्रह किया।

"पहली बात तो हो गयी।"—फेंगमो दांतों से होंठ काट कर बोला, "मुझे कुछ और भी चाहिये।"

"तुम्हें और क्या चाहिये?"—रानी ने पूछा।

"कोई समझ-बूझ की बातचीत होनी चाहिये, कुछ आपसी सहयोग होना चाहिये। आदमी का शरीर ही नहीं है, बुद्धि भी तो है।"

"परन्तु तुम्हारी तो यह खाने-खेलने की उम्र है, विचारों में डूब जाने की नहीं।"—रानी बोलीं और उन्हों ने अनुभव किया कि वे अपने पुत्र को समझ नहीं पायी थीं। उन का विचार था कि सब पुरुष केवल नर ही होते हैं। बहुत दिन पहले उन्हों ने एक यूनानी कहानी पढ़ी थी। कहानी एक स्त्री की थी। वह स्त्री किसी पर-पुरुष के श्वास की गंध पर मोहित हो कर उस से प्रेम करने लगी थी। स्त्री इस से पूर्व केवल अपने पति के ही समीप गयी थी। उस के पति के श्वास में दुर्गन्ध थी। स्त्री का विचार था कि पुरुषों, पुरुष-मात्र के श्वास में ऐसी ही गंध होती है। रानी वू को मानना पड़ा कि वे भी यूनानी कहानी की स्त्री के समान ही नासमझ थीं। वे समझती थीं कि सभी पुरुष एक ही जैसे होते हैं, परन्तु स्वयं उन्हों ने ही एक दूसरे ढंग के पुरुष को जन्म दिया था, जो केवल 'नर' ही नहीं, बल्कि मनुष्य था। यह समझ आने पर वे बहुत देर तक विस्मय से फेंगमो की ओर देखती रहीं।

फेंगमो मां की इस भावना को समझ नहीं सका। वह मेज़ पर कोहनी टिकाये और हाथ पर ठुड्डी रखे विवश बैठा रहा। आंखें भी मेज़ पर झुकी हुई थीं।

"बेटा, अब हम तुम्हें कुछ न कहेंगी।"—रानी दबे स्वर में बोलीं, "तुम्हारे साथ अन्याय हुआ है।"

फेंगमो ने मां की ओर आंखें उठायीं। उस की आंखें सजल हो गयी थीं।

"बेटा, तुम क्या चाहते हो, हम से कहो।"—रानी ने पूछा, "जो तुम चाहते हो, वही होगा।"

"मैं इस हवेली में नहीं रहना चाहता।"—फेंगमो ने उत्तर दिया।

फेंगमो के उत्तर से रानी का मन कट गया। अपने आप को वश में कर उन्हों ने पूछा—"बेटा, तुम कहां जाना चाहते हो?"

"आन्द्रे भाई कह रहे थे कि विलायत जाना हो तो मेरी मदद कर सकते हैं।"—फेंगमो ने उत्तर दिया।

"आन्द्रे भाई इस हवेली में न आते तो तुम्हें विलायत जाने का ख्याल कैसे आता?"—रानी बोलीं।

"इच्छा तो मेरी पहले भी थी,"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "परन्तु उपाय नहीं जानता था। आन्द्रे भाई ने उपाय बता दिया।"

रानी कुछ कह न सकीं बहुत देर तक चुप बैठी रहीं। फिर यत्न कर एक दीर्घ निश्वास ले कर उन्हों ने कहा—"बहुत अच्छा बेटा, जो तुम्हारी इच्छा, जहां चाहे जाओ!"

नौ

एक मास भी नहीं बीता था, फेंगमो घर छोड़ कर चल दिया। उसी दिन जाड़ों की पहली हलकी-हलकी बर्फ़ पड़ी थी। फेंगमो को विदाई देने के लिये पूरा परिवार हवेली के फाटक पर एकत्र हुआ था। हवेली के फाटक के सामने से सड़क सीधी नदी तक चली गयी थी। परिवार के सब पुरुष और उन के साथ केवल रानी साहिबा फेंगमो के साथ नदी तट तक गये। एक छोटी-सी, पतवार वाली नाव पर सब लोगों ने फेंगमो का सामान रख दिया। इस नाव से इंजन से चलने वाली बड़ी नाव तक जाना था। बड़ी नाव से नदी में चलने वाले छोटे जहाज़ तक। इस छोटे जहाज़ की प्रतीक्षा में समुद्र में बहुत बड़ा जहाज़ खड़ा था। पृथ्वी पर बर्फ़ की श्वेत चादर बिछी थी। आकाश भूरे बादलों से ढंका था। नाव ने नदी का तट छोड़ दिया। मल्लाह ने पतवारें जल में डालीं। पतवारों पर पड़ी बर्फ़ घुल गयी। परिवार के लोग पुकार-पुकार कर फेंगमो को शुभ कामनाओं सहित विदा देने लगे। रानी वू कुछ न बोलीं। वे एक ऊनी चोग़ा पहने मौन खड़ी पुत्र को चले जाते देख रही थीं। उन का हृदय दहल रहा था। अपने आप को सान्त्वना देने के लिये उन्हों ने कहा—"अब वे स्वतंत्र हैं।"

रानी अपने ऊनी चोगे को शरीर पर लपेटे मौन हवेली में लौट आयीं।

फेंगमो चला गया। अब हवेली में आंद्रे भाई के आने की आवश्यकता नहीं थी, परन्तु रानी ने उन से अनुरोध किया कि वे लीनी को पढ़ाते रहें।

"हम चाहते हैं, बेटा विदेश से लौटे तो उस की बहू भी पढ़-लिख कर उस के योग्य हो जाय।"—रानी ने आन्द्रे से अनुरोध किया।

फेंगमो और लीनी के झगड़े का समझौता कुछ दिन पहले हो चुका था। रानी एक दिन स्वयं ही सेठानी के घर गयीं और लीनी को मां के सामने बुला कर स्नेह से बात की। उन्हों ने लड़की को बताया कि फेंगमो दूर देश जा रहा है, तुम घर लौट चलो। लड़के के चले जाने के पहले ही तुम्हारे बाल-बच्चा होने को आशा हो जाय तो अच्छा है। हम परिवार के लिये ही नहीं कह रहे हैं, तुम्हारे लिये भी यही अच्छा है। ऐसा न हो कि तुम्हारी गोद सूनी ही रह जाय······रानी लीनी से बात करते समय ध्यान से लड़की के चेहरे को देखती रहीं और सोच रही थीं—लड़की सुन्दर है, परन्तु ज़िद्दी। प्राय: ही बहुत लाड़-प्यार करने वाली मां की लड़की ज़िद्दी हो जाती है। सेठानी अपने बच्चों की सभी इच्छाएं पूरी करती हैं। बच्चे अपने घर को ही संसार और मां को ही पूरी धरती समझे रहते हैं।

रानी ने फिर समझाया—"जवान स्त्री का पति घर में न हो तो गोद में बच्चा तो होना ही चाहिये।"

सेठानी ने भी रानी का समर्थन किया। रानी से झगड़ आने के बाद सेठानी भी अपने क्रोध के लिये पछता रही थीं। उन्हों ने स्वयं भी लड़की का व्यवहार देख लिया था। विवाह हो जाने के बाद भी लीनी का व्यवहार बहुओं-जैसा नहीं, बल्कि अमीर घर की बिगड़ैल लड़कियों-जैसा ही था। सुबह दिन चढ़े तक सोई रहती। घर के किसी काम को हाथ न लगाती। सेठानी अब स्वयं ही लीनी को समझातीं। उन्हें जान पड़ता कि फेंगमो की शिकायत झूठी नहीं थी। उन्हें फेंगमो के विदेश जाने की तैयारी का

फेंगमो चला गया तो लीनी ने जम्हाई ले कर सोचा नींद आ रही है, चल कर सोयें। जा कर लिहाफ़ ओढ़ कर फिर सो गयी।

दोपहर के समय जब रानी फेंगमो को विदा दे नदी से लौटीं तो उन्हों ने लीनी को जगाया—"उठो बेटी, बहुत सो चुकीं। चलो अब कुछ सीखना शुरू करो।"

"सीखना ?"—विस्मय से लीनी ने पूछा।

"हां, जिठानी सुबह तुम्हें रसोई बनाना और कसीदा काढ़ना सिखाया करेंगी।"—रानी बोलीं, "दोपहर के भोजन से पहले एक घण्टे तक हम तुम्हें प्राचीन साहित्य पढ़ाया करेंगे। दोपहर बाद आन्द्रे भाई अंग्रेज़ी पढ़ायेंगे। संध्या समय तुम देखना कि दाइयां बच्चों को ठीक ढंग से सुला दें। अब तुम्हें बच्चे संभालने भी तो आने चाहियें। अच्छा, उठो!"

लीनी सेज पर लेटी थी, सास की ओर विस्मय से देखते हुए उस ने पूछा—"अभी ?"

"हां, अभी।"—तुरन्त रानी ने हाथ में थमी पतली छड़ी को फ़र्श पर टकोरते हुए उत्तर दिया, "उठो! हाथ-मुँह धो कर और कंघी कर के हमारे यहाँ आ जाओ।" रानी अपने आंगन में लौट गयीं। सोच रही थीं, फेंगमो के लिये यह करना ज़रूरी ही है। यह कर लूं तभी अपनी स्वतंत्रता की बात सोचूँगी।

रानी को लीनी पर भरोसा नहीं था कि समय बर्बाद न कर वास्तव में पढ़ती रहेगी, इसलिये वे देख-रेख के लिये दोपहर बाद स्वयं भी मौजूद रहीं। परिवार की प्रतिष्ठा के विचार से भी यह आवश्यक था। लड़का घर पर नहीं था। एक विदेशी आदमी बहू को पढ़ा रहा था। उस समय उन का साथ रहना उचित था। रानी तो जानती थीं कि आन्द्रे भाई से किसी प्रकार का भय नहीं है, परन्तु दूसरे लोग तो उस गरांडील आदमी को देख कर ऐसी बात नहीं मान सकते थे।

दोपहर बाद प्रति दिन आन्द्रे भाई पुस्तकालय में लीनी को पढ़ाता था। वहीं एक बड़ी कुर्सी पर रानी वृद्धा सास से पाई हुई छड़ी की मूठ पर

"क्या इन बातों से सान्त्वना मिलेगी?"—रानी ने हिंसा से प्रश्न किया, "क्या यह भगवान् की वाणी है? हम तो समझती हैं कि यह मनुष्य को भयभीत करने के लिए शैतान की वाणी है। हमें यह सब न सुनाइये वरना हम आत्म-हत्या कर लेंगे।"

ईसाइयों की इस धर्म-पुस्तक के शब्द रानी को बार-बार याद आते ही रहते थे—मनुष्य का जीवन निस्सार है। जब रानी के एक मृत सन्तान का जन्म हुआ था तो उस का मुख देख कर भी उन्हें ज़ान पड़ा था कि मनुष्य का जीवन निस्सार है, परन्तु अब संसार की अनेक भाषाओं में जीवन से सम्बन्ध रखने वाले एक ही-जैसे शब्दों को सुन कर उन्हें विस्मय हो रहा था।

रानी ने आन्द्रे भाई से पूछा—"क्या भगवान् के लिये भी सभी भाषाओं में शब्द हैं? सभी देशों के लोग भगवान् को पुकारते हैं?"

"हां, सभी देशों में।"—आन्द्रे भाई ने गंभीर स्वर में उत्तर दिया और बीस भाषाओं में भगवान् के नाम बोलते चले गये। आन्द्रे के मुख से निकले ये शब्द पुस्तकालय में नगाड़ों पर पड़ती हुई चोटों की तरह गूंज रहे थे। "संसार भर के सभी देशों में लोग विधाता को पुकारते हैं।"—रानी सोचती रहीं। उन्हें जान पड़ रहा था कि आन्द्रे भाई द्वारा उच्चारण किये गये वे शब्द कमरे में लगातार गूंज ही रहे थे।

ऐसी बातचीत के बाद प्रायः रानी को रात में भी नींद न आती। डेरा आ कर कपड़े बदलवाती तब भी वे चुप रहतीं। मसहरी में लेट जाने पर भी आन्द्रे की बातें याद आया करतीं। जान पड़ता था, आन्द्रे ज्ञान का गहन गंभीर कूप है। मन में अनेक प्रश्न उठते रहते। ख्याल आता कि शायद सुबह तक सब बातें याद न रहें, तो वे सेज से उठ मोमबत्ती जला कर प्रश्नों को काग़ज़ पर लिख लेतीं। अगले दिन दोपहर में आन्द्रे से प्रश्न पूछतीं और ध्यान से उत्तर सुनतीं।

आन्द्रे के उत्तर बहुत संक्षिप्त होते थे। उसे घुमा-फिरा कर लम्बी-चौड़ी बात कहने की आवश्यकता न होती थी। सूत्र रूप में वह अभिप्राय

को स्पष्ट कर देता, जैसे फल को डाल से तोड़, छील कर और बीज निकालकर सामने रख दिया जाय।

आन्द्रे की संगति से रानी की ग्राह्य शक्ति और भी तीव्र हो गयी थी। तुरन्त तत्त्व तक पहुँच जातीं। आन्द्रे बोलते और रानी समझतीं, परन्तु लीनी आंखें और होंठ फैलाये सुन कर भी कुछ न समझती। यह सब उस के अविकसित मस्तिष्क के वश का नहीं था।

आन्द्रे भाई को भी रानी के मानसिक सामर्थ्य पर विस्मय होता। एक दिन उस ने कहा—"आप ने सम्पूर्ण जीवन इस हवेली की चारदीवारी में ही बिताया है, परन्तु आप उन सभी सूक्ष्म बातों को समझ लेती हैं जिन्हें कुछ विद्वान् ही कठिनता से समझ पाते हैं।"

रानी ने उत्तर दिया—"आप ने एक दिन जादू के शीशे की बात कही थी, जिस से सूक्ष्म चीज़ें भी बहुत बड़ी दिखाई देती हैं, जिस से धूल का एक कण पूरे खेत के बराबर दिखाई देता है। यदि धूल के कण को पहचान लिया जाय तो खेत को पहचाना जा सकता है। यह हवेली भी संसार की धूल का एक कण है। इस से संसार को पहचाना जा सकता है।"

लीनी की आंखें विरोध की उत्तेजना से फैल गयीं। बोल उठी—"अम्माजी, आप क्या कह रही हैं? क्या हम धूल हैं?"

"नहीं बेटी, मेरा मतलब है कि तुम सब लोग जीवन का रूप हो।" रानी की आंखें पादरी की आंखों से मिल गयीं। उन्हों ने अनुरोध किया—"आप इस बच्ची को समझाइये।"

"अम्माजी, मैं बच्ची नहीं हूँ।"—लीनी ने विरोध किया।

रानी मुस्करा कर चुप रह गयीं। आन्द्रे भाई लौटने के लिये अपनी पुस्तकें समेट रहा था तो वे विनय से बोलीं—"हम एक निवेदन कर सकती हैं? क्या आप हमें भी अपना शिष्य स्वीकार करेंगे?"

"यह मेरा ही सौभाग्य है।"—पादरी ने अपने साधारण गंभीर स्वर में उत्तर दिया।

"लीनी को पढ़ाने के बाद हमें भी एक घंटे तक पढ़ा सकेंगे ?"—रानी ने अनुरोध किया। आन्द्रे ने सिर झुका कर हामी भर ली।

उस के बाद से प्रति संध्या रानी एक घंटे तक आन्द्रे भाई से अपने प्रश्नों का समाधान करती रहतीं। उन की आयु काफ़ी थी, परन्तु औचित्य के विचार से उन्हों ने इंग को आदेश दे दिया था कि वह सामने ही कुछ दूर बैठी रहा करे।

× × ×

रानी नाश्ते के बाद पढ़ने बैठ गयी थीं। "हुजूर, चाहे जो सज़ा दें, मैं कहे बिना नहीं रह सकती; चाहे आप मुझे मार कर निकाल ही दें।"—इंग आ कर बोली।

"जो तेरे मुंह में आया तू सदा ही बकती रही है। आज ही मार कर निकाल देने की कौन बात हो जायगी ?"—पुस्तक में उंगली रख कर मूंदते हुए इंग की ओर देख कर रानी ने उत्तर दिया।

"हुजूर, आप नाराज़ तो होंगी, लेकिन मैं सच तो कहूंगी ही।"—इंग बोली, "आप तो फिरंगी साधू के साथ आकाश-पाताल की बातों में डूबी रहती हैं, यहां घर तीन-तेरह हुआ जा रहा है। बड़े कुंवर साहब के छोटे बेटे की धाय का दूध सूख गया। बच्चा दुबलाता जा रहा है। दूसरे कुंवर साहब के आंगन में रोज़ लड़ाई हो रही है। उन की नौकरानी बता रही थी कि बहू के अभी तक कोई उम्मीद नहीं है। हुजूर, आप को घर का कुछ ख्याल ही नहीं, किताबों में ही उलझी रहती हैं। सियानों ने झूठ थोड़े ही कहा है······तभी तो कहते हैं कि औरत का पढ़ना-लिखना ठीक नहीं होता।"

इंग अपनी बात एक सांस में कह गयी। रानी के होंठों पर मुस्कान आ गयी, परन्तु पुस्तक में से उन की उंगली निकल कर पुस्तक भी बंद हो गयी। "ठीक ही कहती है तू।"—गहरी सांस ले कर रानी बोलीं और पुस्तक मेज़ पर रख दी।

रानी शयनागार में गयीं। सुबह अच्छी-खासी सर्दी थी। एक ऊनी चोग़ा पहन कर वह बाहर जाने को तैयार हो गईं। आंगन में आर्किड पाले के कारण सूख कर लटक गये थे, परन्तु दीवार के साथ लगी हिन्दुस्तानी बेरी की झाड़ी में दानों-जैसे लाल फलों के गुच्छे धूप में चमक रहे थे। एक काली चिड़िया लाल दाने चुगने के लिये आ बैठी थी। इंग ने आगे बढ़ कर चिड़िया को डरा कर उड़ा दिया और मालकिन के पीछे हो गयी। मालकिन ने उस की बात चुपचाप सुन ली थी, परन्तु अब वह स्वयं ही इतना बक जाने के कारण ख़ुशामद में विनय से बात करती जा रही थी। सास के ख़ाली आंगन में से जाते समय रानी ने सोचा—यह जगह ख़ाली ही पड़ी है। लिआंगमो को यहां बुलवा लें तो बच्चों की देख-भाल में सुविधा रहेगी। त्सेमो को बड़े भाई का आंगन दे दिया जाय। जगह कुछ बड़ी और सुविधा की हो जाने से संभव है उन लोगों के मन पर अच्छा प्रभाव पड़े।

सुहावनी धूप रानी को प्यारी लग रही थी। मन में उत्साह था। रानी जानती थीं कि चारदीवारी से घिरे इस स्थान में सैकड़ों ही समस्याएँ थीं। इन समस्याओं को सुलझा लेना कठिन नहीं था, क्योंकि अब वे स्वयं समस्याओं से पीड़ित नहीं थीं, नियोजकमात्र थीं। साहब से शारीरिक सम्बन्ध-विच्छेद कर लेने पर वे इस प्रकार के बंधनों से छूट गयी थीं और उन की आत्मा भी मुक्त हो गयी थी। लिआंगमो के आंगन में प्रवेश करते समय रानी का भाव अपना संकट दूर करने के लिये चिन्ता का नहीं, बल्कि संकट से परित्राण के लिये वरदान देने के लिये आने का था, मानो वे कोई देवी हों।

परन्तु बच्चे के रोने की पुकार उन के हृदय में बर्छी की तरह गड़ गयी। वे शीघ्र गति से उस ओर खिचती चली गयीं। मेंग के समीप ही नयी जवान धाय भूखे बच्चे को गोद में लिये बैठी थी। धाय के दूध सूख कर लटके हुए थे। उस के पीले-पीले गालों पर बहते आंसुओं की धाराएँ चमक रही थीं। बच्चे ने दूध के लिये मुंह मारा और फिर निराश हो कर क्रोध से चीख उठा।

"क्यों, क्या बात है?......तेरा दूध क्यों सूख गया?"—रानी ने धाय से पूछा। धाय बच्चे को मेंग की गोद में दे कर दोनों हाथों से मुंह ढंक कर रो उठी।

"तुम ने इसे केंकड़े का शोरवा और अण्डे नहीं खिलाये?"—रानी मेंग की ओर देख कर बोलीं।

"अम्माजी सब कुछ कर के देख लिया।"—मेंग ने उत्तर दिया, 'पहले तो यही समझा था कि इसे जुकाम हो गया है या इस का पेट ठीक नहीं है। बच्चे को चावल का रस पिला दिया कि सुबह-शाम ठीक हो जायगी। अब दो दिन हो गये हैं। दूध उतरता ही नहीं। बच्चे का भूख के मारे बुरा हाल है। हड्डियां निकल आयी हैं।"

बड़े मुन्ने की धाय लेना आगे आ कर बोल पड़ी—"हुजूर, मैं तो तैयार हूँ दूध पिलाने को, परन्तु मेरा दूध इन के पेट में ठहरता ही नहीं। बहुत गाढ़ा हो चुका है। मेरा दूध तो कभी सूखा नहीं। मैं क्या बता सकती हूँ!"

"तू अपना काम देख।"—रानी लेना की ओर देख कर बोलीं। उन्हे उस का दुधारू होने का अहंकार अच्छा नहीं लगा। जानती थीं कि औरत लालची है, सदा इनाम का अवसर ढूंढ़ती रहती है।

जवान धाय मुंह छिपाये रो रही थी। रानी उस के सामने चौकी पर बैठ गयीं। अपनी बेंत की मूठिया पर दोनों हाथ रख कर उन्हों ने धाय को फिर संबोधन किया—

"तू बहुत उदास रहती है, इसीलिये तेरा दूध सूख गया है।"—रानी बोलीं और पूछा, "उदास क्यों रहती है?"

धाय चुप रही। उस ने आस्तीनों से अपने आंसू पोंछ डाले। आंसू फिर आ गये, रुक ही नहीं पा रहे थे।

"यह क्या अचरज है कि आंसू बहाने के लिये तो तेरे बदन में इतना पानी है और मेरे बच्चे के दूध के लिये सब सूख जाता है।"—मेंग चिढ़ कर बोली।

"चुप रहो।"—रानी ने टोक दिया, "यह भी आदमी है, उस से आदमी की तरह बात करो।"

रानी की बात से जवान धाय का साहस बंधा। आंसू पोंछ कर सिसकियां लेते हुए वह बोली—"इतने दिन हो गये, मैंने अपने बच्चे को देखा भी नहीं। उस का जाने क्या हाल है! ······चार दिन में लड़की महीने भर की हो जायगी। जाने उस का क्या हाल होगा!"

मेंग की आंखें क्रोध से फैल गयीं। लाल-लाल होंठों को दांतों से चबा कर उस ने डांटा—"बेईमान, अपने बच्चे को याद कर-कर के अपना दूध सुखा रही है?"

"चुप रहो।"—रानी ने फिर टोका और बोलीं, "इस की बच्ची को मंगवा लो।"

"क्या मेरे बच्चे के साथ दूध पिलाने के लिये?"—मेंग ने गुस्से में पूछा।

"तुम्हारे बच्चे को दूध पिलाने के लिये।"

धाय ने रानी के सामने फ़र्श पर सिर रख दिया और पुकार उठी—"हुज़ूर, बड़ी दयावान हैं। हुज़ूर तो बेरहम नहीं हैं। लोग कह रहे थे कि सरकार बड़ी ज़ालिम हैं······।"

"कौन कहता है हम ज़ालिम हैं।"—रानी ने खिन्नता से पूछा।

"हुज़ूर, मुख्तार कह रहे थे कि कोई सुनवाई नहीं हो सकती। कह रहे थे कि सरकार का हुकुम टाल नहीं सकती। हुज़ूर, मैंने तो माफ़ी मांगी थी कि मुझे न पकड़ा जाय। हुज़ूर, की रियाया हूँ। मेरा आदमी है, मेरा बच्चा है। है तो लड़की ही हुज़ूर, पर मेरा पहला बच्चा है। हुज़ूर, मेरे दूध तो फटे जा रहे थे। मुख्तार ने हुकुम दिया कि जाना होगा, नहीं तो ज़मीन छीन ली जायगी।"

"यह सब हमारा हुक्म नहीं था।"—रानी बोलीं, "हम ने तो सिर्फ़ धाय भिजवाने के लिये कहा था।"

"हुजूर, गांवों में रियाया हुजूर के नाम से कांपती है।"--धाय ने बताया, "हुजूर के नाम से मुख्तार जो चाहें करते हैं।"

धाय की बात सुन कर रानी घबरा गयीं, परन्तु घबराहट प्रकट नहीं की। नौकरों-चाकरों के सामने घबराहट दिखाने से अनुशासन नहीं रह सकता। धाय से आंखें बचा कर रानी धीरे से बोलीं--"आज ही तेरे बच्चे को बुलवाने के लिये कहला देंगे, पर तू उसे ज़रा अलग से दूसरे कमरे में ही रखना।"

धाय ने फिर रानी के सामने सिर फ़र्श पर रख दिया और आतुर स्वर में बोली--"हुजूर ने जान बख्श दी······। हुजूर का जस हो, जुग-जुग जियें।"

मेंग का छोटा मुन्ना फिर भूख से चीख उठा। धाय ने झपट कर उसे उठा लिया और दूध उस के मुंह में दे दिया। बच्चा दूध मुँह में ले फिर घूंट भरने लगा और पीता रहा। दूध आने लगा था।

"बेईमान, तूने जान-बूझ कर-दूध रोका हुआ था।"—मेंग क्रोध में चिल्ला उठी।

धाय कातरता से मेंग की ओर देख कर बोली—"नहीं मालकिन, मुझे नहीं मालूम दूध क्यों नहीं आ रहा था। अब आ गया। हुजूर ने हुकुम दिया मेरी लड़की आ जायगी तो मन पर से बोझ उतर गया। दूध आ गया।"

मेंग का गुस्सा नहीं उतरा। वह फिर बोली—"तुम कमीने लोग ऐसे ही चोर होते हो।"

रानी उठ खड़ी हुई और मेंग की ओर देख कर बोलीं—"बेटी, उस से बिगड़ो नहीं। बेचारी तुम्हारे बेटे का पेट भर रही है।" और फिर उन्हों ने धाय को समझाया--"तुम्हारी बच्चो आ जायगी, लेकिन याद रखना, तुम्हारा ईमान हमारे बच्चे को पालना है।"

धाय ने गिड़गिड़ा कर विश्वास दिलाया—"हुजूर, कभी नहीं भूल सकती। पहले आप ही के बच्चे को पिलाऊंगी।"

"चुप रहो।"—रानी ने टोक दिया, "यह भी आदमी है, उस से आदमी की तरह बात करो।"

रानी की बात से जवान धाय का साहस बंधा। आंसू पोंछ कर सिसकियां लेते हुए वह बोली—"इतने दिन हो गये, मैंने अपने बच्चे को देखा भी नहीं। उस का जाने क्या हाल है! ······चार दिन में लड़की महीने भर की हो जायगी। जाने उस का क्या हाल होगा!"

मेंग की आंखें क्रोध से फैल गयीं। लाल-लाल होंठों को दांतों से चबा कर उस ने डांटा—"बेईमान, अपने बच्चे को याद कर-कर के अपना दूध सुखा रही है?"

"चुप रहो।"—रानी ने फिर टोका और बोलीं, "इस की बच्ची को मंगवा लो।"

"क्या मेरे बच्चे के साथ दूध पिलाने के लिये?"—मेंग ने गुस्से में पूछा।

"तुम्हारे बच्चे को दूध पिलाने के लिये।"

धाय ने रानी के सामने फ़र्श पर सिर रख दिया और पुकार उठी—"हुज़ूर, बड़ी दयावान हैं। हुज़ूर तो बेरहम नहीं हैं। लोग कह रहे थे कि सरकार बड़ी ज़ालिम हैं······।"

"कौन कहता है हम ज़ालिम हैं।"—रानी ने खिन्नता से पूछा।

"हुज़ूर, मुख़्तार कह रहे थे कि कोई सुनवाई नहीं हो सकती। कह रहे थे कि सरकार का हुकुम टाल नहीं सकती। हुज़ूर, मैंने तो माफ़ी मांगी थी कि मुझे न पकड़ा जाय। हुज़ूर, की रियाया हूँ। मेरा आदमी है, मेरा बच्चा है। है तो लड़की ही हुज़ूर, पर मेरा पहला बच्चा है। हुज़ूर, मेरे दूध तो फटे जा रहे थे। मुख़्तार ने हुकुम दिया कि जाना होगा, नहीं तो ज़मीन छीन ली जायगी।"

"यह सब हमारा हुक्म नहीं था।"—रानी बोलीं, "हम ने तो सिर्फ़ धाय भिजवाने के लिये कहा था।"

"हुज़ूर, गांवों में रियाया हुज़ूर के नाम से कांपती है।"--धाय ने बताया, "हुज़ूर के नाम से मुख्तार जो चाहें करते हैं।"

धाय की बात सुन कर रानी घबरा गयीं, परन्तु घबराहट प्रकट नहीं की। नौकरों-चाकरों के सामने घबराहट दिखाने से अनुशासन नहीं रह सकता। धाय से आंखें बचा कर रानी धीरे से बोलीं--"आज ही तेरे बच्चे को बुलवाने के लिये कहला देंगे, पर तू उसे ज़रा अलग से दूसरे कमरे में ही रखना।"

धाय ने फिर रानी के सामने सिर फ़र्श पर रख दिया और आतुर स्वर में बोली--"हुज़ूर ने जान बख्श दी......। हुज़ूर का जस हो, जुग-जुग जियें।"

मेंग का छोटा मुन्ना फिर भूख से चीख़ उठा। धाय ने झपट कर उसे उठा लिया और दूध उस के मुंह में दे दिया। बच्चा दूध मुँह में ले फिर घूंट भरने लगा और पीता रहा। दूध आने लगा था।

"बेईमान, तूने जान-बूझ कर-दूध रोका हुआ था।"—मेंग क्रोध में चिल्ला उठी।

धाय कातरता से मेंग की ओर देख कर बोली—"नहीं मालकिन, मुझे नहीं मालूम दूध क्यों नहीं आ रहा था। अब आ गया। हुज़ूर ने हुकुम दिया मेरी लड़की आ जायगी तो मन पर से बोझ उतर गया। दूध आ गया।"

मेंग का गुस्सा नहीं उतरा। वह फिर बोली —"तुम कमीने लोग ऐसे ही चोर होते हो।"

रानी उठ खड़ी हुईं और मेंग की ओर देख कर बोलीं—"बेटी, उस से बिगड़ो नहीं। बेचारी तुम्हारे बेटे का पेट भर रही है।" और फिर उन्हों ने धाय को समझाया--"तुम्हारी बच्ची आ जायगी, लेकिन याद रखना, तुम्हारा ईमान हमारे बच्चे को पालना है।"

धाय ने गिड़गिड़ा कर विश्वास दिलाया—"हुज़ूर, कभी नहीं भूल सकती। पहले आप ही के बच्चे को पिलाऊंगी।"

रानी के क़दम ठिठक गये। उन्हों ने एक नज़र धाय की ओर देखा। उस की दीनता और कातरता के नीचे विरोध भी दबा हुआ था। उस ओर से आंख हटा ली। वे अपने परिवार की चिन्ताओं से परे दूसरे झगड़ों में नहीं पड़ती थीं। मेंग की ओर देख कर बोलीं—

"तुम लोग अम्माजी के खाली आंगन में आ जाओ। बच्चे समीप रहेंगे तो हमें देख-भाल में सुविधा रहेगी।"

मेंग चुप रही। संभवतः उसे वह बात अच्छी नहीं लगी थी। "हम नौकरों से कह देंगे, तुम्हारा सामान उधर पहुंचा दें।"—रानी ने अपना निश्चय प्रकट कर दिया। मेंग के उत्तर की प्रतीक्षा न कर वे त्सेमो के आंगन की ओर चल दीं।

रानी को आशा थी कि त्सेमो इस समय गल्ले की बिक्री की निगरानी करने मंडी में गया होगा। रानी आंगन में आयीं तो वह एक ओर खड़ा प्याले में जल लिये कुल्ला कर रहा था, मानो अभी नाश्ता खा कर उठा हो। मां को देख उस ने प्याला एक ओर रख दिया और बोला—

"आइये अम्माजी!"

"हम ऐसे ही देख-भाल कर रहे थे।"—रानी ने उत्तर दिया, "सुनो, तुम लोग आज लिआंगमो के आंगन में जगह बदल लो। लिआंगमो अम्मा जी के आंगन में रहेगा। बच्चे समीप रहेंगे तो हम उन का ख्याल कर सकेंगे।"

"रुलन से कह दूंगा।"—त्सेमो ने उत्तर दिया।

रानी को जान पड़ा कि रुलन का नाम लेते समय त्सेमो कुछ झेंप गया। उन्हों ने सीधे ही प्रश्न किया—"सुना है, रुलन रात में रोती रहती है'।'

"कौन कहता है?"—त्सेमो ने पूछा।

"नौकर कह रहे हैं"—रानी बोलीं, "और यह लज्जा की बात है कि नौकर-चाकर घर के झगड़ों की चर्चा करें।"

"मैं तो इस औरत से ब्याह कर पछताया।"—त्सेमो बोला, "अम्मा जी, आप ने ठीक ही मना किया था।"

"क्या तुम लोगों में प्यार नहीं रहा ?"—रानी ने पूछा।

त्सेमो कुछ उत्तर न दे सका। सिर झुका कर आठ-दस क़दम इधर-उधर टहल कर सिर झुकाये बोला—"हम लोगों में तो हर बात में झगड़ा हो जाता है।"

"बहू के बाल-बच्चे की उम्मीद क्यों नहीं ?"—रानी ने पूछा और बोलीं, "कोई बाल-बच्चा न होने पर झगड़ा तो होगा ही।"

"मैं क्या कर सकता हूं !"—त्सेमो ने कंधे झटक कर उत्तर दिया—"उस के नहीं हुआ तो मेरा क्या अपराध है !"

"झगड़ा चलता रहेगा तो बाल-बच्चा कैसे हो सकता है ?"—रानी बोलीं, "मन में क्रोध भरा रहे तो आदमी का ख़ून जल जाता है।" त्सेमो के सुडौल शरीर की ओर देख वे फिर बोलीं—"स्त्री और पुरुष में मेल क्या ! ······दोनों की सब बातें अलग-अलग है। मेल तो बच्चे की चाह के लिये ही होता है।······स्त्री के बच्चा न हो तो भूखी रहती है। उसे हर बात पर चिढ़ आती है। तुम ज़रा संतोष से काम लो। एक बच्चा हो गया तो बहू बिलकुल ठीक हो जायगी।"

"क्यों, मैं उस के लिये कुछ नहीं हूं अम्माजी ?"—त्सेमो ने क्रोध में पूछा।

"प्यार तो तुम्हें वह करती है।"—रानी ने उत्तर दिया, "तभी तो उसे तुम पर क्रोध आता है।······उस के प्रेम का कुछ बदला जो उसे नहीं मिल रहा है, इसलिये वह चिढ़ गयी है। तुम से छिपने, बच पाने के लिये भी तो उसे कुछ चाहिये। कोई उस का अपना सहारा भी तो हो।"

रानी समझ गयीं कि त्सेमो को उन की बात भली नहीं लगी। उन्हों ने फिर समझाया—"सुनो, तुम कुछ दिन के लिये कहीं घूम आओ। जब लौटो तो फिर दूसरे ढंग से बात करना। कड़ाई मत दिखाना। यह न याद दिलाना कि बहू की उम्र तुम से ज़्यादा है और उस ने ही तुम से व्याह करने के लिये कहा था।"

"आप से किस ने कहा कि उस ने मुझ से विवाह करने के लिये कहा

था ?"—त्सेमो ने गंभीर स्वर में पूछा, "यह सब आप से किस ने कहा ?" त्सेमो अपनी गंभीरता बनाये न रख सका, झेंप से मुस्करा दिया।

"हम क्या समझ नहीं सकते।"—रानी बोलीं। चौकी पर बैठ छड़ी की मूंठ पर रखे दोनों हाथों पर ठोढ़ी टिका वे बोलीं—"बहू के मन में तुम्हारा भय बैठ गया है। भय से तो घृणा होती ही है। असल में वह तुम्हें बहुत चाहती है, इसी बात से वह डरती है। तुम कुछ दिन के लिए उसे हमारे पास छोड़ जाओ। स्त्री-पुरुषों का आपस में एक ढंग होना चाहिये। तुम लोगों ने उसे नहीं माना। मेंग को देखो, उस की सब बातें प्रकृति के नियम से चल रही हैं, इसलिए कोई झगड़ा नहीं होता। दो बेटे हो गये हैं, लिआंगमो भी खुश है। वे लोग एक-दूसरे को कोई बहुत अधिक प्यार तो नहीं करते, परन्तु सम्बन्ध ढंग से हो गया और चल रहा है।"

"मेंग का क्या है!"—त्सेमो ने असन्तोष प्रकट किया, "वह कुछ समझती-बूझती नहीं। रुलन कम से कम मूर्खा तो नहीं है।"

"स्त्री के मूर्ख या बुद्धिमान् होने से क्या फ़र्क पड़ता है!"—रानी बहुत शांति से बोलीं, "दोनों की समझ-बूझ में अनुपात होना चाहिए। स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के लायक हों, इसी ख्याल से लिआंगमो का ब्याह हम ने मेंग से किया था। लिआंगमो मेंग से तो ज़्यादा ही समझदार है। मेंग भी ऐसा नहीं है कि लिआंगमो की बात न समझ सके। तुम दोनों ही एक-दूसरे के बराबर हो, इसीलिए झगड़ा होता है।"

"परन्तु आप तो पिताजी से कहीं ज़्यादा समझदार हैं।"—त्सेमो ने गहरी नज़र से मां को ऐसे देखा कि वह पल भर को सहम गयीं।

"हम अनुभव से सीखते गए।"—रानी बोलीं, "इसीलिए तुम्हारे पिता हम से नाराज़ नहीं हो पाये। इसीलिए हम ने तुम्हारे पिता के साथ च्यूमिंग को रख दिया है कि बुढ़ापे में भी वे संतुष्ट रहें।"

"और आप?"—त्सेमो ने निस्संकोच पूछ लिया।

"हम भी सन्तुष्ट हैं।"

रुलन कमरे से बाहर आ गयी। वह भीतर से सब कुछ सुन रही थी।

बाहर आ कर अपनी मुद्रा से यह प्रकट भी कर दिया। रानी भी खूब जानती थीं कि बहू ने सब कुछ सुन लिया है, परन्तु पर्देदारी के ख्याल से बोलीं—"बेटी, हम त्सेमो से कह रहे थे कि तुम लोग चाहो तो लिआंगमो के आंगन में जा कर रहो। वहां जगह अच्छी और बड़ी है। लिआंगमो को हम ने अम्माजी के आंगन में बुला लिया है कि बच्चों का ख्याल रख सकें।"

"अम्माजी आप की कृपा के लिए धन्यवाद।"—रुलन ने कहा, परन्तु उस के स्वर में कृतज्ञता या प्रसन्नता का कोई आभास नहीं था। केश अभी बिखरे ही हुए थे। भूरे और हरे चारखाने का एक चोग़ा पहने थी। उम्र भी कुछ ज़्यादा ही मालूम दे रही थी। रानी बहू की ओर देख कर सोच रही थीं कि त्सेमो के जाने के बाद इसे ढंग से ओढ़ना-पहनना सिखाना होगा। मां का ध्यान रुलन के चोग़े की ओर देख कर त्सेमो को अच्छा नहीं लगा। चिढ़ कर वह बोल उठा—

"यह चोग़ा कितना भद्दा लगता है!"

"तो दूसरा ला दो।"—रुलन ने धृष्टता से त्सेमो की ओर देख कर चुनौती दे दी।

रानी उठ खड़ी हुईं। बहू और बेटे को अपने सामने लड़ने देना उचित नहीं था वरना उन्हें समझाने का बोझ भी उन्हीं पर पड़ता, परन्तु सहसा चला जाते भी न बना। बोलीं—

"त्सेमो कुछ दिन के लिए बाहर जा रहा है। उस ने हम से पूछ लिया है। जाने से पहले मनमुटाव ठीक नहीं। हां, तुम अपना सामान समेट लो। तुम्हें आंगन बदलना है न।"

"त्सेमो जायगा तो मैं भी नहीं रहूंगी।"—रुलन ने एक और चुनौती दी। रानी अपनी छड़ी पर दोनों हाथ टिकाये चुपचाप खड़ी थीं। कुछ सोच कर गम्भीर स्वर में बोलीं—

"नहीं, तुम नहीं जाओगी, तुम हमारे साथ रहोगी। तुम्हें अभी बहुत कुछ सीखना है। हम तुम्हें सिखायेंगे।"

रानी बहू के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना चल दीं। वह सोचती जा रही थीं कि इन बहुओं को सम्भालना कितनी बड़ी मुसीबत है। इस से तो अच्छा होता कि कम उम्र की छोटे-छोटी लड़कियां हवेली में रख लेतीं और उन्हें बचपन से ही उचित ढंग की शिक्षा दी जाती। इन जवान लड़कियों को बदलना कितना मुश्किल है !

अपने आंगन में पहुंच वे थकान से बैठ गयीं और सांझ होने की प्रतीक्षा करने लगीं कि आन्द्रे भाई के आने पर वे शरीर और परिवार के लोगों की चिंताएं छोड़ कर कल्पना और ज्ञान के लोक में विचरण कर सकें।

× × ×

सास के चले जाने के बाद रुलन ने अपने जवान पति की ओर आग्नेय दृष्टि डाल कर धमकाया—"तुम मुझे यहां छोड़ कर चले जाना चाहते हो ?"

"यह तो अम्माजी का ही सुझाव है।"—त्सेमो ने अपने काले केशों में उंगलियां चलाते हुए बेपरवाही से उत्तर दे दिया। त्सेमो के सुडौल सुन्दर पीले हाथों को देख कर रुलन के हृदय में एक खींच-सी अनुभव हो जाती थी। त्सेमो के प्रति ऐसा आकर्षण अनुभव होने से अब उसे अपने ऊपर ही क्रोध आता था।

"मैं भी चली जाऊंगी।"—क्रोध से रुलन बोली।

त्सेमो हंस पड़ा। "मेरे साथ तो नहीं ?······वरना मैं फिर लौट नहीं सकूंगा।"

"तुम अपनी मां से इतना डरते हो ?"—रुलन चीख उठी।

"हां, डरता तो जरूर हूं।" त्सेमो ने हामी भर ली।

रुलन को विवश करने के लिए त्सेमो तुरन्त ही बात समाप्त कर देता था और रुलन अपना क्रोध प्रकट कर सकने का अवसर न पा कर छटपटाती रह जाती थी।

"मैं तो सोचती हूं मेरा बेटा मुझ से डरे, इस से तो अच्छा है कि बेटा ही न हो।"—रुलन बोली।

"तो ठीक है; तुम्हारे बेटा है कहां!"—त्सेमो ने फिर बात समाप्त कर दी। रुलन इस उत्तर से जल-भुन गई। पति के समीप जा दांत पीसते हुए बोली—"अब तुम्हारा मन मुझ से ऊब गया है न?"

"क्यों मेरा सिर खा रही हो। मुझे आराम करने दोगी या नहीं?"—त्सेमो विवश हो कर बोला।

"मैं तुम्हें आराम दूंगी?"—रुलन ने उपालम्भ से पूछा।

"तुम से आराम नहीं मांग रहा हूं। मुझे आराम से रहने दो।"—त्सेमो बोला।

"हां, ताकि तुम मुझे भूल जाओ।"—रुलन ने पूछा।

"ओह, अब समझा। तू इसलिए मुझ से लड़ती रहती है कि मैं क्रोध में तुम्हें याद रखूं।" और वह ज़ोर से हँस पड़ा।

रुलन के शरीर में बिजली-सी कौंध गयी। उस के जीवन का इतना गहन रहस्य, जिसे उस ने स्वयं अपने मन के सामने भी कभी स्वीकार नहीं किया था, त्सेमो ने प्रकट कर दिया। विवाह के बाद से त्सेमो जब उस के प्रति निरपेक्ष होने लगा था, रुलन पति को अपनी ओर खींचे रहने के लिए बावली हो उठी थी। कुछ और न बन पड़ने पर उसे पीड़ा पहुंचा कर ही अपनी ओर खींचे रहना चाहती थी।

त्सेमो को अपनी दयनीय दशा पर हँसते देख रुलन को असह्य अपमान अनुभव हुआ। दांत भींच कर उस ने निश्चय किया, मैं इस प्रेम से भर पायी। यह अपमान असह्य है।

······पति की उपेक्षा के अत्याचार से कहां शरण पाये? रुलन सोच रही थी। अचानक रानी बू की ही ओर ध्यान गया। रुलन उन्मेष में बावली हो रही थी। त्सेमो की परवाह न कर आंगन से निकल गयी और रानी के पुस्तकालय में जा पहुंची। रानी चुपचाप बैठी अपने पाइप से तम्बाखू पी रही थीं।

"अम्माजी, मुझे आप स्वतन्त्र कर दीजिये।"--वेदना भरे स्वर में रुलन बोल उठी।

रानी को जान पड़ा, रुलन की बात उन के अपने मन की ही पुकार है। उन का हृदय डोल उठा, परन्तु सम्भली रहीं। रुलन की ओर देख कर बोलीं--"बेटी, बैठो, तुम घबराओ मत। अपने केश तो ठीक करो। और सुनो, यह चोग़ा तुम न पहना करो, तुम्हारे चेहरे पर तो रंगीन कपड़ा ही खिलता है। हां, अब बताओ कैसी स्वतन्त्रता चाहती हो?"

रुलन रानी की बात की उपेक्षा कर अभी खड़ी ही थी। बोली—"मैं इस घर में नहीं रहूंगी। मैं त्सेमो के साथ नहीं रहूंगी।"

बहू की आंखों से आंखें मिला कर रानी ने उत्तर दिया—"हम ने तुम से कहा कि त्सेमो जा रहा है, तुम उस से तो स्वतंत्र ही रहोगी।"

"नहीं, नहीं, मैं उस से कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहती।"—रुलन ने क्रोध में कहा, "मेरी उस से निभ नहीं सकती। मैं उस की खरीदी हुई दासी नहीं हूं कि मेरे साथ ऐसा व्यवहार करे, मुझे आदमी भी न समझे।"

"तुम्हारे साथ त्सेमो दुर्व्यवहार करता है?"—रानी ने पूछा।

"नहीं, मेरी उस से नहीं निभ सकती।"

रुलन की इस उद्दण्डता के प्रति रानी को सहनुभूति ही हो रही थी।

"कहां जाओगी तुम?"—रानी ने पूछा, "स्त्री का स्थान तो पति का घर ही है। मैं तुम्हें जाने भी दूँ तो कहां जाओगी? पति के बिना स्त्री का स्थान कहां! पति और संतान को पा कर ही स्त्री स्वतंत्र हो सकती है।"

रुलन त्रस्त आंखों से रानी की ओर देख कर बोली--"अम्माजी, आप ही बताइये, क्या करूं? मैं स्वतंत्र होना चाहती हूं।"

रानी ने ममता भरी दृष्टि से रुलन की ओर देख कर उत्तर दिया--"बेटी, मैं क्या करूं! मैं भी तो नहीं जानती।"

"अम्माजी, आप ने कभी किसी से प्यार नहीं किया?"--बहू ने पूछा।

रानी बहू की ओर देख कर चुप रह गयीं। उन्हें अब जान पड़ा कि इस लड़की के साथ त्सेमो ने अन्याय किया। वह इस लड़की को समझ ही नहीं पाया। शायद समझ भी नहीं सकता था। सोचा, यही अच्छा हुआ कि उन्हों ने कभी साहब से प्रेम नहीं किया। यौवन के पहले आवेग में वे कुछ दिन सचमुच पति से प्रेम करने लगी थीं, परन्तु बू साहब रानी की सूक्ष्म प्रकृति के अनुकूल नहीं थे। रुलन की प्रकृति सूक्ष्म नहीं थी।

"तुम्हारे कोई बाल-बच्चा हो जाता,"—रानी बोलीं, "तो तुम बच्चे पर ध्यान दे कर कुछ स्वतंत्र हो जातीं। बच्चा मां को समेट लेता है। बच्चा नहीं है तो तुम अध्ययन शुरू कर दो या चित्र ही बनाओ। तुम्हारी शक्ति के बहाव के लिये कोई मार्ग होना चाहिये। तुम्हारा ध्यान किसी दूसरी ओर भी बहना चाहिये।"

"इच्छा नही होती अम्माजी।"—रुलन ने कहा।

"नहीं होती तो भी करो।"—रानी ने उत्तर दिया, "वरना तुम्हें शांति नहीं मिलेगी। तुम्हारा दिमाग़ ख़राब हो जायगा। त्सेमो तुम से घृणा करने लग जायगा। अभी शुरू ही समझो, इसीलिये हम उसे कुछ दिन के लिये बाहर भेज रहे हैं।"

रुलन ने अपने सूखे होंठों पर जिह्वा फेर कर पूछा—"अम्माजी, सभी पुरुष एक-जैसे होते हैं?"

"और नहीं तो क्या!"—रानी ने उत्तर दिया, "स्त्री जब यह बात समझ जाती है तभी स्वतंत्र हो सकती है।"

"तो फिर मैं त्सेमो को ही क्यों प्यार करती हूं?"—रुलन ने प्रश्न किया।

"बेटी, यह जंच जाने की बात है।"—मुस्करा कर रानी ने उत्तर दिया, "शायद उस की भौंहें और होंठों की थिरकन, उस के चौड़े कंधे या प्यारे-प्यारे हाथ तुम्हारे मन में चुभ गये हैं।"

"अम्माजी, आप को कैसे मालूम?"—रुलन ने विस्मय से पूछा।

रानी मुस्करा दीं। "बेटी, स्त्री के मन को बेबस कर देने के लिये

सैकड़ों फंदे हैं।"—रानी ने उत्तर दिया और सोचने लगीं, लड़की उन के बेटे के प्रेम में कितनी असहाय है। उन्हें उस पर दया आ गयी।

रानी ने रुलन का हाथ थाम लिया और बोलीं—"देखो, दुखी नहीं होना। हम किसी को दुखी नहीं देखना चाहते। तुम लोगों को सुखी देखने के लिये ही हम जीवित हैं। बोलो, तुम क्या चाहती हो ?"

रुलन रानी के समीप सिमट आयी और सिर चुपचाप झुकाए रही। उस की पीठ पर हाथ रख कर रानी ने समझाया—"बेटी, तुम उसे जाने दो। रोना-धोना नहीं, बल्कि उस की तैयारी में मदद करो। मन चाहे जितना रोये, उसे हँस कर ही बिदाई देना और उस के जाने पर भी चिन्ता न करना। कुछ देर उसे ही तड़प लेने दो।"

"उस के बिना नींद कैसे आवेगी ?"—रुलन ने भोलेपन से पूछा।

रानी ज़ोर से हँस पड़ीं और समझाया—"नींद न आये तो उठ कर आंगन में टहलने लगना। आजकल सर्दी ख़ूब है। जाड़ा लगने लगे तो बिस्तर में जा घुसना। गरम-गरम बिस्तर में अकेले नींद भी आ जायगी।"

रानी और रुलन दोनों एक-दूसरे की ओर चुपचाप देखती रह गयीं। बहू के दुख से रानी का मन द्रवित हो गया। बहू के लिये एक गहरा लगाव, वू-परिवार के प्रति कर्तव्य की निष्ठा से भी गहरी एक सहानुभूति, उन्हें बहू के नारीत्व के प्रति अनुभव हो रही थी। उन्हों ने रुलन को संबोधन किया—

"बेटी, जब तुम ने अपना मन दूसरे के हाथ दे रखा है तो तुम स्वतंत्र कैसे हो सकती हो ! जीवन जो कुछ तुम से मांग रहा है, जब उसे पूरा कर दोगी तभी स्वतंत्र होगी। जीवन को स्वाभाविक मार्ग पर बहने दो। उस के आड़े मत आओ, नहीं तो वह तुम्हें गिरा देगा। स्वतंत्र होना चाहती हो तो अभी त्सेमो को चले जाने दो।"

"अम्माजी, मैं उस के प्यार के बिना जीवित नहीं रह सकती।" रुलन सिसकियां लेने लगी।

"तो जाओ फिर गले में फंदा लगा कर लटक जाओ।"—रानी बहुत

साधारण स्वर में बोलीं—"यह याद रखो, तुम उस पर बोझ बनोगी तो वह तुम्हें कभी प्यार नहीं कर सकेगा। प्रेम जीवन की स्वाभाविक गति चाहता है।"

"अम्माजी, वह मुझे प्यार करे तो मैं उस की दासी बन जाने को तैयार हूं।"—आंसू पोंछ कर रुलन बोली।

"दासी नहीं, तुम मालकिन बनने का यत्न करती हो।"—रानी गंभीरता से बोलीं, "त्सेमो भी यही अनुभव करता है और उसे यह सह्य नहीं। वह तुम्हारे प्रेम की जकड़ से परेशान है। लड़की तू समझती नहीं, तुझे कैसे समझाऊं!"

रुलन मेज पर सिर टिका फूट-फूट कर रो पड़ी। "अम्माजी, मैं समझती हूं, पर यह मुझ से हो नहीं सकेगा।"

रानी उठ खड़ी हुई। कड़े स्वर में उन्हों ने रुलन को आज्ञा दी—"उठो!" रुलन उठ खड़ी हुई। रानी ने उंगली उठा कर उसे चेतावनी दी—"अगर तुम रोओगी तो हमारा-तुम्हारा कोई संबंध नहीं रहेगा। तुम्हें रोना है तो हवेली छोड़ कर चली जाओ।"

रुलन होंठ दबा कर चुप हो गयी। रानी संगमरमर की मूर्ति के समान शांत और निश्चल खड़ी थीं, परन्तु उन की आज्ञा की अवहेलना संभव नहीं थी। रुलन को अपनी मां-बहनों की याद आयी। वे सब अस्थिर प्रकृति की थीं। उस ने अनुभव किया, उस के सामने खड़ी मूर्ति ही उसे सहायता और शरण दे सकती है।

"अम्माजी, जैसा आप कहेंगी वैसा ही करूंगी।"—रुलन बोली।

रुलन लौट गयी तो रानी चुप बैठी सोचती रहीं—यह क्या हो रहा है। दो बहुओं के लिये उन्हों ने अपने दोनों पुत्रों को बाहर भेज दिया। उन बहुओं से तो उन्हें कोई स्नेह नहीं था······उन्हें सम्हालने का बोझ उन्हों ने अपने कंधे पर ले लिया।······वे तो स्वयं स्वतंत्र होने की आशा कर रही थीं।

मस्तिष्क चकरा गया तो इंग को पुकार कर बोलीं---"हम बिस्तर पर जायँगे।" और उन्हों ने अपने आप को इंग के हाथों में सौंप दिया।

× × ×

दूसरे दिन दोपहर बाद रानी ने अपनी समस्या आन्द्रे भाई के सामने बतायी कि उन्हों ने त्सेमो को बाहर भेज दिया, और बोलीं—"हम समझ नहीं पा रहे हैं कि हम कर क्या रहे हैं। हमारे पास कोई जवाब नहीं है।"

"जवाब की ज़रूरत क्या है!"—आन्द्रे भाई के चेहरे पर मुस्कराहट आ गयी।

आन्द्रे भाई की मुस्कान भी विचित्र थी---उन की घनी भौंहों से आरम्भ हो कर दाढ़ी तक फैल जाती थी, जैसे जंगल में सूर्योदय का प्रकाश धीमे-धीमे फैलता है। आरम्भ में रानी को उस के विशाल शरीर और भारी सिर से आतंक-सा अनुभव होता था, परन्तु अब उसे देखने का अभ्यास हो चुका था।

"आप सोच क्या रही हैं?"--कुछ संकोच से आन्द्रे ने पूछा।

"आप कहते हैं कि मनुष्यमात्र एक है, परन्तु आप इतने भिन्न और विचित्र क्यों हैं?"—रानी ने पूछा।

"मुझ में क्या विचित्रता है?"—आन्द्रे ने फिर संकोच की मुस्कराहट से पूछा।

"आप का शरीर इतना बड़ा है और केशों से इतना भरा हुआ!"—रानी ने विस्मय प्रकट किया।

"आप ही बताइये इस विचित्रता का क्या कारण हो सकता है?"—आन्द्रे भाई बोला। उस की केशों से भरी मुस्कान हंसी में बदल गयी सफ़ेद चमकदार दांत दिखाई दे गये और आंखों की उज्ज्वलता बढ़ गयी।

"हम ने किसी पुस्तक में पढ़ा था',---रानी बोलीं, "कि विदेशी लोग

पशु-जाति के अधिक निकट हैं, इसलिये उन के शरीर पर अधिक रोएं होते हैं।"

"शायद यही बात हो।"--आन्द्रे हो-हो कर ज़ोर से हंस पड़ा……। पिछली बार आन्द्रे भाई अपनी बंस की छोटी-सी खटिया पर लेटा था, तो रानी की याद आ जाने पर उस ने भगवान् को धन्यवाद दिया था…… अच्छा ही हुआ, रानी जवानी में नहीं मिलीं। उस समय संभले रहना कठिन हो जाता, परन्तु अब उसे अपने ऊपर भरोसा था और रानी के प्रति केवल कौतूहल ही।

उस समय आन्द्रे ने उत्तर दिया--"यदि आप की बात ठीक है तो मुझे बना लेने के बाद भगवान् ने आपको बनाते समय काफ़ी सुधार कर दिया ह।"

रानी भी हँस पड़ीं। उन की हँसी का मधुर कलकल स्वर और आन्द्रे की हँसी की गंभीर गर्जना एक में मिल गये।

बाहर आंगन में एक दासी इंग के पास बैठी रानी के क़ीमती रेशम के भीतर के कपड़े धो रही थी। भीतर से हंसी की यह गंगा-जमुनी आवाज़ सुन कर दासी की आंखें विस्मय से चढ़ गयीं।

इंग ने उसे डांट दिया--"अरी गधी, रेशम पर साबुन रगड़ रही है ! दिमाग़ ख़राब हो गया है ? क्या सोच रही है ? दिमाग़ से काम ले।" परन्तु विस्मय स्वयं उसे भी था कि मालकिन इस रीछ-जैसे दैत्य के साथ इतना खुल कर कैसे हँस रही हैं।

रानी का एक केश भी अपने स्थान से हट जाता तो इंग की आंख चूक नहीं सकती थी। वह देख रही थी कि परिवार की बीसियों चिन्तायें रानी के सिर पर थीं, परन्तु स्वास्थ्य और सौंदर्य की एक रहस्यमय आभा उन के चेहरे पर आती जा रही थी। सभी समस्याओं को वे बहुत संयम से सुलझाये जा रही थीं। किसी बात की उपेक्षा भी नहीं थी, परन्तु वास्तव में वे परिवार से उपराम होती जा रही थीं।

इंग कल्पना भी नहीं कर सकती थी कि पादरी के प्रति रानी के मन में अनुचित अनुराग हो सकेगा। रानी के संयम की कठोरता से वह परिचित

थी, परन्तु आँखों के सामने देख भी रही थी कि मालकिन में नया उत्साह और नया सौन्दर्य भी फूट रहा था। बीच में पादरी किसी कारणवश दो-तीन दिन आ नहीं सका। इंग बहुत ध्यान से रानी के व्यवहार को देखती रही। प्रतीक्षा या उदासी का कोई भाव रानी के व्यवहार में नहीं था। वे वैसे ही प्रसन्न और मगन थीं, जैसी आन्द्रे भाई के आने पर।

"अब तो इस हवेली में भी......।"—दासी ने धीरे से फुसफुसाया, "सुना नहीं तुमने ?"

"क्या सुनना है?"—माथे पर तेवर डाल कर इंग ने उत्तर दिया, "कुत्तों को भौंकने दे।"

"जानती तो हो तुम, मालकिन साधू से ज्ञान ले रही हैं और मालिक चकले के चक्कर लगा रहे हैं।"

"क्या बकवास करती है!"—इंग ने जोर से डांटा और क्रोध में दासी के गाल पर थप्पड़ मार दिया। लड़की का गाल और आंखें भी लाल हो गयीं।

"और मार लो।"—लड़की ने अपना दूसरा गाल इंग की ओर बढ़ा कर कहा, "सांच को आंच क्या! सेठ कांग और साहब दोनों चकले में जाते ......जायंगे क्यों नहीं!"

इंग अब तक सब कुछ सुन कर भी ऐसे बनी थी, मानो कुछ सुना ही नहीं। दूसरे नौकर उस से डरते थे। उसे आते देख चुप हो जाते। फिर भी सुना तो था ही, अब और उपेक्षा भी सम्भव नहीं रही थी। उसे क्रोध आया सेठ पर। मन में सोचा, यह सब बुड्ढे सेठ की करतूत है और फिर इस परिणाम पर पहुँची कि मर्द सब होते ही ऐसे हैं।......बावरची ही क्या कम है!

पुस्तकालय में बैठ कर आन्द्रे के समीप रानी सब कुछ भूल जाती थीं। आन्द्रे के धूप से तपे और कठोरता की मुद्रा लिये चेहरे पर आंखें लगाये रहतीं। उन की दृष्टि के सम्मोहन से आंद्रे अत्यन्त तन्मयता से विवेचना करता रहता। रानी की आत्मा उस ज्ञान को ग्रहण करने के लिये पूर्णतः तत्पर

थी। अपनी परिस्थितियों में जितना भी ज्ञान ग्रहण किया जा सकता था, ग्रहण करके वे अधिक ज्ञान के लिए आतुर थीं। उन का मस्तिष्क बिल्लौर के सुन्दर स्वच्छ पात्र की तरह था, जिसे स्वच्छ करने की नहीं केवल भर देने की आवश्यकता थी।

आंद्रे को अपने विचारों को समझाने योग्य कोई व्यक्ति अभी तक मिला ही नहीं था। योग्य शिष्य पा कर वह ज्ञान देन के लिये आतुर हो उठा। उस ने रानी को विश्व-इतिहास और राष्ट्रों का उत्थान और पतन समझाया, उसने रानी को बिजली और रेडियम के विषय में बताया और लहरों द्वारा शब्द और संगीत के एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने की प्रक्रिया समझाई।

"लहरों द्वारा जाते शब्दों और संगीतों को पकड़ने की मशीन भी होती है ?"--रानी ने विस्मय से पूछा।

"हां; मेरे पास है।"--आंद्रे ने उत्तर दिया, "मैंने स्वयं ही बनायी है।"

"एक दिन यहां लाइये न।"--रानी उत्सुकता से बोलीं।

"कठिन होगा।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया "वह मशीन गड़ी हुई है। उस की बहुत-सी तारें दीवारों से बंधी हुई हैं। आप किसी दिन मेरी झोंपड़ी में पधारिये।"

रानी सोचती रहीं, किसी विदेशी के घर जाना क्या उचित होगा; चाहे किसी आदमी को ही साथ क्यों न ले जायँ!

"अच्छा देखेंगे।" कह कर रानी ने आंखें फिरा लीं।

"विश्वास रखिये,"—आन्द्रे बोला, "आशंका न कीजिये। पुरुषों से जो भय होता है, भगवान् ने वह भय मुझ से दूर कर दिया।"

आन्द्रे भाई के चले जाने के बाद रानी को आश्वासन-सा अनुभव हुआ। उस के जाने के बाद सदा ही रानी आश्वस्त अनुभव करतीं थीं। वह उन के मस्तिष्क पर बोझ डाल जाता था। वे बैठी पाइप पीने लगीं। होंठों पर आत्म-विस्मृति की मुस्कान आ गयी। कल्पना दौड़ने लगी—कभी इस

नगर से बाहर जा सकने का भी दिन आयेगा ?······कभी जहाज़ों और वायुयानों पर घूम सकूंगी ?

सोचने लगीं—जीवन का कितना समय शेष रह गया है; अधिक-से-अधिक चालीस वर्ष और।······चालीस वर्ष तो हम बिता चुकीं और कभी हवेली के बाहर भी न निकल सकीं······। जीवन की अवधि इतनी छोटी होने के लिये उन्हें पहली ही बार असंतोष अनुभव हुआ।

······अपने नगर की बाबत ही क्या जानती हूँ ! —रानी ने सोचा,···और यह कितना बड़ा हमारा देश है ! ······सागरों और पर्वत-मालाओं से घिरा हुआ······। संसार को जान सकने की जिज्ञासा में रानी चुप रह जाती थीं।

रानी परिवार के लोगों से मिलतीं तो चेहरे पर मुस्कान बनी रहती। भोजन के समय भी वह सब से मिलतीं, परन्तु पहचान किसी को न पातीं।

इंग यह सब कुछ देखती और उस का मन कट-कट कर रह जाता। एक दिन जाड़ों की दोपहर में पुस्तकालय की मेज़ पर बिल्लौर के बड़े प्याले में रानी ने कुछ फूल लगा दिये थे। कमरे की बस्तेदार खिड़की से धूप फूलों पर पड़ रही थी। इंग समीप खड़ी मेज़ पर रखे रत्नजटित गहनों को साफ़ कर रही थी। "देखो तो, क्या अंतर है इनमें ! यह फूल और यह रत्न, मोती, पुखराज, नीलम, सब्जा। सभी रंग तो इन फूलों में भी हैं।"—रानी बोलीं।

हाथ में थमे कंगन से आंखें उठा कर इंग ने रानी की ओर देखा और बोल पड़ी—"हुज़ूर, यह सब तो देख लेती हैं, लेकिन घर में जो हो रहा है सो नहीं देखतीं।"

"क्यों; हम क्या नहीं देखते !"—रानी ने आशंका से पूछा। मन में ख्याल आया, दोनों छोटी बहुओं के बारे में कोई बात होगी।

"साहब······"—इंग ठिठक गई।

"साहब का क्या ?"—रानी ने तुरन्त प्रश्न किया।

"चकले में जाते हैं।"—इंग ने कह डाला।

"यह नहीं हो सकता।"––रानी बोलीं।

"जाते हैं हुजूर।"—इंग बोली, "यह तो कोई बड़ी बात नहीं है हुजूर। हजारों लोग जाते हैं, लेकिन वहां से घर में कोई मुसीबत न ले आयें।"

पल भर सोच कर रानी बोलीं––"छोटी मालकिन को बुलाओ।"

इंग बाहर चली गयी। रानी गहनों को उठा-उठा कर देखती रहीं। कंगन की जोड़ी उन के विवाह में मां ने दी थी, शेष सभी गहने बू साहब के दिये हुए थे। सब्जे की बालियां साहब ने सुहागरात के अगले दिन सुबह प्रेम-उपहार के रूप में दी थीं। नीलम के झूमर साहब शंघाई से लाये थे। तभी रानी ने नीलम पहली बार देखा था। हीरे का पिन साहब हांग-कांग से लाये थे। रानी ने उस से पहले हीरा नहीं देखा था। लाल जड़ी अंगूठियां और सब्जा जड़ी बालों में खोंसने की सुइयां साहब उनान और दूसरे स्थानों से लाये थे। कुछ गहने उन्होंने हवेली में आने-जाने वाले जौहरियों से स्वयं खरीदे थे। एक पिन पर चांदी के महीन काम और पीले पुखराज में तितली बनी हुई थी। उसे देख कर रानी को उस दिन की याद आ गयी जब फेंगमो के विवाह के समारोह में स्त्रियों ने कंडीलों पर उड़-उड़ कर आये पतंगों को दीवारों और किवाड़ों पर सुइयों और पिनों से गाड़ दिया था। तितली की टांगें चांदी के तारों की बनी हुई थीं और उन पर भी महीन पुखराज लगे हुए थे। तितली इतनी बढ़िया बनी हुई थी, मानो अभी पंख हिला कर उड़ जायगी। रानी तितली को हाथ में लिये ध्यान से देख रही थीं।

च्यूमिन कमरे में आयी। उस का शरीर गर्भ के कारण भारी हो गया था। आंखें फैली हुईं, चेहरा कुछ पीला, परन्तु होंठ और भी लाल हो गये थे।

रानी ने हाथ में लिया गहना उस की ओर बढ़ा कर कहा––"यह तुम ले लो, हम तो अब पहनती नहीं।"

च्यूमिग ने गहना हाथ में ले कर ध्यान से देखा और बोली—"जीजी, यह तो बहुत ही सुन्दर है। मैं ऐसी चीज पहनना क्या जानूं!"

"तुम रखो।"––रानी बोलीं और छोटी संदूकची में गहनों को उलट-

पलट कर देखने लगीं। मन में तो आया कि साहब के दिये सभी गहने च्यूमिंग को दे डालें, परन्तु यह उचित न होता। उन्हों ने मोती और लाल जड़े झूमर उठा कर च्यूमिंग की ओर बढ़ा दिये। झूमर भारी थे, परन्तु काम बहुत महीन नहीं था। रानी ने कहा—"यह भी ले लो। यह तुम्हारे कानों में भले लगेंगे। साहब तुम्हें भी तो गहने देते होंगे?"

"नहीं जीजी।"—च्यूमिंग ने धीमे से उत्तर दिया, "मुझे ज़रूरत भी क्या है।"

रानी ने अपने छोटे पाइप में तम्बाकू भर कर दो कश खींचे और पाइप मेज़ पर रख दिया। कुछ राख मेज़ पर गिर गयी। च्यूमिंग ने झुक कर राख अपने हाथ में उठा ली।

"सुनो तो,"—रानी ने पूछा, "साहब क्या चकले में जाने लगे हैं?"

च्यूमिंग का चेहरा लाल हो गया। "सुना है,"—उस ने उत्तर दिया, "लेकिन मुझे तो उन्हों ने कुछ नहीं बताया है।"

"तुम खुद नहीं समझ सकतीं?"—रानी बोलीं, "तुम से कैसे बात करते हैं?"

च्यूमिंग ने सिर झुका लिया। "जितना करते हैं, वही बहुत है।"—च्यूमिंग बोली, "मैं तो उन से प्यार नहीं कर सकती।"

च्यूमिंग के स्वर में दृढ़ता और उदासी थी। रानी चुप रह गयीं। साहब के प्रति सहानुभूति की गहरी टीस उन के मन में उठ आयी।

"देखो,"—रानी बोलीं, "हम दोनों ने ही उन के साथ ज्यादती की है। मेरी तो उम्र ने साथ नहीं दिया, तुम्हारी जवानी साथ नहीं दे रही। तुम ने उन्हें प्यार करने का यत्न भी किया?"

च्यूमिंग ने रानी की ओर देख कर निष्कपट उत्तर दिया—"बहुत यत्न किया। यही तो मेरा कर्तव्य है।"

"हां, कर्तव्य तो है।"—रानी ने आग्रह किया।

"मैं जानती हूँ, कर्तव्य है।"—उदासी से च्यूमिंग बोली, "मैं किसी बात से इंकार तो करती नहीं।"

"साहब जानते हैं तुम उन्हें नहीं चाहतीं ?"—रानी ने पूछा।

"जी हां,"—च्यूमिग ने उत्तर दिया, "उन्हों ने मुझसे पूछा था, मैंने सच-सच कह दिया।"

"ओह, यह तुम ने क्या किया ?"—रानी बोलीं, "यदि सभी स्त्रियां ऐसे सच बोलने लगें तो दुनियां कैसे चले ?"

"जीजी, मुझे तो कुछ समझ नहीं है।"—च्यूमिग बोली।

"तो साहब चकले जाने लगे।"—रानी गहरी सांस लेकर बोलीं, "स्त्री-पुरुष के बीच के झगड़ों का कोई अन्त नहीं।······बच्चे की उम्मीद कब तक है ?"

"आये महीने।"—च्यूमिग ने उत्तर दिया।

"तू तो प्रसन्न है ?"—रानी ने सहसा पूछा।

च्यूमिग सिर झुकाये सामने लटकते अपने दोनों हाथ एक-दूसरे पर रखे चुप रही। पल भर सोच कर आंखें रानी की ओर उठायीं और बोली—"इस घर में वही एक मेरा होगा।" और फिर गर्दन झुका ली।

च्यूमिग से और क्या बात की जा सकती थी। रानी बोलीं—"अच्छा तुम जाओ। हम साहब से बात करेंगे।"

च्यूमिग ने सिर झुकाया और चल दी। आंगन से लौट कर हाथ में लिए गहने रानी को दिखा कर बोली—"इन के लिए आप को धन्यवाद।"

"धन्यवाद देने की कोई जरूरत नहीं।"—रानी ने उत्तर दिया, "तुम पहनना, हमें देख कर खुशी होगी।"

"जीजी, आप की बड़ी दया है मुझ पर।"—च्यूमिग ने एक बार और सिर झुकाया और लौट गयी।

रानी ने दोपहर के समय आन्द्रे भाई को सन्देश भेज दिया कि आज उन्हें फ़ुर्सत नहीं होगी। सन्ध्या समय, रात के खाने से पहले उन्हों ने ढंग से साहब के यहां सन्देश भिजवा दिया कि मिलने आयेंगी। साहब तुरन्त स्वयं ही उन के यहां आ गये।

"कहो, कहो, हम स्वयं ही आ गये हैं।"—बहुत विनय से साहब बोले।

साहब कुछ दुबलाए हुए और पीले-से जान पड़े। रानी को लगा कि यह उन्हीं का दोष है। वे साहब को देख कर उठ खड़ी हुई थीं। उन्हें बैठा कर बैठ गयीं। ज्यों-ज्यों वे पति को देख रही थीं, ।मन फटा जा रहा था। न तो साहब के चेहरे पर पुरानी सुर्खी थी, न आंखों में वह चंचलता और चमक। होंठ भी मुरझा-से गये थे।

"क्या तबियत ठीक नहीं है?"—रानी ने पूछा।

"नहीं तो, बिलकुल ठीक हूं।"—साहब ने उत्तर दिया।

"कुछ कमज़ोर दिखाई दे रहे हो।"—रानी फिर बोलीं।

"हम बिलकुल ठीक हैं।"—साहब ने विश्वास दिलाया।

"छोटी मालकिन का क्या हाल है?"—रानी ने पूछा।

"ठीक ही है।"—साहब ने उत्तर दिया।

"आप का मन नहीं लगा उस से?"—रानी ने पूछा।

साहब ने संकोच से रानी की ओर देखा और बोले—"तुम जानती हो, वह अभी लड़की है। हम तो लड़के नहीं हैं।"

रानी समस्या का कारण समझने पर तुली हुई थीं। बोलीं—"लोग कहते हैं, आप चकले में आने-जाने लगे हैं।"

साहब बेपरवाही दिखाने के लिए कंधे झटक कर बोले—"कभी-कभी सेठ के साथ चले भी जाते हैं।......हम तो समझते हैं वही अच्छा है। दामों की बात है, प्रेम का कोई पाखंड नहीं। हमें बनावट नहीं अच्छी लगती। तुम से तो इतना प्यार था कि बनावट की ज़रूरत ही नहीं हुई। इस लड़की से......क्या प्यार करें?......करें क्या......?" पल भर चांद पर हाथ फेर कर उन्होंने सोचा और बोले—"इस से तो चकले ही आना कहीं अच्छा है।"

"पर अगले मास तो उस के बाल-बच्चा होने वाला है।"—रानी ने याद दिलाया।

"हूं,"—साहब ने फिर चाँद खुजलाई और उलझन में बोले, "हमारी समझ में तो कुछ नहीं आता। हमारा तो ख्याल है कि हमारा नहीं

होगा। आखिर, तुम से भी तो चार लड़के हुए हैं······हम न कुछ समझ पाते!"

"तो फिर च्यूमिंग को यहां व्यर्थ ही रखा हुआ है?"––रानी ने कुछ सोच कर प्रश्न किया।

साहब ने फिर चाँद खुजलाई और उत्तर दिया—"यही समझलो।"

"मैं समझती हूं, आप ने उस के साथ अच्छा बर्ताव नहीं किया।"—रानी कुछ कड़ाई से बोलीं।

"नहीं, हम तो उस का बहुत ख्याल करते हैं।"—साहब बोले।

"आप ने उसे कभी कोई गहना या उपहार दिया?"—रानी ने पूछा।

साहब ने चौंक कर उत्तर दिया—"दिया तो नहीं, कभी ख्याल ही नहीं आया।"

रानी का स्वर तनिक ऊंचा हो गया—"आखिर आप औरत से चाहते क्या हैं?"

साहब ने विस्मय से रानी की ओर देखा। "किस औरत से?"

"किसी भी औरत से।"—रानी ने पूछा।

साहब रानी को नाराज़ नहीं करना चाहते थे, इसलिये कुछ देर सोच कर बात संभालने के लिये बोले—"क्या बतायें, ?······चाहना क्या है?······बस यह ही, कुछ हंसाये, कुछ ढंग की बातचीत करे।······तुम इतनी रोचक बातें सुनाया करती थीं और हम कितना हंसते थे! ······बस यही और क्या।"

"मैं कब तक आप का दिल बहलाती रहूंगी?"—रानी का स्वर तीखा हो गया।

"नहीं, हम कब कहते हैं।"—साहब ने तुरंत स्वीकार किया, "इसीलिये हम चकले हो आते हैं।"

"वहां क्या मिलता है?"––रानी को अपने प्रश्न पर कुछ झेंप अनुभव हुई।

"कोई खास बात नहीं।"— साहब ने उत्तर दिया।

"कुछ खा-पी लेते हैं, थोड़ा ताश-फलाश हो जाता है, लड़कियां कुछ गाना सुना देती हैं।"

"लड़कियां ?"—रानी ने प्रश्न किया, "कितनी लड़कियां हैं ?"

"पांच-छः होंगी। जिस किसी को फ़ुर्सत रहे।"—साहब ने उत्तर दिया "हम और सेठ तो उन पर रहम करते हैं इसलिये...... चलता है......।"

"और क्या होता है ?"—रानी ने पूछा।

साहब अनिच्छा से बोले—"ऐसे ही वक्त कट जाता है। लड़कियां कभी कोई गाना सुनाती हैं, कभी कोई हंसी-मजाक करती हैं......" अचेतन में ही उनके होंठों पर मुस्कराहट आ गयी।

"रात भर वहीं रहते हैं ?"—रानी ने पूछा।

"रात भर तो, नहीं......कभी एकाध बार।"

रानी चुपचाप साहब की आंखों में देखती रहीं। आंखों के नीचे लकीरें-सी पड़ गयी थीं। जवानी की चमक उड़ गयी थी। उन्हों ने एक गहरी सांस ली। रानी ने पूछा—"क्या आप चकले से किसी लड़की को यहां बुलाना चाहते हैं ?"

साहब तुरंत ही बोले—"नहीं, हमें यह कतई पसंद नहीं है।"

"फिर आप क्या चाहते हैं ?"

"हमने कब कहा ?"—साहब ने उलटे प्रश्न किया।

"आप क्या वहां खेलने ही जाते हैं ?"—रानी ने फिर पूछा।

"और क्या !"—साहब ने उत्तर दिया।

"यह भी क्या बचपन है ?"—रानी बोलीं।

"एलिन, हम तुम्हारी तरह समझदार तो हैं—नहीं। साहब खुशामद के ढंग से बोलें, "हम पुस्तकें तो पढ़ते नहीं। हम करें भी क्या ? लिआं-गमो सब कुछ संभाले हुए है। त्सेमो और फेंगमो का भी काम वह निभा

लेता है।" स्वर को और भी दयनीय बना कर वे बोले--"हमारे लायक कोई काम हो तो बताओ, हम करने को तैयार हैं।"

रानी चुप रहीं। वास्तव में ही साहब के लिये कोई काम नहीं था। उन का शरीर भरा-पूरा और आयु प्रौढ़ होने पर भी रानी की दृष्टि में वे बच्चे ही थे। उन्हें वे क्या कहतीं?

रानी से इतनी बात कर के ही वह प्रसन्न हो गये थे। रानी ने सोचा—जब तक जीवित रहेंगी पति की चिन्ता से कभी मुक्त नहीं हो सकेंगी। इन से शरीर का ही नहीं, आत्मा का भी तो संबंध हो चुका है। प्यार न सही, उत्तरदायित्व तो है। रानी के मुख से निकल गया—"विधाता, यह बोझ कब तक संभाले रहूंगी?"

उड़ान भर जाने के लिये उत्सुक उन की कल्पना और आत्मा निरुत्साहित हो कर रह गयीं।

दस

रानी ने पति के चकले जाने पर आपत्ति की थी, परन्तु वू साहब रानी के आंगन से लौट कर सीधे चकले की ओर ही गये। आरम्भ में उन्हें संकोच होता था, तब सेठ ही उन्हें वहां ले गये थे ; अब संकोच नहीं रहा था।

साहब च्यूमिंग को कुछ समझ नहीं पाये। रानी की तरह सूझ-बूझ तो बेचारी में थी नहीं। रानी की तो साहब मंदिर में स्थापित देवी की तरह पूजा करते थे। च्यूमिंग न देवी थी, न नारी ही। साहब च्यूमिंग के प्रति देवी के योग्य आदर प्रकट करते तो वह समझ न पाती, घबरा जाती। वह देवी थी भी नहीं। जब वे उस के साथ नारी का-सा व्यवहार करते, तब भी वह परेशान हो जाती। मामला बिगड़ता ही गया। साहब च्यूमिंग से उपराम हो गये।

च्यूमिंग से उपराम हो कर रानी के प्रति साहब की भक्ति और भी बढ़ गयी। उन्हों ने रानी में समय पर देवत्व और समय पर नारीत्व दोनों ही पाये थे। दोनों भावों का समय अलग-अलग रहता था, परन्तु अब रानी नारी बनने के लिये तैयार नहीं थीं, देवी ही बनी रहना चाहती थीं, इसलिये साहब को नारी की खोज दूसरी जगह करनी पड़ी।

वह नारी साहब को मिली 'अंधे सितारिये' की गली, म। प्रकट में एक

चाय की बढ़िया दूकान थी। दूकान पुरानी थी। ताश-फलाश भी होता था और भीतर वेश्याएं भी रहती थीं। लड़कियां सभी जवान, साफ़-सुथरी और हंसमुख। सेठ ने साहब को इस जगह के लिये विश्वास दिला दिया था। वे वर्षों से इस जगह से परिचित थे। यदि ग्राहक खाते-पीते समय केवल लड़कियों को देख कर या दो-चार बात कर मन बहलाना चाहते तो विशेष खर्चा नहीं पड़ता था। इस से अधिक शौक के लिये लड़कियों की आवश्यकता होती तो कुछ समय पहले से कह देना होता था, क्योंकि ग्राहकों की संख्या काफ़ी थी, परन्तु साहब की विशेष स्थिति के कारण उन्हें असुविधा न होती थी।

साहब ने चायखाने के कमरे में पुराने परिचित की बेपरवाही से क़दम रखा। सब ओर से उन का अभिवादन होने लगा। मालिक ने तुरंत एक बैरे को पुकार कर कहा—

"चमेली से कहो, बू साहब आ गये हैं।"

साहब भीरत के कमरे में चले गये, तुरन्त चाय आ गयी। कुछ मिनट बाद शराब और एक प्लेट पकौड़े आ गये। साहब अभी खा-पी रहे थे कि चमेली आ पहुंची।

चमेली क़द की ज़रा नाटी, गदबदी और चुलबुली लड़की थी। साहब के आने पर उस की पुकार हुई तो वह अपने काले लम्बे केशों में सुगन्ध लगा कर चोटी कर रही थी। अब उस के दोनों कानों के साथ दो लम्बी-लम्बी चोटियां लटक रही थीं। नाम चमेली था, इसलिये वह चमेली का ही इत्र लगाती थी। चमेली के दो-चार फूल भी केशों में खोंस कर चमेलीपन बनाये रहती। चेहरे पर ख़ूब पाउडर लगाये थी, होंठों पर लाली और आंखों में काजल। होंठों पर हमेशा मुस्कान बनी रहती। पुकार सुन कर अपने नन्हें-नन्हें पांवों पर खुट-खुट करती भागी आई। आ कर साहब की कुर्सी की बांह पर ही बैठ गयी और उन के गाल से गाल सटा दिया।

साहब ने कुछ बेपरवाही दिखाई। "हमें भूख लगी है।"—मुंह बना कर चमेली ने कहा। साहब ने एक पकौड़ी उस की ओर बढ़ा दी। चमेली ने

मुंह खोल दिया। साहब देते गये और वह खाती गयी। खाना हो चुका तो साहब ने कुर्सी पीछे खिसका ली। चमेली उन की गोद में आ गयी।

"क्या करती रही तू आज ?"—साहब ने पूछा।

"करती क्या, तुम्हारी राह देखती रही।"—चमेली ने अपने लाल रंगे हुए नाखूनों की ओर देखते हुए उत्तर दिया।

"हम दिन भर ही यहाँ थोड़े बैठे रह सकते हैं।"—साहब बोले, "कारोबार देखना पड़ता है। दूकानों का, जमीनों का हिसाब देखना पड़ता है। हमारे किये बिना थोड़े ही हो सकता है।"

"हाय, इतना काम करते हो!"—चमेली ने सहानुभूति प्रकट की, "आप के लड़के कुछ नहीं करते ?"

"लड़के क्या करेंगे!"—साहब ने शिकायत-सी की, "वे लोग अपने में ही मस्त हैं। दो तो बाहर गये हुए हैं। हां, बड़ा लड़का है, वह कुछ करता है, परन्तु सब कुछ उस पर कैसे छोड़ दें!"

चमेली के गद्दर शरीर का बोझ साहब को अच्छा लग रहा था। केशों से आती चमेली की गंध भी प्यारी लग रही थी। उस की सांस में भी सुगंध थी। साहब को रानी की बात याद आ गयी—चकले की लड़की को घर लाना चाहते हैं? उन का वश चलता तो जरूर ले जाते, परन्तु साहस नहीं था। बुजुर्गों के नाम पर धब्बा लग जाता।

चमेली शायद साहब के मन की बात भांप गयी थी। उन के गले में बाहें डाल कर बोली—"हमें अपने यहां क्यों नहीं ले चलते? हम आप के यहां की स्त्रियों को कुछ कहेंगे थोड़े ही। आप बाहर जायँगे तो हम चुपके से अलग बैठी रहा करेंगी।"

"नहीं, नहीं,"—साहब ने तुरन्त उत्तर दिया, "वहां तुम्हें ले जा कर क्या होगा! हमें तो घर से बाहर यहां आ कर मिलना अच्छा लगता है। तू भी घर में ही आ गयी तो हमारा घर से निकलना ही न होगा। कहीं जाने की जगह भी तो हो।"

चमेली को यह भी स्वीकार था। चमेली की मां कमल भी चकले

की ही थी। उस ने अपनी बेटी को समझा दिया था—"······किसी के यहां रखेल रह जाओ तो सब से अच्छा। नहीं तो अपना घर अलग बनाना, चकले में न बसना।"

साहब से चिपक कर चमेली ने अनुरोध किया—"घर नहीं ले जाना चाहते तो हमारे लिये कहीं अलग मकान खरीद दो न। वहां दूसरा कोई नहीं आ सकेगा। दिन भर आप की राह तका करेंगी। आप जब चाहें, दिन में, रात में आ जाना, वहीं रहना।"

साहब स्वयं भी ऐसी ही बात सोच रहे थे। उन का चकले में आना-जाना लोग जानें, यह उन्हें अच्छा नहीं लगता था। वे शहर के सब से बड़े घराने के मुखिया थे।

परिवार का हिसाब का खाता रानी साहबा के हाथ में था। चमेली के लिये मकान खरीदने लायक़ रक़म के लिये साहब उन से कैसे कहते ! उन्हों ने चमेली को प्यार कर के समझाया—"मेरी जान, हिसाब का खाता तो लड़कों की मां के हाथ में है। तेरे लिये मकान खरीदें तो उन्हें क्या बतायेंगे !"

"वाह, आप ज़मीन का कोई टुकड़ा बेच दीजिये, उन्हें बताने की क्या ज़रूरत !"—चमेली ने सुझाया। उसके स्वर में ऐसा आग्रह था कि साहब का मन पिघल गया।

"हम ने उन से कभी धोखा नहीं किया।"—साहब बोले।

"उन्हें हमारी बाबत मालूम है ?"—चमेली ने पूछा।

"ऐसे ही लगभग।"

"लगभग क्या ?"—चमेली ने फिर पूछा।

"मतलब है, थोड़ा बहुत।"

"थोड़ा बहुत क्या हुआ ?"—चमेली बोली, "या तो कहो जानती हैं, या कहो नहीं जानतीं।"

"यही समझ लो, जानती हैं।"—साहब ने उत्तर दिया, "वे सब कुछ जान जाती हैं।"

चमेली ने दूसरा दांव किया। साहब के सीने में मुंह छिपा कर धीमे से बोली—"आप से कहा नहीं था, मुझे खुशी की बात हो गयी है। यहां बाल-बच्चा कैसे होगा, इसीलिये मैं कह रही हूँ।"

साहब के पांव तले से धरती खिसक गयी। उन्हों ने चमेली को गोद से उतार कर फ़र्श पर खड़ा कर दिया। चमेली लज्जा में दोनों हाथों से मुंह ढँके थी। साहब कड़ाई से बोले—"हम से पहले भी तो लोग आते-जाते थे। तू कौन कुमारी थी! पूरी जवान है।"

चमेली मुंह के सामने से हाथ हटा कर बोली—"हां, जब से तुम आते हो दूसरा कौन आया? मुझे तीन महीने का है। तुम उस से पहले से आ रहे हो।"

चमेली [illegible] आंसू पोछने लगी। "अरे क्या है!"—वह बचकाने स्वर में बोली, "हमारी क़िस्मत ही ऐसी है। हमारी-जैसी लड़कियों का और क्या होगा! कोशिश तो करती हैं न ठहरे, पर कभी फँस ही जाती हैं। यह तभी होता है जब किसी से प्यार करने लगें। मेरी ही गलती है।"

चमेली ने ज़िद्द या ज़ोर से बात की होती तो साहब उठ कर चल देते और उस की परवाह न करते, परन्तु उस के रोने से पिघल गये।

"अच्छा रोने से क्या फ़ायदा'!'—साहब बोले, "हमारा है या किसी और का, तुम तो जानती हो कि कैसे निकलवा दिया जाता है।"

"यह ले।" साहब कुछ रुपये निकाल कर चमेली के हाथ में देने लगे। चमेली ने उन का हाथ परे हटा दिया और बोली—"नहीं, मुझे नहीं चाहिये। मैं ऐसा पाप क्यों करूँ? मैं तो बच्चे को रखूंगी।"

"यह क्या पागलपन करती है?"—साहब ने चमेली को धमकाया।

परन्तु बाहर के बड़े कमरे से कोलाहल सुन कर चुप हो जाना पड़ा।

मालिक—उन का नाम ले-ले कर पुकार रहा था, "वू साहब! वू साहब!" दरवाज़े का कमरा खुल गया और उन का बैरा पेंग भीतर आ गया।

"हुज़ूर! हुज़ूर!"—पेंग ने पुकारा, "घर चलिए, घर चलिये! छोटी मालकिन ने अनार के पेड़ से फांसी लगा ली है।"

"हे विधाता!"--साहब के मुंह से निकला और कुर्सी से उछल पड़े और बाहर चले गये। चमेली क्रोध में दांत पीसते कमरे में ही खड़ी रही।

साहब की हवेली में आये विपत्ति के तूफ़ान की हवा चारदीवारी लांघ कर शहर की गलियों में भी पहुंच गयी थी। रास्ते में ही उन्हें हवेली की ओर जाते हुये पुरोहित मिल गये। पुरोहित घंटे बजा-बजा कर च्यूमिंग की भाग गई आत्मा को बुलाने के लिये पुकार रहे थे। हवेली के फाटक पर कोई नहीं था। साहब दौड़ते हुये अपने आंगन में पहुंचे। आंगन में भीड़ और कोलाहल था। कुछ पुरोहित पहुंच चुके थे। सब लोग च्यूमिंग को पुकार-पुकार कर रो रहे थे। साहब ने भीड़ में घुस कर देखा, च्यूमिंग का शरीर आंगन के फ़र्श पर पड़ा था। रानी उस का सिर गोदी में लिये थीं। च्यूमिंग का सिर उन की गोदी में एक ओर लटका हुआ था।

"क्या मर गयी ?"--साहब चिल्ला उठे।

"ऐसा जान पड़ता है।"--रानी ने उत्तर दिया, "हमने फिरंगी पादरी को भी बुलवा लिया है। इतने पुरोहित आये हैं, उसे भी आने दो।"

उसी समय आन्द्रे भाई ने आंगन में क़दम रखा। भीड़ उन के लिये फट गयी। दूसरे पुरोहित ईर्ष्या से चुप हो गये। आन्द्रे भाई किसी की ओर न देख घुटने टेक कर च्यूमिंग के समीप बैठ गये। एक लम्बी सुई उन्हों ने च्यूमिंग की पसली में चुभा दी।

"हमें नहीं मालूम आप क्या कर रहे हैं।"--रानी आन्द्रे भाई की ओर देख कर बोलीं, "आप जो करेंगे ठीक ही करेंगे।"

"यह ताक़त की चीज है।"--आन्द्रे भाई बोला और च्यूमिंग की बग़ल में लगाई सुई उन्हों ने जल्दी में निकाल ली। साहब और रानी को छोड़ कर कोई और देख नहीं पाया।

च्यूमिंग के होंठों में कुछ थिरकन-सी जान पड़ी, पलक भी कुछ हिलीं। "ओह, अभी जान है।"--रानी बोलीं, "तो बच्चा भी जिन्दा होगा।" "इस ने फांसी लगा क्यों ली?"--साहब ने पूछा।

"जब लड़की होश में आ जायगी तब पूछ लेना।"—रानी बोलीं, "इन पुरोहितों से कह दीजिये कि आत्मा लौट आयी है। इन लोगों की दक्षिणा दिला दीजिये। इन्हें यही समझने दीजिये कि इन्हीं के यत्न से आत्मा लौटी है। ये सन्तुष्ट हो कर चले जायं और हमें चैन मिले।"

साहब पुरोहितों को ले कर बाहर के आंगन में चले गये। सिर्फ़ स्त्रियां ही आंगन में रह गयीं—बूढ़ी स्त्रियां प्रबन्ध और देख-रेख के विचार से और मेंग, रुलन और लीनी कौतूहल से। इतने दिन से च्यूमिग उन्हीं के साथ उन्हीं के घर में थी, परन्तु उन का उस से कोई सम्पर्क नहीं था। च्यूमिग उन्हीं की आयु की थी, परन्तु उस का सम्बन्ध बुजुर्गों से था। वे उस से हंस-बोल नहीं सकती थीं, इसलिये उसे भूल ही गयी थीं, परन्तु फांसी लगा लेने की घटना से बहुओं में च्यूमिग के प्रति आकर्षण पैदा हो गया। वे समझ गयीं कि लड़की को बूढ़ों में फंस जाना या उन से बंध जाना अच्छा नहीं लगा। सभी का ध्यान, अपनी-अपनी भावना के अनुसार उस की ओर गया। मेंग को बेचारी के प्रति करुणा अनुभव हुई, लीनी को कौतूहल हुआ और रुलन के मन में विद्रोह की ज्वाला भभक उठी। तीनों को ही उस से मिलने की इच्छा हुई, परन्तु अभी उस बात के लिये अवसर नहीं था।

च्यूमिग को सुध आई तो मालूम हुआ कि प्रसव तुरन्त ही हो जायगा। च्यूमिग को तुरन्त उस के कमरे में पहुंचा दिया गया और दाइयों के लिये सदेश भेज दिये गये। लोग इस उलझन में व्यस्त हो गये तो आन्द्रे भाई चलने के लिये उठ खड़ा हुआ। नौकरानियां च्यूमिग के प्रसव की व्यवस्था कर रही थीं, रानी उसकी खाट के समीप खड़ी थीं।

"क्या फिरंगी पादरी भी आया था?"—च्यूमिग ने क्षीण स्वर में रानी से पूछा।

"हां, अभी जा ही रहा है।"—रानी ने उत्तर दिया।

"उसे एक मिनट के लिये बुलवा लीजिये।"—च्यूमिग ने अनुरोध किया।

रानी को विस्मय हुआ कि लड़की आन्द्रे को कैसे जानती है! परन्तु

मृत्यु के संकट में पड़ी लड़की की बात में विलम्ब न करने के लिये वे स्वयं ही तुरन्त बाहर गईं और आन्द्रे भाई से बोलीं—"लड़की एक मिनट के लिये आप को बुला रही है, जरा आ जाइये।"

आन्द्रे भाई लौट पड़ा। नीचे दरवाज़े में से सिर झुका कर कमरे में आया और च्यूमिंग की सेज के समीप जा खड़ा हुआ। बू साहब एक ओर खड़े रहे। उन्हें आत्म-ग्लानि अनुभव हो रही थी कि उन्हों ने परिवार की क्या अवस्था कर दी। समझते थे कि च्यूमिंग ने चमेली के कारण ही फांसी लगाई है। मुंह से कुछ न बोल उस ने आत्महत्या से ही अपना असंतोष प्रकट किया है।

च्यूमिंग के होंठ हिले। आन्द्रे भाई सुनने के लिये झुक गया। स्वर बहुत ही क्षीण था, इसलिये उसे और भी झुकना पड़ा। सुनाई दिया—

"अगर लड़की पैदा हो तो मेरे मर जाने के बाद उस अनाथ को आप ले जाइयेगा।"

"इस घर में अनाथ कैसे पैदा हो सकते हैं?"—आन्द्रे ने धीमे स्वर में पूछा।

"मैं अनाथ हूँ।"—च्यूमिंग बोली, "अनाथ की संतान अनाथ ही होगी।"

च्यूमिंग के शरीर में सहसा असह्य पीड़ा उठ खड़ी हुई। उसने आंखें मूंद लीं। आन्द्रे का चेहरा गंभीर हो गया। वह चुपचाप बाहर चला गया। कोई सुन न सका, च्यूमिंग ने क्या कहा, और आन्द्रे ने किसी से कुछ कहा नहीं।

रात के पिछले पहर च्यूमिंग के एक लड़की हुई। समय से पूर्व जन्मी लड़की का शरीर बहुत ही छोटा था। रानी ने बच्ची को धुली हुई रुई में लपेट कर हृदय से लगा लिया। इंग और दाई च्यूमिंग को सम्हालती रहीं। रानी बच्ची को अपने यहां ले गयीं और रात में उसे सर्दी से बचाने के लिये सेज पर सीने से लगाये रहीं। रात में एक नौकरानी ने आ कर पूछा—"मालकिन कोई ज़रूरत······!"

"चार ईंटे गरम कर लाओ,"—रानी बोलीं, "और हमारी सेज पर रख दो। इस कोमल कली को संभाल कर खिलाना होगा।"

"मालकिन क्या परेशान हो रही हैं?"—नौकरानी बोली, "लड़की ही तो है। मर जाने दीजिये। यह इतनी मरगिल्ली है, जियेगी भी तो हमेशा दुख देगी।"

"जो हम कह रहे हैं करो!"—रानी ने हुक्म दिया।

नौकरानी बड़बड़ाती हुई चली गई। रानी ध्यान से बच्ची की ओर देखने लगीं। उस की श्वास अभी चल रही थी।

× × ×

दो दिन बाद आन्द्रे भाई ने रानी को बताया कि च्यूमिंग ने उन से क्या अनुरोध किया था। बच्ची जीवित थी। उस का मुंह इतना छोटा था कि स्तन नहीं पी सकती थी। रानी चम्मच से बूंद-बूंद कर उसे मां का दूध पिला रही थीं। च्यूमिंग को दूध तो आ रहा था, परन्तु निर्बलता के कारण मुंह से बोल न निकल सकता था। रानी ने उसे बच्ची के जीवित होने की बात बतायी तो वह उत्तर भी न दे सकी।

"लड़की अनाथ कैसे है! वह हमारे घर में पैदा हुई है।"—आन्द्रे भाई की बात सुन कर रानी गम्भीरता से बोलीं।

"मैं जानता था आप यही कहेंगी।"—आन्द्रे भाई ने कहा, "आप की बात ठीक है, परन्तु यह लड़की अपने आप को अनाथ क्यों कहती है?"

"जब तक वह हमारे यहां नहीं आयी थी, अनाथ ही थी।"—रानी बोलीं और झिझक गयीं और फिर न जाने कैसे आन्द्रे भाई को पूरी कहानी सुनाने लगीं। च्यूमिंग को हवेली में लाने का कारण और सब बातें बताने लगीं।

आन्द्रे भाई आंखें झुकाये और अपने दोनों बड़े-बड़े हाथ घुटनों पर रखे सुनता रहा।

जब भी रानी की दृष्टि आन्द्रे भाई के हाथों पर पड़ती, उन्हें विस्मय

होता था कि इन हाथों में ऐसे ढट्ठे क्यों पड़े हुए हैं! उस समय उन्होंने सहसा यह प्रश्न पूछ ही लिया।

आन्द्रे भाई ने हाथ बिना हिलाये ही उत्तर दे दिया—"मैं अपने बच्चों के लिए खेती करता हूं न?"

रानी आन्द्रे के हाथों की ओर आंखें लगाये अपनी बात कहने लगीं और अन्त में बोलीं—

"आप तो सन्यासी हैं। आप स्त्रियों और पुरुषों की इन बातों को क्या समझेंगे?"

"मैं सन्यासी हूं, इसलिए पुरुषों की बात भी समझ सकता हूं और स्त्रियों की भी।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

रानी की दृष्टि आन्द्रे के हाथों से उठ कर उसके चेहरे पर चली गई। "तो बताइये कि इस में हमारी भूल क्या है?"—रानी के मुँह से सहसा प्रश्न निकल गया और फिर उन्हें विस्मय हुआ कि उन्होंने अपना गूढ़ रहस्य एक विदेशी के सामने ही कह डाला, जिसके देश और जलवायु से भी वह परिचित नहीं थीं।

आन्द्रे भाई ने उत्तर दिया—"आप यह भूल गयीं कि मनुष्य की आवश्यकताएं केवल शारीरिक ही नहीं होतीं। आप के पति-जैसे मनुष्य में भी भगवान् का अंश रहता है। आप उन से घृणा करती रहीं।"

"नहीं, नहीं,"—उत्तेजिना में रानी बोलीं, "हम ने तो यह उनके संतोष के लिए ही किया था।"

"आप ने केवल पति के भोजन और बिस्तर का ही ध्यान रखा,"—आन्द्रे ने स्पष्ट शब्दों में उत्तर दिया, "और उस से भी बड़ा पाप आप ने यह किया कि एक स्त्री को ऐसे खरीद लिया, जैसे बाज़ार से मांस का टुकड़ा खरीद लिया जाय, परन्तु स्त्री, कोई भी स्त्री, केवल मांस का टुकड़ा तो नहीं हो सकती। आप स्वयं स्त्री हैं, आप को तो समझना चाहिए था। आप ने तीन पाप किये।"

"पाप!" विस्मय से रानी के नेत्र फैल गये।

"आप ने अपने पति से घृणा की, आप ने एक नारी बहिन का अपमान किया और आपने अहंकार में अप ने आप को अद्वितीय और दूसरी नारियों से श्रेष्ठ समझ लिया। इन तीन पापों के कारण आप का परिवार विक्षिप्त है। आप के पुत्र कुछ समझ नहीं पाते, परन्तु बेचैन हैं। उन की बहुएं दुखी हैं। आप सब यत्न करती हैं। परन्तु कोई सुखी नहीं है।......आप चाहती क्या है ?"

आन्द्रे भाई की पैनी दृष्टि से रानी कांप उठीं। "हम इस बोझ से मुक्ति चाहती हैं।"—रानी बोलीं, "हमें आशा थी कि अपना दायित्व पूरा कर के हम मुक्त हो पायेंगी।"

"मुक्ति से आप का अभिप्राय क्या है ?"—आन्द्रे ने पूछा।

"बहुत मामूली, हम चाहते हैं हमें कोई विवशता न हो और जैसे चाहें अपना समय बिता सकें।"

"यह तो बहुत बड़ा स्वार्थ है।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "इस से अधिक और क्या इच्छा की जा सकती है ?"

वर्षों से रानी की आंखों में आंसू नहीं आये थे। इस समय आंसू रोकना कठिन हो रहा था। आन्द्रे की बात से उन के मन की शांति और न्याय की धारणा क्षुब्ध हो गयी। अब वे भयभीत थीं। उस परिवार में सब लोग उन के आश्रय और भरोसे थे। वे ही भटकी हुई हैं तो और सब का क्या होगा !

"हमें क्या करना चाहिए, आप ही बताइए ?"—रानी ने क्षीण स्वर में प्रश्न किया।

"स्वार्थ की भावना छोड़ दीजिये।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

"हमने तो अपने कर्तव्य की उपेक्षा कभी नहीं की।"—रानी बोलीं।

"विचार तो आप के मन में स्वयं स्वतन्त्र हो जाने का ही रहता था।"—आन्द्रे बोला।

रानी निरुत्तर रहीं। हलके भूरे मोतिया रंग के साटिन की

पोशाक पर रखे अपने निश्चल हाथों की ओर देखती रहीं और धीमे से बोलीं—"आप ही बताइए हम क्या करें!"

"अपनी स्वतन्त्रता की चिंता न कर यह सोचिये कि दूसरे कैसे स्वतंत्र हो सकते हैं।"—आन्द्रे ने कोमल स्वर में सुझाया।

रानी ने प्रश्न के भाव से आन्द्रे की ओर देखा।

"लोगों को आप के आश्रय न रहना पड़े।"—आन्द्रे और भी कोमल स्वर में बोला।

धर्म की ओर रानी की विशेष आस्था नहीं थी। उन्हों ने आन्द्रे से पूछा—"क्या आप अपने ईसाई धर्म की बात कह रहे हैं। वह हम समझ नहीं सकेंगे।"

"नहीं, ईसाई धर्म की बात नहीं कर रहा हूँ।"

"आप चाहते हैं, हम साधुनी बन जायँ?"—रानी ने पूछा।

"मैं आप को कुछ भी बन जाने के लिये नहीं कह रहा हूँ।"—शांति से आन्द्रे ने उत्तर दिया।

आन्द्रे उठ खड़ा हुआ। होंठों पर अभ्यस्त मुस्कराहट आ गयी। वह नमस्कार किये बिना ही चला गया। साधारणत: ऐसी धृष्टता रानी सह न सकती थीं, परंतु उस समय यह धृष्टता न जान पड़ी। यही लगा कि अभी तो आन्द्रे को आना ही है।

रानी बहुत देर तक फ़र्श पर आंखें गड़ाये कुर्सी पर निश्चल बैठी रहीं। फ़र्श पर बस्तेदार खिड़की से आती धूप से धारियां पड़ी हुई थीं। सुहावनी हवा आ रही थी। कमरे में खूब बड़ी कोयले से भरी अंगीठी जल रही थी। राख से ढँके कोयले से उठी गर्मी की अदृश्य लहरों से कमरा गमगमा रहा था। रानी सोच रही थीं, जीवन इतना सरल नहीं है। स्वतंत्रता यत्न करने से भी नहीं मिल सकती। वे सदा स्वतंत्र हो जाने के लिये यत्न करती रहीं। सदा ही आशा बनी रही कि अब कामना पूरी होगी। यत्न से स्वतंत्रता के फल का बीज बोया, वृक्ष बड़ा हुआ, फल लगे।

दिखाई दे रहा था कि फल पक गया, परन्तु हाथ लगाने पर फल सदा गुट्ठल ही जान पड़ता।

रानी के हृदय से एक दीर्घ निश्वास निकल गयी। उसी समय साथ के कमरे से च्यूमिंग की बच्ची के रोने की आवाज़ सुनाई दी। वे उठीं और बच्ची को गोद में ले कर फिर अंगीठी के समीप कुर्सी पर आ बैठीं। शायद बच्ची को कमरे की गरमी से आराम मिला या रानी की गोद से सहारा, वह चुप हो कर रानी के मुख की ओर देखने लगी।

इस बच्ची से मुझे कोई प्यार नहीं?—रानी सोच रही थीं...... संभव है मैंने कभी किसी बच्चे को प्यार नहीं किया।......मेरा संकट शायद यही है कि मैंने कभी किसी को प्यार नहीं किया।

बच्ची के प्रति प्यार न होने पर भी रानी उसे बहुत प्यार से गोद में लिये रहीं। इंग ने आ कर बच्ची को गोद में ले लिया और उसे दूध पिलाने लगी, तब भी रानी उसे ध्यान से देखती रहीं। बच्ची के अच्छी तरह दूध पी लेने पर उन्हें संतोष हुआ।

रानी इंग की ओर हाथ बढ़ा कर बोलीं—"ला इसे हमें दे। इस की मां के पास ले जायें। अब यह बच गयी और अपनी मां को भी बचा लेगी।"

रानी बच्ची को गोद में लिये धूप में चली जा रही थीं। साहब का आंगन लांघ कर वे शयनागार में पहुँचीं। च्यूमिंग बड़ी सेज पर लेटी हुई थी। मसहरी के पर्दे गिरे हुए थे। पर्दों पर अब भी सृजन और उत्पत्ति के संकेत, फल-फूल, बने हुए थे। च्यूमिंग की आंखें मुंदी हुई थीं और होंठ मिचे हुए। चेहरा बहुत पीला था। रेशमी चादर पर उस के खुले हुए हाथ निर्जीव-से लग रहे थे। कुछ महीनों में यह हाथ कितने बदल गये थे! पहले यह हाथ श्रम के कारण कड़े और सबल थे। अब वे दुबले और सफ़ेद हो गये थे।

"यह लो, अपनी बच्ची को।"—रानी स्नेह से बोलीं, "खूब दूध पी रही है अब। अपनी गोद में लो न इसे।"

च्यूमिंग निश्चल बनी रही। रानी ने उस की बांह उठा ली, बच्ची को उस के शरीर के साथ लगा दिया और बांह ऊपर से रख कर रजाई ओढ़ा दी। च्यूमिंग ने बच्ची को शरीर से चिपका लिया और आंखें खोल दीं। बोली--"लड़का नहीं हुआ, उस के लिये आप मुझे क्षमा कर दीजिये।" उस का स्वर क्षीण और कातर था।

"क्या कहती हो, बेटे और बेटियां उसी विधाता की देन है।"—रानी ने उत्तर दिया, "और आजकल ऐसी बातें कौन करता है!"

रानी को आन्द्रे भाई की बात याद आ गयी। तुरंत बोलीं-- "कैसी बात करती हो; जैसे तुम पर कोई बंधन लगाया हो।"

च्यूमिंग ने विस्मय से रानी की ओर देखा। "और मैं यहां हूं किस लिये?"

रानी च्यूमिंग की सेज के किनारे बैठ गयीं। "देखो बहिन, अब हम समझ गये कि तुम्हारे साथ बहुत अन्याय हुआ। तुम्हें जानवर की तरह खरीद कर यहां ले आये।······यह अन्याय था। तुम्हारे मन की कोई चिन्ता नहीं की गयी। अब बताओ, तुम क्या चाहती हो?"—रानी शांति से बिना उत्तेजना के बोल रही थीं।

परन्तु च्यूमिंग डर गयी। "मैं कहां जा सकती हूं!"—धीमे से वह बोली।

रानी समझ गयीं कि च्यूमिंग उन का अभिप्राय नहीं पा सकी, उलटे डर गयी कि उसे अमीरों के ढंग से बात बना कर बताया जा रहा है कि अब यहां उस की आवश्यकता नहीं है।

"हम कहीं चले जाने के लिए नहीं कह रहे हैं।"--रानी बोलीं, "हमारा मतलब है कि तुम्हारे साथ बहुत अन्याय हुआ है। तुम अब किसी का ख्याल किये बिना अपने मन की बात बताओ कि क्या चाहती हो?"

"किसी का ख्याल किये बिना?"--च्यूमिंग बोली, "ख्याल कैसे नहीं करूंगी? साहब हैं, आप हैं। आप दोनों मालिक हैं और फिर सारा परिवार है।"

"तुमने पादरी से यह क्यों कहा था कि तुम मर जाओ तो तुम्हारी बच्ची को ले जाय।"--रानी ने पूछा।

"मैं नहीं चाहती थी कि लड़की के कारण आप को कष्ट हो।"--च्यूमिग ने उत्तर दिया।

"तुम ने आत्महत्या करने का यत्न क्यों किया था ?"--रानी ने फिर पूछ लिया।

"इंग ने बताया था कि सब लच्छन लड़की होने के हैं। मैंने सोचा कि हम दोनों ही मर जाय, क्यों किसी को कष्ट दें।"--च्यूमिग ने उत्तर दिया।

"क्या किसी की मृत्यु से कष्ट नहीं होता ?"--रानी ने पूछा।

"मेरी मृत्यु से नहीं होगा।"--च्यूमिग ने भोलेपन से उत्तर दिया। "मैं मर जाऊं तो किसी का क्या बिगड़ जायगा।"

रानी क्या उत्तर देतीं ! अपने आप को संभाल कर उठ खड़ी हुईं। "ऐसी व्यर्थ बातें मन में मत लाओ।"--रानी बोलीं, "तुम मर जातीं तो इस बच्ची को पालने में मुसीबत न होती ? हम तो लड़के-लड़कियों को एक बराबर ही गिनते हैं।"

"जोजो, आप बड़ी दयालु हैं।"—च्यूमिग बोली और उसने आंखें मूंद लीं। उस के आंसू बह गये। रानी देख रही थीं, च्यूमिग ने बच्ची को हृदय से और भी अधिक चिपका लिया। अब रानी को सान्त्वना अनुभव हुई—मां और बच्ची जी जायँगी। वे लौट चलीं।

रानी आंगन में ही पहुंची थीं कि साहब सामने से आ गये। वे बाज़ार से लौटे थे। अचानक सामना हो गया था। रानी ने देखा कि साहब के चेहरे पर झेंप आ गयी और माथे पर पसीने के कण फूट आये। रानी समझ गयीं—कोई ऐसी बात कर के आ रहे हैं जिस के लिये लज्जित हैं।

"कहो, कैसे आयीं ?"—साहब ने सम्भल कर पूछा।

"छोटी मालकिन से मिलने आयी थीं।"--रानी आत्मीयता से बोलीं, "हम लोगों को उस का ख्याल करना चाहिये। उसे विश्वास हो गया था कि

लड़की होगी, इसीलिये उस ने आत्महत्या का यत्न किया था कि हम लोगों पर बोझ न पड़े।"

"बड़ी मूर्ख है।"—साहब बोले, "हम लोग क्या ऐसे मामूली आदमी हैं। एक-दो और आदमी घर में हो जाने से यहां क्या फ़र्क पड़ता है?"

"आप से कुछ सलाह लेनी है।"—रानी बोलीं और साहब के साथ बड़े कमरे में लौट आयीं। दोनों ने अपने सम्मिलित जीवन के वर्षों में अनेक बार इस कमरे में बैठ कर बातचीत की थी। कमरे के भीतर की ओर शयनागार था। वहां च्यूमिग अपने शिशु को लिये पड़ी थी, परन्तु उधर बातचीत सुनाई दे जाने की आशंका नहीं थी। कमरे की छत इतनी ऊंची थी कि सब शब्द उसी में समा जाते थे।

"देखिये, यह लड़की घर में है। इस के बारे में क्या करना उचित होगा? अब उस के एक बच्ची भी हो गयी है। आप को वह भाई ही नहीं। माना, मेरी ही ग़लती थी, पर उत्तरदायित्व तो है।......"—रानी ने संकोच से बात शुरू की।

साहब असुविधा अनुभव कर रहे थे। सुबह सर्दी अधिक होने की आशंका में उन्हों ने कुछ अधिक गरम कपड़े पहन लिये थे। अब गर्मी मालूम हो रही थी, यों भी कोई समस्या सामने आ जाने पर उन्हें पसीना आने लगता था।

"बड़ा अफ़सोस है......तुम ने तो हमारा ही ख्याल किया था......"—साहब अटक-अटक कर बोले—"वैसे तो बेचारी नेक है। हां, तुम जानती ही हो कि औरत तो नेक ही भली होती है, लेकिन......"

"यह मेरे ही स्वार्थ के कारण हुआ।"—रानी बोलीं। वे अपने दोनों हाथ गोद में रखे निश्चल बैठी थीं। दृष्टि उन की खिड़की के बाहर लगे बांस के वृक्ष की धूप में फ़र्श पर पड़ती छाया पर थी। रानी को आन्द्रे भाई की बातें याद आ रही थीं और अब वह ठीक ही जान पड़ रही थीं। वे समझ रही थीं कि वे स्वतंत्र तभी हो सकेंगी जब अपने आप को पूर्णतः

मिटा देंगी। इस के लिये उन्हें सब से अधिक अप्रिय बात को भी स्वीकार करना होगा।

"भूल मेरी ही थी।"—रानी आंखें झुकाये ही बोलीं, "जैसे आप का संतोष हो वैसे ही ठीक रहेगा। आप चाहते हैं तो च्यूमिंग को कहीं भेज देंगे और मैं फिर यहां लौट आऊंगी।······जो हुआ उसे दोनों ही भुला दें।"

रानी सिर झुकाये साहब से प्रसन्नता भरा समर्थन सुनने की आशा में थीं, परन्तु ऐसा संकेत नहीं मिला। उन्हों ने आंखें उठा कर साहब की ओर देखा—साहब पसीना-पसीना हो रहे थे। रानी से आंखें मिलने पर वे अपनी असहाय अवस्था पर हँस पड़े और जेब से रेशमी रूमाल निकाल कर पसीना पोंछने लगे।

"यदि हमें ऐसी आशा होती,"—बहुत प्रयत्न कर वे बोले, "यदि हम जानते······"

रानी के हृदय पर मानो बरफ़ की चट्टान आ पड़ी। समझ गयीं, साहब को उन की आवश्यकता नहीं। उन्हों ने ठीक ही सुना था। उन का मन दूसरी तरह की औरत की ओर लग गया था।

"यह कौन स्त्री है ?"—रानी ने दबे हुए स्वर में पूछा।

साहब मुस्कराये और फिर झिझकते, अटकते और झेंप मिटाने के लिये बीच-बीच में हँसते हुए विचार प्रकट किया कि चमेली को अलग जगह ले कर क्यों न रख लें ?······लड़की जवान है······सीधी-सादी है।

"दूसरी जगह लेने से तो आप की परेशानी ही बढ़ेगी।"—रानी बोलीं।

"यहां अब हम और परेशानियां नहीं बढ़ाना चाहते।"—साहब बोले।

रानी ने स्नेह से साहब की ओर देख कर उत्तर दिया—"यदि आप को सुख मिल सके तो मुझे परेशानी क्या होगी !" उसे यहीं अपने आंगन में ले आइये। अलग जगह ले कर दो घर क्यों बनायेंगे ?"

साहब उठ कर खड़े हो गये और रानी का हाथ अपने हाथ में ले कर बोले—"तुम बड़ी नेक हो। बड़ी किस्मत से ऐसी स्त्री मिलती है कि पुरुष अपने घर में भी अपनी इच्छा शांति से पूरी कर सके।"

रानी ने मुस्करा कर अपने हाथ खींच लिये। अपने आंगन में लौट कर रानी बहुत देर सोचती रहीं। मन में एक गड़न अनुभव हो रही थी। पति के लिये अपनी जगह स्वयं एक स्त्री बुला देना एक बात थी और उन का अपनी इच्छा से एक और स्त्री ले आना दूसरी। वे स्त्री-पुरुष के संबंध के इस गोरखधन्धे को सुलझा नहीं पा रही थीं। उन का विचार था कि वे पति को प्यार नहीं करतीं और स्वतंत्र हो जाना चाहती हैं। अब यह जान कर कि पति उन्हें प्यार नहीं करते, व्यथा अनुभव हो रही थी। आन्द्रे भाई का कहना ठीक था। यह सब उन का अपना ही स्वार्थ था।

× × ×

"स्वार्थ से मुक्ति कैसे मिल सकती है?"—रानी ने आन्द्रे भाई से प्रश्न किया।

"दूसरों की चिन्ता कीजिये।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

"आप का मतलब है मैं दूसरों के सामने झुकती रहूँ?"

"यदि दूसरों के सामने झुके बिना आप को अपना ही ख्याल रहता है तो दूसरों के सामने झुक जाइये।"—आन्द्रे ने फिर कहा।

"साहब दूसरी रखेल हवेली में ले आना चाहते हैं, क्या उन के सामने झुक जाऊं?"—रानी ने पूछा।

"पहली रखेल लाने का पाप तो आप ही ने किया था।"—आन्द्रे बोला।

रानी का मस्तिष्क उत्तेजित हो उठा। क्रोध को संभाल कर बोलीं—"आप सन्यासी हैं। आप नहीं समझ सकते कि अपनी इच्छा न होने पर भी अपना शरीर दूसरे को सौंपने की विवशता से कैसी यातना होती है!" अपनी यातना का भाग आन्द्रे को दे सकने के लिये वे तड़प उठीं

और बोलीं—"आप नहीं समझ सकते कि अपने सुकुमार शरीर को एक खूंसट व्यक्ति के हाथ में देने का मतलब क्या है! मन में घृणा होते हुए भी वासना से तपते हुए शरीर को कैसे सहा जाता है! मन और मस्तिष्क में वेदना अनुभव कर के भी परिवार में शांति बनाये रखने के लिये सब कुछ सह जाने का अर्थ क्या होता है!"

आन्द्रे के चेहरे पर कोई परिवर्तन नहीं आया। "आत्मा की रक्षा के लिये शरीर को बलिदान करने के कई ढंग हो सकते हैं।"—उस ने कहा।

"तो क्या मैं हवेली में दूसरी रखेल आ जाने दूं?"—गहरी सांस ले कर रानी ने पूछा।

"आप के पति उसे अलग ले कर रखें; उस की अपेक्षा उस का यहाँ आ जाना ही अच्छा है।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

"हमें आशा नहीं थी कि एक अंग्रेज़ पादरी भी ऐसी सलाह देगा।"—रानी मन ही मन कुढ़ कर बोलीं।

रानी ने आगे बात न करने के लिये पुस्तक खोल ली। वे आन्द्रे से ईसाइयों की धार्मिक भजनों की पुस्तक पढ़ रही थीं। यह धार्मिक भजन रानी के मर्म को छू रहे थे। इन में आराध्य देव के लिये करुण क्रन्दन था।······आशा और विश्वास ही आराधना का मूल मंत्र हैं। जीवन और मृत्यु का तत्त्व यही है कि वे भगवान् की इच्छा हैं।

"क्या हमारे विधाता और आप के भगवान् एक ही बात हैं?"—रानी ने पूछा।

"निस्सन्देह एक ही बात हैं।"

"परन्तु मिस हिसा कहती हैं कि वे एक नहीं हैं।"—रानी ने आन्द्रे की भूल सुझाई, "हिसा तो सदा कहती है कि हमें एक ही सच्चे भगवान् में विश्वास करना चाहिये, विधाता में नहीं; तब वे दोनों एक कैसे हो सकते हैं?"

"सभी सम्प्रदायों में कुछ मूर्ख भी होते हैं।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "भगवान् तो एक ही है, परन्तु उस के नाम अनेक हैं।"

"तो इस भूमंडल के अनेक देश-देशान्तरों में मनुष्य चाहे जिस भगवान् में विश्वास करता हो; भगवान् एक ही है और सब लोग उसी में विश्वास करते हैं?"

"हां, इसीलिए सब लोग भाई-भाई हैं।"—आन्द्रे ने स्वीकार किया।

"और यदि हम किसी भगवान् में विश्वास न करें, तो?"—रानी ने अपना हठ प्रकट किया।

"भगवान् को जल्दी नहीं है।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "भगवान् प्रतीक्षा करता है। उस के समय की सीमा नहीं है।"

रानी को अनुभव हुआ जैसे कोई लहर-सी स्वयं उन के और आन्द्रे के शरीर से गुज़र गयी हो, परन्तु यह लहर न तो आन्द्रे से आरम्भ हुई थी और न रानी में उस का अंत होता जान पड़ा। यह लहर मानो पृथ्वी के एक ध्रुव से आरम्भ हो कर दूसरे ध्रुव तक जा रही थी।

"भगवान् प्रतीक्षा करते हैं, उन्हें जल्दी नहीं है।"—रानी ने मन ही मन दुहराया।

उस संध्या रानी और आन्द्रे में और बात न हुई। आन्द्रे ने अपनी पुस्तकें एक बड़े काले रूमाल में बांध लीं और चला गया। आन्द्रे आंगन से चला जा रहा था तो रानी पुस्तकालय के दरवाज़े में खड़ी देख रही थीं। आन्द्रे का भारी सिर तनिक झुका हुआ था, मानो गर्दन के लिए वह बोझ कुछ अधिक था। रानी ने सोचा पादरी का सिर इसलिए झुका रहता है कि उस की आंखें कुछ क़दम दूर सड़क पर ही लगी रहती हैं। दूर सामने क्या है, यह देखने के लिये वह कभी सिर उठाता ही नहीं।

रानी फिर पुस्तकालय में जा बैठीं। प्राय: ही वह आन्द्रे के चले जाने के बाद पढ़ी हुई चीज़ों का मनन करती रहती थीं। पुस्तकालय में बैठे उन्हें अभी बहुत समय नहीं बीता था कि दूसरे आंगनों से कोलाहल सुनाई

दिया। रानी ने सिर उठा कर समझना चाहा परन्तु उठी नहीं। सोचा, जो होगा इंग आ कर बता ही देगी।

इंग आंगन में दौड़ी आती दिखाई दी। वह चीख मार कर रो रही थी। उस का मुंह आंचल में ढंका हुआ था।

रानी उठ खड़ी हुईं। समझ गयीं अवश्य ही कोई भयानक दुर्घटना हुई है। पहले ध्यान लिआंगमो की ओर गया, परन्तु बड़ा लड़का तो सुबह ही काम से बाहर चला गया था। उन्हें वू साहब की याद आयी, तब तक इंग भीतर आ गयी थी। मुंह पर से आंचल हटा कर वह चिल्ला कर बोली—"हाय विधाता, फिरंगी पादरी······"

"क्यों, पादरी को क्या हुआ ?"—रानी ने चिन्ता से पूछा, "अभी तो यहां से गये हैं।"

"बाज़ार में किसी ने उन्हें मारा है।"—इंग ने रो कर बताया, "सिर फट गया है।"

"सिर फट गया है ?"—रानी के मुंह से सहमा निकला।

सिसकियां लेते हुए इंग ने बताया—"हुज़ूर यह हरे पट्टे वाले बदमाशों की शरारत है। वे लोग महाजन की दूकान लूट रहे थे। पादरी ने देखा, महाजन रो-रो कर विधाता को गाली दे रहा था। पादरी उस की मदद के लिये आगे बढ़ गये। एक बदमाश ने उन के शिर पर चोट मार दी।"

रानी हरे पट्टे वाले गिरोह की बाबत अधिक नहीं जानती थीं। उन्हें यही मालूम था कि ये लोग देहात और शहरों में सभी जगह लूटपाट करते हैं। ज़मीनों के मुख़्तार के खाते में प्रायः ही हरे पट्टे वाले गिरोह को दी गई रक़म का भी हिसाब रहता था।

"आन्द्रे भाई हैं कहां ?"—रानी ने पूछा।

"लोग उहें उठा कर उन के घर ले गये हैं। चौकीदार आया है, कहता है पादरी ने हुज़ूर को याद किया है।"

"हम जायंगे।"—रानी बोलीं, "कपड़े पहनाओ।"

"पालकी के लिए कह दूं ?"—इंग ने पूछा।

"नहीं, इतना समय नहीं है।"—रानी बोलीं, "फाटक पर कोई रिक्शा ले लेंगे।"

कुछ ही पल में हवेली भर में समाचार फैल गया कि रानी फिरंगी पादरी के घर गयी हैं। ऐसी बात हवेली की किसी स्त्री ने, स्वयं रानी ने भी, कभी नहीं की थी। रिक्शा में बैठते ही रिक्शा वाले से बोलीं—"डबल चाल से चलो, डबल दाम मिलेंगे।"

रिक्शा वाला घूम कर बोला—"तिगुना दाम दीजिये तो तिगुनी चाल से चलूं, रानी ने स्वीकार कर लिया।"

रानी के पीछे दूसरे रिक्शे में बैठी इंग बहुत पीछे रह गयी थी, परन्तु उस समय रानी को यह ख्याल नहीं था कि लोग क्या कहेंगे। मन में एक ही व्याकुलता थी—जल्दी से जल्दी जा कर आन्द्रे भाई की अंतिम बात सुन लें, उन से अंतिम आदेश ले सकें।

रानी ईंटों की चारदीवारी से घिरे एक हाते के फाटक के सामने रिक्शा से उतरीं। फाटक पर रोगन भी नहीं था। रानी भीतर चली गयीं। रोती हुई एक बुढ़िया दिखाई दी।

"आन्द्रे भाई कहां हैं?"—रानी ने पूछा।

बुढ़िया रानी को एक छोटे-से-नीची छत के मकान में ले चली। खुले दरवाज़े से आंगन में बहुत-से बच्चे दिखाई दे रहे थे। बच्चे सिसकियां ले-ले कर रो रहे थे। आंगन के आगे छोटा कमरा था।

कमरे में बांस की तंग खटिया पर आन्द्रे भाई लेटा था। पड़ोस के चिथड़े पहने कुछ ग़रीब स्त्री-पुरुष चारों ओर खड़े थे। रानी को देख कर वे लोग एक ओर हट गये। आन्द्रे भाई को मानो रानी के आने का अनुमान हो गया, उस ने आंखें खोल दीं। सिर पर एक मोटा-सा तौलिया लिपटा हुआ था। खून की धारें उन की गालों पर से बह कर तकिये में समाती जा रही थीं।

"हम आ गये हैं।"—रानी बोलीं, "कहिए क्या करना होगा?"

कुछ देर तक आंद्रे भाई बोल न सका। उस की बुझती-सी आंखों से

रानी को अनुमान हो गया कि वह कुछ ही पल का मेहमान है। आंद्रे ने यत्न किया और उस के होंठ खुल गये। लम्बी सांस ले कर वह स्पष्ट स्वर में बोला—"मेरे बच्चों को सम्भालना।"

आंद्रे भाई की पलकें कांपी। श्वास रुकती हुई जान पड़ी। शरीर में सिहरन-सी जान पड़ी। उस का शरीर निष्प्राण हो गया। दोनों हाथ खाट से नीचे लटक कर फ़र्श को छूने लगे। रानी ने आगे बढ़ कर आन्द्रे का दायाँ हाथ थाम लिया। दूसरी ओर खड़ा एक आदमी आगे बढ़ा और उस ने बायाँ हाथ थाम लिया। रानी ने सामने खड़े उस आदमी की ओर देखा। वह चिथड़े पहने था। शायद कोई भिखारी था, या कोई मज़दूर, या नौकर। उस व्यक्ति ने रानी की ओर सहमते हुई देखा और आन्द्रे का बायाँ हाथ उस के सीने पर धीमे से रख कर पीछे हट गया। रानी ने भी दायाँ हाथ बायें हाथ पर रख दिया और पीछे हट गयीं।

रोते हुए बच्चे भीतर घुस आये। वे "बाबा ! बाबा !" पुकार कर रो रहे थे। सब लड़कियां ही थीं। सब से बड़ी लड़की भी पन्द्रह वर्ष से कम ही थी। बड़ी लड़कियां गोद में छोटे-छोटे बच्चों को लिए थीं। बच्चे आन्द्रे-भाई के शरीर को छू-छू कर देख रहे थे। अपने कुर्त्तों के आंचल से उस का रक्त पोंछ रहे थे और रो रहे थे।

"तुम लोग कौन हो ?"—रानी ने बच्चों को सम्बोधन कर पूछा।

"हम लोग बाबा के बच्चे हैं।"—बच्चों ने उत्तर दिया।

"अनाथ हैं।"—सामने खड़ा चिथड़ा पहने आदमी बोला, "इन सब लड़कियों को बाबा शहर की चारदीवारी के बाहर से उठा कर लाये हैं। जहां लोग लड़कियों को फेंक आते हैं। बड़ी लड़कियां भागी हुई दासियां हैं। जो कोई आ जाय, बाबा सब को रख लेते थे।"

रानी का मन रो रहा था। रो देने की इच्छा भी हो रही थी, परन्तु रोते हुए बच्चों को देख कर वह रो न सकीं।

"हाय, बाबा मर गये !"—एक छोटी-सी बच्ची रो-रो कर चिल्ला

रही थी। बच्चो आन्द्रे के हाथ अपने आंसू भरे गालों से लगा-लगा कर कह रही थी--'हाय बाबा मर गये।"

रानी बहुत देर तक उस विचित्र परिवार में निश्चल खड़ी रही। ख्याल आया कि घटना के विषय में तो उन्हों ने कुछ पूछा ही नहीं।

"इन्हें उठा कर यहां कौन लाया ?"—रानी ने प्रश्न किया।

चिथड़ा पहने आदमी ने सीने में हाथ रख अपनी ओर संकेत कर उत्तर दिया—"मैं ही लाया हूं। मेरे सामने ही चोट खा कर गिर पड़े थे। बाज़ार में डर के मारे कोई नहीं बोला। ये गिर पड़े तो हरे पट्टे वाले डाकू भी डर के मारे भाग गये। महाजन ने दुकान में ताला लगाया और अपने घर चला गया। मुझे किसका डर था! मैं तो मंगता हूं। बाबा कभी-कभी कुछ दे देते थे। जाड़ों में सोने की जगह दे देते थे, कभी खाने को भी दे देते थे।"

"इन्हें तुम उठा कर लाये ?"—रानी ने पूछा।

"हम सब मंगते भाई लोग उठा कर लाये हैं।"—अपने साथ खड़े लोगों की ओर संकेत कर वह बोला, "इतने बड़े शरीर को एक-दो आदमी तो उठा नहीं सकते।"

रानी की आंखें फिर आन्द्रे भाई के निश्चल चेहरे की ओर झुक गयीं। रानी अपने लिए अन्तिम शिक्षा और आदेश पाने की आशा नें आयी थीं, परन्तु सुना—"मेरे बच्चों को सम्भालना।"

रानी ने बाबा के बच्चों की ओर देखा। बच्चे उन्हीं की ओर देख रहे थे। वे अपनी बचपन की चेतना से ही समझ गये थे कि उन का उत्तरदायित्व आन्द्रे बाबा के निर्जीव शरीर से रानी के सजीव शरीर ने ले लिया।

"हम तुम्हारे लिए क्या करें ?"—रानी ने बच्चों की ओर देख कर पूछा।

एक दुबली-सी छोटी लड़की आगे बढ़ आई। वह एक मोटे से बच्चे को गोद में उठाये थी। रानी के मुंह की ओर देख उस ने पूछा—"हुज़ूर, बाबा ने आप से क्या कहा है ?"

रानी के पास एक ही उत्तर था—"उन्हों ने तुम्हें सम्भालने को कहा है।'

बच्चे एक-दूसरे की ओर देखने लगे। दुबली लड़की ने अपने भारी बोझ को सम्भाल कर पूछा—"आप के यहां हम सब के लिए खाना है?"

"है।"—रानी ने उत्तर दिया।

रानी चुप खड़ी बच्चों की ओर देखती रहीं।

"हम लोग बीस हैं।"—दुबली लड़की ने बताया, "मैं पन्द्रह वर्ष की हूँ। सोलह वर्ष की हो जायं तो बाबा हमारा इंतज़ाम कर देते हैं।"

"इंतज़ाम कर देते हैं?"—रानी ने विस्मय से प्रश्न किया।

बुढ़िया ने आगे बढ़ कर समझाया—"लड़कियां सोलह वर्ष की हो जायँ तो बाबा इन के लिये घर-बार, आदमी ढूंढ़ देते हैं।"

वे लोग ऐसे बात कर रही थीं मानो खाट पर लेटा वह विशाल शरीर अभी सजीव हो। रानी की दृष्टि फिर उसी ओर चली गयी। आंद्रे की आंखें बन्द थीं और दोनों हाथ सीने पर रखे हुए थे।

"तुम सब लोग बाहर जाओ।"—रानी ने बच्चों को आदेश दिया, "इन्हें यहीं रहने दो।" रानी ने दूसरे लोगों को भी संबोधन किया।

उन की आज्ञा मान कर भिखमंगे, बच्चे और बुढ़िया सब लोग कमरे से बाहर हो गये। केवल इंग किवाड़ के साथ लगी खड़ी रही। रानी उस की ओर भी देख कर बोलीं—"बाहर जाओ!"

"मैं बाहर खड़ी हूं।"—कह कर इंग कमरे से निकल गयी।

रानी ने किवाड़ मूंद दिये। ऐसी बात की चर्चा अवश्य होती—किसी महिला का विदेशी पादरी के साथ अकेले रहने का क्या मतलब? चाहे पादरी मर ही चुका हो, परन्तु रानी ने चिन्ता नहीं की। रानी के लिये आन्द्रे भाई न विदेशी ही था, न पादरी ही। वही एक आदमी उन्हें मिला था जिस का वह आदर करती थीं। स्वर्गीय ससुर ने भी उन्हे बहुत कुछ सिखाया था परन्तु वे बहुत-सी बातों से भयभीत भी रहते थे। आन्द्रे भाई निर्भय था। उसे न मृत्यु का भय था, न जीवन का। आन्द्रे भाई जब तक जीवित था रानी ने उसे पुरुष माना ही नहीं था, परन्तु इस समय उसे एक मृतक पुरुष मान लेने में बाधा नहीं थी। रानी ने उस की ओर देख कर सोचा, यौवन

में यह विशाल शरीर कितना सुंदर रहा होगा ! अब भी उस की बादामी त्वचा इतनी स्वच्छ है !

सहसा रानी ने पहचाना। उन के होंठ विस्मय में खुल गये और बोल उठीं—"तो मैं तुम्हें प्यार करती थी।"

इस ज्ञान और इस स्वीकृति से रानी को जान पड़ा कि उन का सम्पूर्ण अस्तित्व बदल गया। वह निश्चल खड़ी थीं, परन्तु शरीर थरथरा उठा। रक्त की गति बढ़ गयी और मस्तिष्क स्पष्ट हो उठा। शरीर में शक्ति अनुभव होने लगी। सिर उठा कर उन्हों ने कमरे में चारों ओर देखा। कमरा बंद था, परन्तु उन्हें कोई बाधा नहीं जान पड़ रही थी। खाट की अर्थी पर आन्द्रे भाई का शरीर पड़ा था। रानी ने सोचा, आन्द्रे भाई इस शरीर को छोड़ गये। आत्मा में रानी का विश्वास नहीं था। वर्षों से वह न किसी मंदिर में गयी थीं और न उन्हों ने पूजा ही की थी। उन के पिता ने ऐसे मिथ्या संस्कारों की जड़ें उखाड़ दी थीं, रहा-सहा अंध-विश्वास ससुर ने दूर कर दिया था। अदृश्य भगवान् और आत्मा में उन्हें विश्वास नहीं था, परन्तु विश्वास था कि आन्द्रे की आत्मा अभी जीवित है।

"आन्द्रे !"—रानी ने स्नेह से परन्तु धीमे स्पष्ट स्वर में पुकारा, भाई शब्द अनावश्यक था, और बोलीं, "मेरे लिये तो तुम जीवित रहोगे। मैं तुम्हें सजीव रखूँगी।"

रानी ने अनुभव किया कि इन शब्दों से एक अद्भुत और असीम शांति और संतोष से उन का मन व्याप्त हो गया। यह अनुभव अभूतपूर्व था। सूने कमरे में आंद्रे के शारीरिक आवरण के सम्मुख खड़ी वे उत्साह और संतोष अनुभव कर रही थीं।

रानी यह अभूतपूर्व शांति मन के सम्मोहन और शरीर की निष्क्रियता के रूप में अनुभव नहीं कर रही थीं, बल्कि शरीर में कर्म-तत्परता की स्फूर्ति अनुभव हो रही थी। उन्हें कर्तव्य का पथ स्पष्ट दिखाई दे रहा था। आन्द्रे के शरीर का अंतिम सत्कार किया जाना चाहिये था परन्तु उस के लिये पुरोहितों और प्रार्थनाओं के आडम्बर की अवश्यकता नहीं थी। उस की थोड़ी

बहुत चीज-बस्त का भी प्रबंध करना था। वह उन्हों ने स्वयं ही करने का निश्चय किया। इस के पश्चात् उस के चालू काम को निबाहते रहना ही कर्तव्य था।

रानी आश्वस्त हो कर बाहर आ गईं। इंग, बुढ़िया, और भिखमंगे उन की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे काठ की एक कुर्सी पर बैठ गयीं और बोलीं—"उन्हें समाधि देने का प्रबन्ध करना होगा।" और पूछा—"इस विषय में वे कुछ कह तो नहीं गये ?"

सब लोगों ने परस्पर देखा। भयभीत बच्चे कुछ बोल न सके। बुढ़िया आंचल से आंसू पोछ। सिसकी ले कर बोली—"उन्हें क्या मालूम था कि ऐसे मर जायँगे।" हम लोग ही भला क्या सोचते थे कि वे मर जायँगे !"

"उन के कोई सम्बन्धी है कहीं ?"—रानी ने प्रश्न किया, "मालूम हो तो उन का शरीर वहीं भेज दिया जाय।"

आन्द्रे बाबा के सम्बन्धियों के विषय में किसी को कुछ मालूम नहीं था। किसी को यह भी नहीं मालूम था कि वे कब और कहां से आये थे। वर्षों से वे वहीं बसे हुये थे।

"उन के खत-पत्र तो आते होंगे ?"—रानी ने पूछा।

"कभी आते थे तो बाबा उन्हें देखते नहीं थे।"—बुढ़िया ने उत्तर दिया, "यों ही पड़े रहते थे, मैं उन्हें ले कर बच्चों की जूतियों के तले में सो देती थी।"

"कभी पत्र लिखते नहीं थे ?"

"नहीं हुजूर, कभी नहीं।"

"कभी तुम से कोई बात की है उन्हों ने ?"—रानी ने मँगते की ओर देख कर पूछा।

"किसी सम्बन्धी की बात तो कभी नहीं की।"—उस ने उत्तर दिया, "जब बात करते थे, शहर और देहात के ग़रीबों को कोई मदद देने की ही बात करते थे।"

रानी ने सोचा संसार में आन्द्रे का कोई नहीं था, केवल वे ही उस की

अपनी थीं। आन्द्र के लिये एक बहुत सादा काला बक्स कफ़न के लिये बनवायेंगी। समाधि के लिये भी स्थान उन्हों ने अपने चावल के खेतों से कुछ ऊपर पश्चिमी पहाड़ी की ढलवान पर निश्चय कर लिया। ढलवान पर एक बहुत पुराना 'जिगको' का वृक्ष था। वर्ष के आरम्भ में वे अपनी ज़मीनों का निरीक्षण करने जाती थीं तो विश्राम के लिए उसी वृक्ष के नीचे बैठती थीं। रानी कुर्सी से उठ कर खड़ी हो गयीं और बोलीं—"आज दोपहर बाद हम स्वयं जा कर कब्र खुदवा आयेंगी।"

बुढ़िया और बच्चे उन की ओर उत्सुकता और चिंता से चुपचाप देखते रहे। उन की आशंका समझ कर रानी ने खाली कमरों में नज़र दौड़ाते हुये पूछा—

"यह मकान आन्द्रे भाई का है?"

बुढ़िया ने इँकार में सिर हिला कर उत्तर दिया—"किराये का है।" और बताया कि मकान भुतहा है। कोई और इसे लेता नहीं। हम लोगों को सस्ते में मिल गया था। भूत आते हैं रात में। भूत बाबा से डरते थे। हम लोग तो वर्षो से यहां बहुत सस्ते में रह रहे हैं।

"उन का कुछ और सामान है?"—रानी ने फिर पूछा।

"नहीं हुजूर, बस दो जोड़े कपड़े हैं। एक को धो कर धूप में डाल देते थे, दूसरा पहन लेते थे। किताबें हैं कुछ और एक सलीब गले में लटकाये रहते थे। एक बार कहीं से एक बहुत सुन्दर मूर्ति ले आये थे, उसे लकड़ी की सलीब पर लगा कर अपनी खाट के ऊपर दीवार में लटका दिया था। एक दिन वह गिर कर टूट गयी तो फिर दूसरी नहीं लाये। एक सुमिरनी थी उन के पास। एक दिन एक बच्ची माला से खेल रही थी। धागा टूट कर दाने बिखर गये। पूरे दाने मिल नहीं पाये तो बाबा बोले—"जाने दो, ज़रूरत भी क्या है!"

बुढ़िया की बात सुनती हुई रानी कमरों में उधर-उधर देख रही थीं। एक कोने की ओर संकेत कर उन्हों ने पूछा—"उस काले बक्से में क्या है?"

"यह जादू का बक्सा है हुजूर।"—बुढ़िया ने बताया, "बाबा रात में इस में से कुछ सुनते थे।"

रानी को याद आया, आन्द्रे ने इस विषय में उन्हें भी बताया था। वे उठीं और बक्से पर कान झुका कर सुनने लगीं। उन्हें कुछ सुनाई नहीं दिया।

"हुजूर इस में से दूसरा कोई नहीं सुन सकता।"—बुढ़िया ने बताया।

"हूँ, तो इसे भी उन के शरीर के साथ ही समाधि में रख देना होगा।"—रानी बोलीं।

"हुजूर एक और भी जादू है। बाबा ने उसे छूने के लिये मना कर दिया था।"—बुढ़िया ने बताया।

"कहाँ है?"—रानी ने पूछा।

बुढ़िया ने झुक कर खाट के नीचे से लकड़ी का एक लम्बा बक्स खींच लिया और खोल कर दिखाया। बक्स में एक लम्बी-सी वस्तु रखी हुई थी।

"रात में बादल नहीं रहते थे तो बाबा इसे आंख पर लगा कर आकाश में देखा करते थे।"—बुढ़िया बोली।

रानी समझ गईं कि वह आन्द्रे की दूर्बीन थी जिस से वे नक्षत्रों का अध्ययन किया करते थे। निश्चय किया, इसे हम ले जायंगे। बोलीं—"उन की पुस्तकें भी हमें दे दो। उन के कपड़े और सलीब भी समाधि में रख दिये जायंगे। इस मकान के मालिक से कह देना कि यह मकान अब पवित्र हो गया है। अब यहां भूत नहीं आयेंगे। चाहे तो किराये पर दे दे।"

सब बच्चे भय से बुढ़िया के चारों ओर सिमट आये। वे डर रहे थे कि उन का घर छिन गया, अब वे कहां जायंगे!

रानी ने करुणा से मुस्करा कर उन की ओर देखा और बोलीं—

"तुम सब लोग, बड़ी बहन तुम भी, हमारे साथ हमारे घर चलो, वहीं रहना।"

बच्चों का भय दूर हो गया। बचपन की निर्भय सरलता से वे चिल्लाने लगे—"कब?…कब चलेंगे?"

"हमारा ख्याल है तुम कल तक यहीं रहो।"—रानी बोलीं, "यहां से हम सब लोग एक साथ इन्हें समाधि देने जायंगे। वहां से तुम लोग हमारे साथ घर चले चलना।"

"भला हो हुजूर का, बड़ी दयालु हैं। बाबा सब देख रहे हैं।"—बुढ़िया ने सिसकी भर कर कहा।

बुढ़िया की बात की उपेक्षा कर रानी ने मुस्करा कर पूछा—"यहां सब लोगों के लिये चावल हैं? आज और कल सुबह तक के लिये चाहिये। दोपहर का खाना हमारे ही घर में होगा।"

बुढ़िया रोती हुई बोली—"बाबा एक दिन का खाना हमेशा रखता था। आज का तो है।"

"कल सुबह हम आ जायंगे।"—रानी ने आश्वासन दिया।

बच्चे रानी के चारों ओर सिमट आये। रानी जानती थीं कि वे लोग इसी प्रकार आन्द्रे को घेर कर संतोष और सान्त्वना पाते होंगे, इसलिये मुस्कराती रहीं। उन्होंने सब को सम्बोधन किया—"अच्छा, बच्चो अब हम कल आयेंगे।" वे आन्द्रे के घर से चल दीं।

आन्द्रे के घर में प्रवेश करने वाली रानी भीतर ही रह गयीं, बाहर दूसरी ही रानी थीं।

रानी अपने आंगन में लौट कर बहुत देर तक सोचती रहीं—यदि आन्द्रे जीवित रहते तो भी एक दिन वे जान ही जातीं कि वे उस से प्यार करती हैं। तब क्या होता? या तो उन्हें कोई कारण बता कर आन्द्रे का हवेली में आना रोक देना पड़ता, या वे आन्द्रे के सामने अपना प्रेम स्वीकार कर लेतीं।······ इस से भी तो उन का वियोग हो ही जाता।

रात में भी वे कई घंटे तक चुपचाप बैठी सोचती रहीं। इंग ने आ कर सेज पर चलने के लिये कहा तो उन्हों ने सुना नहीं। मन चाह रहा था कि सजग बैठी सोचती और अनुभव करती रहें। उन्हों ने किस व्यक्ति से प्यार किया? एक अपरिचित विदेशी से, जिस ने कभी उन का हाथ तक स्पर्श

नहीं किया। उस स्पर्श की अनुभूति की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। उन के होंठों पर एक मुस्कान फिर गयी।

घर भर में प्राय: अंधकार ही था। केवल एक मोमबत्ती जल रही थी। रानी को अपने हृदय का स्वर सुनाई दिया—"यदि मैंने अपना हाथ तुम्हारी ओर बढ़ा दिया होता तो क्या तुम डर जाते ?"

रानी को विश्वास था कि आन्द्रे किसी भी बात से डर नहीं सकता था। उसे अपने भगवान् पर विश्वास था। अचानक उन्हें याद आया कि पुरुषों के देवता और भगवान् स्त्रियों से घृणा करते हैं। एक ईर्ष्या-सी मन में उन्हें पहली बार अनुभव हुई।

"नहीं, हम लोगों के कोई भगवान् नहीं।"—रानी बोलीं।

रानी सोच रही थीं स्त्रियां भगवान् और देवता में विश्वास क्यों करें ? उन्हें विस्मय हो रहा था कि स्त्रियां भी भगवान् और देवताओं की पूजा करती हैं ? मिस हिसा सदा ही भगवान् की बात करती रहती हैं, परन्तु हिसा दूसरी बात क्या करे ? उस के पति नहीं, बच्चे नहीं, संबंधी नहीं, घर नहीं। असहाय और सूनेपन में वह भगवान् से चिपट गयी है। स्त्री के लिये तो यह अनिवार्य है कि वह पुरुष की तरह ही जीवन बिता कर सब कुछ पा कर भी सब कुछ छोड़ दे और अपने भगवान् को ढूंढ़ ले। जिन स्त्रियों से उन का परिचय था, उन में से एक भी तो ऐसी नहीं थी जिस ने भगवान् की उस रूप में चिन्ता की हो जैसे आन्द्रे करता था। आन्द्रे ने यौवन में अपनी प्रेयसी की चिन्ता नहीं की। धन कमा सकता था, उस की चिन्ता नहीं की। यश पा सकता था उसे भी छोड़ा और केवल अपने भगवान् को ढूंढ़ता रहा।

रानी कल्पना में आन्द्रे के यौवन की प्रेयसी की बात सोचने लगीं, जिसे छोड़ कर आन्द्रे सन्यास की ओर आकर्षित हो गया।······वह स्त्री युवा होगी और सुन्दर भी होगी।······रानी को ईर्ष्या अनुभव हुई। ईर्ष्या इस लिये नहीं कि उस स्त्री ने आन्द्रे का प्रेम पाया था, बल्कि इसलिये कि उस स्त्री ने आन्द्रे को सन्यास धारण करने से पूर्व यौवन में देखा था।

"······ यदि मैं उस युवा दैत्य को देख पाती !"—रानी सोच रही

थीं। उन के कोमल हाथ एक-दूसरे पर निश्चल थे। उँगलियों में पहनी अंगूठियां मध्यम प्रकाश में चमक रही थीं। रानी सोच रही थीं······ इस प्रौढ़ावस्था में भी वह दर्शनीय था। यौवन में उस के रूप का आकर्षण नारी के लिये कितना प्रबल रहा होगा? कितनी अभागी रही होगी वह स्त्री जिस की आन्द्रे ने उपेक्षा कर दी! संभव है, उस का विवाह हो गया हो, उस के बहुत से बच्चे भी हों। किसी पुरुष से उपेक्षा पा कर स्त्री मर तो नहीं जाती, परन्तु वह कभी तो आन्द्रे को याद करती ही होगी; प्रेम से हो या क्रोध से। यदि वह स्त्री संकीर्ण हृदय रही होगी तो अब आन्द्रे से घृणा ही करती होगी; यदि उदार हृदय होगी तो अब भी आदर और प्रेम ही करती होगी, या भूल भी गयी हो। जब स्त्रियां के मन और शरीर उपयोग में आ-आ कर जीर्ण हो जाते है तो वे प्रायः ही शिथिल हो कर निरपेक्ष हो जाती हैं। यह स्त्री का दुर्भाग्य है कि उस का हृदय और शरीर पृथक्-पृथक् नहीं रह सकता, दोनों ताने-बाने की तरह आपस में बुने रहते हैं। शरीर के जीर्ण हो जाने पर हृदय भी शिथिल हो जाता है। हां, आन्द्रे-जैसे व्यक्ति का प्रेम हो तो दूसरी बात है। मृत्यु से अशरीरी हो कर आन्द्रे ने उन्हें निर्भय कर दिया था। संभव है यदि आन्द्रे जीवित रहता तो उन दोनों की आत्माएं शारीरिक आकर्षण के पाश में फंस जातीं। रानी को अपने शरीर में रक्त की गति बढ़ जाने से एक विचित्र अनुभूति हो रही थी।

"······आखिर हूं तो में स्त्री ही।"—रानी ने निस्संकोच अपने मन में स्वीकार कर लिया। आन्द्रे के सबल विशाल शरीर की स्मृति उन्हें स्फूर्ति दे रही थी। यदि वह सजीव उन के सम्मुख उपस्थित होता तो उन की शांति कैसे रह पाती! रानी को जान पड़ा कि हरे पट्टे वाले डाकुओं की दया से ही उन की रक्षा हो पायी। दरवाज़े से उन की दृष्टि आंगन में खिलखिलाती चांदनी की ओर गयी। बांस के पेड़ों के नीचे क्यारी में आर्किड लहरा रहे थे। रानी को परिताप अनुभव हुआ कि वे आन्द्रे की मृत्यु से प्रसन्न क्यों हुई?

"मैं तुम्हारी मृत्यु से प्रसन्न नहीं हूँ।"—रानी ने कल्पना में आन्द्रे को

संबोधन किया, "देखो, हम दोनों कितने बड़े संताप से बच गये और संतोष भी पाया। तुम तो जानते हो, मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूँ!"

रानी को विश्वास था कि आन्द्रे उन की बात को समझ रहा है। इस से अधिक संतोष और समाधान उन्हें और किस बात से होता! वे जानती थीं कि सन्यास का धर्म भंग होने से आन्द्रे को उतना ही संताप होता, जितना स्वयं उन्हें पातिव्रत भंग होने से। वे दोनों ही एक-दूसरे को संयम का उपदेश देते, परन्तु संयम निबाहने के लिये उन्हें एक-दूसरे से सदा के लिये पृथक् भी हो जाना पड़ता। अब उस पार्थक्य की आवश्यकता नहीं थी। वे निर्द्वन्द्व और निर्भय आन्द्रे की बाबत सोचती रह सकती थीं।

रानी निश्चल बैठी थीं परन्तु अपने व्यक्तित्व में आ गये परिवर्तन को अनुभव कर रही थीं। उनका हृदय, मस्तिष्क और विचार सब कुछ बदल गये थे, शारीरिक अनुभूति भी। सोच रही थीं—हां मैं बदल गयी हूं, परन्तु जानती नहीं मैं क्या और कैसे कुछ कर पाऊँगी, और मुझे कैसा लगेगा? मुझे अपनी शक्ति का भी ज्ञान नहीं।······कर्तव्य तो निबाहना ही पड़ेगा चाहे प्रेम का बलिदान ही करना पड़े। शरीर में बार-बार अनुभव हो जाने वाली सिहरन उन्हें शक्ति का आश्वासन दे रही थी।

रानी को विचारों में निश्चल बैठे प्रायः आधी रात बीत गयी। तारों की ओर दृष्टि जाने से उन्हें आन्द्रे की दूरबीन याद आ गयी। दूरबीन वे लेती आयी थीं और पुस्तकालय में ही रखी गयी थी। वे भीतर गयीं, दूरबीन बक्से में से निकाल ली। बक्से में दूरबीन लगाने के लिये तिपाई भी थी। दूरबीन काफ़ी भारी थी, इसलिये उसे तिपाई पर लगाने में काफ़ी परिश्रम करना पड़ा। रानी ने दूरबीन से नक्षत्रों को देखने का यत्न किया। यंत्र का उपयोग करना उन्हें आता नहीं था। वे कुछ देख ही नहीं पायीं। उदास हो कर सोचा, इस का उपयोग आन्द्रे ही कर सकता था। बोलने वाले जादू के बक्स के साथ इसे भी समाधि में रख देना होगा।

यह निश्चय कर रानी उठीं और जा कर सो गयीं।

× × ×

आन्द्रे भाई का अंतिम संस्कार अपने ही ढंग से हुआ। नगर में पहले कभी वैसा संस्कार नहीं हुआ था। रानी आन्द्र के समाधि-संस्कार को परिवार के दूसरे लोगों के संस्कारों-जैसा रूप तो दे नहीं सकती थीं। उन्हों ने अपने पुत्र के गुरु के आदर के अनुरूप संस्कार का आयोजन किया था। सब अनाथ बच्चों के लिये सफ़ेद कपड़े पहनाये गये। आन्द्रे को घर उठा कर लाने वाले भिखमंगों ने उस अवसर के लिये शोक प्रकट करने वाली पोशाक की मांग की। रानी ने स्वयं शोक का कोई चिह्न धारण नहीं किया।

रानी ने यह भी सोचा कि आन्द्रे भाई के समाधि-संस्कार का समाचार नगर में रहने वाले दूसरे विदेशियों को दिया जाय या नहीं। मिस [illegible] को तो समाचार देना ही चाहिये था। नगर के फ़िरंगी डाक्टर को भी समाचार देने में कोई हानि नहीं थी।

फ़िरंगी डाक्टर से रानी का कोई परिचय नहीं था, न ही अब भी उस से मिलने की इच्छा थी। उन्हों ने सुना था कि विलायती डाक्टरों के हाथों में सदा पैने छूरे रहते हैं। वे लोग सदा बीमारों को चीरने-फाड़ने के लिये उत्सुक रहते हैं। फोड़े, नासूर आदि को वे लोग बहुत सफ़ाई से काट देते हैं, परन्तु प्राय ही बीमारों को भी समाप्त कर डालते हैं। चीनी डाक्टर के हाथ से किसी की मृत्यु हो जाने पर उस के विरुद्ध क़ानूनी कार्र-वाई की जा सकती थी, परन्तु विलायती डाक्टर के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं हो सकती थी, इसलिये कम ही लोग उन के यहां पहुंचते थे। प्रायः वही लोग जाते जो जीवन की आशा खो चुके होते।

रानी ने एक नौकर के हाथ नगर के यूरोपियनों को संदेश भेज दिया। नौकर लौट कर जवाब लाया कि यूरोपियन लोग आन्द्रे भाई से अपरिचित हैं। वे उन के धर्म के भी नहीं थे, इस लिये वे लोग उनकी अर्थी में नहीं जा सकेंगे।

यूरोपियनों के सहयोग न देने पर आन्द्रे भाई की अंतिम यात्रा रानी की योजना के अनुसार ही की गई। आन्द्रे भाई का शरीर समाने योग्य कफ़न का बक्स ढूंढ़ने पर भी कहीं न मिला। एक बढ़ई ने बहुत परिश्रम

कर के दो रात और एक दिन में कफ़न का बक्स तैयार किया। इसलिये समाधि निश्चित दिन से तीसरे दिन दी जा सकी। सूर्योदय से पूर्व ही जुलूस चला। जुलूस में सब से आगे रानी की ही पालकी थी। उन के बाद पैदल लोग थे। अन्त में आन्द्रे भाई का कफ़न।

आन्द्रे भाई का शरीर रानी ने अपने सामने ही कफ़न के बक्स में बंद करवाया। लम्बे और बड़े बक्से में उन का शरीर रखवा कर उन्हों ने दूरबीन और बात करने वाला जादू का बक्स भी कफ़न में रखवा दिया। बक्स का ढक्कन जड़ दिये जाने से पूर्व वे उन के मुख की ओर ध्यान से देखती रहीं। आखिर उन की आंखों के सामने ढक्कन जड़ दिया गया और आन्द्रे भाई का शरीर सदा के लिये लोप हो गया। रानी अंतिम समय भी रोई नहीं। आंसुओं से मन का रहस्य प्रकट होने देना उचित नहीं था। वे निश्चल आंखों से ढक्कन में कीलें ठोक दी जाती देखती रहीं। इस के बाद बक्स पर रस्सियां बांधी गयीं। रस्सियों के फंदों में बांस फंसाये गये। बीस आदमियों ने उस बड़े बक्स को कंधों पर उठाया और गलियां व बाज़ारों से नगर के मुख्य द्वार तक ले गये। नगर के मुख्य द्वार से भी जुलूस में रानी की पालकी सब से आगे थी। जुलूस पश्चिम को पहाड़ी की ओर बढ़ता गया। पहाड़ी के ढलवान पर, 'जिंगको' के पुराने वृक्ष के नीचे खुदी हुई समाधि उन की प्रतीक्षा कर रही थी। सब लोग खुदी हुई क़ब्र के चारों ओर खड़े थे। कफ़न के बक्स को धीरे-धीरे क़ब्र में उतार दिया गया। बच्चे रोने लगे, बुढ़िया सिसकियां ले रही थी, परन्तु रानी चुपचाप खड़ी देख रही थीं। क़ब्र में कफ़न रख दिये जाने के बाद मिट्टी डाली गयी। क़ब्र भर जाने के बाद ऊपर मिट्टी का एक चबूतरा बना दिया गया। रानी के मन में रह-रह कर पीड़ा उठ रही थी कि आन्द्रे का अदृश्य शरीर सदा के लिये लोप हो रहा है। अब वह उन की स्मृति में ही सजीव रहेगा।

समाधि का संस्कार कर के जुलूस नगर की ओर लौटा। रानी की पालकी जुलूस के आगे थी। नगर में लौट कर रानी सब बच्चों को हवेली में ले गयीं। अब वे बच्चे अनाथ नहीं रहे।

ग्यारह

अगले दिन प्रातःकाल रानी को अपने नित्य के परिचित कमरों और आंगन में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई दिया, परन्तु नींद से उठ कर भी विश्राम के लिये बनी रहने वाली इच्छा और शिथिलता के स्थान पर उन्हें शरीर में स्फूर्ति और क्रियाशीलता की शक्ति अनुभव हो रही थी। यह अनुभूति अभूतपूर्व थी। इस का स्रोत भी उन्हें स्वयं अपने भीतर ही अनुभव हो रहा था। यौवन के आरम्भ में पति के प्रति भावना और निष्ठा भी एक प्रकार का प्रेम ही था। वू साहब नवयौवन में इतने स्वस्थ सुडौल और सुन्दर थे कि उन की ओर आकर्षण स्वाभाविक ही था, परन्तु पति के इस आकर्षण ने रानी के मन में केवल शारीरिक चेतना को ही जगाया था, हृदय भी शरीर का केन्द्र होने के कारण प्रभावित था ही।

रानी को बचपन की घटना एक याद आ गई। उन्हों ने अपने बूढ़े दादा को एक शेर का फड़कता हुआ हृदय हाथ में लिये देखा था। उन दिनों विश्वास किया जाता था कि शेर का सजीव हृदय खाने से शरीर में शक्ति और साहस आ जाता है। वह घटना उन्हें खूब याद थी। उन की आयु उस समय आठ-नौ वर्ष की रही होगी। पहाड़ी लोग रस्सियों के जाल में फँसे एक शेर को खींचते हुए उन की हवेली में ले आये थे। शेर क्रोध में

बार-बार गुर्रा-गुर्रा कर खौंखिया रहा था। घर के सब लोग भूरे, सुनहरे धारीदार शेर का तमाशा देखने के लिये बाहर आ गये थे। शेर लाल-लाल मुंह फाड़ कर उन लोगों को धमका रहा था। स्त्रियां भय से चीख उठी थीं, परन्तु रानी उस आयु में भी चुपचाप खड़ी शेर की पीली-पीली आंखों में घूरती रही थीं। शेर ने भी अपना मुंह बंद कर उन की ओर घूर कर देखा। वे बेसुधी में एक क़दम शेर की ओर बढ़ गयीं। उन के दादा चिल्ला उठे। एक पहाड़ी लम्बा छुरा ले कर शेर पर झपटा और उसने छुरा शेर के दिल में धँसा दिया। शेर गिर पड़ा। पहाड़ी ने तुरन्त शेर का दिल निकाल कर उन के दादा के सामने पेश कर दिया।

× × ×

आन्द्रे के प्रति रानी के प्रेम का हृदय की तड़पन से कोई संबंध नहीं था। यह प्रेम दोपहर की धूप की तरह गंभीर और प्रकाशमान था। यह प्रेम कर्तव्य का उद्बोधन कर कर्तव्य का मार्ग दिखा रहा था। वह रानी के हृदय और मस्तिष्क में समा कर कर्तव्य की प्रेरणा दे रहा था।

रानी सोच रही थीं, आन्द्रे जिस समय इस आंगन में आते थे तब भी मैं उन्हें प्यार करती थी, परन्तु मैं जानती नहीं थी, उन के मृतक शरीर को देख कर ही यह ज्ञान हुआ। स्त्री होने के कारण मन में यह प्रश्न भी उठा, क्या आन्द्रे भी मुझे प्यार करते थे? प्रेम के प्रतिदान की भावना से उन्हों ने एक बार फिर अकेले रह जाने का सूनापन अनुभव किया। विचार आया:—

अब कभी उस का स्वर नहीं सुन पाऊंगी और कभी उसे देख नहीं पाऊंगी। आंगन की ओर उन की दृष्टि गयी। सोचा, अब कभी उन के क़दमों की आहट इस फ़र्श पर नहीं होगी।

आन्द्रे भाई के क़दमों के बजाय रानी को झाड़ी में बैठे पक्षियों की चहचहाट सुनाई दी, परन्तु स्मृति में आन्द्रे का चेहरा दिखाई देने लगा। आंखों में आत्मीयता का भाव था। दाढ़ी-मूंछ से घिरे होंठों पर प्रसन्नता और बुद्धिमत्ता भरी मुस्कान थी। रानी को वह मुस्कान इतनी सजीव

जान पड़ी कि स्वयं उन के होंठों पर भी मुस्कराहट आ गयी। आन्द्रे का स्वर तो नहीं सुनाई दिया पर विश्वास हो गया कि आन्द्रे भी उन्हें प्यार करते थे। सन्यास की दीवार उन्हें रानी से पृथक् किये थी, परन्तु वे रानी को प्यार करते ही थे। रानी उन्हें स्मृति में क्यों न पुकारें; और आन्द्रे विना पुकारे भी उन की स्मृति में क्यों न आयें! आन्द्रे का शरीर समाप्त हो गया था। अब वे दोनों ही रानी के शरीर में रह सकेंगे।

रानी ने सोचा दो मस्तिष्कों और दो शरीरों का सामर्थ्य पा कर अब उन की शक्ति पहले से दूनी हो गई थी। मसहरी के नीले परदों की ओर देख कर वह सोचने लगीं, मैं कैसी मूर्खताएं कर चुकी हूँ। मेरे कारण घर के लोगों को कितनी उलझनें उठानी पड़ी हैं। मैं स्वार्थवश सदा अपनी स्वतंत्रता की बात सोचती रही हूं।...मैं चाहती थी कि लोग प्रसन्न रहें, परन्तु उन्हें प्रसन्न रहने का उपाय नहीं बता सकी। उन्हें प्रसन्न रखने का यत्न भी नहीं कर सकी। मैंने लोगों के भोजन-वस्त्र का प्रबन्ध किया, परिवार में अनुशासन भी बनाये रखा, परन्तु लोग प्रसन्न न हो सके। और उन के प्रसन्न न होने पर मुझे उन के प्रति क्रोध आता था, यह कितनी मूर्खता थी !

उसी समय इंग शयनागार में आयी। चेहरे से उदास लग रही थी—"हुजूर, आज सेज से उठियेगा नहीं ?"—उदास स्वर में ही इंग बोली।

"बड़े गहरे बादल छाये हैं।"—रानी ने मुस्करा कर उत्तर दिया।

"हुजूर को कैसे मालूम!" —कुछ चिढ़ कर इंग बोली, "हुजूर तो अभी मसहरी से बाहर नहीं निकलीं।"

"बादल तो तेरे चेहरे पर दिखाई दे रहे हैं।"—रानी बोलीं।

"हुजूर, यह तो कभी नहीं सोचा था कि इस हवेली में चकले की रंडियां आ कर रहेंगी।"—इंग बोली, "घर के लड़के विदेस में भटक रहे हैं और रखेल बेकाम हो गयी है तो भी घर में पड़ी है।"

"तो क्या वह लड़की, चमेली आ गयी ?"—रानी ने पूछा।

"लौंडिया पिछले आंगन में बैठी है।"—इंग ने उत्तर दिया और

मालकिन के सिंगार का सामान सजाती हुई बोलती गयी"––लोगों ने मुझ से पूछा, क्या किया जाय ? मैंने कहा, मैं क्या जानूं ! लौंडिया बोली, मुझे यहां बुलवाया गया है। मैंने कह दिया, मैंने तो नहीं बुलवाया।"

रानी उठ बैठीं। सेज से पैर लटका कर कढ़े हुए स्लीपर पहनते हुए उन्हों ने पूछा––"लड़की अकेली ही आयी है ?"

"एक हबड़ी बुढ़िया उस के साथ आयी थी और छोड़ कर चली गयी। ...बला गले पड़ गयी।"––इंग खिन्नता से बोली।

रानी कुछ नहीं बोलीं। उन्हों ने स्नान किया और फिर भूरे-चमकीले रेशम की कढ़ी हुई पोशाक पहन ली। नाश्ता भी खूब अच्छी तरह से किया। उन्हों ने सुना तो था कि प्रेम में भूख मारी जाती है। सोचा, वह असफल प्रेम की बात होगी, आन्द्रे तो मुझ से प्रेम करते हैं।

प्रायः आधे घण्टे बाद रानी चमेली का पता लेने के लिये पिछले आंगन की ओर जाने के लिये तैयार हुईं।

"हुज़ूर, मैं लौंडिया को यहीं बुलाए लाती हूं।"––इंग ने सुझाया, "आप वहां जायँगी तो उस का दिमाग़ चढ़ जायगा।"

"नहीं, हम ही जायँगे।"––रानी ने शांति से उत्तर दिया। मन में विचार था इस आंगन में आन्द्रे की आत्मा का निवास है। यहां जितने कम लोग आयें, अच्छा है। वे आंगन के दरवाज़े में पहुंची ही थीं कि पांव ठिठक गये। ख़्याल आया––"आन्द्रे तो कभी किसी से घृणा नहीं करते थे। इस लड़की से भी वे निस्संकोच मिलते और उस की सहायता करने का यत्न करते। इस आंगन में आन्द्रे की आत्मा मेरी सहायता करेगी।"

रानी इंग की ओर घूम कर बोलीं—"अच्छा जाओ, लड़की को यहीं बुला लाओ।"

रानी प्रतीक्षा में आंगन में दरवाज़े के सामने ही बैठी थीं। इंग तुरन्त ही लड़की को लिवा लाई। लड़की का शरीर गदबदा और चेहरा गुलाबी था।

चमेली रानी के सामने खड़ी थी। रानी के मन में सहसा घृणा भड़क

उठी। इस प्रकार की हट्टी-कट्टी अनघड़, वासना से भरी स्त्रियों से उन्हें बहुत विरक्ति होती थी। उन्हों ने आंखें फिरा लीं। विरक्ति की एक सिहरन-सी शरीर में दौड़ गयी। वे अपने पुराने संस्कारों और नये विचारों के बीच लड़खड़ा गयीं।

परन्तु कल्पना में फिर आन्द्रे का चेहरा सम्मुख आ गया। उसी चेहरे की ओर ध्यान लगाये वे करुणा भरे स्वर में लड़की से बात करने लगीं।

इंग कुछ क़दम परे हट कर विस्मय से सुन रही थी। उसे आज रानी का स्वर कुछ अपरिचित-सा लगा। स्वर कठोर नहीं कोमल था, परन्तु वह उस की चिरपरिचित मालकिन का स्वर नहीं था।

"तुम यहां क्यों आना चाहती हो ?"—रानी ने लड़की से पूछा।

चमेली ने सिर झुका लिया। लड़की को संकोच-सा अनुभव हुआ कि वह हरी साटिन के कपड़ों में सज-धज कर क्यों आयी। मामूली नीले सूती कपड़े पहन कर आना ही उचित होता।

"बच्चा होने को है, इसलिये रहने की जगह चाहती हूं।"—चमेली ने उत्तर दिया।

"क्या बाल-बच्चे की उम्मीद है ?"—रानी ने पूछा।

चमेली ने पल भर के लिये सिर उठा कर रानी की ओर देखा और स्पष्ट स्वर में उत्तर दिया—"जी, हां।"

"तुम बाल-बच्चे से तो नहीं हो।"—रानी ने उस का झूठ सुझाने के लिये उत्तर दिया।

चमेली ने सिर उठा कर रानी की ओर देखा। रानी की पैनी निगाहें उसी की ओर थीं। चमेली के होंठ कांपे और आंखों में आंसू आ गये। वह कुछ बोल न सकी।

"हुज़ूर, तो फिर हमें कौन मजबूरी है ?" इंग बोल उठी।

रानी ने हाथ उठा कर संकेत किया—"चुप रहो, तुम मत बोलो। जाओ, बाहर जाओ।"

"हुजूर, इसे मैं यहां कैसे छोड़ जाऊं ?"—इंग ने चमेली की ओर संकेत कर पूछा।

"अच्छा, तुम जरा दरवाजे के बाहर ठहरो।"—रानी ने कहा।

इंग बाहर चली गयी। रानी ने चमेली को समीप बनी पत्थर की चौकी पर बैठ जाने का संकेत किया। चमेली आंसुओं से भरी आंखें मलती और सिसकियां लेती बैठ गयी और गले में भर आये आंसुओं को पी जाने का यत्न करने लगी। रानी ने गंभीर परन्तु कोमल स्वर में चमेली को संबोधन किया—

"देखो, किसी परिवार में जा कर रहना मामूली बात नहीं है। तुम जानती हो हमें अपने परिवार के सम्मान और नाम का भी ख़्याल रखना होगा। तुम्हारे यहां आने से सौ झगड़े-झंझट उठ खड़े हो सकते हैं। लेकिन तुम परिवार का भला करना चाहो तो भलाई भी कर सकती हो। तुम हम से अपनी सच्ची बात कहो, तुम क्या चाहती हो ? खाने-कपड़े का ही सवाल है तो कह दो, हम उस का इंतिज़ाम कर देंगे। उस के लिये अपना तन बेचने की जरूरत नहीं होगी।"

चमेली ने रानी की ओर संदेह की दृष्टि से देखा और धोखे में न आने की चुनौती से बोली—"मुफ़्त में तो कोई किसी औरत को नहीं खिलाता !"

रानी मन ही मन मुस्कराईं। सोचा कि महीना भर पहले ऐसी बात सुन कर उन्हें लड़की पर कितना क्रोध आ जाता ! अब वे शांति से बोलीं—

"तुम्हें अब तक किसी ने मुफ्त कुछ नहीं दिया, इसलिये तुम्हें मेरी बात पर भरोसा नहीं हो रहा है।"

"हमें तो किसी का भरोसा नहीं।"—चमेली ने उत्तर दिया और अपनी चोली से एक चटकीला सुर्ख़ रूमाल खींच कर उंगलियों पर लपेटने लगी।

"तो तुम खाने-कपड़े के लिये ही यहां आयी हो न ?"—रानी ने पूछा।

"यह हम ने कब कहा ?"—चमेली ने इंकार में सिर हिला दिया और बोली, "हमें खाना-कपड़ा देने वाले बीसियों हैं।"

"लेकिन यहां आने का कुछ प्रयोजन तो है ?"—रानी ने फिर पूछा, "तुम्हारा ख्याल है कि यहां रखेल बन कर रहने में भी इज्जत है ?"

चमेली के चेहरे पर खून दौड़ आया। पाउडर के नीचे से भी सुर्खी छन आयी। वह अपने समाज के ढंग से बोली—"हम तो बुढ़ऊ को बहुत चाहते हैं।"

रानी चमेली का अभिप्राय तो समझीं, परन्तु उन्हें साहब के लिये ये शब्द अच्छे नहीं लगे। चमेली बात भी नहीं बना पा रही थी।

"वह तो बहुत बूढ़े हैं तुम्हारे लिये।"—रानी ने कहा।

"हमें तो बूढ़े ही अच्छे लगते हैं।"—चमेली बोली, परन्तु अपने शरीर का कम्पन छिपा न सकी।

"घबराओ मत।"—रानी ने आश्वासन दिया।

"हम ने इन साहब-जैसा भला आदमी कभी देखा नहीं। बहुत ही भले आदमी हैं।"—चमेली ने भयभीत स्वर में उत्तर दिया।

"भले हैं ? क्या मतलब ?"—रानी ने फिर पूछा। उन्हों ने अब तक पति में ज़िद्द, उतावली, असहिष्णुता और कभी-कभी सरलता देखी थी, स्वार्थीपन तो सदा ही ; भलाई कभी नहीं देखी थी।

"भलाई पूछती हैं ?"—चमेली अपनी कलाई रानी की ओर बढ़ा कर बोली, "यह देखिये ! यह चूड़ी ठोस सोने की है। कोई जवान होता तो सोने के मुलम्मा चढ़ी चूड़ी से बहका देता। चार महीने में उस का शौक पूरा हो जाता और चूड़ी का पीतल निकल आता। बुढ़ऊ ने ठोस सोने की दी है। यह देखिये······" चमेली ने चूड़ी को दांतों में दबा कर भींचा और निशान दिखा कर बोली—"देख लीजिये।"

"ठीक कह रही हो, सोना ही है।"—रानी ने स्वीकार किया।

"बेचारे हमारा बहुत ख्याल करते हैं।"—चमेली बोली, "तबियत ठीक न हो तो अपने आप ही समझ जाते हैं, परेशान नहीं करते। जवानों को तो यह सब परवाह थोड़े ही रहती है। उन्हें तो अपने मज़े से मतलब, लेकिन ये साहब पहले हमारी तबियत देखते हैं।"

"अच्छा, यह बात है!"—रानी ने पूछा। यह उन के लिये साहब का नया ही परिचय था।

चमेली चूड़ी को कलाई पर घुमाती हुई बैठ गयी और बोली—"बच्चा नहीं है तो······"

"बात बच्चे की नहीं है।"—रानी बोलीं।

चमेली उन की ओर कनखियों से देख रही थी। रानी कहती गयीं—"बात तो है कि तुम्हारे आने से परिवार में परेशानियां खड़ी हो जायंगी या भलाई होगी?"

चमेली बोल उठी—"हुजूर, सच मानिये, मैं बहुत सीधी हूँ।"

रानी उठ खड़ी हुईं और बोलीं—"कल बतायेंगे।"

इंग तुरन्त ही भीतर आ गयी और लड़की को लौटा ले गयी।

इंग आंगन के किवाड़ खुले छोड़ गयी थी। दरवाजे से फ़र्श पर धूप आ रही थी। रानी उस धूप में टहलने लगीं। धूप से आंखें तो चौंधिया रही थीं, परन्तु पैरों को गर्मी भली लग रही थी। सोच रही थीं, यही उचित था। और विस्मय भी हो रहा था कि ठीक ही बात उन्हें सूझ गयी······। चमेली यदि सचमुच साहब को प्यार करती है तो क्यों न करे? परन्तु क्या साहब भी चमेली को प्यार करते हैं? दोनों आपस में प्यार करते हैं तो उस से सुख ही बढ़ना चाहिये। संकट इसीलिये होता है कि लोग आपस में प्यार करते नहीं।

इंग हाथों से चमेली छूत झाड़ती हुई लौटी। उस की ओर देख कर रानी बोलीं—"हम जरा आराम कर लें फिर साहब के आँगन में जायंगी।"

"हां हुजूर?"—इंग के चेहरे पर सन्तोष झलक आया। बोली—"आप ही मालिक को समझा सकती हैं। हवेली में रखेलें भरती जायंगी तो क्या होगा?"

इंग चमेली को लौटा कर ले जा रही थी तो रास्ते में उस ने लड़की से पूछ लिया—"तू यहां ही रहेगी?"

"क्या मालूम ?"--चमेली ने उत्तर दिया, "मालकिन कहती हैं, कल बतायेंगी।"

चमेली को इंग ने समझा दिया--"मालकिन को फैसला करने में देर नहीं लगती।" यह कह देना जरूरी नहीं समझा कि मालकिन ने आज 'हां' नहीं की तो 'न' ही समझो। इंग के विचार में चमेली के हवेली में आने की अशंका नहीं रही।

"हुजूर, अभी जा कर साहब के यहां कहे आती हूँ।"—इंग की आंखें प्रसन्नता से चमक उठीं। रानी ने वह चमक देखी, अभिप्राय समझीं और उनके होंठों पर मुस्कराहट आ गयी।

× × ×

सुबह रानी की आंख खुली तो मन में निर्विकार शांति का भाव अनुभव हुआ। रानी जीवन भर इसी शांति की खोज में थीं। इसी शांति के लिये उन्होंने अपने शरीर और व्यवहार को अपनी विचार-शक्ति के अनुशासन में बांध दिया था। उनके शरीर को पार्थिव आसक्ति अनासक्ति का दमन कर विचारों के अनुशासन के अनुकूल ही चलना पड़ता था। आज उन्हें अनुभव हो रहा था कि अब उन्हें किसी अनुशासन को स्वीकार न करना पड़ेगा।

"आन्द्रे !"—रानी मन ही मन बोलीं, "क्या यही आवश्यक था कि तुम्हारे मरने के बाद ही तुम्हें जान पाऊं ?"

"आवश्यक ही तो था।"—आन्द्रे की ओर से विचार आया, "तब मेरा विशाल शरीर बीच में था न ! तुम देखती थीं मेरे शरीर और चेहरे को। वह शरीर तो मेरे माता-पिता की देन थी। वे लोग ही मुझे कब पहचान पाये ! मेरा उन से केवल शारीरिक संबंध था। मैं उन के दिये शरीर में बंधा था, परन्तु अब मैं स्वतंत्र हूँ।"

"आन्द्रे !"—रानी ने पूछा, "क्या अब भी तुम्हें आन्द्रे भाई ही कहना होगा ?"

"नहीं, अब इस सम्बन्ध पर कोई भी मुहर लगाने की क्या आवश्यकता है"--आन्द्रे की ओर से उत्तर मिला।

रानी अभी सेज पर निश्चल लेटी हुई थीं। मन में चलते इस उत्तर-प्रत्युत्तर से एक सिहरन-सी उन के शरीर में दौड़ गयी। वे अंधविश्वासी नहीं थीं। यदि उन्हें कोई छाया देख पाने का अथवा स्वर सुन पाने का आभास मिलता तो वे स्वयं भी हंस देतीं, परन्तु ऐसी बात तो थी नहीं। उन्हें तो केवल अपने मतिस्क में ही आन्द्रे की बातों की प्रतीति हो रही थी। यह सम्भवतः आन्द्रे की मृत्यु की घटना के ज्ञान और उस के प्रति रानी के प्रेम की स्वीकृति का मानसिक प्रभाव था। अर्थी पर लेटे व्यक्ति के समीप खड़े हो कर उस के प्रति अपने प्रणय को स्वीकार करने से मस्तिष्क में प्रलय का बवंडर उठ जाना स्वाभाविक ही था। रानी को आन्द्रे ने मस्तिष्क में विचारों के उठने की प्रक्रिया समझाई थी। इस समय वे उसी प्रक्रिया की तड़प अनुभव कर रही थीं। इस प्रक्रिया ने उन के सम्पूर्ण अतीत को समाप्त कर उन्हें बदल दिया, परन्तु अपने नये अस्तित्व को अभी वे समझ नहीं पा रही थीं।

रानी ने फिर मस्तिष्क में आन्द्रे की बातें सुनने के लिए आंखें मूंद लीं, परन्तु दिखाई देने लगी आंद्रे के होंठों की मुस्कराहट और उस की पैनी आंखों में चमकते प्रकाश-विन्दु। रानी ने मुस्करा कर उसे उत्तर दिया।

इंग बौखलाई-सी कमरे में आई और बोली—"बड़े आंगन में भिखमंगे बच्चे भरे हुए हैं" वह बिगड़ कर बोली—"और बाहर की बैठक में कल वाली वेश्या बैठी ह। कह रही है, उसे हुजूर ने बुलवाया है।"

रानी ने मुस्करा कर उत्तर दिया—"बहुत भूख मालूम हो रही है। मन चाह रहा है परात भर भात खा जाएं।"

इंग रानी की ओर विस्मय से देख कर बोली—"हुजूर कैसे लग रही हैं; चेहरा लाल हो रहा है। हाय, बुखार तो नहीं है।" इंग आगे बढ़ आई और रानी का प्यार-सा हाथ उठा उस ने माथे पर लगा कर देखा कि गरम तो नहीं है।

"बुखार कहां है!"—रानी ने उत्तर दिया, "हम तो भली-चंगी हैं।" रानी ने अपना हाथ धीमे से खींच लिया और रेशमी लिहाफ़ परे फेंक कर

उठ खड़ी हुईं। इंग उन्हें नहला-धुला कर कपड़े पहनाने लगी। उस ने भूरे रेशम की पोशाक निकाली थी। रानी ने वह पोशाक पहनने से इंकार कर दिया और सूखे लाल-गुलाब के-से रंग की पोशाक पसन्द की। वह पोशाक पिछली बार उन्हों ने अपनी चालीसवीं वर्षगांठ से एक दिन पहले पहनी थी। तब सोचा था, अब इस के भी दिन गये। उस दिन वह पोशाक उन के शरीर पर भड़कीली जान पड़ रही थी। उन का चेहरा कपड़े के मुक़ाबले पीला लग रहा था, परन्तु अब यह पोशाक उन पर पहले से भी अधिक खिल रही थी।

"इस पोशाक को यों ही छोड़ दिया था।"—रानी ने आइने के सामने खड़ी हो कर अपने मन में कहा। शरीर में अपने रूप के गर्व की सिहरन-सी अनुभव हुई। ख्याल आया, आन्द्रे ने उन्हें इस पोशाक में कभी नहीं देखा। देखता तो······? चेहरे पर लज्जा भरी मुस्कान आ गई। संकोच से इंग की ओर देखा कि वह देख तो नहीं रही है। पर इंग भूरी पोशाक को तहाने में व्यस्त थी।

रानी पुस्तकालय में आ गयीं। साधारणतः तो उस दिन उन के कंधों पर समस्याओं का कमर तोड़ देने वाला बोझ था—आंगन में बीस बच्चे मौजूद थे, बाहर की बैठक में जवान वेश्या बैठी हुई थी, साहब बिगड़ते ही जा रहे थे. च्यूमिंग और उस की नवजात बेटी थी, उन के पुत्रों और बहुओं के झगड़े थे, परन्तु आज शान्ति के लिए सिमट जाने की इच्छा उन्हें नहीं हो रही थी। उन के स्वभाव की सब से बड़ी समस्या यही थी कि उन्हें किसी का संग नहीं भाता था, परन्तु आज उन्हें किसी से विरक्ति नहीं थी। बचपन में वे अपनी मां के अज्ञान और अंधविश्वास के कारण उन से ऊबी रहती थीं। पिता से उन्हें अनुराग नहीं था, क्योंकि कभी उन के समीप जा नहीं पायी थीं।

वू साहब विवाह के समय सुडौल, युवा और दर्शनीय थे। परन्तु रानी के मन को उन के प्रति आकार और गंध के विरक्ति के कारण भी मिल गये। पति की वासना में सहयोग दे कर भी वे इन अनुभूतियों से मुक्त न हो पाती थीं; विरक्ति की सिहरन अनुभव हो ही जाती। ससुर के प्रति उन्हें आदर

और स्नेह था। परन्तु रानी की अनुभूतियां इतनी सूक्ष्म थीं कि अनुराग के प्रवाह में विरक्ति के कारणों की भी चेतना बनी रहती। ससुर का हृदय उदार और बुद्धि प्रखर थी, परन्तु दांत टूट चुके थे और श्वास में दुर्गंध आ गयी थी।

"यदि आन्द्रे के जीवन-काल में ही मैं अपने प्रेम को पहचान पाती तो क्या······"––रानी के मन में ख्याल आया, परन्तु तुरन्त ही समाधान हो गया, "देखो मृत्यु कितनी सहायक भी हो सकती है। वह शरीर का बंधन दूर कर मुक्ति दे देती है।"

फिर भी मन में तर्क उठा, यदि आयु इतनी न हो गई होती तो क्या केवल मानसिक मेल से उन्हें संतोष हो पाता? रानी फ़र्श की ओर आंखे गड़ाये सोचने लगीं, क्या उस समय मैं किसी विदेशी से प्रेम करने का साहस कर सकती थी? आन्द्रे था तो विदेशी, दूसरे देश का और दूसरे रक्त का अंश। रानी कल्पना करने लगीं कि आन्द्रे यौवन के आवेग और उत्तेजना में कैसा रहा होगा! उन का रक्त क्रोध से जल उठा।

"सावधान!" उन्हें चेतावनी सुनाई दी।

"नहीं, मैं ऐसा नहीं करूंगी।"—रानी ने स्वीकार किया।

इंग नाश्ता ले आई और उस ने तश्तरियों को पंक्ति में मेज़ पर लगा दिया। रानी ने खाने की कमचियां हाथ में ले लीं।

"आंगन में बच्चों को खाना मिल गया?"––रानी ने इंग की ओर देख कर पूछा।

"कैसे हो सकता है हुज़ूर?"—इंग ने निधड़क उत्तर दिया, "इतने सामान के लिए इजाज़त कब दी गयी?"

"आज्ञा हम अब दे रहे हैं।"—रानी कोमल स्वर में बोलीं, "अभी तुरंत चावल बनवा दो। दोपहर में रोटी बनवा देना। चाय भी देना।"

"विधाता की दया है कि बारिश नहीं हो रही है।"—इंग बोल उठी "नहीं तो ऐसे लोगों को कमरों में कहां रखते?"

"नहीं, जगह की क्या कमी है?"—रानी बोली।

इंग रानी की ओर देख रही थी। विस्मय में उस के होंठ लटक गये। सहसा उस ने दोनों हाथों से मुंह ढंक लिया। "हाय हुजूर, आप तो बिलकुल बदल गयीं।" इंग रोती हुई बाहर चली गयी।

परन्तु इंग ने दोपहर तक बच्चों के भोजन की पूरी व्यवस्था कर दी। दोपहर के समय रानी उधर गयीं तो देखा, लड़कियां संतोष से खा रही थीं और छोटे-छोटे बच्चों के मुँह में ग्रास दे कर खिला रही थीं। बुढ़िया ने रानी को आया देख चावलों से भरे मुंह से बच्चों को आदेश दिया—"सलाम करो हुजूर को, तुम्हारी मां है।"

"हां, ठीक है। तुम्हारे बाबा नहीं रहे, अब हम तुम्हारी मां हैं।"—रानी ने मुस्करा कर स्वीकार किया। अनाथ बच्चे उन की ओर स्नेह और कृतज्ञता से देख रहे थे। सहसा उन्हें प्रसव की वेदना की-सी अनुभूति हुई। जीवन में पहली बार इस वेदना में संतोष का पुट था। रानी को जान पड़ा वे अनाथ उन के और आन्द्रे की संतानें थीं।

"सब हमारे ही बच्चे हैं।"—रानी के मुँह से निकल गया। अपने मुख से निकले इन शब्दों पर उन्हें विस्मय भी हुआ। उन की बात सुन कर सब बच्चे उन की ओर उन्हें चिपट जाने के लिये, उन्हें स्पर्श करने के लिये, उन से प्यार पाने के लिये दौड़ पड़े। रानी ने उन की ओर ध्यान से देखा। उन में दोष भी दिखाई दिये और सौन्दर्य भी, परन्तु रानी को ग्लानि नहीं हुई।

"तुम्हारे बाबा ने तुम्हारे लिये सब कुछ किया।" —रानी बोली. "परन्तु मां भी तो चाहिये।" एक बच्ची के गाल पर सूखे हुये लाल-लाल जख्म को छू कर उन्हों ने पूछा—"अभी दर्द होता है ?"

"थोड़ा-थोड़ा होता है।"—बच्चों ने उत्तर दिया।

"यहां क्या हो गया था ?"—रानी ने बच्ची से पूछा।

बच्ची का मुँह लटक गया। "मेरी मालकिन ने सुलगता हुआ सिगरेट लगा कर जला दिया था।

"हाय, क्यों ?"—रानी ने गहरी सांस ली।

"मैं उन की दासी थी······काम जल्दी-जल्दी नहीं कर पाती थी।"—बच्ची ने उत्तर दिया।

बच्ची ने रानी का हाथ पकड़ लिया। "मेरा भी एक नाम रख दीजिये। बाबा मेरा नाम रखने वाले थे, वह मर गये। दूसरे सबों के तो नाम हैं।"—बच्ची ने अनुनय से कहा।

"अच्छा, सब लोग अपना-अपना नाम बताओ तो हम तुम्हारे लिये नाम चुनेंगे।"—रानी ने उत्तर दिया।

सब बच्चे अपने-अपने नाम पुकारने लगे। यह सब आन्द्रे के मुख से निकले शब्द थे—दया, विनय, शील, विश्वास, सत्य, करुणा, प्रकाश, तारा, चन्द्र लेखा, सूर्य किरण, उषा, निर्मल। आन्द्रे ने इन अनाथों के यही नाम रखे थे। छोटे-छोटे बच्चों के लिये उन्हों ने प्यार के नाम रखे हुए थे—भालू, बुलबुल, सोना, चांदी।

"बाबा के पास सोना-चांदी नहीं था।"—एक बच्ची बोल उठी। दूसरी छोटी बच्ची का हाथ पकड़ कर वह बोली—"हम लोग आये तो उन के पास सोना-चांदी हो गया।"

सब बच्चे ज़ोर से हँस पड़े।

"बाबा हम लोगों को रोज़ हँसाते थे।"—गोल-मटोल सोना ने चांदी का हाथ पकड़े हुए हँसते-हँसते कहा।

"तुम दोनों बहनें हो?"—रानी ने चांदी की ओर संकेत कर सोना से पूछा।

"हम सब बहनें हैं।"—सभी बच्चियां एक साथ बोल उठीं।

"हां, हां, ठीक तो है।"—रानी ने स्वीकार किया, "हम तो भूल ही गयी थीं। पागल हैं न हम?"

नाम मांगने वाली बच्ची ने फिर याद दिलाया—"मेरा नाम?"

रानी ने बच्ची की ओर देखा। बच्ची बहुत सुन्दर थी, सौन्दर्य की कली। स्फुटित सौन्दर्य का भविष्य लिये। नाम रानी के मन में तुरंत आ गया, बोल उठीं—"तुम्हारा नाम 'स्नेह' है।"

"मैं स्नेह हूँ......मैं स्नेह हूँ।"—बच्ची बार-बार दुहराने लगी।

आंगन में तमाशा देखने वाले लोग भी इकट्ठे हो गये थे। नौकरों ने उस आंगन से हो कर जाने के बहाने ढूंढ़ लिये और देखने के लिये खड़े हो गये। बच्चों और परिवार के लोगों को बहाने की ज़रूरत न थी। वे लोग वैसे ही आ कर खड़े हो गये। सभी लोग रानी का यह नया रूप विस्मय से देख रहे थे।

चमेली बाहर की बैठक में प्रतीक्षा करते-करते थक गयी थी। उठ कर भीतर आंगन में चली आई। उस के साथ एक नौकरानी भी थी। चमेली दृढ़ निश्चय कर के आई थी कि घर के आदमियों की तरह घर में रहने का दावा करेगी। वह परिवार की संतान को जन्म देने जा रही थी......।

चमेली आयी थी हवेली की गंभीर और अभिमानी मालकिन का सामना करने का साहस इकट्ठा कर के परन्तु वहां उसे दिखाई दी बच्चों के बीच में हँसती हुई एक सुन्दर नारी। दरवाजे की ओर से आहट पा कर रानी की दृष्टि उस ओर गयी और चमेली से आंखें चार हुई।

रानी बोल उठीं—"देखो हमारे कितने बच्चे हैं! लेकिन हम तुम्हें भी भूली नहीं हैं। इन के लिये सोने-खेलने की जगह का प्रबन्ध कर लें फिर तुम्हें भी बुलवाते हैं।"

रानी ने आसपास खड़े परिवार के लोगों की ओर देखा। इन में घर के बेटे और बहुएं नहीं सम्बन्ध के भाई-बहन अथवा भतीजे-भांजे ही थे, जो कठिनाई के समय हवेली में शरण लिये पड़े थे। इन लोगों को संबोधन कर रानी ने पूछा—"अपने बच्चों के लिये हम कहां प्रबन्ध करें?"

"मेरी बहन,"—एक बुढ़िया ने उत्तर दिया, "आप पुण्य का काम कर रही हैं तो इन बच्चों को हवेली के मंदिर में टिका दीजिये न?"

बच्चों को रानी ने बोझ तो नहीं समझा था, परन्तु उन के लिये स्थान के विषय में भी नहीं सोचा था। उन्हों ने तुरंत बुढ़िया की बात का समर्थन किया—"जीजी, बहुत ठीक कहा तुम ने। बच्चों के लिये मंदिर से अच्छी

से भागा हुआ आया। पुजारी के हाथ और चेहरे पर ईंधन की कालिख लगी हुई थी।

पुजारी को बच्चियों की ओर विस्मय से देखने पा कर रानी बोल उठीं—"हम भेंट लायी हैं।" बच्चों की ओर देख कर वे बोली—"बच्चियों, अपने नाम बताओ!"

बच्चे अपने-अपने नाम पुकारने लगे। सब बच्चियों के अपने नाम सुना देने पर अपने हाथ में हाथ थमाये बच्ची को आगे बढ़ा कर रानी बोलीं—"और यह स्नेह है। यह सब बच्चियां मंदिर के अर्पण हैं।"

बूढ़े पुजारी के कान तक सब समाचार पहुँच चुके थे। इस परिवर्तन से उसे असुविधा तो होनी ही थी, परन्तु यह समझ कर कि रानी विधाता को संतुष्ट करने के लिये पुण्य कार्य कर रही हैं, आपत्ति का अवसर नहीं था। पुजारी ने कालिख भरे हाथ जोड़ कर रानी के सामने सिर झुका दिया। रानी भीतर गयीं। मंदिर की कोठरियों को, जिन में अब तक देवता ही वास करते थे, उन्हों ने बच्चियों के लिये नियत कर दीं। बोलीं—

"सब से छोटे बच्चे करुणा की देवी की कोठरी में रहेंगे। देवी उन पर कृपा करेंगी।" बड़ी कोठरी उन्हों ने बड़े बच्चों को दे दी।

स्नेह अब भी उन का आंचल पकड़े उन से ही चिपकी हुई थी। "मैं आप के साथ चलूंगी।"—उस ने रानी की ओर देख कर कहा, "मैं कपड़े धो लेती हूँ, खाना परोस लेती हूँ और भी सब काम कर लेती हूँ।"

रानी का हृदय बच्ची के अनुनय से द्रवित हो गया, परन्तु पक्षपात कैसे करतीं। उसे समझाया—"बेटी, तुम सब के साथ रहो। सब की सहायता करना। बाबा यही कहते थे न?" उसी समय मन ने यह भी स्वीकार किया कि यह केवल न्याय के ही विचार से नहीं था, वे अपने और आन्द्रे के बीच किसी और को आने नहीं देना चाहती थीं।

"अम्माजी, हम लोग सोयेंगे कहां?"—बच्चों ने पूछा।

"शाम तक तुम्हारे लिये बिस्तरे आ जायेंगे"—रानी बोलीं, "अभी तो तुम दिन भर खेलो।"

बच्चों को पुलकित और प्रसन्न देख कर रानी उन्हें देवताओं की शरण में छोड़ गयीं।

× × ×

चमेली अपने लाल-लाल होंठ दबाये चमकीले रेशमी रूमाल पर बने फूलों की ओर आंख गड़ाये थी। रूमाल का एक कोना बायें कन्धे पर लगे काँच के बटन में फंसा हुआ था। जब वह चाहती रूमाल को चेहरे के आगे कर पर्दा कर लेती या किसी व्यक्ति से बात करते समय इस रूमाल से अपने चेहरे को ओट में किये रहती।

रानी के सामने बुलाई जाने पर कुछ देर चुप रह कर चमेली बोली—"मैं क्या कह सकती हूँ!"

"हां, कहने को है ही क्या!"—रानी ने उत्तर दिया।

"कहने को तो बहुत कुछ है।"—चमेली अधिकार जताने के लिये बोली, "बच्चा अभी नहीं है तो होगा तो सही।" उस ने अपने पेट पर हाथ रख कर संकेत किया।

रानी ने उस की ओर आत्मीयता से देखा और बोलीं—"क्यों नहीं, ! तुम स्वस्थ हो, तुम्हारे तो खूब सुन्दर-स्वस्थ बच्चा होगा।"

"लेकिन हवेली में मेरी जगह क्या होगी?"—चमेली पूछ बैठी।

"तुम कैसी जगह चाहती हो?"—रानी ने पूछा।

"मैं मालिक की तीसरी पत्नी होऊंगी।"—चमेली ने तीखा उत्तर दिया। उस के भोले चेहरे को देख कर इतने तीखेपन का अनुमान नहीं होता था। यह बात कहते ही उस की उज्ज्वल आंखों, छोटी सीधी नाक, गुलाबी गालों और होंठों पर पक्केपन का भाव आ गया।

"हां, ठीक तो है।"—रानी ने उत्तर दिया।

"आप को तो एतराज नहीं?"—चमेली ने सहमते हुये पूछा, और उस के चेहरे पर आया पक्कापन लोप हो कर कातरता छा गयी।

"एतराज किस बात का?"—रानी ने बहुत सरलता से पूछा।

"तो फिर मैं इस हवेली में रहूँ······मै तीसरी मालकिन होऊंगी······ और जब बच्चा······"

"हमारे खानदान का कोई बच्चा, बिना बाप का नहीं हो सकता।"—रानी बोलीं, "खानदान का सम्मान भी तो कोई चीज़ है। तुम घर के बच्चे की मां होगी। तुम्हारी इज्ज़त होनी चाहिये।"

चमेली की बड़ी-बड़ी काली आंखें विस्मय में फैल गयीं। वह फफक कर रो उठी। "मैं तो समझे थी आप मुझ पर बिगड़ेंगी, मुझे गाली देंगी। मैं तो वही सब सोच कर आई थी······। अब मैं क्या कहूँ······"

"कुछ कहने की ज़रूरत नहीं।"—रानी ने शांति से उत्तर दिया, "हम नौकरानी से कहे देते हैं कि तुम्हें ले जा कर जगह दिखा दे। जगह बड़ी नहीं है। दो कमरे हैं। साहब के आंगन के बाईं तरफ़ छोटा आंगन है। दायें हाथ के आंगन में दूसरी पत्नी रहती है। तुम दोनों की जगह अलग-अलग है। हम अभी जा कर साहब से कह देंगे कि तुम आ रही हो।"

कुछ क्षण सोच कर रानी फिर बोलीं—"साहब बहुत भले आदमी हैं। सब का बराबर ख्याल करते हैं। अगर वे अपना चांदी का पाइप तुम्हारे यहां मेज पर छोड़ जायँ तो समझना कि तुम्हारे यहां आयेंगे। अगर पाइप साथ ले जायँ तो बिगड़ना नहीं। हम तुम्हें जगह दे रहे हैं। इतनी बात तुम हमारी मानना, घर में झगड़ा-झंझट नहीं होना चाहिये।"

चमेली के साथ आयी बुढ़िया नौकरानी चुपचाप एक ओर बैठी थी। उस की ओर देख कर रानी ने पूछा—"यह तुम्हारी मां है।"

बुढ़िया के मुंह खोलने से पहले ही चमेली ने जबाब दे दिया—"नहीं, यह चायखाने की नौकरानी है।"

"तो इसे लौटा दो।"—रानी बोलीं और जेब से चमकते हुये कुछ रुपये निकाल कर उन्हों ने नौकरानी के लिये मेज पर रख दिये। नौकरानी इस दया से अभिभूत हो कर इनाम ले सिर झुकाती हुई बाहर चली गयी।

चमेली ने रानी के सामने घुटने टेक कर माथा फ़र्श पर रख दिया

और बोली—"मैंने सुना था कि आप इंसाफ़ करती हैं, परन्तु आप बड़ी कृपालु हैं।"

रानी के चेहरे पर लाली दौड़ गई। "तुम कुछ दिन पहले आयी होतीं तो हम नाराज़ ही होते।"—रानी बोलीं, "परन्तु अब दूसरी बात है।"

चमेली को उसी अवस्था में छोड़ कर रानी उठ कर चली गयीं। मन ही मन उन्हें लज्जा अनुभव हो रही थी—

"मैं बहुत दुष्ट स्त्री हूँ।······कितनी ही स्त्रियां इस हवेली में आयें मुझे क्या! मेरा अपना मन भरा है। रानी कुछ देर चुप रहीं। उन के मन ने कोई विरोध नहीं किया। फिर सोचा—

"आन्द्रे, यदि तुम्हारे जीवन-काल में ही तुम्हें पा लिया होता तो भी क्या हम लोग चुप ही रह पाते?"

रानी को फिर भी कोई उत्तर नहीं मिला। कोई उत्तर न पा कर उन के होंठों पर मुस्कराहट आ गयी। सोचा, उस की आत्मा भी प्रेम से संकोच करती है। जीवन भर की आदतें कहां जायंगी! वे कमरे से बाहर आंगन में आ गयीं। आंगन में तीन भद्र लोग भले आदमियों के-से कपड़े पहने खड़े थे। रानी को आता देख कर इन लोगों ने मुँह फेर लिया, मानो वे युवती हों। युवती समझे जाने का भाव बुरा नहीं लगा परन्तु उन्हों ने उस संकोच को समाप्त कर दिया। बोलीं—"हम रानी बू हैं। आप लोगों को हम से कुछ काम है? उन लोगों ने ज़रा घूम कर रानी की ओर देखा और फिर उन में से सब से वयस्क व्यक्ति आंखें बचा कर बोला—

"हम लोग रानी साहिबा की सेवा में आये हैं। हमारा अभिप्राय है कि मृतक व्यक्ति के प्रति न्याय क्यों न हो। हरे पट्टे वाला गिरोह नगर के लिये संकट बन गया है। अब वे लोग हत्या भी करने लगे हैं। माना कि वह व्यक्ति केवल एक विदेशी था या साधू ही था, परन्तु अगर विदेशियों और साधुओं से आरम्भ किया है तो कल हम लोगों की बारी भी आयेगी। हमारा विचार है कि विदेशियों के प्रति भी न्याय की मांग होनी चाहिये। हम

चाहते हैं कि रानी साहिबा की ओर से न्याय के लिये दावा दायर किया जाय।"

रानी को प्रतिकार की इस भावना से ग्लानि हुई। ऐसा जान पड़ा कि यह सुझाव सुन कर आन्द्रे के नेत्र विरोध के लिये तत्पर हो गये। बोलीं—"नहीं, प्रतिकार की भावना से उन की आत्मा को कष्ट ही होगा। वे सदा उपदेश देते थे कि अज्ञान के कारण अपराध करने वालों को क्षमा कर देना ही उचित है। परन्तु यह हरे पट्टे वाले लोग हैं कौन ?"

"यह नगर के कुछ दुस्साहसी और बेकार जवानों का गिरोह है, जो मेहनत करना नहीं चाहते, लूटपाट करना चाहते हैं।"—वयस्क व्यक्ति ने उत्तर दिया।

"तो क्या ऐसे बहुत-से लोग हो गये हैं ?"—रानी ने विस्मय से पूछा।

रानी के प्रति आदर के विचार से हँसी दबा कर वयस्क ने उत्तर दिया—"जी हां, आज कल तो ऐसे लोग काफ़ी हो गये हैं।"

"परन्तु इस का कारण क्या है ?"—रानी ने पूछा।

"समय की बात है।"—एक दूसरा व्यक्ति बोला। इस व्यक्ति का क़द छोटा था। चेहरे पर झुर्रियां पड़ गयी थीं, परन्तु केश अभी काले थे।

रानी कड़ी धूप में लाल रंग की पोशाक पहने खड़ी थीं। उन के सौन्दर्य की श्लाघा इन व्यक्तियों के आंखों में स्पष्ट थी, परन्तु रानी का ध्यान उस ओर न था। वह अब किसी भी व्यक्ति की भावनाओं की चिंता से परे थीं।

"परन्तु ऐसा समय क्यों आ गया ?"—रानी बोलीं। वे समय और परिस्थिति से खूब परिचित थीं, परन्तु उन्हों ने यह प्रश्न पूछा ही।

"रानी साहिबा, आप हवेली की ऊंची चारदीवारी की सीमा में रहती हैं।"—वयस्क व्यक्ति ने उत्तर दिया, "संसार इस समय अशांति और क्षोभ से कांप रहा है। इस क्षोभ और अशांति का कारण विदेशों का प्रभाव है। वहां युद्ध के बादल गरज रहे हैं। उसी के प्रभाव में हमारे नौजवान भी भटक गये हैं। ये नौजवान पुरातन परम्परा को मानना नहीं चाहते, नया

मार्ग उन के सामने हैं नहीं, परिणाम में वे केवल पथ-भ्रष्ट हो गये हैं।" रानी ने कुछ क्षण उन लोगों की ओर चुपचाप देख कर अपनी बात कह दी कि इस मामले में प्रतिकार की आवश्यकता नहीं।

अभ्यागत लोग रानी का उत्तर पा कर चले गये, परन्तु रानी उन के चले जाने के बाद विक्षिप्त हो गयीं। सोचा कि जा कर साहब का ही हाल-चाल देख आयें। मन में दुविधा हो रही थी कि इस अशांति और क्षोभ के समय लड़कों को बाहर भेज कर उचित नहीं किया। सोचा—ऐसे कठिन समय यदि अकेली होतीं तो कैसे सम्भाल पातीं! परन्तु अब वे अकेली नहीं थीं।

अकेले न होने की सान्त्वना पा कर उन्हें याद आ गया—"साहब को चमेली के आ जाने का संदेश देना है।" और वह उस ओर चली गयीं।

× × ×

रानी ने साहब के आंगन के गोल दरवाज़े पर क़दम रखा। साहब सामने ही दिखाई दिये। साहब अपने तम्बाकू पीने के बांस के लम्बे पाइप की पीतल मढ़ी निगाली से गेंदी की क्यारी में कुछ खोद रहे थे। गहरे नीले रंग की धारीदार साटिन की पोशाक उन के शरीर पर थी और पैरों में रेशमी अस्तर के बहुमूल्य मखमली जूते। कुछ दुबलाये हुए लग रहे थे। जवानी में उन का शरीर सुडौल और दोहरा था, पक्की उम्र में आ कर तो खूब मुटा गये थे, परन्तु प्रौढ़ावस्था में आ कर दुबलाने लगे थे पीली-पीली त्वचा ढीली पड़ने लगी थी।

रानी ने स्नेह से उन्हें संबोधन किया—"कहिये, कैसी तबियत है?"

"ठीक ही है, आओ।"—साहब ने उत्तर दिया और पाइप की निगाली से क्यारी कुरेदते रहे।

"पाइप खराब हो जायगा।"—रानी ने सुझाया।

"हम देख रहे थे गेंदी की जड़ें गल तो नहीं गयीं।"—साहब ने उत्तर दिया, "ओफ़, कितना पानी पड़ा है!"

"पानी यहां ठहरता नहीं है।"—रानी बोलीं, "आप को याद होगा जिस वर्ष प्लेमो हुआ था, मैंने आंगन ऊंचा करवा दिया था कि आर्किड के फूलों की क्यारी सेज से भी दिखाई देती रहे।"

"बहुत याद रखती हो तुम।"—साहब बोले, "यहां बाहर ही बैठें कि भीतर चलें? भीतर ही चलें। हवा बहुत है, पैर ठरने लगेंगे।"

रानी को आश्चर्य हो रहा था, कि उन्हें साहब से कुछ भी संकोच क्यों नहीं अनुभव हो रहा था? परन्तु आन्द्रे की बात तो साहब से कही नहीं जा सकती थी। वे क्या समझते; ······एक विदेशी······फिर साधू······ और फिर मरा हुआ।

रानी साहब के पीछे-पीछे कमरे में चली गयीं। खुले किवाड़ों से कमरे की फ़र्श पर धूप पड़ रही थी। यहां आ कर साहब के प्रति मन में फिर वही पुरानी भावना जाग उठी और रानी के मन में उन के प्रति एक करुणा-सी अनुभव हुई···इस व्यक्ति को प्रेम न कर सकने के कारण उन्होंने इसे जीवन के संतोष से वंचित रखा। इन्हें प्रेम ही नहीं किया तो अपना शरीर और संतान दे कर भी क्या दिया? अब तक वे अपने आप को सदा समझाती आयी थीं कि उन दोनों का विवाह पारस्परिक इच्छा से तो हुआ नहीं था, जितना संभव था। उन्होंने अपना कर्तव्य पूरा किया। हां, यदि उन्होंने साहब को स्वयं चुना होता तो वे अपने आप को कभी क्षमा न कर सकतीं। पत्नी यदि पति को प्रेम नहीं दे सकती तो उस का प्रतिकार कुछ भी दे कर नहीं कर सकती। जैसे भी हो, इन्हें प्यार करना ही होगा।—रानी ने सोचा।

"उस लड़की, चमेली से मैंने बात की थी।"—रानी उत्तेजनारहित स्वर में बोलीं और दीवार के साथ सटी मेज़ की दूसरी ओर साहब के सामने बैठ गयीं। विवाह के बाद वे यहां इसी प्रकार ही बैठ कर साहब के साथ शाम को घर की समस्याओं पर विचार किया करती थीं।

साहब पाइप में तम्बाकू भरने लगे। रानी समझ गयीं कि साहब उन के

आने का कारण न जानने से घबरा रहे हैं। अब तक रानी लोगों में अपने कारण ऐसी घबराहट देख कर संतोष ही अनुभव करती थीं। इसे वे अपने प्रति आदर का प्रमाण मानती थीं, परन्तु अब साहब का झेंप से आंखें चुराना और उन के फूले-फूले हाथों का कांप जाना देख कर मन में चोट-सी अनुभव हो रही थी। सोच रही थीं, भय में प्रेम के लिये स्थान कहां! आन्द्रे तो उन से कभी नहीं डरा और वे भी आन्द्रे से कभी नहीं डरीं। साहब ने भी उन से कभी प्यार नहीं किया, वरना वे उन से डरते क्यों!

"उस लड़की की बाबत आप का क्या ख्याल है?"—रानी ने बहुत आत्मीयता से प्रश्न किया।

रानी के स्वर की आत्मीयता से साहब को साहस मिला। उन्हों ने आंख उठा कर देखा। उन की आंखों में झेंप थी, परन्तु यह कोई नयी बात न थीं। "हम जानते हैं तुम इस लड़की की बाबत क्या कहोगी।"—वे बोले, "लड़की बहुत मामूली है। उस में कोई खास बात नहीं। लेकिन हमें उस पर दया आती है। बेचारी ने हमेशा मुसीबत ही झेली है। बेचारी की क्या ज़िन्दगी रही है......"

"हां, तो बताइये न।"—रानी ने फिर अनुरोध किया।

चारों ओर सन्नाटा था, मानो हवेली में उन लोगों के अतिरिक्त और कोई व्यक्ति था ही नहीं। भारी-भारी दीवारों पर खड़ी प्रकाण्ड हवेली, आंगनों के बाद आंगनों का क्रम, उस खूब बड़े कमरे में भारी-भारी मेज़, कुर्सियां सैकड़ों वर्ष से उसी प्रकार चली आ रही थीं। कितनी ही पीढ़ियां उस कमरे में रह चुकी थीं। भारी दीवारों पर खूब ऊंची छत के नीचे कितने लोगों ने वहां बैठ कर वैसे ही बातचीत भी की होगी, उसी तरह वे दोनों भी बैठे हुए थे, परन्तु उस पुरातन परंपरा में कुछ नयी बात भी थी। पुरानी परम्परा का क्रम टूट चुका था।

"हां, उस लड़की,......चमेली में कोई ख़ास बात तो है नहीं......।"—अपराध की स्वीकृति के ढंग से साहब बोले।

"आप उसे चाहते हैं तो ख़ास ही बात है।"—रानी स्नेह से बोलीं।

साहब ने विस्मय से रानी की ओर देखा। "तुम्हारी तबियत तो ठीक है न बच्चों की मां ?"—साहब बोले, "तुम्हारा स्वर बहुत कमजोर-सा लग रहा है।"

"नहीं तो, तबियत बिलकुल ठीक है।" रानी बोलीं, "लड़की की बात बताइये न।"

"उस से प्यार करने की तो कोई ऐसी बात नहीं।"— झिझकते हुए साहब बोले, "उस से वह बात तो हो नहीं सकती, जो तुम्हारे साथ थी। उस का भला मैं क्या आदर करूंगा, जैसे तुम्हारा करता हूं। तुम जानती हो बेचारी बेवकूफ़ है। उस से बात भी क्या की जा सकती है! "साहब ने रानी के चेहरे और आंखों में सहानुभूति देखी तो और साहस हुआ और बोले— "तुम इतनी समझदार हो कि दूसरी कोई औरत हो नहीं सकती......"

"आप कहिये न बात क्या है ?"—रानी फिर बोलीं, "तभी मैं बता सकूंगी कि आप क्या चाहते हैं।"

"तुम सुन कर क्या करोगी ?"—साहब बोले।

"अब मैं समझती हूं कि उस समय च्यूमिंग को बुलवा कर मैंने ठीक नहीं किया।"—रानी बोलीं।

"तुम ने तो हमारे लिए ही किया था।"—साहब बोले।

"नहीं, मेरा अपना ही स्वार्थ था।" इस बार रानी के स्वर में अपराध की स्वीकृति थी।

साहब को विस्मय हुआ। इस से पहले उन्होंने रानी को कभी अपनी भूल मानते नहीं देखा था।

"तुम्हारी-जैसी बात तो किसी और में हो नहीं सकती।"—साहब आग्रह से बोले, "हमें तो विश्वास है कि यह तुम्हारी चालीसवीं वर्षगांठ का झगड़ा न उठा होता, तो हमें तो मालूम ही नहीं था कि संसार में तुम्हारे सिवा कोई दूसरी स्त्री है।"

रानी के होंठों पर मुस्कान आ गयी। धीमे से बोलीं—"क्या करें, स्त्री के लिए तो दो ही रास्ते हैं—या तो इस आयु में आ कर किनारा कर ले, या

मर जाय।" यदि पति से उन्हें प्रेम होता तो उन के लिए हवेली में चमेली को बुलवाने की अपेक्षा वे अपनी मृत्यु को ही पुकारतीं!

"यह तुम क्या बात कहती हो!"--साहब और भी विनय से बोले, "तुम इस लड़की की बात पूछ रही थीं। क्या बतायें,······बस, इस के साथ यह अनुभव होता है कि हम अब भी जवान हैं। बस, यही समझ लो······।"

"जवान?"--रानी ने पूछा।

"हां, कुछ जानती नहीं, कमज़ोर-सी है।"--लज्जा से मुस्करा कर साहब बोले, "कभी किसी ने बेचारी की परवाह नहीं की, बच्चा ही है। कोई घर-बार नहीं है उस का।······सीधी है बेचारी, पर दिल की भली है।······तुम समझती हो उस में उतनी बुद्धि तो हो ही नहीं सकती, परन्तु मन की भली है। उसे कोई समझाने, राह दिखाने वाला रहे तो भली बन सकती है।"

साहब की बात से रानी को विस्मय हो रहा था, अब तक उन्हों ने साहब को सदा अपने संतोष और इच्छा की बात करते ही सुना था। किसी दूसरे की चिंता करते नहीं देखा था। बोलीं—

"तब तो आप उसे बहुत चाहते हैं।"

रानी के स्वर में सहानुभूति पा कर साहब विश्वास से बोले—"यदि तुम ऐसा समझो तो प्यार ही समझ लो।"

साहब और रानी में इस तरह आत्मीयता से पहले कभी बात नहीं हुई थी, न उन्हों ने साहब में कभी सहृदयता का अनुमान किया था। आज उन्हें वे नये ही जान पड़ रहे थे। रानी को विस्मय भी हो रहा था। आन्द्रे-जैसे व्यक्ति के लिए उन के मन में स्नेह जाग उठना तो कोई बहुत आश्चर्य की बात नहीं थी, परन्तु चमेली-जैसी साधारण, सीधी, बल्कि मूर्ख लड़की भी साहब के मन में स्नेह का भाव और शक्ति उत्पन्न कर सकती है, यह ज़रूर विस्मय की बात है।

"तुम्हें बुरा तो नहीं लगा?"--साहब ने याचना के स्वर में पूछा।

"नहीं, मुझे अच्छा लगा।"—रानी ने तुरन्त उत्तर दिया।

दोनों एक साथ ही उठ खड़े हुए और कमरे के बीचोंबीच फ़र्श पर पड़ती धूप में बढ़ आये। रानी के हृदय के भावों से आकर्षित हो कर साहब ने उन के हाथ पकड़ लिए, पल भर के लिए परस्पर आंखें मिलाये वे एक हो गये। रानी के मन में आवेग अनुभव हुआ कि बता दें कि वे प्रसन्न क्यों थीं और क्यों उन में आज इतनी आत्मीयता जाग उठी। प्रेम की शक्ति क्या है? प्रेम का स्रोत चाहे कोई महापुरुष हो चाहे चकले की छोकरी, सन्यासी हो या वेश्या, परिणाम तो एक ही है। हवेली की चारदीवारी और आंगनों से घिरी रानी तक भी वह प्रेम पहुँच गया और साहब ने उस प्रेम को चकले में पाया, परन्तु प्रेम ने दोनों को ही बदल दिया। रानी जानती थीं कि ऐसी सूक्ष्म बात को पति समझ नहीं पायेंगे। उन्हें रहस्य को समझाने की अपेक्षा उस का प्रभाव पूर्ण कर देने में ही वह सहायक हो सकती थीं।

"तुम्हारी तरह की स्त्री दुनियां में हो नहीं सकती।"—साहब फिर बोले।

"शायद आप ठीक ही कहते हैं।"—रानी ने मान लिया और प्यार से अपने दोनों हाथ उन के हाथों से छुड़ा लिये।

इसी समय दरवाज़े में इंग दिखाई दी। अपने अभ्यास के अनुसार इंग ने पहले छिप कर झांक लिया था कि क्या हो रहा है। साहब और रानी को एक-दूसरे के हाथ थामे देख उसे विस्मय और संतोष दोनों ही हुआ। आश्वासन भी अनुभव किया कि अब चमेली को भगा दिया जायगा। खांस कर उस ने अपने आने की सूचना दी और फिर महत्त्वपूर्ण संदेश देने के लिए आगे बढ़ आई।

"हुजूर, फाटक पर कांग-हवेली से हरकारा आया है। कह रहा है कि सेठानी के दर्द उठ रही हैं, उन की हालत खराब है। सेठ साहब ने आप को फ़ौरन याद किया है।"

रानी इंग की खांसी सुन कर कुर्सी पर जा बैठी थीं। समाचार सुन कर तुरन्त खड़ी हुईं। "विधाता, यह क्या हुआ ?······हरकारे ने बताया कि तकलीफ़ क्या है!"—रानी बोलीं।

"बच्चा फंस गया है।"––उदास स्वर में इंग ने उत्तर दिया।

"हम अभी जा रहे हैं।"––रानी बोलीं और दरवाज़े की ओर बढ़ गयीं। दरवाज़े पर ठिठक कर उन्हों ने साहब की ओर घूम कर देखा और बोलीं— "अच्छा, आप किसी बात से मन को मैला न कीजिए। लड़की सांझ तक चुपचाप आप के यहां पहुंच जायगी। कोई बात नहीं उठेगी। हम ख्याल रखेंगे, पर एक अनुरोध है कि च्यूमिंग अगर चली जाना चाहे तो उसे न रोकियेगा।"

"हम तो कहते हैं, उसे यहां ही रहने दो।"—साहब सहानुभूति से बोले, "बहुत नेक है बेचारी। उसे कहां भेज दोगी, जायगी भी कहां!"

"नहीं, उसे कहीं भेजेंगे नहीं।"—रानी ने उत्तर दिया, "यह सब हम लौट कर सोचेंगी, अभी उसे हमारे आंगन में जाने दीजिये।" उन्हों ने इंग की ओर देखा, "सुन लिया तुमने? यह हो जाय।"

इंग दीवार से लगी सहारे के लिए नाखून ईंटों में गड़ाए खड़ी थी। बोल उठी––"क्या वह छिनाल यहां ही रहेगी?"

"ऐसा मत कहो।"—रानी कड़ाई से बोलीं, "हमारे मालिक उसे चाहते हैं।"

रानी चल दीं और कुछ ही मिनट में पालकी में सवार हो कर हवेली के बाहर हो गयीं।

"भागवानो, रास्ता देना! भागवानो, शरण देना!"––कह कर पुकारते जा रहे थे और भीड़ हट कर पालकी के लिए रास्ता देती जा रही थी।

बाहर

कांग सेठ की हवेली के फाटक पर रानी बू की पालकी उतरी। हवेली में परेशानी का तूफ़ान उठा हुआ था। जवान दासियां और नौकरानियां एक-दूसरे पर हुकुम चलाती झगड़ती इधर-उधर भाग रही थीं। नौकर भी घबराहट में परेशान इधर-उधर खड़े थे। रानी की पालकी रुकते ही बड़े कारिन्दे ने झुक कर सलाम किया और उन्हें भीतर ले चला। रानी ज़नानी ड्योढ़ी की ओर चल दीं। उन्हें आया देख कर सब लोग चुप हो गए और उन की ओर आशा से देखने लगे। लोग उन की बुद्धिमत्ता से परिचित थे। यह भी जानते थे कि सेठानी के प्रति उन का स्नेह था। एक नौकरानी ने दूसरी को बताया—"रानी साहिबा बहुत बड़ी-बड़ी किताबें पढ़ती हैं!" उन लोगों को आशा थी कि उन पुस्तकों में से उन की विपत्ति का उपाय रानी ही बता सकेंगी। सेठ भीतर के आंगन के बड़े कमरे में बैठे रो रहे थे। पिछले वर्षों में रानी ने उन्हें कई बार देखा था, परन्तु बात उन से कभी नहीं हुई थी। मेंग और लीनी के विवाह के अवसरों पर भी दोनों ने परस्पर बुज़ुर्ग सम्बन्धियों की तरह दूर से ही झुक-झुक कर परस्पर अभिवादन किया था, परन्तु उन के विषय में रानी सहेली से बहुत कुछ सुन चुकी थीं।

रानी ने सेठ के विषय में कई सूत्रों से इतना सुन लिया था कि जानने

को कुछ शेष नहीं रह गया था। वे जानती थीं कि सेठ को मसाला भरी बत्तख के साथ शराब और लहसुन बहुत पसंद था। अण्डे उन्हें पसन्द नहीं हैं। सुअर का मांस खूब खाते थे। दो पूरी सुराही पी जायं तो नशा चढ़ता था। शराब चढ़ जाय तो उत्पात नहीं करते, बस सो रहते थे। उन्हें अपने बच्चों की संख्या का भी बहुत गर्व था, परन्तु बच्चों को रोते देख कर चिढ़ भी जाते थे। रात में वे अपनी चप्पल सेठानी की सेज के समीप ही रखते थे। जिस दिन ऐसा न करें सेठानी समझ जातीं कि पति चकले गये हैं और आधी रात तक रोती रहतीं। उन्हें यह भी मालूम था कि सेठ के सीने पर दीर्घायु का चिह्न--काला तिल--था। पेट में प्राय: हवा भर जाती थी। उत्तर से धूल भरी आंधी आने पर उन की आंखों में कष्ट हो जाता था और केंकड़ा खाने से उन्हें खाज हो जाती थी, परन्तु खाये बिना रहते नहीं थे। अभिप्राय यह कि रानी उन के विषय में सब कुछ जानती थीं। सेठ इस समय सेठानी को मृत्यु के मुँह में समझ दोनों घुटनों पर अपने गुदगुदे हाथ रखे बैठे रो रहे थे। उन्हें रानी की बाबत केवल उतना ही मालूम था जितना शहर में सभी लोग जानते थे, अर्थात् रानी ने चालीस वर्ष की हो जाने पर पति के लिये रखेल रखवा ली थी।

रानी को आया देख कर सेठ उठ खड़े हुए। उन के गालों पर से आंसू की बूंदें पीले मोतियों की तरह लुढ़कती जा रही थीं। "वह तो······तो······"—सेठ ने बोलने का यत्न किया।

"हमें मालूम है।"--कह कर रानी ने आंखें फिरा लीं। रानी को सदा ही विस्मय होता था कि सेठानी इस आदमी से स्नेह करती थीं। परन्तु अब विस्मय नहीं हुआ, अब वे जान गयीं थीं कि प्रेम का मार्ग विचित्र है। शयनागार के दरवाजे पर साटिन का परदा पड़ा हुआ था। रानी उस ओर संकेत कर बोलीं—"आज्ञा दें तो हम भीतर चली जायं।"

"जाइये! जाइये! और उस की जान बचाइये।"--सेठ बड़बड़ा दिये।

रानी सेठानी के शयनागार में गयीं। कमरे में गर्म खून की गंध भरी

हुई थी। एक ओर बड़ा लैम्प जल रहा था। सेठानी की सेज पर एक बुढ़िया झुकी थी। एक नौकरानी पैताने और एक नौकरानी सिरहाने खड़ी थी। रानी ने सिरहाने खड़ी नौकरानी को एक ओर हटा दिया और सेठानी के वेदना से काग़ज़ की तरह पीले पड़ गये चेहरे की ओर देख कर करुणा से पुकारा—"मिशेन!"

सेठानी ने धीमे से आंखें खोलीं। "तुम,......तुम आ गयी! मैं नहीं बचूँगी।"—सेठानी बोलीं।

रानी सेठानी की कलाई हाथ में ले कर नाड़ी देखने लगीं। नाड़ी वास्तव में बहुत क्षीण थी।

"बच्चे को खींचो मत।"—रानी ने दाई को आदेश दिया।

बूढ़ी दाई ने रानी की ओर देख कर उत्तर दिया—"लड़का है।"

"रहने दो।"—रानी बोलीं। उंगली उठा कर उन्होंने आदेश दिया—"तुम सब बाहर चले जाओ।"

"तो फिर आप जानिये!"—बूढ़ी दाई ने मुंह बना कर कहा।

"हाँ, हम देख लेंगे।"—रानी ने ज़िम्मेदारी ले ली।

दाई और नौकरानियां बाहर चली गयीं तो रानी सेठानी के कान पर झुक कर बोलीं—"मिशेन, मेरी बात सुनो।"

सेठानी की आंखें फिर मुंद गयी थीं। बड़े यत्न से आंखें खोलीं, पर बोल न सकीं, पर वे समझ रही थीं।

रानी बोलीं—"तुम चुपचाप लेटी रहो, हम जा कर तुम्हारे लिये शोरवा ले आती हैं। तुम पी कर कुछ देर आराम करो। शरीर में कुछ शक्ति आ लेने दो। मैं सहायता करूंगी और बच्चा हो जायगा।"

सेठानी की पलकें तनिक थिरकीं और चेहरे पर सान्त्वना का भाव दिखाई दिया। रानी उन्हें कपड़ा ओढा कर बाहर के कमरे में आ गयीं। दाई नाराज़ हो कर चली गयी थी, परन्तु दोनों नौकरानियां मौजूद थीं। एक सेठ के लिये प्याले में चाय बना रही थी और दूसरी उन्हें पंखी कर रही थी। रानी ने सेठ को संबोधन किया।

"आप कुछ मदद करेंगे ?"—रानी ने पूछा।

"बच जायँगी ?"—सेठ चिल्ला उठे।

"हां, यदि आप मदद करें।"—रानी ने उत्तर दिया।

"मैं तैयार हूं······जो आप हुक्म करें।"

"चुप रहिये।"—रानी ने संकेत किया और एक नौकरानी को आदेश दिया—"एक प्याला बढ़िया शोरवा लाओ।"

"मांस का शोरवा, मुर्ग़ी का शोरवा और मछली का शोरवा—सभी तैयार हैं।"

"मछली का शोरवा।"—रानी बोलीं, "दो चम्मच शकर भी मिला लेना ख़ूब गरम हो।"

नौकरानी चली गयी।

सेठ की ओर देख कर रानी बोलीं—"शोरवा नौकरानी के हाथ न भेजियेगा, आप ही लाइयेगा।"

"मैं; मैं ?"—घबराकर सेठ बोले, "नहीं, मुझ से बिगड़ जायगा।"

"आप ही लेकर आइयेगा।"—रानी ने अपनी बात दोहराई।

रानी सेठानी के समीप लौट आयीं और फिर नाड़ी देखने लगीं। नाड़ी वैसे ही थी। और कमज़ोर नहीं हुई थी। रानी प्रतीक्षा में चुप खड़ी थीं। सेठ के पंजों के बल भारी-भारी क़दम रखते हुए आने की आहट मिली। सेठ दोनों हाथों में शोरवे का बरतन थामे थे।

"शोरवा चायदानी में ले लिया जाय।"—रानी बोलीं। उन्हों ने चायदानी की चाय पीतल के एक उगालदान में डाल दी और सेठ के हाथ से बरतन ले कर चायदानी में शोरवा भर कर सेठानी के समीप आ गयीं। चायदानी की टोंटी से स्वयं एक घूँट ले कर उन्हों ने देखा कि अधिक गरम तो नहीं और फिर पुकारा—"मिशेन, लो। तुम घूंट भरती जाओ।" टोंटी उन्हों ने सेठानी के मुंह में दे दी। सेठानी आंखें मूंदे ही घूंट भरने लगीं और पांच-छः घूंट पी गयीं।

"अच्छा, अब थोड़ी देर आराम कर लो।"—रानी बोलीं।

रानी ने सेठ को खड़े रहने के लिये संकेत किया परन्तु उन से बोली नहीं। अपनी साटिन की पोशाक की आस्तीन उन्हों ने ऊपर समेट ली। कुर्सी पर पड़ा एक तौलिया उठा कर कमर से बांध लिया। सेठ आतंक से यह सब कुछ देख रहे थे।

"मेरा यहां रहना ठीक होगा ?"—सेठ ने पूछा।

रानी ने उन्हें समीप आ जाने के लिये संकेत किया। अवहेलना करने का साहस सेठ को न था। सेठ की अनेक संतानें थीं, परन्तु संतान के उत्पन्न होने की प्रक्रिया तो उन्हों ने देखी नहीं थी। बेपरवाही में संतानें होती चली गयी थीं। वे केवल प्रसन्न ही होते रहे थे।

रानी ने सेठानी के ऊपर से कपड़ा हटा दिया और सेज पर झुक कर बोलीं—"मिशेन, तुम आराम से लेटी रहो। शरीर ढीला छोड़ दो। जो करना होगा हम करेंगी।"

रानी के आश्वासन देने पर भी जैसे ही उन के हाथों ने सेठानी के शरीर को छुआ उन की कराहट निकलने लगी। सेठ ने दोनों हाथों से मुंह ढँक कर पीठ मोड़ ली।

"आ कर उस के दोनों हाथ पकड़ लीजिये [illegible]।"—रानी ने सेठ को आज्ञा दी।

रानी की बड़ी-बड़ी आंखें सेठ की ओर थीं। सेठ आज्ञा की अवहेलना न कर सके। आगे आ कर उन्हों ने सेठानी के दोनों हाथ थाम लिये।

पति के परिचित हाथ पहचान कर सेठानी ने आंखें खोल दीं और पुकारा—"तुम आये हो ?"

जब सेठानी का ध्यान पति को पहचानने में था, रानी ने अपने पतले हाथ बढ़ा कर बच्चे को पकड़ लिया। सेठानी चीख उठीं।

सेठ पसीना-पसीना हो गये और पत्नी के हाथों को पकड़े रोते हुए बोले—"तुम्हारी जान बच जाय, मैं प्रतिज्ञा करता हूं······।"

"कैसी प्रतिज्ञा ?······"—सेठानी हांफ कर बोलीं, "हमें अच्छा लगता है, तुम्हारे बच्चे······।"

"मुझे कुछ नहीं चाहिये। तुम पर सब कुछ न्योछावर है।"—सेठ चिल्लाये, "तुम मर गयीं तो मैं फांसी लगा लूंगा।" उन के चेहरे से पसीना बह रहा था।

"हाय, तुम मुझे इतना चाहते हो!"—सेठानी क्षीण स्वर में हांफते हुए बोलीं।

एक क्षण के लिये रानी वू का हृदय कांप उठा। "जो कठिन काम हाथ में ले लिया था, निभ भी जायगा?"

"हाय मेरी जान, हाय मेरी रानी।"—सेठ रोने लगे, "तुम मरना नहीं।"

"नहीं मैं मरूँगी नहीं।"—सेठानी ने दृढ़ता से उत्तर दिया।

उसी समय रानी ने बच्चे को निकाल लिया। रक्त का फौवारा-सा बह निकला, परन्तु रानी ने समीप पड़ी रुई उठा कर उसे रोक दिया।

सेठ पत्नी के हाथ पकड़े हुए बोले—"क्या हो गया?"

"हो गया।"—रानी ने उत्तर दिया।

"बच्चा?"—सेठानी धीमे से बोलीं।

रानी ने बच्चे के फटे हुए शरीर को कमर से लिपटे तौलिये में लपेट दिया और शांत स्वर में बोलीं—"बच्चा मरा हुआ है। आप दोनों के काफ़ी बच्चे हैं, कोई बात नहीं।"

"कोई बात नहीं।"—सेठ बड़बड़ा उठे, "मिशेन, कोई ज़रूरत नहीं। मैं प्रतिज्ञा करता हूं।"

"चुप रहो।"—रानी कुछ कड़े स्वर में बोलीं, "प्रतिज्ञा क्यों करते हो, यह तुम्हारे बस का नहीं।" शोरवे से भरी चायदानी उठा कर उन्हों ने सेठानी के मुंह से लगा दी। "पियो, इस समय अपनी फ़िक्र करो।" रानी ने फिर उन की नाड़ी देखी। नाड़ी में अब बाल भर सुधार था।

रानी सेठ को पत्नी का हाथ छोड़ देने का संकेत कर बोलीं—"अब उसे सोने दो। हम यहां बैठेंगी। आप बच्चे को बाहर ले जाइये।"

तौलिये में लिपटे बच्चे को [illegible] उन्हों ने फिर चेतावनी

दी—"यह तुम्हारी कही बात का साक्षी है। याद रखना, अपने प्राण दे कर इस ने तुम्हारी पत्नी के प्राण बचाये हैं।"

"मैं नहीं भूलूंगा।"—सेठ ने अपनी प्रतिज्ञा दुहराई, 'मैं प्रतिज्ञा करता हूं।"

"निबाह नहीं पाओगे तो प्रतिज्ञा क्यों करते हो?"—रानी फिर बोलीं।

रानी पूरा दिन और रात सहेली के सिरहाने बैठी रहीं। नौकर उन के लिये भोजन और चाय उसी कमरे में ले आये। रानी ने नौकरों को कमरे के भीतर नहीं आने दिया। दरवाज़े पर जा कर ही चीज़ें ले लीं। सेठ दो बार भीतर आये। एक बार रानी को धन्यवाद देने के लिये और एक बार सोती हुई पत्नी को देखने के लिये। सेठानी ने आंखें नहीं खोलीं। टोंटी मुंह से लगा देने पर आंखें मूंदे ही शोरवा पी लिया। रानी न शोरवे में रक्त गाढ़ा करने के लिये औषधि मिला दी थी और किसी औषधि का महीन चूर्ण सेठानी के शरीर पर छिड़क दिया था। इन औषधियों के विषय में रानी ने पुरानी पुस्तकों में पढ़ा था।

मेंग और लीनी मां को देखने आयी थीं, परन्तु रानी ने उन्हें उस कमरे के भीतर नहीं आने दिया। हवा बहुत ठंडी थी, इसलिये रानी ने कमरे की खिड़कियां बन्द कर दी थीं। केवल उतनी ही हवा आने दी जितनी दोनों के श्वास के लिये आवश्यक थी। रानी निश्चित समय के बाद सेठानी को औषधि मिला शोरवा पिलाती रहीं और औषधि से उन के शरीर को धोती रहीं। रेशमी लिहाफ़ में लिपटी सेठानी के शरीर में शनैः-शनैः प्राण-शक्ति लौट रही थी।

दो दिन बीत जाने पर रानी को सेठानी के प्राण बच जाने का भरोसा हो गया तो वे कमरे से बाहर निकलीं। सेठ तब भी दरवाज़े के बाहर प्रतीक्षा में अकेले बैठे थे। इस बीच में न उन्हों ने नहाया, न कुछ खाया, न सोये ही। विनय और शिष्टाचार का पाखंड भूल कर सीधे-सादे मनुष्य बने हुए थे।

उन की अवस्था देख रानी को बहुत दया आयी। वे उन के सामने दूसरी कुर्सी पर बैठ गयीं।

"आप की कृपा से ही इस की जान बच गयी।"—सेठ सिर झुका कर बोले।

"मिशेन के जीवन पर फिर यह संकट नहीं आना चाहिये।"—रानी ने धीमे से कहा।

"मैं प्रतिज्ञा करता हूँ······।" सेठ बोले ही थे कि रानी ने उन्हें संकेत से चुप करा दिया।

"प्रतिज्ञा निभा भी पाओगे?"—रानी बोलीं, "निभाओगे भी तो कैसे? क्या मैंने उस के प्राण इसलिये बचाये हैं कि तुम चकलों की सैर करो और वह बैठी रोया करे? तुम उसे परेशान नहीं करोगे तो दूसरी हरकतें करोगे। यह तो बेचारी की बदक़िस्मती है कि तुम्हें इतना चाहती है। तुम्हें तो उस की परवाह नहीं है।"

"मैं उसे बहुत प्यार करता हूं।"—सेठ ने रानी की बात का विरोध किया।

'क्या प्यार करते हो?"—रानी बोलीं, "उस के लिये कुछ कर भी सकते हो?" रानी ने सेठ की आंखों में घूर कर देखा। "रोती रहने से तो उस का मर जाना ही क्या बुरा है!"

"नहीं, वह रोयेगी क्यों?"—सेठ ने पूछा और फिर आंखें झुका लीं। "मुझे तो नहीं मालूम था······मुझ से तो उस ने कभी नहीं कहा।"

"क्या नहीं कहा?"—रानी ने पूछा। सेठ का अभिप्राय समझ कर भी उन्हों ने प्रश्न किया कि सेठ को बात स्पष्ट कहनी पड़े।

"मुझे नहीं मालूम था कि संतान का प्रसव इतना कठिन होता है।"

"ऐसा ही कठिन होता है,"—रानी बोलीं, "परन्तु तुम्हारे स्नेह में वह सहती गयी।"

"क्या हर बार इतना की कष्ट?"—सेठ ने पूछा।

"इतना, कितना?"—रानी ने फिर प्रश्न किया।

"यही कि प्राणों पर संकट······।"

"स्त्री के लिये प्रसव सदा ही प्राणों पर संकट होता है।"—रानी बोलीं, "परन्तु अब मिशेन की अवस्था ऐसी हो गयी है कि प्रसव होगा तो आप नहीं बचेंगे। उस की जान ही बचा लो या·········"

"मुझे मिशेन चाहिये।"—सेठ बोल उठे।

सेठ आंखों पर हाथ रखे सिर झुकाये बैठे थे। रानी उठीं और चली गयीं। सेठ से फिर मिलने की संभावना नहीं थी, आवश्यकता भी नहीं थी। वे उस सीधे-सादे आदमी को प्रेम से भयभीत, अपनी ही पत्नी के प्रेम से भयभीत, छोड़ कर चली गयीं।

रानी बहुत थकी हुई थीं। अपने आंगन की नीरवता में आ कर शांति और विश्राम के लिये आंखें मूँद लीं। वह आँगन आन्द्रे की उपस्थिति और स्वर से पवित्र हो चुका था। रानी और आन्द्रे के स्नेह के संबंध से सेठ और सेठानी के पार्थिव प्रेम की क्या तुलना थी!

इंग ने पुस्तकालय में अंगीठी सुलगा दी थी। खिड़कियां खुली होने पर भी कमरा गरम था। खिड़कियों से धूप आ रही थी। रानी वहीं आ बैठीं। यदि प्रेम ने उन्हें नयी शक्ति न दे दी होती तो वे सेठानी के प्राण न बचा सकतीं। किसी के शरीर को छूने, रक्त की गंध, सेठ के आंसुओं से भरे फूले हुये चेहरे की विरक्ति के कारण वह वहां ठहर भी न सकतीं, परन्तु प्रेम ने अब इन विरक्तियों को धो दिया था। इंग भीतर आई और अचम्भे से बोली—"हुजूर, यह सब क्या,······कपड़ों पर कितना खून······चेहरा थकान से कैसा पीला हो रहा है!"

रानी ने आंखें झुका कर अपने कपड़ों पर रक्त के दाग देखे। उन के स्वभाव की नफ़ासत और नाजुकपना जाने कहां चला गया था। उन के मुख से केवल इतना ही निकला—

"ओह' भूल गयी।"

× × ×

रानी में आ गये परिवर्तन को वे स्वयं भी नहीं जान पा रही थीं। नहीं

मालूम था कि जीवन के इस नये पथ पर अगला क़दम किस ओर उठेगा ? कोई पूर्व निश्चित योजना नहीं थी। इतना भरोसा था कि वे ठीक दिशा में जा रही हैं। इसी में उन का कल्याण है। इस मार्ग को सुझाने वाला प्रकाश आन्द्रे का प्रेम था। अपरिचित मार्ग को पहले से जान लेने की आवश्यकता भी नहीं थी। केवल पथ-दर्शक प्रकाश का भरोसा।

दूसरे दिन इंग च्यूमिग की बेटी को गोद में ले आयी तो रानी के मन में उसके प्रति स्नेह उमड़ पड़ा। अब तक रानी इस बच्ची को अपने कन्धों पर एक नया बोझ अनुभव कर रही थीं, परन्तु अब वह बच्ची वू परिवार और च्यूमिग को बांध देने वाली स्नेहमयी कड़ी जान पड़ रही थी। च्यूमिग भी अब समस्या और बोझ नहीं रही थी। उन के लिये आन्द्रे के निर्देश के अनुसार ही सब कुछ करना होगा।

"च्यूमिग कहां है ?"––रानी ने पूछा।

"कभी रसोईघर में, कभी बग़ीचे में कुछ करती धरती रहती है।"—इंग ने उत्तर दिया।

"ख़ुश तो है ?"––रानी ने पूछा।

"ख़ुश क्या होगी हुज़ूर !"—इंग ने उत्तर दिया, "उसे तो निकाल ही दना होगा। उदास आदमी का चेहरा असगुन होता है मालकिन। उदास आदमी को देख कर धायों का दूध सूखने लगता है और बच्चे भी चिड़चिड़े हो जाते हैं।"

"अच्छा, उसे बुलाओ।"––रानी ने आज्ञा दी। सुबह नींद ख़ुलते ही रानी ने सेठानी के समाचार के लिये हरकारा भेज दिया था। वहां सब कुशल था। सेठानी को रात भर अच्छी नींद आई थी। ख़ून बंद हो गया था। सुबह उन्हों ने शकर मिला कर दलिया खा लिया था और अब तक सो रही थीं।

आकाश में गहरे बादल छाये हुये थे, परन्तु हवा नहीं थी। नदी की ओर से आती कोहरे की गंध रानी की सूक्ष्म नासा में अनुभव हो रही थी।

रानी के समीप ही एक पलने में पड़ी च्यूमिग की लड़की अपने हाथों

से ही खेल रही थी। कभी उस के नन्हें-नन्हें हाथ उस की आंखों के आगे से हट जाते तो बच्ची हाथों के खो जाने से विस्मित रह जाती। हाथ आंखों के सामने आ जाते तो वह उन्हें ध्यान से देख कर हिला-हिला कर खेलने लगती, परन्तु अवश हाथ फिर खो जाते और बच्ची चकित हो जाती।

बच्ची की ओर देख कर रानी सोच रही थीं—हम सब लोग आरम्भ में कितने नन्हें होते हैं! मैं भी ऐसी रही हूंगी और आन्द्रे भी। रानी कल्पना करने लगीं। नन्हा शिशु आन्द्रे कैसा लगता होगा और उन्हें आन्द्रे की मां का ख्याल आ गया। क्या मां जानती होंगी कि उन का बेटा क्या था! उस का जीवन दूसरे मनुष्यों के लिये आशीर्वाद का रूप होगा!

सर्दी के कारण कमरे के दरवाज़े बंद थे। किवाड़ खुले और च्यूमिंग भीतर आ गयी। सर्दी और कोहरे में से आयी च्यूमिंग कोहरे और सर्दी का ही अंश जान पड़ रही थी, बादल के रंग-जैसी उदासी का रूप। चेहरा पीला, होंठ पीले और पीली पलकें बड़ी-बड़ी आंखों पर झुकी हुई थीं।

"अपनी बेटी को तो देखो!"—रानी हँसती हुई स्नेह से बोलीं, "पगली के हाथ ही खो जाते हैं। ढूंढ़ पाती है तो फिर खो जाते हैं। हैरान रह जाती है।"

च्यूमिंग पलने के समीप आ सिर झुकाये बच्ची की ओर देखती भाव-शून्य खड़ी रही। उसे बच्ची से कोई ममत्व नहीं जान पड़ रहा था।

इस से पूर्व ऐसे अवसर पर रानी आंखें बचा कर मुंह फिरा लेतीं। सोचतीं, दूसरों की बातों से उन्हें क्या मतलब! यदि मूर्ख लड़की अपनी बच्ची को स्नेह नहीं करती तो हम क्यों परेशान हों? परन्तु अब वह बात नहीं थी। वे च्यूमिंग की ओर देख कर बोलीं—"हाय, अपनी बेटी को प्यार नहीं करती तुम?"

"मेरी कहां है!"—च्यूमिंग ने उत्तर दिया।

"तेरे पेट की नहीं है!"—रानी ने विस्मय प्रकट किया।

"है तो, परन्तु जबर्दस्ती की है।"—च्यूमिंग ने उत्तर दिया।

दोनों स्त्रियां चुप अबोध बच्ची की ओर देखती रहीं। दूसरा अवसर

होता तो मां के ऐसे निर्मोह के लिये रानी ने उसे धमका दिया होता, परन्तु प्रेम ने उन्हें बदल दिया था। वें सोच रही थीं—

आन्द्रे ने एक कुआँरी लड़की के अज्ञात पिता से बालक की बात सुनाई थी। उस बालक पर इतनी आभा थी कि लोग उसे भगवान् की तरह पूजने लगे थे, क्योंकि वह प्रेम का परिणाम था।

"बालक के पिता का पता क्यों नहीं लगा?"—रानी ने प्रश्न किया था।

"क्यों कि लड़की ने उस का नाम नहीं बताया।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

रानी ने फिर पूछा—"मां और बालक को आश्रय किस ने दिया?"

"एक भला आदमी था, जोज़फ़। जोज़फ मां और बेटे दोनों की श्रद्धा से पूजा करता था। जोज़फ़ ने भी कुमारी से कभी कोई प्रश्न नहीं पूछा।"

"उस आभा-सम्पन्न बालक का क्या हुआ?"—रानी ने पूछा।

"वह जवानी में ही मर गया था, परन्तु लोगों के मन में अब भी जीवित है।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

आन्द्रे की बात याद कर रानी के ज्ञान-चक्षु खुल गये। समझ में आया कि च्यूमिंग बच्ची को इसलिये प्यार नहीं करती क्यों कि वह वू साहब को प्यार नहीं करती, और साहब को वह इसलिये प्यार नहीं करती कि वह किसी दूसरे को प्यार करती होगी।

रानी ने सहसा प्रश्न किया—"तुम किसे प्यार करती हो?"

"मै तो किसी को प्यार नहीं करती।"—च्यूमिंग ने उत्तर दे दिया, परन्तु चेहरा कानों तक सुर्ख़ हो गया। उस के इस प्रकट झूठ पर रानी हँस पड़ी।

"झूठ क्यों बोल रही हो?"—रानी स्नेह से बोलीं, "तुम्हारे गाल इतने लाल क्यों हो गये? सच बोलते इतना क्यों डर रही हो? चेहरा तो कह ही रहा है, होंठों से भी कह दो। इस बच्ची के लिये तुम्हारे मन में मोह नहीं है, क्यों कि तुम इस के बाप को प्यार नहीं करतीं। प्यार मारपीट,

कर जबरन या मोल ले कर नहीं कराया जा सकता। वह तो विधाता की देन है । बिना मांगे मिलता है । उस के लिये हम तुम्हें दोष नहीं देते । अन्याय तो हमीं से हुआ, परन्तु तब हम स्वयं भी नहीं समझती थीं । हमारा ख्याल था कि जैसे नर-मादा पशुओं का सम्बन्ध करा दिया जा सकता है, वैसे ही स्त्री-पुरुषों का भी हो सकता है, परन्तु अब हम समझती हैं कि नर और नारी का मेल जबरन करा देने से एक-दूसरे के लिये घृणा ही होगी। हम लोग पशु तो नहीं हैं। यदि प्रेम हो तो शरीर न मिल सकने पर भी प्रेम का सम्बन्ध हो सकता है। शरीर न रहने पर भी हम प्रेम कर सकते हैं। प्रेम केवल शरीर का ही तो नहीं होता!"

रानी के मुँह से ऐसी बातें सुन च्यूमिंग उन की ओर आखें फैलाये देखती ही रह गयी। उस का मन नहीं मान रहा था कि वे सब बातें रानी के मुँह से सुनी हैं। उसे लगा जैसे कोई प्रेत बोल रहा हो, परन्तु रानी तो प्रेत नहीं थीं। वे सम्मुख बैठी थीं, केवल सहानुभूति ने उन्हें अधिक सजीव और आभामय रूप दे दिया था। च्यूमिंग उन की ओर देखती रह गयी।

"बोलो न! हमें बताओ किसे प्यार करती हो तुम?"—रानी ने पूछा।

च्यूमिंग का सिर झुक गया। अपने कुर्ते के दामन का कोना नाखूनों से खोटते हुये धीमे से बोली—"मैं लज्जा से मर जाऊंगी।"

"तुम्हें लज्जा से मरने नहीं देंगे।"—रानी ने स्नेह से आश्वासन दिया।

रानी के फिर साहस बढ़ाने और आग्रह करने पर च्यूमिंग झिझकते हुये बोली—"आप ने तो मुझे बूढ़े मालिक के लिये रखेल खरीद लिया था, परन्तु······" वह आगे बोल न सकी।

"हां, यह न होता तो तुम दूसरे आदमी से विवाह करतीं।"—रानी ने फिर साहस दिलाया।

च्यूमिंग ने झुका हुआ सिर और झुका कर हामी भर ली।

"वह आदमी इसी हवेली में है?"—रानी ने पूछा।

च्यूमिंग ने फिर सिर झुका कर हामी भरी।

"क्या हमारे बेटों में से है कोई ?"—रानी ने पूछा।

च्यूमिग ने भयभीत आंखें रानी की ओर उठाई और रो पड़ी।

"क्या फेंगमो ?"—रानी ने पूछा और समझ भी गयीं। च्यूमिग रोती रही।

······विकट उलझन है। यह स्त्री-पुरुषों के संबंध और आकर्षण का दुस्साध्य फंदा है।—रानी सोच रही थीं, यह सब उन की अपनी मूर्खता का परिणाम था, क्योंकि वह प्रेम से परिचित नहीं थीं।

"बहिन रोओ मत।"—रानी बोलीं, "यह हमारे ही अपराध का परिणाम है।" रानी ने च्यूमिग को आश्वासन दिया। "हम ही इस का उपाय करेंगे। सोचेंगे, क्या उपाय किया जा सकता है।"

च्यूमिग ने रानी के सामने घुटने टेक दिये और सिर फ़र्श पर रख गिड़गिड़ा कर बोली—"जीजी, मैंने कहा था मैं लाज से मर जाऊंगी। मुझे मर जाने दीजिये। आप को मेरी-जैसी की ज़रूरत ही क्या है!"

"सब की ज़रूरत है बहिन, तुम्हारी भी ज़रूरत है।"—रानी च्यूमिग को कंधों से उठाती हुई बोलीं, "तुम ने बहुत अच्छा किया, मुझे बता दिया। तुम संतोष से प्रतीक्षा करो। समाधान स्वयं सूझ जायगा। तब तक तुम हमारे बच्चों को सम्भालो। इस के लिये हमें सहायता की बहुत ज़रूरत है। हमारे पास इतना समय नहीं।"

च्यूमिग ने तुरंत आंखें पोंछ लीं और बोल उठी—"जीजी, इन बच्चियों को मैं सँभालूंगी। वे मेरी ही जैसी हैं, मेरी ही बहिनें हैं।" अपनी बेटी को उस ने गोद में उठा लिया। "इस अनाथ को भी मैं वहीं ले जाऊँगी। इस की मां इसे प्यार नहीं करती तो यह भी अनाथ ही है।"

रानी चुप रह गयीं। सोच रही थीं—च्यूमिग की समस्या कैसे सुलझेगी? उस का जीवन कैसे सुखमय हो सकेगा?······समय स्वयं मार्ग दिखायेगा।

× × ×

सप्ताह बीते और मास गये। रानी का आंगन हवेली के बीचोंबीच

था। एक दिन बैठे-बैठे विचार आया--यदि मेरी प्रकृति दुष्ट है तो मेरी अवस्था बिलकुल मकड़ी की तरह है। मैं यहां केन्द्र में बैठी जाला बुनती रहती हूँ, जिस में पूरा परिवार फँसा हुआ है। आंगन में आम के वृक्ष पर किसी पक्षी के चहचहाने का स्वर सुनाई दिया। इस पक्षी का स्वर कभी-कभी सुनाई देता था, वर्ष में दो बार। भारतवर्ष में बुलबुलें इस रास्ते से उत्तर की ओर चली जाती थीं और फिर वसंत के आरम्भ में लौट आती थीं। बुलबुल का स्वर सुरीला था, परन्तु कुछ तीखा-सा।

रानी फिर सोचने लगीं—इस बात का क्या प्रमाण है कि मैं भली हूँ। मैं जो भला समझती हूँ, वह वास्तव में भला ही है? रानी ने मन ही मन आन्द्रे से उत्तर मांगा।

उन्हें एक दिन की बात याद आयी। वे वहीं पुस्तकालय में उसी मेज के समीप कुर्सी पर बैठी थीं। आन्द्रे भी था। वे आमने-सामने नहीं थे। मेज के एक ही ओर थे। बात करने के लिये घूम कर परस्पर देखना पड़ता था। दोनों की दृष्टि बाहर आंगन में थी। ऐसा ही दिन था, उजली धूप थी और वायु निर्मल। आंगन के फ़र्श के पत्थरों में भिन्न-भिन्न रंगों की गुलाबी, नीली और उजली चांदी-जैसी धारियां स्पष्ट दिखाई दे रही थीं। आर्किड के चटक लाल फूल खिल रहे थे, जल-कुण्ड में सुनहरी मछलियां तीरों की तरह इधर-उधर झपट रही थीं।

आन्द्रे रानी को मनुष्य के पाप में फँसने की कहानी सुना रहा था। उस ने बताया एक नारी ने, उस का नाम हौआ था—पुरुष को निषिद्ध फल खाने की प्रेरणा दी थी।

"वह नारी कैसे जानती थी कि वह फल निषिद्ध था?"--रानी ने पूछा।

"एक दुष्ट आदमी ने सांप का रूप धारण कर यह बात हौआ को बता दी थी।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

"नारी को क्यों बताई, पुरुष को क्यों नहीं?"—रानी ने प्रश्न किया।

"सांप जानता था कि नारी पुरुष से संतुष्ट नहीं थी। वह जीवन को

बढ़ाना और उत्पन्न करना चाहती थी।"--आन्द्रे ने उत्तर दिया, "पुरुष तो स्वयं अपने से ही संतुष्ट था। वह एक बाग़ और उस नारी को पा कर ही तृप्त हो गया था। उसे न्यूनता अनुभव नहीं हो रही थी, परन्तु नारी चाहती थी कि बाग़ और बड़ा तथा सुन्दर होना चाहिये, क्यों कि वह जानती थी कि उस के शरीर से अनेक जीव उत्पन्न होंगे और उन जीवों के लिये सभी वस्तुओं की आवश्यकता होगी। नारी केवल अपनी ही बात नहीं सोचती थी, उसे अपने शरीर से उत्पन्न होने वाले जीवों की चिन्ता थी। उन के लिये वह सभी कुछ करने को तैयार हो गयी। यही स्त्री की प्रकृति है।"

रानी ने आन्द्रे की गहरी और गम्भीर आंखों को देख कर प्रश्न किया था--"आप नारी के विषय में इतना कैसे जानते हैं?"

"क्यों कि मैं अकेला हूँ।"--आन्द्रे ने उत्तर दिया, "और अपने को मुक्त कर चुका हूँ।"

"परन्तु आप ने अपने आप को मुक्त क्यों कर लिया?"—रानी ने पूछा, "आप जीवन का मार्ग क्यों छोड़ बैठे? सभी लोगों का कर्तव्य उस मार्ग पर चलना है। वह मार्ग छोड़ देना क्या उचित है?"

एक ही बार केवल उसी दिन रानी ने आन्द्रे को झिझक कर उत्तर देते पाया था। "इस प्रश्न का उत्तर कठिन है।"—आन्द्रे ने कहा था, "मैं स्वीकार करता हूं कि मुक्ति की इच्छा आरम्भ में अहंकार के कारण ही हुई थी। जिस समय मैं दूसरे पुरुषों की तरह विवाह करके परिवार बनाने की बात सोच रहा था तब विश्वास था कि एक नारी मुझ से प्रेम करती है, परन्तु भगवान् ने कृपा कर मेरे सुख के लिये मेरे नेत्र खोल दिये थे और मैं मानव-प्रकृति को समझ गया। मैं समझ गया कि वह नारी अचेतन रूप में हौआ के समान ही अपनी भावी संतानों के लिये यह योजना बना रही है। वह नारी मेरी थोड़ी बहुत सहायता से संतान उत्पन्न करना चाहती थी, परन्तु वह संतान तो उसके शरीर का ही अंश होती। मेरी सहायता तो क्षणिक वासना की पूर्ति के रूप में होती, परन्तु मैं जीवन

भर के लिये आदम की तरह उस के बाग़ की पैदावार बढ़ाते रहने के लिये धरती खोद कर पेड़ लगाने और सींचने के काम में बंध जाता। मैंने सोचा, इस नारी की सेवा करने की अपेक्षा भगवान् की ही सेवा क्यों न करूं? भगवान् तो अधिक आशा नहीं करते। वे केवल चाहते हैं कि मैं अन्याय न करूँ और उन के सम्मुख विनीत रहूँ। इसी विचार से मैं सन्यासी बन गया।"

"सन्यासी बन कर आप ने सुख संतोष पा लिया?"—रानी ने विद्रूप के स्वर में प्रश्न किया।

"हां, मैं अपना स्वामी बन गया हूँ।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

रानी पुस्तकालय में अकेली बैठी स्त्री-पुरुष की समस्या पर विचार कर रही थीं। आन्द्रे की बात याद आ रही थी—बेचारी हौआ या नारी का क्या दोष है? विधाता या प्रकृति ने ही उस में उत्पत्ति और सृजन की अपरिमित इच्छा और शक्ति भर दी है। पुरुष तो केवल अपने ही संतोष की चिन्ता करना चाहता है। वह तो नारी से केवल अपना ही संतोष चाहता है, परन्तु नारी बिना समझे-बूझे भी सृजन के लिये पुरुष का उपयोग करती रहती है। दोनों ही सृजन के साधन हैं, परन्तु केवल स्त्री ही यह स्वीकार करती है कि वह सृजन का साधन है और उस कर्तव्य को पूरा करती है।

"यही तो अंतर है,"—रानी ने आन्द्रे को उत्तर दिया था, "स्त्री और पुरुष में, आप में और मुझ में।"

रानी निश्चल बैठी हुई थीं। सामने दीवार की ईंटों की दरार से निकल कर एक छिपकली फ़र्श पर बैठी धूप सेंक रही थी। रानी उस की ओर देखती हुई सोच रही थीं—स्त्री-पुरुषों की यह समस्या कभी समाप्त नहीं हो सकती। पुरुष अपनी व्यक्तिगत तृप्ति की ही बात सोचता है, परन्तु स्त्री अपनी व्यक्तिगत तृप्ति की बात नहीं सोचती, फलवती होने की बात सोचती है। पुरुष स्त्री को अपना ही अंश मान कर उसे प्यार करता है परन्तु स्त्री पुरुष को सृजन के साधन के रूप में ही चाहती है. इसलिये

पुरुष स्त्री से सन्तुष्ट नहीं हो पाता। पुरुष स्त्री को अपने अधिकार में रखना चाहता है परन्तु स्त्री पुरुष से बड़ी शक्ति के अधिकार में है। नारी ही मनुष्य को उत्पन्न करती है। पुरुष अपनी इस क्षुद्रता को कभी भूल नहीं पाता। वह स्त्री का दमन करने के प्रयत्न में रहता है, इसीलिए पुरुष नारी को बन्दी बना कर घर में बंद रखता है। उसे अपनी जीविका कमा सकने के अधिकार से भी वंचित रखता है। स्वयं मर जाने पर नारी पर वैधव्य का अभिशाप लाद देता है, अथवा उसे जला कर राख कर देता है। अपने अन्यायों को स्त्री के सतीत्व धर्म का नाम दे देते हैं।

रानी पुरुष की इस क्षुद्रता पर हँस पड़ीं। उन की हंसी के स्वर से भय-भीत हो कर छिपकली दराज में छिप गई।

एक दूसरे अवसर पर रानी और आन्द्रे मेज़ पर आमने-सामने बैठे थे। रानी बोलीं—"क्या पुरुष केवल पुरुष ही है और स्त्री पूर्णतः स्त्री। यदि ऐसा है तो उन में मेल की क्या संभावना? क्यों कि पुरुष अपने व्यक्तित्व के लिए जीवित रहता है और स्त्री जीवन की शक्ति की पूर्ति के लिये। यह दोनों परस्पर-विरोधी दिशायें हैं।"

आन्द्रे ने उत्तर दिया—"स्त्री और पुरुष दोनों का ही मूल आधार भग-वान् का अंश है, वह है आत्मा। आत्मा न स्त्री है न पुरुष, वह निर्विकार है और शाश्वत है। उसी में मस्तिष्क और विचार शक्ति भी समाहित है।"

"परन्तु स्त्री और पुरुष के मस्तिष्क में तो भेद है।"—रानी ने पूछा।

"उस भेद का कारण दोनों की पृथक्-पृथक् आवश्यकताएं हैं।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया, "स्त्री अपने मस्तिष्क का उपयोग अपनी नारी प्रवृत्तियों को चरितार्थ करने के लिए करती है और पुरुष अपने मस्तिष्क का प्रयोग नारी को प्राप्त करने के लिये। मस्तिष्क तो एक यंत्र है, उसे हम चाहे जिस प्रयोजन से व्यवहार कर सकते हैं। चाक़ू से सब्जी-तरकारी काटी जा सकती है और उसी से मनुष्य की मूर्ति भी तराशी जा सकती है। मस्तिष्क का प्रयोग अपने लक्ष्य के अनुसार किया जाता है।"

"तो आत्मा न स्त्री है, न पुरुष।"—रानी ने दोहराया।

"निस्सन्देह।"--आंद्रे ने स्वीकार किया।

"परन्तु यह आत्मा है क्या पदार्थ?"--रानी ने पूछा।

"आत्मा को जीव दूसरे जीवों से नहीं प्राप्त कर सकता।"--आन्द्रे ने उत्तर दिया, "आत्मा ही वह वस्तु है जो सब जीवों के एक समान दिखाई देने पर भी प्रत्येक जीव के व्यक्तित्व को दूसरे जीवों से पृथक् बना देती है। वही मनुष्य की अपनी चीज है, भगवान् की देन है।"

"यदि हम भगवान् में विश्वास न करें तो?"--रानी ने पूछा।

"उस से कोई अंतर नहीं पड़ता।"--आन्द्रे ने उत्तर दिया, "आप स्वयं देख सकती हैं कि संसार के सभी प्राणियों, क्षुद्रतम प्राणी का भी, अपना अस्तित्व है। इस सत्य को पहचान लेना ही काफ़ी है। भगवान् अन्याय नहीं करते। वे जानते हैं कि मनुष्य प्रत्यक्ष प्रमाण पर विश्वास करना चाहता है। बच्चे भी केवल देख कर अथवा स्पर्श कर के ही विश्वास करना चाहते हैं। परन्तु ज्ञान के दूसरे अप्रत्यक्ष स्रोत भी हैं। मनुष्य का विकास होने के साथ-साथ इन स्रोतों का विकास होता है। हमारा विकास हो जाने पर हम ज्ञान के स्रोतों का भी भरोसा अपने आंख, नाक, कान के ही समान करते हैं।"

आन्द्रे की बातें याद कर रानी ने सामने पड़ी मेज़ की दूसरी ओर कुर्सी को देखा। कुर्सी खाली थी, परन्तु आन्द्रे का गम्भीर मुस्कराहट लिये चेहरा उन के सामने था और बादल की गंभीर गर्जना के समान आन्द्रे का स्वर भी उन के कानों में गूंज रहा था।

"हाँ, अब मैं कुछ समझने लगी हूं।"—रानी धीमे से बोलीं, "समझने लगी हूं और अपनी आत्मा से तुम्हें प्यार करती हूं।"

सोचा—क्या आत्माओं में प्रेम और मित्रता का सम्बन्ध नहीं हो सकता?

"क्यों नहीं हो सकता!"—रानी ने आन्द्रे को सम्बोधन किया।

× × ×

रानी व प्रकृति से कर्मठ थीं। वे अपने ज्ञान का प्रयोग कर्म में भी करती

थीं। वह हवेली ही उन का संसार थी। हवेली में दो व्यक्तियों का जीवन विक्षिप्त था। एक थी रुलन दूसरी थी लीनी।

कई दिन प्रतीक्षा कर लेने के बाद रानी ने उन दोनों से बात करने का निश्चय किया। रुलन बड़ी थी, इसलिए पहले उसी से बात की।

त्सेमो और फेंगमो को घर से गए कई मास बीत चुके थे। दोनों ही भले लड़के थे। नियम से घर पर पत्र भेज रहे थे। पत्र पिता और माता के नाम रहते थे। रानी पत्रों को पढ़ कर और उन पर विचार कर साहब के पास भेज देतीं। साहब पत्रों को पढ़ लेते तो लिआंगमो के पास भेज देते। लिआंगमो अब परिवार की भूमि और कारोबार की देखभाल कर रहा था। एक दिन उसे ही सब कुछ संभालना था। वह इन पत्रों को पढ़ कर परिवार के खातों में लगा देता।

दोनों बेटों के पत्रों से यह स्पष्ट था कि दोनों दो भिन्न दिशाओं में जा रहे थे। फेंगमो अध्ययन के लिए विदेश जाना चाहता था। रानी ने उसे अनुमति दे दी थी और आवश्यक धन भी भेजती रहती थीं। उस ने पत्र में लिखा था कि शीघ्र ही युद्ध की सम्भावना के कारण समुद्री जहाजों का आनाजाना बंद हो जाने की आशंका है। यदि वह विदेश जाने से पहले एक बार घर आया तो शायद विदेश जाना संभव ही न हो सके, इसलिए तुरंत ही चल देना उचित होगा।

यदि फेंगमो एकलौता बेटा होता तो रानी उसे एक बार देखे बिना विदेश न जाने देतीं, परन्तु तीन बेटे और भी थे, इसलिए उन्हों ने फेंगमो का अनुरोध मान लिया। जाड़ों में एक दिन सन्ध्या समय फेंगमो जहाज पर सवार हो गया और कुशल से समुद्र पार पहुंच गया। अब उस के पत्रों पर दूसरे ही प्रकार के डाक के टिकट और मोहरें होती थीं। यह पत्र अमेरिका से आ रहे थे। रानी के लिए समुद्र पार के सभी देश एक ही समान थे। आन्द्रे ने फेंगमो को पढ़ाना शुरू किया था। उसी अध्ययन को फेंगमो ने जारी रखा। रानी को इस बात का संतोष था कि फेंगमो के अध्ययन का

धर्म अथवा सन्यास से कोई सम्बन्ध नहीं था। उस विद्या का सम्बन्ध भगवान् से नहीं मनुष्यों से है।

त्सेमो की इच्छा विदेश जाने की नहीं थी। वह राजधानी में चला गया था और वहां उस ने अपने परिवार की स्थिति और धन के प्रभाव से एक अच्छी नौकरी पा ली थी। इस बात से साहब अथवा रानी को कुछ भी विस्मय न हुआ। उन का मस्तिष्क उदार होने पर भी उन्हें स्वाभाविक ही लगा कि उनके परिवार का प्रभाव सभी जगह हो। नौकरी पा सकने का वास्तविक कारण त्सेमो ने कुछ दिन बाद ही लिखा—युद्ध की आशंका थी। ऐसी अवस्था में सरकार को राजधानी छोड़ कर देश के भीतरी भाग में चले जाना आवश्यक होता। उस अवस्था में सरकार को उस प्रांत के प्रभावशाली व्यक्तियों के सहयोग और सहायता की आवश्यकता होती। उस प्रांत में वू-परिवार सब से अधिक पुराना और प्रभावशाली था। इन कारणों से त्सेमो को सरकारी पद मिल गया, परन्तु उस पद के लिए प्रयत्न कर के निराश हो जाने वाले बहुत से लोग ईर्ष्या से उस के बैरी भी बन गये। त्सेमो नौजवान था। उस ने ऐसी बातों को चिन्ता नहीं की।

त्सेमो के पत्रों से रानी बेटे की अवस्था और स्थिति ठीक-ठीक समझ न पाती थीं। फेंगमो को समझना आसान था। वह तो अध्ययन द्वारा अपने विकास का प्रयत्न कर रहा था। त्सेमो की बातों पर रहस्य का एक आवरण छाया रहता। उस रहस्य का रानी कोई भेद नहीं पाती थी।

कुछ ही दिन बाद समाचार आया कि पूर्वी समुद्र के द्वीप के लोगों ने चीन के तट पर आक्रमण कर दिया था। रानी समाचार-पत्र नहीं पढ़ती थीं, परन्तु इस समय मंगा कर पढे। समाचार कुछ विशेष नहीं थे। ऐसे आक्रमण तो पहले भी कई बार हो चुके थे और चीन ने सदा ही उन का सामना धैर्य से किया था। रानी को विशेष चिन्ता न हुई थी। उन का नगर समुद्र-तट से सैकड़ों मील दूर था। उस दूरी को लांघ कर वू-परिवार के नगर तक शत्रु का पहुंच जाना सरल नहीं था। रानी को जान पड़ा कि उन के वंश के पूर्वजों ने समुद्र-तट से सुदूर उस नगर में बस कर दूरदर्शिता

का ही काम किया था। उन के पूर्वज दूसरे लोगों की तरह समुद्र-तट के नगरों में नहीं जा बसे थे। अपने वंश की पुरानी भूमि में वू-परिवार सुरक्षित था। यह ज़रूर सुना था कि शत्रु आकाश से भी आक्रमण करता है, परन्तु आस-पास कोई बड़े नगर नहीं थे और नादान शत्रु को वू-परिवार के नाम और स्थिति का परिचय होने की आशंका नहीं थी।

शत्रु के आक्रमण के कारण कई परिवर्तन बहुत शीघ्र-शीघ्र हो गये। सरकार पेकिंग छोड़ कर समुद्र से दूर भीतर चली गयी। उस के साथ ही त्सेमो भी गया। शरद ऋतु के आरम्भ में ही उस का पत्र हवेली में आया। पत्र में लिखा था कि वह दस-बारह दिन के लिये घर आ रहा था। यह पत्र पा कर रानी ने रुलन से तुरंत ही बात कर लेना आवश्यक समझा और इँग को भेज कर तुरंत ही बहू को बुलवा भेजा।

यह बात नहीं थी कि पिछले कई मास में रानी की रुलन से भेंट ही न हुई हो। भोजनालय में मेज़ पर आमना-सामना होता ही था। त्योहारों के मौकों पर भी रुलन ढंग से पहने-ओढ़े दिखाई दी थी। हवेली में रुलन का हस्ताक्षर सब से सुन्दर था, इसलिये रानी ने उसे दो-तीन बार खाते लिखने के लिये भी बुलवा भेजा था। रानी का व्यवहार सदा ही सहानुभूति का रहता था। एकाध अवसर पर तो उन्हों ने उस की प्रशंसा भी की थी—"यह अच्छा ही है कि घर में एक बहू तो पढ़ी-लिखी है।" रुलन त्सेमो के पेकिंग चले जाने के बाद से प्रायः अपने आंगन में अकेली ही रहती थी।

रुलन शनैः-शनैः क़दम रखती रानी के आंगन में पहुंची। अब उस ने चमड़े के कड़े तल्ले के खट-खट करने वाले जूते पहनना छोड़ दिया था और कपड़े के तले के नरम मखमली जूते पहनने लगी थी। रानी को उस के आने की आहट भी न मिली, रुलन उन के सामने आ कर खड़ी हो गयी।

"बेटी, कितने धीमे तुम चलती हो!"—रानी ने स्नेह से विस्मय प्रकट किया।

"अम्माजी, अब चमड़े के जूते नहीं पहनती।"—रुलन ने उत्तर

दिया और दीवार के समीप रखी एक कुर्सी पर बैठ गयी। वह कुर्सी रानी की कुर्सी से ज़रा नीचे थी। बैठी भी तो पहले की तरह करवट से नहीं बल्कि शिष्टाचार से बिलकुल सीधी।

रानी ने पहले दूसरी ही बात आरम्भ की। "हम कई दिन से तुम से बात करना चाहते थे। शंघाई पर शत्रुओं ने आक्रमण किया है, तुम्हारे परिवार के लोग तो शंघाई से आ गये हैं न?"

"पिताजी सब लोगों को हांगकांग ले जायँगे।"--रुलन ने उत्तर दिया।

"ओह, वह तो बहुत दूर है न?"—रानी ने पूछा।

"काफ़ी दूर तो नहीं है।"—रुलन बोलीं, "मैंने तो पिताजी को लिखा था कि हांगकांग सुरक्षित नहीं होगा।"

"तुम समझती हो शत्रु इतनी दूर तक जायगा?"—रानी ने पूछा। उन्हें विस्मय था कि बहू इतना समझती है।

"अम्माजी, यह लड़ाई बहुत दिन चलेगी।"—रुलन ने उत्तर दिया।

"ऐसी बात है!"—रानी ने पूछा।

"जी हां।"--रुलन ने उत्तर दिया, "इस युद्ध की तैयारी बहुत वर्षों से हो रही थी।"

"कैसे, हमें भी बताओ?"—रानी ने पूछा। अधिकार और गंभीरता से बहू ~~का~~ बात करना उन्हें भला लग रहा था।

रुलन ने समझाना शुरू किया--"अम्माजी, पूर्वी द्वीप के लोगों को सदा ही आक्रमण की आशंका बनी रही है।"

"किस के आक्रमण की?"

"विदेशियों के आक्रमण की। वह देखते रहे हैं कि पश्चिम के लोग एक के बाद दूसरे देशों पर आक्रमण कर उन्हें अपने अधीन कर चुके हैं। जब चंगेज़ खां ने चीन पर आक्रमण कर इस देश को जीत लिया था तब भी जापानी डर रहे थे। पश्चिम से पुर्तगाल, स्पेन, हालैंड, फ्रांस

आदि ने आ-आ कर एशिया के कई भागों को जीत लिया है। भारत-वर्ष को अंग्रज़ों ने ले लिया। हम लोगों पर भी विदेशियों का ही क़ब्ज़ा है। पूर्वी द्वीप के लोग सोचते हैं कि किसी दिन उन पर भी आक्रमण होगा, इसलिये वे भी दूसरे देशों को जीत कर बलवान् बनना आवश्यक समझते हैं। हमारा देश उन के समीप है, इसलिये पहले उन्हों ने हम पर ही आक्रमण किया।......"

एक जवान लड़की के मुख से ऐसी गम्भीर भयंकर बातें सुन कर रानी को विस्मय हुआ। ऐसी बातें तो आन्द्रे ने भी कभी नहीं कहीं।

"यह सब तुम्हें कहां से मालूम हुआ ?"—रानी ने पूछा।

"त्सेमो का पत्र प्रति सप्ताह आता है।"—रुलन ने उत्तर दिया।

रानी के मन पर से बोझ हट गया। मुस्करा कर बोलीं—"अब तो तुम लोगों में झगड़ा नहीं है न ?"

रुलन का चेहरा लज्जा से लाल हो गया। साधारणतः उस के गहरे लाल होंठों को छोड़ कर उस का चेहरा पीला ही था। मुस्करा कर उस ने उत्तर दिया—

"अम्माजी, हम लोग एक-दूसरे से दूर रहते हैं तो झगड़ा नहीं होता है। साथ रहने से झगड़ा जरूर हो जाता है हम दोनों ही यह बात जानते हैं।"

"तुम लोग जानते हो !"—रानी बोलीं, । "तो फिर झगड़ा होता ही क्यों है। झगड़ा शुरू कौन करता है ?"—रानी ने विनोद के स्वर में पूछा। रुलन का सब बात स्पष्ट कहते जाना उन्हें अच्छा लग रहा था।

"अम्माजी, यह क्या मालूम कि शुरू कौन करता है !"—रुलन बोली, "इस बार हम लोगों ने पत्रों में यह निश्चय किया है कि झगड़ा नहीं करेंगे। यदि दोनों में से कोई झगड़ा शुरू करे तो दूसरा सह जाय, परन्तु अम्माजी यह निभेगा नहीं। मैं त्सेमो का स्वभाव जानती हूं। उसे बेमतलब क्रोध आ जाता है। बेबादल की बिजली की तरह कड़क उठता है। उसे क्रोध आता है तो मुझे भी क्रोध आ जाता है।" रुलन कुछ देर चुप-चाप सोच कर फिर बोली—"मुझ में कोई बात ऐसी है जो उसे पसन्द

नहीं। वह मानता तो नहीं, पर बात यही है। जब वह दूर रहता है तब वह बात उसे अनुभव नहीं होती, परन्तु जब हम लोग एक साथ होते हैं तब उसे खटकती है। मैं भी समझ नहीं पाती कि वह बात क्या है। समझ पाऊं तो चाकू ले कर उस बात को अपने कलेजे से काट फेंकूं।"

"संभव है कुछ बुरी आदत तुम्हें तो न हो, परन्तु किसी अच्छी आदत की कमी हो।"--रानी ने कोमल स्वर में सुझाया।

रुलन ने अपनी बड़ी-बड़ी सुन्दर आंखें रानी की ओर उठाईं और बोली--"ऐसा तो मैंने कभी नहीं सोचा।" और फिर सिर झुका उदास स्वर में बोली--"अम्माजी, मुझ में कोई ऐब है तो उसे छोड़ने को तैयार हूं, परन्तु जो गुण मुझ में है नहीं, वह कहां से ले आऊं ?"

"बात यह नहीं है।"--रानी बोलीं, प्रश्न यह है कि तुम लोग एक-दूसरे को कितना चाहते हो ? एक और बात है, यदि तुम लोग समझो कि विवाह का मतलब केवल तुम दोनों का ही आपसी संबध है तो झगड़ा होगा ही।"

"अम्माजी मैं समझी नहीं।"--रुलन ने लजा कर पूछा।

"हमारा मतलब यही है।"--रानी बोलीं। अब वे अपने अनुभव के आधार पर बात कर रही थीं। अब उन का विश्वास था कि स्त्री-पुरुष में कर्तव्य का संबंध निभ नहीं सकता। केवल प्रेम का ही सम्बन्ध चिरस्थायी हो सकता है।

रानी रुलन से आंखें बचा कर अपने चांदी के पाइप में तम्बाखू भरने लगीं। पाइप भर कर उन की आंखें आंगन में आर्किड की क्यारी की ओर चली गयीं। इस मौसम में आर्किड में पीले फूल आ रहे थे। बांसों के नीचे झूलते पत्ते हवा में शनैः-शनैः हिल रहे थे। वातावरण नीरव और शांत था। आन्द्रे और रानी को ऐसा मौसम बहुत सुहावना लगता था।

"पहली बात तो यह याद रखो कि तुम लोगों का आपस में एक-दूसरे पर कोई दबाव और दावा नहीं है।"--रानी सोच कर बोलीं।

रुलन ने विस्मय से रानी की ओर देखा और बोली—"अम्माजी, क्या सास भी बहू से ऐसी बात कह सकती है ?"

"हमें भी यह बात अभी ही समझ आयी है।"—रानी ने अपने मन के रहस्य के कारण मुस्करा कर उत्तर दिया, "बेटी देखो, हम तो अभी तक सीख रही हैं।"

रुलन कुछ समझ नहीं पा रही थी। वह तैयार हो कर आयी थी कि सास डाटेंगी और उसे चुपचाप सुनना होगा, परन्तु यहां बात दूसरी ही थी। डांट के स्थान पर स्नेह मिल रहा था। वह रानी की ओर झुक गयी।

"पति-पत्नी में झगड़ा इसलिये होता है कि दोनों के मन पर एक-दूसरे के अधिकार और दावे का आतंक छाया रहता है।"—रानी बोलीं, "मन पर यह आतंक नहीं रहना चाहिए। प्रेम अपने संतोष और अपनी पूर्णता के लिये ही हो सकता है। यदि एक पूर्णता प्राप्त करता है तो उस से दूसरे को भी पूर्णता मिलती है।"

रानी ने कुछ सोचने के लिये दुबारा पाइप सुलगा लिया। धीमे-धीमे दो कश खींच कर फिर बोलीं—"यही सत्य है। ऋषियों और संतों ने भी कहा है कि स्त्री पति को पति के लिये प्यार नहीं करती परन्तु अपने संतोष के लिये प्यार करती है और पति स्त्री को स्त्री के लिये नहीं बल्कि अपने ही संतोष के लिये प्यार करता है। स्वयं सुख और संतोष पाये बिना दूसरे को सुख और संतोष नहीं दिया जा सकता।"

रुलन निश्चल बैठी रानी की बात सुन रही थी। रानी फिर बोलीं—"जहां तक संतान और सृजन का सम्बन्ध है, यह स्त्री का पति के प्रति और पति का स्त्री के प्रति कर्तव्य नहीं है, बल्कि स्त्री-पुरुष का अपने अस्तित्व और मानवता के प्रति कर्तव्य है। तुम ने यही भूल की कि संतान और पति के स्नेह को एक में मिला दिया। त्सेमो को भी तुम ने इस उलझन में डाल दिया है, इसीलिये वह तुम पर बिगड़ा रहता है।"

"अम्माजी, मैं समझूंगी।"—रुलन विनय से बोली, "मुझे समझाइये।"

"तुम लोगों ने साधारण प्रथा का उल्लंघन कर के विवाह किया

है।"—रानी बोलीं, "तुम लोगों ने केवल प्रेम के कारण विवाह किया है, यह ठीक नहीं हुआ। इसी कारण तुम्हारे सुखी हो सकने में बाधाएं आ रही हैं। तुम लोगों ने विवाह आपसी स्वार्थ के लिये किया है। तुम लोगों ने परिवार और संतान के लिये विवाह नहीं किया, मानो तुम दोनों व्यक्ति समाज और परिवार से पृथक् हो। परन्तु तुम्हारा कितना जीवन समाज से पृथक् या स्वतंत्र रह सकता है? केवल बहुत छोटा-सा अंश ही तो! अपने सम्पूर्ण जीवन को, अपने सहवास को, संतान-सृजन को, खाने-पीने, रहने-सोने, घूमने-फिरने सब कुछ को तुम उसी में समा देना चाहते हो। यह कैसे संभव हो सकता है. इसीलिये तुम दोनों का दम घुट रहा है। दोनों ही पर्याप्त स्थान न पा सकने के कारण एक-दूसरे से नाराज़ रहते हो।

रुलन बहुत तन्मयता से रानी की बात सुनती रही।

"बेटी स्वयं पर्याप्त स्थान में सांस ले सकने के लिये और त्सेमो को भी ऐसा अवसर देने के लिये एक-दूसरे से कुछ दूर हट जाओ।"—रानी ने समझाया, "उसे भी कुछ दूर हट जाने दो। संतानोत्पत्ति भी एक कर्तव्य है। तुम दोनों का एक-दूसरे के प्रति नहीं, परन्तु वंश के प्रति। यह उतनी ही स्वाभाविक बात है जितने और दूसरे शारीरिक कर्म हैं। इस काम का तुम्हारी व्यक्तिगत आत्माओं से कोई संबंध नहीं है। तुम्हारे लिये उस के स्नेह की कसौटी तुम्हारे साथ वासना की तृप्ति के ढंग को नहीं समझा जा सकता। ऐसे क्षण में व्यक्ति अपनी ही तृप्ति की बात सोच सकता है, दूसरे की तृप्ति की नहीं। ऐसे समय तुम भी अपनी तृप्ति की बात सोचो। वासना सभी की एक समान होती है। सभी नारियां एक ही तरह संतान ग्रहण करती हैं। इस विषय में अपने आप को दूसरों से भिन्न समझना केवल मिथ्या अहंकारमात्र है।"

रानी मौन हो गयीं, मानो थक गयी हों।

"अम्माजी, आप का तो मतलब कि है विवाह कोई खास बात नहीं है?"—रुलन ने प्रश्न किया, "जैसे त्सेमो से मेरा विवाह हुआ, वैसे ही किसी दूसरे से भी हो जा सकता था?"

रानी फिर चौकस हो बैठीं। "अभी तुम मेरी बात सुनो।"—उन्हों ने कहा, "एक तरह तुम्हारी बात ठीक ही है। किसी स्वस्थ युवती का किसी स्वस्थ युवक से विवाह हो जाने पर वे जीवन के काम को पूरा कर सकते हैं। इस दृष्टि से हमारी पुरानी सामाजिक परम्परा ही उपयोगी है। नवयुवकों और नवयुवतियों की अपेक्षा अनुभवी प्रौढ़ लोग वर-वधू का चुनाव ज़्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं। उदाहरण के लिये लिआंगमो और मेंग को देख लो, वह दोनों संतुष्ट हैं। यह हम मानते हैं कि तुम्हारे और त्सेमो के संतोष के आदर्श भिन्न हैं। वे लोग तो संतान पा कर परिवार को चलाना ही जीवन का लक्ष्य समझते हैं। लिआंगमो में कोई दूसरी महत्वाकांक्षा भी नहीं है। लिआंगमो और मेंग जैसे व्यक्तियों के लिये तो यही बेहतर है कि उन के विवाह-संबंध पुरखे ही निश्चित करें।"

"परन्तु अम्माजी, हम लोग तो उस ढंग के आदमी नहीं हैं।"—रुलन ने कुछ उत्तेजना से कहा।

"यह ठीक है, तुम लोग वैसे नहीं हो।"—रानी न स्वीकार किया, "तुम लोग विवाह में मित्रता और सहयोग का संतोष भी चाहते हो। बेटी, तुम लोग विवाह से जितनी बातें चाहते हो उन सब की पूर्ति के लिये तो विवाह की प्रथा बनी नहीं थी।"

"तो फिर हम लोगों के लिये उपाय क्या है?"—रुलन ने परेशानी में प्रश्न किया, "बिना विवाह के ही रहते?"

"संभव है यही ठीक होता।"—रानी के मुख से निकल गया। अपनी बात पर उन्हें स्वयं भी विस्मय हो रहा था, परन्तु वह कहती गयीं, "पर यह निभता कैसे! आखिर तुम दोनों स्त्री-पुरुष तो हो। शरीर स्वाभाविक कामना की पूर्ति भी तो चाहता है।"

रानी फिर चुप हो गयीं, मानो अपनी बात कहने के लिये उन्हें उचित शब्द नहीं मिल रहे थे। कुछ देर सोच कर वे फिर बोलीं—"तुम और त्सेमो बहुत भाग्यवान् हो। आपस में खूब प्यार करो। ऐसे प्रेम के लिये एक जीवन का समय कम ही समझो। क्रोध में प्रेम के समय को खो देना

भूल होगी, परन्तु प्रेम और स्वाभाविक वासनाओं और प्रवृत्तियों को अलग-अलग रखने का यत्न करो। जब तुम लोग बूढ़े हो जाओगे, तुम्हारे बच्चे हो जायँगे, वासना समाप्त हो जायगी, तभी तुम वास्तविक प्रेम को पहचानोगे।"

सहसा रानी के मन में आन्द्रे की याद की गहरी वेदना जाग उठी और यह सोच कर कि अब आन्द्रे का सजीव मुख कभी न देख सकेंगी, हृदय चूर-चूर हो गया। अपने आप को संभाल लेने के लिये रानी ने आंखें मूँद लीं। आंखे मूंदे ही उन्हों ने अनुभव किया कि रुलन ने उन का एक हाथ पकड़ कर अपने गाल पर लगा लिया और फिर दूसरा भी। बहू का स्नेह उन्हें अच्छा लगा। वे आंखें मूंदे रहीं।

"वास्तव में तो स्त्री को ही संभालना पड़ता है।"—रानी फिर बोलीं, "हाँ, नारी को ही संभालना पड़ता है। यह अनिवार्य भी है, क्योंकि जीवन का आधार तो नारी ही है। बेटी, याद रखना, त्सेमो कुछ नहीं कर सकेगा। सब कुछ तुम्हें ही संभालना होगा।" रानी आंखें मूंदे ही रहीं।

जब रानी ने आंखें खोलीं तो वे कमरे में अकेले ही थीं। रुलन जा चुकी थी।

× × ×

रात में इंग ने सेज पर जाने के लिये रानी के कपड़े बदलवा दिये।

रानी का मौन और गंभीरता कुछ ऐसी थी कि मुंह लगी इंग को भी कुछ पूछने-बोलने का साहस नहीं हुआ, चुप ही रही। रानी ने ही उसे पुकारा—"इंग!"

"हां मालकिन!"—इंग सिगार की मेज के सामने रानी के काले रेशम-से लम्बे केशों में कंघी कर रही थी। अब काले घने केशों में कहीं-कहीं चांदी के तार पड़ने लगे थे। इंग ने सामने आइने में मालकिन की आँखों में देखा।

"एक काम है।"—रानी बोलीं।

"हुकुम हुजूर ?"

"त्सेमो अब जल्दी ही घर आने वाला है।"

"मालूम है हुजूर। सब लोग जानते हैं।"

"काम यह है,"—रानी बोलीं, "कि हर रोज़ रात में यहां का काम पूरा कर के त्सेमो के आंगन में जाना। जैसे तुम हमारे यहां करती रही हो वैसे ही रुलन को भी तैयार करना होगा। हमारा ही काम समझना।"

इंग आइने की ओर आंखें उठाये मुस्करा दी। रानी इंग की मुस्कराहट की ओर ध्यान न दे कर कहती गयीं—"हर बात का पूरा ध्यान रखना, सुगंधित स्नान, सातों द्वारों को सुगंधित करना, तेल की मालिश और केशों में सुगंधि।"

"सब समझती हूं हुजूर।"—इंग आत्मीयता के अधिकार से बोली और तुरन्त ही उस ने पूछा, "बहू ने इंकार कर दिया तो ? हुजूर वह तो बनाव-सिंगार पसंद करती नहीं।"

"नहीं इंकार नहीं करेगी।"—रानी ने उत्तर दिया, "उसे सहायता देनी होगी। बेचारी जानती नहीं। सभी स्त्रियों को ज़रूरत होती है। अब समझ गयी है।"

"बहुत अच्छा हुजूर।"—इंग ने उत्तर दिया।

तेरहवां

त्सेमो नवें चन्द्र मास की पांचवी तिथि को घर आया। उसके आने का समाचार पहले ही बिजली के पत्र द्वारा नगर के डाकखाने में पहुंच गया था, और वहां से एक प्यादे ने तुरन्त हवेली में पहुंचा दिया था। साहब स्वयं ही वह पत्र ले कर रानी के आंगन में आये। अब साहब रानी के यहां प्रायः कम ही आते थे। उन्हें आते देख कर रानी समझ गयीं कि संभवतः कोई बात बेटों के संबंध में होगी। साहब ने पत्र का काग़ज़ उन की ओर बढ़ा दिया।

"हमारा दूसरा बेटा घर आ रहा है।"—प्रसन्नता से साहब की बांछें खिली हुई थीं।

रानी ने पत्र ले कर पढ़ा और फिर उसे तहा कर हाथ में ही लिये रहीं। रानी ने बिजली से पहुंचने वाला पत्र उस दिन पहली बार ही देखा था, लेकिन उस के विषय में सुन चुकी थीं। आन्द्रे ने बता दिया था कि तार का काग़ज़ बिजली से तारों पर उड़ता हुआ नहीं जाता, शब्द भी नहीं बोले जाते, मशीन द्वारा केवल संकेत भेज दिये जाते हैं और उन का अर्थ निकाल लिया जाता है।

आन्द्रे की बात सुन कर रानी ने कहा था—"वैसे ही, जैसे जंगली लोग नगाड़ा बजा कर दूर-दूर तक संकेतों से संदेश दे देते है?"

"हां बहुत कुछ। बात वही हैं केवल उन्हें सुधार लिया गया है।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया था।

आन्द्रे की बात याद करते-करते रानी बोलीं—"स्वागत में भोज तो दिया ही जाना चाहिये।"

"हां, सभी मित्रों को निमंत्रण देना होगा।"—साहब बोले।

रानी बोलीं—"दुकानों और जमीनों के कारिन्दों और गुमास्तों का भी अलग से एक भोज हो जाय तो अच्छा रहेगा।"

"अवश्य, अवश्य!"—साहब ने उदारता से स्वीकार कर लिया।

रानी कनखियों से पति की ओर देख रही थीं। अब वे फिर संभल गये थे। चमेली के आने से उन के स्वास्थ्य पर अच्छा ही प्रभाव पड़ा था। अब उन में आत्म-विश्वास का भाव लौट आया था। रानी द्वारा त्याग दिये जाने और च्यूमिंग के साथ सफल न हो सकने का प्रभाव उन पर बुरा पड़ा था। उन की प्रकृति के लिये आवश्यक था कि उन में स्त्री को संतुष्ट कर सकने का आत्म-विश्वास बना रहे। रानी यह खूब जानती थीं और पति में ऐसे सामर्थ्य का आत्म-विश्वास बनाये रखना अपना कर्तव्य समझती रही थीं। अनुभवहीन च्यूमिंग में इतनी समझ कहां थी। चमेली सब प्रपंच कर के भी अपना कर्तव्य ईमानदारी से निबाह रही थी, क्यों कि यही उस की जीविका का आश्रय था। रानी को यह देख और समझ कर संतोष तो हुआ, परन्तु विरक्ति भी हुई। उस विरक्ति के लिये मन में लज्जा भी हुई। कुछ दिन पहले इस विरक्ति को वह स्वाभाविक समझ कर उपेक्षा कर जातीं।

"यदि गुप्त इच्छाओं और विचारों को पाप माना जाय तो मैं पाप से मुक्त नहीं हूँ।"—रानी ने आन्द्रे के सम्मुख स्वीकार किया था, "व्यक्ति अपने कार्य और व्यवहार पर तो नियंत्रण और संयम रख सकता है, परन्तु मन में इच्छा और विचार न आने देना कैसे संभव है!"

"कुछ लोग मन का संयम कर सकते हैं।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया था, "आप भी उन में से हैं।"

रानी यह समझती थीं कि आन्द्रे की संगति पा सकने के लिये उन्हें भी उसी के समान ऊंचा उठना होगा। आन्द्रे अपने स्थान से नीचे नहीं आयेगा। अब रानी ने साहब की ओर देख कर उत्तर दिया—"जैसे आप का आदेश होगा, वैसे ही किया जायगा।"

साहब ने मुस्कराते हुए रानी के कान के समीप मुख कर धीमे स्वर में कहा—"तुम्हें शायद मालूम नहीं, हम त्सेमो को सब से अधिक चाहते हैं। हमें यह अच्छा नहीं लगता कि उस की बहू झगड़ालू है। लड़के का विवाह ज़रा सीधी और समझदार लड़की से होना चाहिये था।"

रानी को साहब की बात अच्छी नहीं लगी। "आप त्सेमो को नहीं जानते।" रानी कह तो गयीं परंतु उन्हों ने बात सम्भाली—"त्सेमो बुद्धिमान् आदमी है, रुलन भी बुद्धिमती है। मैं भी उसे पहले नहीं समझ पायी थी।"

साहब के चेहरे पर उलझन झलक आयी। बुद्धि की चर्चा होने पर वे घबरा ही जाते थे। तुरन्त बात समाप्त कर दी—"अच्छा, ठीक है, ठीक है। तुम्हारा ही ख्याल ठीक है। अच्छा, प्रबंध तुम्हीं करोगी या हम करें?"

"यहां जो कुछ करना है, हो जायगा। जिन लोगों को आप निमंत्रण देना चाहते हैं और जो शराबें ठीक रहेंगी, यह आप बता दीजियेगा।"

साहब और रानी शिष्टाचार में एक-दूसरे के सम्मुख झुके और साहब लौट गये। रानी साहब की ओर देखती सोच रही थीं कि उन दोनों का संबंध केवल शारीरिक ही था। पति के प्रति उन्हें विरक्ति ही अनुभव होती थी, परन्तु जिस कर्तव्य की बात उन्हो ने रुलन से कही है उसे तो उन्हों ने पूरा किया ही। उन्हों ने वंश, परिवार और समाज के प्रति कर्त्तव्य पूरा करने में साहब को पूरा सहयोग दिया। वह कर्तव्य पूरा करने के बाद ही उन्हों ने मुक्ति की इच्छा की। रानी को अनुभव हुआ कि जैसे आन्द्रे ने उन्हें व्यक्तिगत संतोष दिया है वैसे ही चमेली ने भी साहब को दिया है। परिवार में कोई अव्यवस्था नहीं हुई, कोई संबंध नहीं टूटा। चमेली को हवेली में बुला लेना अच्छा ही हुआ। परिवार से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध रखन

वाले के लिये यहां स्थान की कमी नहीं। अनाथ और अवांछित संतान को जन्म देने का अपराध तो नहीं हुआ। चमेली की संतानों के लिये भी समाज में स्थान और आश्रय होगा ही।

रानी अपने दैनिक काम के लिये उठ खड़ी हुई। आज उन्हें फ़ुर्सत नहीं थी। उन्हों ने तुरन्त कारिन्दे, बैरे और बड़े बावरची को बुलवा भेजा। दर्जिनों और सफ़ाई करने वाली नौकरानियों के लिये भी संदेश भेज दिया। बच्चों के कपड़े देखना आवश्यक था। जिसे ज़रूरत हो उस के लिये नया बनवाना था और सबसे छोटे बेटे येनमो को बुलवाने का प्रबंध करना था।

"अब येनमो के यहां तुरन्त लौट आने का प्रबंध कर दिया जाय।"—रानी ने ज़मीनों के मुख़्तार को आज्ञा दी, "घर में कोई अव्यवस्था अब नहीं है।"

"हुज़ूर ज़मीनों का प्रबंध तो सब से छोटे कुंवर ही करेंगे।"—मुख़्तार हंस कर बोला, "बड़े कुंवर साहब तो दुकानों का काम ख़ूब समझते हैं, परन्तु ज़मीनों के काम के लिये तो सब से छोटे कुंवर साहब का दिमाग़ ही ख़ूब चलता है।"

रानी ने पिछले कई मास से येनमो को देखा नहीं था। अब पुत्र को देखने की इच्छा भी थी। रानी कहती थीं कि लड़काई में सभी पुरुष एक-जैसे होते हैं। उस समय उन के स्वास्थ्य के लिये उचित भोजन और स्वस्थ वातावरण की आवश्यकता रहती है। उन्हें जुए, चकले और पारिवारिक झगड़ों के प्रभाव से बचाये रखने का ध्यान भी आवश्यक होता है, इसीलिये उन्हों ने येनमो को कुछ समय के लिये देहात के घर में किसानों के साथ रहने के लिए भेज दिया था, परन्तु अब बेटे को देखने का मन चाह रहा था।

"लिआंगमो के पूर्वी आंगन में दो छोटे कमरे हैं।"—रानी हवेली के मुख़्तार की ओर देख कर बोलीं, "कमरे ऐसे ही पड़े हैं। केवल कूड़ा-कबाड़ भरा है। उन्हें साफ़ करा कर येनमो के लिये ठीक करवा दो। जब तक लड़के का विवाह नहीं होता, वहीं रह लेगा।"

साधारणतः येनमो को पिता के साथ ही रहना चाहिये था, परन्तु यह

रानी को स्वीकार न था। अभी लड़के के बढने और खेल-खिलवाड़ की उम्र थी। उसे अपने आंगन में भी वे न रखना चाहती थीं। सोचा, लिआंगमो और मेंग उस का ख्याल करेंगे और बच्चों से लड़के का दिल भी बहलेगा।

दूसरे सब काम निबटा कर रानी रुलन को देख ने गयीं। त्सेमो आज ही दोपहर के बाद आने वाला था। उसे नाव से आना था, इसलिये निश्चित समय नहीं मालूम था। मोटरकार उस के लिये नहीं भेजी जा सकती, क्यों कि सड़क बहुत तंग थी और गाड़ी के चौड़े पहिये खेतों में पड़ने से किसान हाहाकार मचा देते थे। गाड़ी फाटक के पास बनायी गयी एक कोठरी में ही पड़ी रहती थी। केवल दर्शन की ही वस्तु बन गयी थी, उपयोग में बहुत कम आती थी। यदि गाड़ी घर में न होती तो वू साहब अपने आप को बहुत पिछड़ा हुआ और प्रतिगामी मानने के लिये विवश हो जाते। त्सेमो भी अपने पिता की विलायती गाड़ी की चर्चा गर्व से कर सकता था।

रुलन चटक लाल रंग की पोशाक पहने थी। उस के चेहरे पर नम्रता और लज्जा का भाव था। लाल पोशाक उस के पीले चेहरे और लाल होंठों पर फब भी खूब रही थी। पोशाक की चुस्त काट रानी को भली लगी। आस्तीनें उन्हें ज़रूर कुछ छोटी लगीं, परन्तु रुलन की बाहें और हाथ सुन्दर थे, इसलिये बुरी नहीं लग रही थीं। रानी ने इंग को जवाहरात का बक्स खोलने के लिये कहा और एक खूब भारी लाल जड़ी अंगूठी निकाल कर रुलन के दायें हाथ की मध्यमा उंगली में पहना दी। रुलन ने अंगूठी को ध्यान से देखा और बोली—"अम्माजी, मुझे अंगूठियां अच्छी नहीं लगतीं, परन्तु यह बड़ी सुन्दर है।"

"यह तुम पर बहुत खिल रही है।"—रानी बोलीं, "स्त्री के शरीर पर जो चीज़ खिले, उस से सौन्दर्य बढ़ता है।"

रुलन ने केश सुबह ही धोये थे, परन्तु तेल डाल कर चोटी नहीं बांधी थी। काले कोमल केश कच्चे रेशम की तरह कंधों पर बिखरे हुए थे। इंग ने केशों के सिरे छांट कर उन्हें बराबर कर दिया था। यह नया फैशन चला था। रानी को पसंद भी नहीं था। यदि मेंग ने ऐसा किया होता तो रानी को

अच्छा न लगता, परन्तु इस से रुलन के चेहरे की कोमलता और बढ़ रही थी, इसलिये रानी कुछ न बोलीं। जिस बात से भी स्त्री का सौन्दर्य बढ़े, वही ठीक है।

"मुंह खोलो।"—रानी ने आज्ञा दी। लड़की ने मुंह खोल दिया। रानी ने ध्यान से मुंह के भीतर देखा। मुख नन्हें बच्चे के मुख की तरह स्वच्छ और खूब लाल था। मोती-जैसे दांत खूब दृढ़ थे, श्वास भी सुवासित और ताजा था। रानी ने बहू के लहंगे और कुरती के भीतर भी देखा। भीतर के कपड़े स्वच्छ और बर्फ़ की तरह सफ़ेद थे। उन पर महीन क़सीदे का काम था।

"बेटी, अब सब ठीक है।"—रानी स्नेह से बोलीं, "तुम्हारा शरीर अब निर्दोष है। हृदय और मस्तिष्क तो मैं देख नहीं सकती। उन्हें तुम स्वयं ही देखना। पहली बात शरीर की है, परन्तु स्थायी प्रभाव मन और मस्तिष्क का ही होता है।"

"अम्माजी, मुझे सब याद है।"—रुलन ने गंभीरता से उत्तर दिया।

हवेली में लोगों को आशा थी कि त्सेमो चार या पांच घंटे में घर पहुंच जायगा। सब लोग उत्साह से तैयारियों में लगे हुए थे। इस बात का किसी को अनुमान नहीं था कि त्सेमो नदी के मार्ग से नहीं, आकाश के मार्ग से आ रहा है।

नगर की चारदीवारी के दक्षिण में हवाई जहाज पृथ्वी पर उतरा। राजधानी में बड़े अफ़सरों ने उस प्रान्त में वू-परिवार के प्रभाव का ख्याल कर उन्हें प्रसन्न करने के लिये त्सेमो को घर लौटने के लिये सरकारी हवाई जहाज़ दे दिया था।

हवाई जहाज के चालक ने जब देखा कि त्सेमो का स्वागत करने के लिये कोई भी आदमी नहीं आया था, वह कुछ घबराया, परन्तु त्सेमो ने हंस कर उसे विश्वास दिलाया—"यह तो मेरा अपना घर है। मैं राह नहीं भूलूंगा।"

वायुयान के चालक ने त्सेमो को जहाज़ से उतार कर फिर जहाज़ उठा लिया और लौट गया। त्सेमो घर की ओर चल पड़ा।

सब लोग उस का स्वागत कर विस्मय से पूछ रहे थे—"कैसे, किस रास्ते से आये हो?" यह सुन कर कि वह आकाश और वायु में से उड़ कर आया है, उन की आंखें विस्मय से फैली रह गईं।

शहर के बच्चे और आवारा लोग त्सेमो के पहुँच जाने का समाचार देने के लिये हवेली की ओर दौड़े जा रहे थे। त्सेमो स्वयं लम्बे-लम्बे तेज़ क़दम रखता हुआ लगभग उन के पीछे-पीछे ही चला जा रहा था। फाटक के चौकीदार की घर वाली समाचार पा कर दौड़ती हुई समाचार देने भीतर गयी। उस ने हांफते-हांफते रानी और रुलन को दूसरे कुंवर के पहुँच जाने का समाचार सुनाया ही था कि त्सेमो भी उस के पीछे-पीछे आ पहुँचा। नियमानुसार त्सेमो को पहले पिता के ही आंगन में जाना चाहिये था, परन्तु लिआंगमो के पत्र से उसे पिता के आंगन में एक और स्त्री के आ जाने की बात मालूम थी। मां से पहले ऐसी स्त्री को देखने को मन न हुआ, इसलिये वह पहले मां के ही आंगन में गया। अपनी पत्नी को भी वहीं देख कर उसे कुछ विस्मय जरूर हुआ।

त्सेमो परेशानी में पड़ गया। परम्परागत प्रथा के अनुसार मां से पहले बात किये बिना पत्नी से बात करना उचित नहीं था। त्सेमो उलझन में था। इस अवस्था में रुलन ने ही सहायता की। वह लजा कर स्वयं मां के पीछे हो गयी।

"आओ बेटा, आखिर तुम आ गये।"—मां ने पहले सम्बोधन किया और आगे बढ़ कर स्नेह से त्सेमो को बांह में समेट लिया और बोली, "कुछ दुबले तो लग रहे हो, परन्तु चेहरा अच्छा है, स्वास्थ्य भी अच्छा है।"

"अम्माजी मैं बिलकुल ठीक हूँ।"—त्सेमो ने उत्तर दिया, परन्तु काम बहुत करना पड़ता है, दम लेने की भी फ़ुर्सत नहीं मिलती। अम्माजी आप भी पहले से और अच्छी दिखाई दे रही हैं।

मां कुछ और भी बात बेटे से करती रही। रुलन संकोच-से पीछे दबी खड़ी रही। त्सेमो को रुलन के इस संयम और संतोष पर विस्मय हो रहा था। ऐसी तो वह नहीं थी। रानी ने एक ओर हो कर एक हाथ

से रुलन का हाथ थाम उसे त्सेमो के सामने कर दिया तो उस के विस्मय का अंत न रहा। "बहू बहुत ही भली है। सदा हमारी बात मानती रही है। उस ने अब सब कुछ सीख लिया है।"—रानी बोलीं।

मां के मुख से बहू की प्रशंसा सुनने से बड़ी बात और क्या हो सकती थी। मां से पाये आत्म-सम्मान के भाव के कारण वह भी अपनी प्रशंसा सुनना चाहता था। पहले रानी ने कभी रुलन की प्रशंसा नहीं की थी। रुलन मां को प्रसन्न नहीं कर सकी थी, इस के लिये वह त्सेमो की दृष्टि में दोषी थी। रानी भी यह बात समझ गयी थीं। बेटे के चेहरे और आंखों में आ गयीं प्रसन्नता रानी से छिपी न रही। मां के सम्मुख, जैसा कि उचित था, त्सेमो ने संयम और शांति से ही बहू से बात की—

"ठीक तो हो?"—उस ने पूछा।

"धन्यवाद! मैं ठीक हूँ, आप?"—रुलन ने पूछा।

मुख से तो दोनों के इतने ही शब्द निकले, परन्तु आंखों ही आंखों में बहुत-सी बातें हो गयीं। रुलन ने अपनी बड़ी-बड़ी आंखों में स्नेह लिये उस की ओर देखा। उस की लाल पोशाक भी नये ढंग की थी। त्सेमो को रुलन इतनी प्यारी और सुन्दर पहले कभी नहीं जँची थी।

त्सेमो ने बहू की ओर से आंखें हटा कर मां की ओर देखा। उस का चेहरा लाल हो गया। झेंपते हुए बोला—"अम्माजी, आप का बहुत धन्यवाद है। आप ने उस की ओर ध्यान दे कर उसे इतना······"

रानी ने बेटे का अभिप्राय समझ कर उत्तर दिया—"बेटा, सच बात तो यह है कि तुम्हें बहुत भली बहू मिली।"

रानी ने रुलन की ओर देखा। बहू की आंखों में आंसू आ गये थे और वह विनय और कृतज्ञता से झुकी जा रही थी। उन्हों ने सोचा-नवयुवक लोग चाहे जितना साहस करें उन का काम अनुभवी लोगों की सहायता और समर्थन के बिना नहीं चल सकता।

एक दिन फेंगमो के हवेली में विलम्ब से आने पर रानी नाराज़ थीं।

आन्द्रे ने उन्हें समझाया था—"लड़के-लड़कियों के प्रति क्रोध उचित नहीं, क्योंकि वे आप के यहां अपनी इच्छा से नहीं आये हैं।"

"हम भी तो अपनी इच्छा से पैदा नहीं हुए थे।"—रानी ने कड़ा उत्तर दिया था।

आन्द्रे ने उन की आंखों में गहराई से देख कर उत्तर दिया—"आप ने कष्ट झेला है, इसीलिए आप से दूसरों को भी कष्ट नहीं मिलना चाहिये। पीड़ा के बदले पीड़ा देना तो बहुत क्षुद्रता है। रानी साहिबा, यह आप को शोभा नहीं देता।"

रानी कुछ बोल न सकीं और उन का क्रोध भी शांत हो गया। आन्द्रे व्यक्तिगत बात छोड़कर व्यापक बात कहने लगा—"यदि समर्थ लोग स्वयं कष्ट का अनुभव कर लेने के बाद भी दूसरों को कष्ट से बचाने का यत्न न करें तो उन के कष्ट सहने से लाभ ही क्या हुआ! समर्थ लोगों का तो कर्तव्य ही यह है कि स्वयं कष्ट का परिचय पा लेने पर दूसरों की उस से रक्षा करें। यदि ऐसा न हो तो यह पृथ्वी नरक बन जायगी।"

आन्द्रे की बात याद कर रानी का मन उमड़ पड़ा कि जिस तरह से भी हो बहू और बेटे का जीवन सुख से विभोर कर दें। उन्होंने बेटे और बहू के हाथ एक-दूसरे को थमा दिये और बोलीं—"बेटा, शिष्टाचार हो गया, अब बहू को अपने यहां ले जाओ। कुछ देर तुम लोग बात-चीत करो। उस के बाद पिताजी के यहां जाना।"

रानी कुर्सी पर बैठी देख रही थीं कि बेटा और बहू एक-दूसरे का हाथ थामे अपने आंगन की ओर चले जा रहे थे। रानी के होंठों पर सन्तोष की मुस्कान आ गई और वे अपना पाइप भर कर कुछ देर पीती रहीं।

× × ×

प्रायः दस दिन तक हवेली त्सेमो के स्वागत-समारोह और भोज के उत्सव से गूंजती रही। समीप और दूर के सभी सम्बन्धी त्सेमो से मिलने आए। सभी लोग युद्ध के सम्बन्ध में और राजधानी का स्थान-परिवर्तन हो जाने के

सम्बन्ध में त्सेमो की सम्मति और समाचार जानना चाहते थे ; यह भी जानना चाहते थे कि चावल का दाम कितना बढ़ जायगा ; इस बात की भी जिज्ञासा थी कि विलायत के गोरे लोग युद्ध में पूर्वी द्वीप के बौने लोगों को सहायता देंगे अथवा उन के विरुद्ध लड़ेंगे? युद्ध में शत्रु से पराजित हो जाने का भय तो किसी को नहीं था। प्रश्न यही था कि शत्रु का सामना किस नीति से किया जायगा? सामने लड़ कर अथवा समय टाल कर गुप्त उपायों से। त्सेमो नौजवान था, इसलिए शत्रु का सामना करने के पक्ष में था। साहब इन बातों से परिचित नहीं थे, इसलिए पुत्र का ही समर्थन कर रहे थे।

रानी परिवार के लोगों में बैठ कर यह बात-चीत सुनते समय चुप रहीं। वे अपना छोटा पाइप पीती हुई ध्यान से सुनतीं रहीं। बीच में कभी एक आध शब्द बोलतीं भी तो केवल बच्चों को संभालने अथवा चाय बनाते समय खटका न करने का नौकरों को आदेश देने के लिए, परन्तु उन की धारणा थी कि शत्रु का सामना सामने लड़ कर नहीं किया जा सकेगा। उसे पराजित करने का उपाय समय की सहायता के गुप्त उपाय से ही हो सकेगा, जैसा कि इतिहास में सदा होता रहा है। उन के विचार में विदेशी गोरों को सहायता के लिए देश में बुलाना उचित नहीं था। गोरों को चीन से क्या सहानुभूति और सम्बन्ध हो सकता था! उन की सहायता का मूल्य जाने क्या देना पड़े और मूल्य दिए बिना सहायता की आशा क्यों की जाय?

रानी ने बातचीत में भाग नहीं लिया, क्यों कि वे स्त्री थीं, चाहे वे हवेली में सबसे मान्य नारी थीं। वे केवल आन्द्रे से ही स्वतन्त्रतापूर्वक बातचीत करती थीं। एक दिन मानव-प्रकृति के सम्बन्ध में उन लोगों में बातचीत हुई थी—

"आप भगवान् में विश्वास करते हैं, परन्तु मैं न्याय में विश्वास करती हूं।"—रानी ने कहा था, "आप भगवान् को पाने का यत्न करते हैं, मैं न्याय को।"

"वे दोनों तो एक ही बात हैं।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया।

अब पूरे परिवार के साथ बैठ कर भी वे अपनी बात न कह पा रही थीं,

इसलिए उन्हें सूनापन अनुभव हो रहा था। अब आन्द्रे तो कभी आने को नहीं था।

"यह विदेशी लोग"—रानी त्सेमो की ओर सहसा सम्बोधन कर बैठीं, "हमारे देश में एक बार आ गये तो क्या उन्हें फिर बाहर निकाल सकना सम्भव होगा?"

"पहले हमें आज की समस्या सुलझानी है, और फिर जब जैसा समय आयेगा।"—त्सेमो ने उत्तर दिया।

"यह तो हम लोगों के सोचने का ढंग नहीं रहा। हम लोग तो सदा सैकड़ों वर्ष दूर की बात सोचते रहे हैं।"—रानी बोलीं।

"सैकड़ों वर्ष में तो"—त्सेमो ने उत्तर दिया, "हम सभी को निकाल बाहर करेंगे।"

एक बार रानी ने आन्द्रे से प्रश्न किया था---"क्या व्यक्ति की अन्तरात्माओं में भी रंग, परम्परा, राष्ट्रीयता और शत्रुता रहती है।"

"नहीं,"—आन्द्रे का उत्तर था, "यह सब तो मानव-आत्मा के विकास के स्तर हैं। मानव-समाज के सभी भागों में यह भिन्न-भिन्न स्तर दिखाई देंगे।"

"तो फिर"—रानी ने पूछा था, "देशों और राष्ट्रों में वैमनस्य और युद्ध क्यों होता है?"

"युद्ध निम्न स्तर के लोगों के कारण होता है।"—आन्द्रे ने उत्तर दिया था, "किसी भी देश या राष्ट्र के लोग युद्ध नहीं चाहते। युद्ध में झोंक दिए जाने पर लोग विवश हो कर जैसे-तैसे लड़ते ही हैं। युद्ध से सन्तोष केवल अविकसित बर्बर मस्तिष्क के लोगों को ही होता है।"

त्सेमो उत्साह से पलटनों, तोपों, टैंकों और बम-मार हवाई जहाजों की बातें सुना रहा था। रानी वह कुछ नहीं समझती थीं। वे अपने मन में आन्द्रे से सुनी बातों को ही याद कर रही थीं। उस बेसुधी में वे जम्हाई ले बैठीं। सब का ध्यान उन की ओर चला गया। संकोच दूर करने के लिए वे हँस पड़ीं।

"आप लोग क्षमा करें।"—रानी बोलीं, "हम बूढ़ी हो गयी हैं। युद्ध जवानों के शौक की बात है, हम उसे क्या समझें।" वे उठ खड़ी हुईं। इंग तुरन्त आगे बढ़ आयी। रानी सब लोगों की ओर विनय से सिर झुका कर अपने आंगन की ओर चल दीं।

ग्यारहवें दिन त्सेमो वापस लौट गया। इस बार हवाई जहाज उसे लेने आया तो हवेली और नगर के लोगों की बहुत बड़ी भीड़ उसे विदाई देने के लिए एकत्र हो गई थी। रानी विदाई देने नहीं गयीं। वे दस दिन तक बेटे की बातोंको सुन-सुन कर बहुत थक गई थीं। उन के विचार में किसी नवयुवक का मृत्यु और युद्ध की बातों में समय नष्ट करना मूर्खता थी। इस से लाभ किसी को नहीं हो सकता था—न स्वयं व्यक्ति को, न परिवार और समाज को। विजय जीवन की ही हो सकती है। शत्रु और मृत्यु को जीवन से ही पराजित किया जा सकता है। रानी ने बेटे को भी समझाने का यत्न किया, परन्तु त्सेमो ने असहिष्णुता से उत्तर दे दिया—"अम्माजी, आप इन बातों को नहीं समझतीं।"

रानी जानती थीं कि सभी जवान बेटे ऐसी बातें करते हैं, इसलिए वे चुप रहीं। त्सेमो के लौटते समय उन्हों ने शांति से बातचीत कर के उसे विदा दी। उस के लौट जाने पर भी उन्हें कोई दुख नहीं हुआ। त्सेमो की बातों से घर भर बेचैन हो गया था। सब से अधिक प्रभाव पड़ा था सब से छोटे येनमो पर। येनमो देहात से खूब स्वस्थ हो कर लौटा था। धूप से तप कर चेहरे का रँग गहरा हो गया था और क़द भी कई इंच बढ़ गया था। भीड़-भड़क्के में रानी को येनमो से बात करने का अवसर नहीं मिला था, वे अवसर की प्रतीक्षा में थीं। अब उन्हों ने देखा कि त्सेमो की बातों से लड़के के मन पर गहरा आतंक छा गया था।

रानी अपने आंगन में अकेली बैठी थीं। रुलन आई और घुटने टेक रानी के समीप बैठ गई। अपना सिर उस ने सास के घुटनों पर रख दिया। रानी की साटिन की पोशाक रुलन के आंसुओं से भीग गयी।

"हाय तुम रो क्यों रही हो?"--रानी ने स्नेह से पूछा, "दुख की बात क्या है?"

"अब तो हम सुखी हैं।"—रुलन धीरे से बोली।

"तब तो यह आँसू सुख के हैं।"—रानी ने सन्तोष से कहा और बहू का सिर सहलाने लगीं। रुलन कुछ देर वैसे ही रोती रही और फिर उठ कर आंखें पोंछ उस ने मुस्करा कर रानी की ओर देखा और चुपचाप चली गयी।

× × ×

यदि मनुष्य को कुछ क्षण के भविष्य का भी ज्ञान रहे तो जीवन असह्य हो जाय। वू-हवेली एक घण्टे पूर्व उत्साह और समारोह से गूंज रही थी, अब वह शोक के काले सागर में डूब गई। कोई न बता सका कि ऊपर मेघों के पीछे आकाश में क्या हो गया। त्सेमो को वायुयान में आकाश में उठते सूर्य की ओर उड़े अभी आधे घण्टे के लगभग ही बीता था कि मुख्तार पागलों की तरह दौड़ा हुआ हवेली में आया। उस के पीछे-पीछे वू रियासत के सैकड़ों किसान, पुरुष और स्त्रियां चीखतीं-चिल्लाती अपने कपड़े फाड़ कर केश नोचते हुए आ रही थीं। हवेली में ऐसा कोहराम मच गया कि रानी भी अपने आंगन में चौंक उठीं। वे रुलन के जाने के बाद कुछ देर अकेले बैठने के लिए पुस्तकालय में गई थीं कि क्रंदन का यह कोहराम सुनाई देने लगा। लोग उन का नाम ले-ले कर रो-रो कर चिल्ला रहे थे। तुरन्त ही वह कारण समझ गयीं।

रोने की पुकार सुन कर रानी अपने आंगन के दरवाज़े की ओर बढ़ आयीं। सब लोग सामने से आते हुए दिखाई दिए। सब से आगे साहब थे। उन के गालों पर आंसुओं की धारें बह रही थीं। उन के पीछे चमेली भी थी और उस के पीछे सब अनाथ बच्चियां, बुढ़ियां, हवेली के सब नौकर-नौकरानियां। हवेली का फाटक खुला रहने के कारण पड़ोस के गली-मोहल्ले के बहुत से लोग भी भीतर आ गये थे।

"हाय बेटा! हाय बेटा!"—साहब चिल्ला रहे थे।

मुख्तार आगे बढ़ कर सुनाने लगा—"हुजूर, हम लोगों ने देखा कि आकाश से आग की लपटें गिर रही हैं। हुजूर, हम लोग भाग कर देखने के लिये गये। एक विलायती इंजन और बहुत-सी तारें थीं और कुछ चीज़ों के टुकड़े थे, जिन्हें हम लोग पहचान नहीं सके। इस के सिवा और कुछ नहीं था······।"

शब्द रानी के हृदय में बिंध गये, परन्तु बात वे पहले ही समझ चुकी थीं।

"समाधि में देने के लिये भी तो कुछ नहीं रहा।"—साहब रो कर बोले। वे कुछ समझ नहीं पा रहे थे, यह सब क्या हो गया। एक घंटे पूर्व उन का बेटा सजीव उन के सामने था और अब उस का चिह्न भी शेष नहीं रहा।

रानी को साहब के प्रति सहानुभूति थी, परन्तु सब से पहले उन्हें याद आयी ललन की। बोलीं—"सब से पहले बेचारी बहू की खबर लीजिये।"

"हां, हां,"—सब लोगों ने स्वीकार किया, "संभव है अब तक उस में अब 'शुभ' भी हो गया हो। विधाता की दया थी कि दस रात लड़का और बहू एक साथ रह लिये। बाल-बच्चा हो जायगा तो संतोष तो रहेगा······।"

साहब ने आंसू पोंछ कर रानी की ओर देखा और बोले—"हां जाओ, तुम्हीं उसे संभालो। तुम्हीं संभाल सकती हो।"

रानी भीड़ को पीछे छोड़ कर अकेले ल्सेमो के आंगन में गयीं। साहब चमेली को ले कर अपने आंगन में चले गये और दरवाज़ा बंद करा लिया। मुख्तार ने किसानों और दूसरे लोगों को लौट जाने का आदेश दे दिया। स्वयं वह रानी से आदेश पाने के लिये फाटक पर बैठ कर प्रतीक्षा करता रहा।

अनाथ बच्चियां मंदिर में लौट आयीं। पुजारी ने देवताओं की प्रतिमा के सम्मुख धूप जला दिया और मृतात्मा की शांति के लिये पाठ करने लगा।

पुजारी ने कुल-देवता के सम्मुख खेद प्रकट किया—"कैसा समय आ गया है, अब लोग इतनी जल्दी मर जाते हैं कि मृत्यु के समय प्रार्थना के लिये भी समय नहीं रहता। हे देवता, आप ही आकाश-लोक में उस की आत्मा को पा सकते हैं। आप ही उस आत्मा को मार्ग दिखा कर आश्वासन और आश्रय के स्थान में ले जायँ और यदि यह आत्मा जन्म ग्रहण करे तो फिर उसे इसी परिवार में भेजिये।" बूढ़ा पुजारी बहुत देर तक प्रार्थना करता रहा।

× × ×

कल उसी आंगन में रुलन अपने सुख और सौभाग्य पर गर्व कर रही थी, आज वह वहीं फ़र्श पर सिमटी बैठी थी। वह अपना मुख रानी के हाथों में छिपाये रो रही थी। दोनों मौन थीं। कहने को कुछ था भी नहीं। दोनों के हृदय प्रेम और शोक की एक ही धारा में एक साथ मिल कर वह रहे थे। रानी का मन उमड़ रहा था कि मृत आन्द्रे के प्रति अपने प्रणय की बात रुलन को बता कर उसे सान्त्वना दे सके, परन्तु ऐसा कर तो न सकती थीं। रुलन का शोक उन के शोक को अपेक्षा असह्य था। वे तो आन्द्रे के शरीर को समाधि में रख चुकी थीं, परन्तु रुलन बेचारी वह भी न कर पायेगी। वायु के झोंकों ने उस के पति के शरीर की भस्म को दूर-दूर तक उड़ा दिया था। उस के शरीर का कोई स्मृति-चिह्न भी शेष नहीं था, मां के पास तो कुछ था भी। उन के हृदय में बेटे के जन्म, लड़कपन, उस के अल्हड़ दिनों की स्मृतियां थीं। उस के स्वर की, उस के बात करने, हँसने, झगड़ने की स्मृति थी। उस के सुडौल सुन्दर चेहरे की स्मृति थी। वह उन के शरीर का ही अंश था, इसलिये उस की स्मृतियां भी शारीरिक ही थीं।

परन्तु रुलन के पास क्या शेष रह गया था! क्या पिछले दस दिन में वह त्सेमो के शरीर से भी अधिक कुछ पा सकी थी? क्या रुलन सास की दी हुई सीख को क्रियात्मक रूप दे पायी थी?

अभी कोई प्रश्न पूछने का अवसर नहीं था। रानी मौन अपने शरीर के स्पर्श से ही अपने साथ सिमटी लड़की को सान्त्वना दे रही थीं।

रुलन ही पहले हिली। वह उठ कर खड़ी हो गयी और अपने आंसू पोंछ कर रुंधे हुए स्वर में बोली—"अम्माजी, आप का आभार जीवन भर नहीं भूलूंगी।"

"यह दस दिन ही हमारे जीवन का सार थे।"

बहू के प्रति रानी के हृदय में और भी अधिक स्नेह उमड़ पड़ा। उस की पीठ पर हाथ रख कर उन्हों ने पूछा—"अकेली घबराओगी तो नहीं?"

"नहीं अम्माजी।"—रुलन ने आंसू पोंछते हुए उत्तर दिया, "मन ज़रा शांत हो जाय तो कुछ देर बाद आप के यहां आ जाऊंगी।"

"बेटी, जब चाहे आ जाना।"—रानी रुलन के हाथ का सहारा ले कर उठ खड़ी हुईं। रुलन का हाथ तप रहा था, परन्तु सशक्त था। "बेटी, जब तुम्हारा मन करे, दिन में, रात में, हर समय तुम मेरे यहां आ सकती हो।" —रानी एक बार फिर बोलीं।

"बहुत अच्छा अम्माजी।"—रुलन ने धीमे से धन्यवाद दिया।

रानी दो ही क़दम गयी थीं कि पीछे से रुलन के आंगन के किवाड़ों के मुंदने की आहट पा कर ठिठक गयीं। नहीं, लड़की ऐसी कोई बात नहीं करेगी। रुलन समझदार लड़की है—रानी ने सोचा, वह एकान्त में अपने आप को संभालना चाहती है। एकान्त में ही वह ऐसा कर भी पायेगी। त्सेमो जीवित रहता तो फिर भी दोनों का झगड़ा होता ही। दस दिन की यह शांति आखिर कितने दिन चल पाती! दोनों ही एक-दूसरे से कम नहीं, तिस पर परस्पर प्रेम में पागल हैं। एक-दूसरे को बिलकुल अपना लेना चाहते थे, दूसरे को ज़रा भी स्वतंत्रता देने के लिये तैयार नहीं थे, परन्तु अब दोनों ही सदा शांत रहेंगे।

"शांति!" रानी के होंठ बोल उठे।—मनुष्य की भाषा में इस से मधुर दूसरा शब्द कौन होगा?

× × ×

यद्यपि त्सेमो का शव नहीं था जिस के लिये शोक मनाया जाता, परन्तु फिर भी वू-हवेली में त्सेमो के लिये निश्चित समय तक शोक मनाया हो गया। कफ़न के लिये एक सन्दूक़ बनवाया गया और उसमें त्सेमो के शौक़ की वस्तुएं रख कर बंद कर दिया गया। ज्योतिषियों ने त्सेमो को समाधि देने के लिये उचित मुहूर्त निश्चित कर दिया और शोक के पूरे उपचार-सहित उसे समाधि दी गयी। पारिवारिक भूमि में परिवार के क़ब्रिस्तान में उस की समाधि बनायी गयी। हवेली में पुरखों के बड़े घर में, जहां सैकड़ों वर्ष से पुरानी पीढ़ियों के नाम लिखे जाते रहे थे, उस के नाम की शिला भी लगा दी गयी।

जिस समय क्रिया-कर्म के यह सब उपचार चल रहे थे, हवेली में शोक का वातावरण क़ायम रहा। शोक के उपचार में सहयोग देने के लिये सेठानी कांग भी आयीं। कुछ समय से दोनों परिवारों में आना-जाना काफ़ी कम हो गया था। यह रानी के ध्यान से चूका नहीं था, परन्तु उन का अपना मन आन्द्रे की स्मृति में डूबा हुआ था और सेठानी के अंतिम प्रसव की स्मृति से भी उन के मन में ग्लानि थी।

पुत्र के शोक में सहयोग देने न जाना सम्भव नहीं था, इसलिये सेठ और सेठानी दोनों ही समवेदना प्रकट करने के लिये आये। सेठानी रोती-चीखती हवेली में आयीं।

"हमारे बच्चे तो साथ-साथ ही खेल-खा कर बढ़े थे। त्सेमो तो हमारा ही लड़का था......।"

रानी ने सहेली की समवेदना के लिये कृतज्ञता अनुभव की। दोनों बैठ कर कुछ देर बात भी करती रहीं। सेठानी अर्थी के साथ भी गयीं, और उन्हों ने शोक के अवसर की पोशाक भी पहनी। इस सब के बावजूद रानी जानती थीं कि सेठानी से पहले-जैसा गहरा सहेलपना अब सम्भव नहीं था। वे सेठानी के निजी जीवन में बहुत दूर तक पहुँच गयी थीं, इस बात की लज्जा सेठानी को बनी रहेगी। कृतज्ञता तो वे अनुभव करेंगी,

परन्तु क्षुद्रता की भावना के कारण प्रेम न कर पायेंगी। कृतज्ञता तो सेठानी प्राय: ही प्रकट करती भी रहती थीं--

"बहिन, उस रात तुम न आतीं तो मैं बच नहीं सकती थी। बहिन, मेरी जान तो तुम ने ही बचायी।"

परन्तु यह कृतज्ञता स्वीकार करते समय सेठानी के चेहरे और स्वर में क्षुद्रता और झेंप का भाव आ जाता। रानी भी उसे भांपती थीं। सेठानी प्राण-रक्षा के लिये तो रानी के प्रति कृतज्ञ थीं, परन्तु रानी ने उन्हें जिस अवश और दयनीय अवस्था में देख लिया था, उस के लिये रानी पर क्रोध भी था। अब वे रानी के प्रति ईर्ष्या अनुभव करने लगी थीं। यह जान कर भी रानी को सहेली के प्रति क्रोध नहीं था, परन्तु वे भी कुछ दूर-ही-दूर रहने लगी थीं। रानी समझती थीं कि सेठानी को नवयुवक त्सेमो के मर जाने का दुख तो अवश्य है, परन्तु वू-परिवार के दुख में समवेदना नहीं है। वे वू-परिवार के प्रति सहानुभूति प्रकट करने आ कर एहसान चढ़ा रही हैं। ऐसी बात पर रानी को क्रोध आ जाना चाहिये था, परन्तु अब उन्हें क्रोध नहीं आता था। अब उन्हें सेठानी की क्षुद्रता पर दया ही आ रही थी।

एक बार रानी ने आन्द्रे से प्रश्न किया था—"क्या क्षुद्र लोगों की ईर्ष्या और मूर्खता को सह लेना ही उचित है ?"

"हां, सहन ही करना होगा, उन्हें समाप्त तो किया नहीं जा सकता।" आन्द्रे ने उत्तर दिया था, "हम में से कौन इतना महान् है कि अपनी कुछ भी हानि किये बिना क्षुद्र-से-क्षुद्र जीव को भी नष्ट कर सके।"

"परन्तु उन्हें झेला भी कैसे जाय ?"—रानी ने पूछा। एक पुरानी बात याद कर के उन के मन में टीस उठ खड़ी हुई। एक नौकरानी के एक भग्न शरीर लड़की पैदा हुई थी। रानी की स्वीकृति से ही उस लड़की को जन्म के समय ही समाप्त कर दिया गया था। इंग प्रसव का समाचार ले कर आयी थी और उस ने हाथ का अंगूठा संकेत के लिये दिखा कर रानी से अनुमति मांगी थी। रानी ने सिर झुका कर स्वीकृति दे दी थी।

"क्षुद्र-से-क्षुद्र जीव को भी नष्ट कर देने का अधिकार हमें नहीं है।" —आन्द्रे ने उत्तर दिया था।

आन्द्रे की बात सुन कर उस बच्ची की बात उसे बताने का साहस रानी को न हुआ था। पुत्र की अर्थी के पीछे शव-यात्रा में जाते समय पालकी में बैठी रानी को यह बात याद आयी तो उन्हों ने सोचा कि वह बात आन्द्रे को बता देनी ही उचित थी। अब उस मृतक बच्ची का बोझ उन्हें अपने हृदय पर अनुभव हो रहा था। ऐसा भी सन्देह हुआ कि उसी पाप के फलस्वरूप यह घटना हुई है, परन्तु ऐसी मिथ्या धारणा पर उन्हें विश्वास नहीं था। त्सेमो की मृत्यु को उन्हों ने एक आकस्मिक घटना ही माना। कार्य-कारण का सम्बन्ध तो विचारों के क्षेत्र में ही होता है। रानी फिर सोचने लगीं कि बेचारी सेठानी की क्षुद्रता के लिये मुझे उस से घृणा करने का क्या अधिकार है! उसी समय मन ने विरोध किया, तो क्या उसे प्यार करना भी मेरा कर्तव्य है? और फिर उन्हें आन्द्रे की कही हुई एक बात याद आ गयी। आन्द्रे अपनी धर्म-पुस्तक पढ़ कर सुना रहा था—

"अपने पड़ोसी से वैसे ही प्रेम करो, जैसे अपने आप से करते हो······।"

"प्रेम?"—रानी ने आपत्ति की, "प्रेम तो बहुत बड़ा शब्द है।"

रानी को आन्द्रे की धर्म-पुस्तक के प्रति सहानुभूति नहीं थी, शायद इसलिये कि वह इस पुस्तक को बहुत पढ़ता था और जब भी कोई शंका होती, समाधान के लिये इसी पुस्तक से सहायता लेता था। रानी के आपत्ति करने पर आन्द्रे ने आंखें पुस्तक से उठा कर उन की ओर देखा।

"आप ठीक कह रही हैं।"—आन्द्रे ने स्वीकार किया, "प्रेम की अपेक्षा यह कहना अधिक उचित होगा कि अपने पड़ोसी को भी अपने ही समान समझो, अर्थात् पड़ोसी की कठिनाई और उस की स्थिति का ध्यान रख कर उस के दोषों के प्रति वैसे ही सहनशीलता का व्यवहार किया जाय जैसा, हम अपने दोषों के प्रति करते हैं। रानी साहिबा, प्रेम

का अभिप्राय यही है।" रानी को आन्द्रे के यह शब्द बहुत देर तक कमरे में गूंजते सुनाई देते रहे थे।

त्सेमो की शव-यात्रा के दिन बू-परिवार का मन तो शोक से भरा हुआ था, परन्तु दिन बहुत सुहावना था। उजली धूप प्यारी लग रही थी, निर्मल वायु धीरे-धीरे बह रही थी, तालाबों में जल स्वच्छ व नीला दिखाई दे रहा था और पक्षी चहक रहे थे। पालकी की खिड़की से यह दृश्य देख कर रानी का मन और उदास हो गया। उन्हें रुलन की याद आने लगी। रुलन की पालकी उन के ही पीछे थी। सोचा, शायद रुलन भी इस दृश्य को देख रही होगी। रानी ने पीठ की ओर खिड़की से झांक कर देखा। रुलन की पालकी की खिड़की पर पर्दा पड़ा हुआ था। रानी फिर त्सेमो की बात सोचने लगीं--कहां मेघों में जा कर उस की मृत्यु हुई! जाने वहां उस ने क्या देखा होगा? मशीन बिगड़ गयी और उस की मृत्यु का कारण बन गयी। मशीन पर इतना भरोसा करना क्या उचित है?

त्सेमो घर से चला तो रानी ने कहा भी था—"इस विलायती मशीन पर बैठ कर आकाश में उड़ने में क्या कोई भय नहीं?"

त्सेमो जोर से हंस पड़ा था—"अम्माजी यह जादू है, जादू।"

और वह जादू टूट गया? रानी सोचने लगीं—कुछ क्षण में त्सेमो ने मृत्यु का सामना कैसे किया होगा! वह कैसे डरा होगा, मशीन पर उसे कितना क्रोध आया होगा! उसी अवस्था में उस का अन्त हो गया और उसका शरीर निस्सीम आकाश से पृथ्वी पर बिखर गया।--रानी ने सिर झुका कर आंखों पर हाथ रख लिया।

शव-यात्रा और समाधि के क्रिया-कर्म के उपचार तो पूरे करने ही थे। शव-यात्रा चाहे पुत्र की ही थी, इतने बड़े परिवार में ऐसा अवसर प्रायः आता ही रहता था। पिछली गर्मियों में वृद्धा दास के कफ़न का संदूक मंदिर से निकाल कर इसी मार्ग से क़ब्रिस्तान की ओर ले जाया गया था। वृद्धा की समाधि पर भी संगमरमर का एक पत्थर लगाया गया था, जैसा कि ससुर की समाधि पर लगा हुआ था, परन्तु वह कुछ छोटा

था। ससुर की क़ब्र के साथ की जगह बू साहब के लिये खाली थी। उस के बाद स्वयं उन की समाधि के लिये जगह थी और उस के बाद लिआंगमो और मेंग के लिये। इस के बाद ही त्सेमो के खाली कफ़न के लिये क़ब्र खोदी गयी थी। त्सेमो के कफ़न का संदूक़ क़ब्र के गड्ढे में उतार दिया गया। एक सफ़ेद मुर्ग़ा मार कर खून कफ़न पर छिड़क दिया गया। काग़ज़ के बने बर्तन जलाये गये। काग़ज़ का एक हवाई जहाज़ भी बनाया गया था उसे भी जला दिया गया और तब क़ब्र में मिट्टी भरने के बाद एक पत्थर रख कर काग़ज़ की सफ़ेद धज्जियां बांध दी गयी थीं। समाधि की क्रिया समाप्त होने पर परिवार के लोग लौट गये। केवल रोने के लिए किराए पर बुलाये गए लोग बैठ कर रोते रहे।

रात रानी अकेली ही रहीं। उन्हें किसी का समीप होना सह्य नहीं था। वे जानती थीं कि साहब तो शोक भुलाने के लिए दिल बहलाव के साधन की बात सोच रहे होंगे। रुलन बेचारी का घाव तो भरते-भरते ही भरेगा। रानी सेज पर लेटी त्सेमो की मृत्यु के कारण परिवार में रिक्त हो गये स्थान की बात सोच रही थीं—त्सेमो के बेटे होते, परन्तु अब वे न हुए और उन बेटों के बेटे भी न होंगे। एक युवक के मर जाने से कितनी हानि होती है। सोच रही थीं कि विदेशियों की बनाई यह मशीनें और युद्ध मानव-समाज के लिए कितने घातक हैं। पश्चात्ताप होने लगा, अपने पुत्रों को उन्हों ने क्यों बाहर जाने दिया ?

अंधेरे में आंखें खोले उन्हें आन्द्रे का चेहरा दिखाई देने लगा। उन्हों ने आंद्रे से अनुरोध किया था—"आप हमारे तीसरे पुत्र को शिक्षा दीजिए, परन्तु ऐसी शिक्षा न दीजिए कि उस का मन परिवार से दूर हो जाय।"

"रानी साहिबा,"—आन्द्रे ने उत्तर दिया था, "यदि आप पुत्र को बांध कर रखने का यत्न करेंगी तो वह अवश्य दूर भागेगा। जितना ही आप उसे बांधेंगी, उतना ही दूर वह जाना चाहेगा।"

"तुम्हारी बात ठीक नहीं थी।"—रानी ने अपनी आंखों के सम्मुख

उपस्थित आन्द्रे को संबोधन किया, "मैंने तो बेटे को बांध कर नहीं रखा, परन्तु वह चला ही गया, और सब से दूर।"

सुबह रानी की आंख साधारण अभ्यास के अनुसार जल्दी ही खुली। समय उस दिन भी बहुत सुहावना था, परन्तु मन बेचैन ही था। पिछले दिन देहात में देखे हुए सुन्दर दृश्य याद आ रहे थे। वहां फिर जाने को मन चाह रहा था, परन्तु शोक की अवस्था में वहां जाने का क्या कारण हो सकता था! वे एक कमरे से दूसरे कमरे में जातीं, परन्तु मन नहीं लग रहा था। सब लोग पिछले दिन की थकान के कारण अभी सो ही रहे थे। सब ओर सन्नाटा था। इंग भी कुछ विलंब से आयी। चेहरे पर उदासी का पीलापन था और चुप थी। आंखें रोने के कारण सूज कर लाल हो गयी थीं। रानी ने उसे विश्राम करने के लिये कह दिया और स्वयं पुस्तकालय में जा कर पुस्तकें देखने लगीं।

खिड़की से बहुत सुहावनी हवा आ रही थी। रानी बहुत देर तक पुस्तकों में ध्यान लगाये रहीं। क़दमों की आहट सुन कर उन्हों ने आंख उठा कर देखा, सब से छोटा पुत्र येनमो आंगन में आ रहा था। येनमो ने लड़काई के अक्खड़पन से मां को पुकारा। रानी ने उसे टोंका नहीं। जानती थीं कि देहात में किसानों की संगति से उस ने यही सीखा है। स्नेह से उत्तर दिया—"आओ बेटा।"

रानी ने बेटे का कड़ा मजबूत हाथ अपने कोमल हाथ में ले कर समीप खींच लिया। उन्हें देख कर विस्मय हुआ कि येनमो उन के बराबर ऊंचा हो गया है।

"अरे, इतने लम्बे हो गये तुम!"—रानी ने विनोद से विस्मय प्रकट किया।

येनमो अपने दूसरे भाइयों से कुछ भिन्न था। बातचीत में उतना तेज न था, परन्तु उस की आंखों में गम्भीरता थी और व्यर्थ की झेंप भी न थी। आत्म-तुष्ट-सा व्यक्ति था। उस समय नीले सूती कपड़े पहने था। पैरों में कपड़े के तल्ले के मोटे-मोटे जूते थे।

"अम्माजी,"—येनमो बोला, "हम गांव जायँगे, यहां नहीं रहना चाहते।" लड़का खूब हृष्ट-पुष्ट था। आंखें काली उज्ज्वल। सिर पर छूटे हुए केश भी खूब कड़े थे और दांत खूब सफ़ेद। रानी उसे देख मन ही मन मुस्करा रही थीं।

"तुम कुछ पढ़ते-लिखते भी हो?"—रानी ने पूछा।

"मैं पांचवीं किताब पढ़ रहा हूँ। व्याकरण की पुस्तक भी पढ़ ली है।"

लड़के की आयु के विचार से इतना पढ़ लेना कम न था, परन्तु रानी ने पूछा—"अब तुम गांव के स्कूल की पढ़ाई खतम कर के आगे नहीं पढ़ोगे?

"अम्माजी, पढ़ने में मेरा मन नहीं लगता।"—येनमो ने तुरन्त उत्तर दिया।

"पढ़ने में मन नहीं लगता?"—रानी ने असंतोष से कहा, "तुम भी अपने पिता की तरह हो।"

लड़के ने सिर झुका लिया और बोला—"नहीं अम्माजी, मैं किसी की तरह नहीं होऊंगा। आप मुझे गांव नहीं भेजेंगी तो मैं भाग जाऊंगा।"

येनमो ने मां की ओर देखा और फिर सिर झुका लिया। लड़के को उदास देख कर भी रानी हंस पड़ीं और बोलीं—"हम ने तो तुम लोगों की इच्छा के विरुद्ध कभी कुछ नहीं किया।"

"अम्माजी, यह दीवारें कितनी ऊँची हैं।"—येनमो ने असंतोष प्रकट किया।

"हां ऊंची तो हैं।"—रानी ने स्वीकार किया।

"अम्माजी, अब मुझे जाने दीजिये।"

"हम भी तुम्हारे साथ चलेंगे।"—रानी बोलीं।

येनमो ने विस्मय से मां की ओर देख कर प्रश्न किया—"आप वहां कहां सोयेंगी।"

"हम सांझ तक लौट आयेंगी।"—रानी बोलीं, "हम ज़रा ज़मीनों

पर नज़र डाल लेंगी, तुम्हारे रहने की जगह देखेंगी और तुम्हारे मास्टर से भी मिल लेंगी तो हमें भरोसा रहेगा।"

येनमो अपने कपड़े संभालने चला गया। रानी ने पालकी के लिये हुकुम दे दिया और इंग को कह दिया,—"तुम्हारे चलने की ज़रूरत नहीं है।"

रानी की बात से इंग को विस्मय हुआ, परन्तु रानी ने उसे विश्वास दिला दिया—"देहात में हमारे लिये कोई ख़तरा नहीं है।"

रानी और येनमो साथ-साथ चले। रानी पालकी में चलीं और येनमो एक भूरे टट्टू पर। दोनों बाज़ार में से चले जा रहे थे। सभी लोग उन्हें पहचानते थे और आदर से उन्हें मार्ग देते जा रहे थे।

नगर की चारदीवारी से निकल कर खुले वातावरण में रानी को बहुत शांति अनुभव हुई। टट्टू दुलकी चाल से चला जा रहा था। उस की पीठ पर जमा बेटे का सुडौल शरीर देखने में बहुत भला लग रहा था। येनमो को अभी घोड़े की सवारी का ढंग और क़ायदा तो मालूम नहीं था, परन्तु सवारी ख़ूब कर लेता था। घोड़े की पीठ पर ऐसे जमा था, मानो घोड़े का ही अंग हो। उसे सवारी से भय नहीं लगता था। घोड़े की दुम के बालों से गुँथा हंटर हाथ में घुमाता कोई गीत गाता जा रहा था। लड़का ख़ूब प्रसन्न था। रानी उसे प्रसन्न ही देखना चाहती थीं। उन्हें इस बात का संतोष था कि [illegible] की तरह परिवार की सीमाओं में संतुष्ट रह सकेगा।

रानी दिन भर गांव में ही रहीं। भोजन मुख़्तार के घर किया। जिस ने भी चाहा उन्हों ने मिलने से इंकार न किया। कुछ लोग केवल आदर प्रकट करने और धन्यवाद देने आये, कुछ ने शिकायतें भी कीं। रानी को देहात के लोगों की सादगी और भोलापन अच्छा लग रहा था। किसान अपने मतलब की बात ख़ूब समझते थे, परन्तु थे ईमानदार और निष्कपट। कुछ स्त्रियां अपने बच्चों को रानी का दर्शन कराने के लिये ही लाईं। रानी ने बच्चों के स्वास्थ्य और रूप की प्रशंसा की। ज़मीनों का चक्कर लगा कर बीज, गोदाम और दूसरी जगहें देखीं। फिर गांव के स्कूल में गयीं। बड़ा

स्कूल मास्टर उन्हें देख कर हैरान रह गया। मास्टर ने येनमो की प्रशंसा कर बताया कि वह खूब ध्यान से पढ़ता है। रानी हँस पड़ीं और बोलीं—"हम जानते हैं लड़के को पढ़ने का शौक नहीं है।" उन्हों ने मुख्तार के घर में येनमो के लिये निश्चित जगह भी देखी। जगह सुथरी थी। सूर्यास्त से पहले ही वह पालकी में लौट पड़ीं।

गांव से लौटते समय रानी अकेली ही थीं। पहाड़ी की ढलवान पर जिंगको वृक्ष के नीचे आन्द्रे की समाधि दिखाई दी। यदि वे बिना किसी विशेष कारण के वहां ठहरतीं तो देहात में, नगर में और परिवार में सभी जगह इस की चर्चा हो जाती। वू-परिवार के लोगों के आने-जाने पर सभी लोगों का ध्यान जाता था और उस की चर्चा भी होती थी, इसलिये रानी ने पालकी के कहारों को सीधे ही आज्ञा दी—"पालकी फिरंगी पादरी की क़ब्र पर ले चलो। पादरी हमारे बेटे का गुरु था। उस की समाधि का आदर करने वाला यहां कोई सम्बन्धी नहीं है, इसलिये हम ही उस की समाधि पर हो आयें। समाधि बहुत नजदीक ही है।"

कहारों को रानी की बात से कोई विस्मय नहीं हुआ। उन्हों ने रानी की इस करुणा के प्रति श्रद्धा अनुभव की। आंद्रे की समाधि से कुछ दूरी पर ही वे पालकी से उतर कर पैदल चलीं, ताकि बिलकुल अकेली वहां जा सकें। खेतों के बीच की पगडंडी से वे अकेले ही गयीं और पहाड़ी पर चढ़ कर जिंगको वृक्ष की छाया में पहुंच गयीं। सांझ की सुहावनी हवा चल रही थी और अस्त होते हुये सूर्य की किरणें पृथ्वी को छोड़ कर वृक्षों की चोटियों पर सिमट गई थीं। रानी ने समाधि के सम्मुख घुटने टेक दिये और तीन बार श्रद्धा से पृथ्वी पर माथा रखा और फिर समाधि को घेरे मिट्टी की दीवाल पर आँखें मूंदे बैठ कर आन्द्रे की याद करने लगीं। पालकी के कहार दूर ही से यह दृश्य देख रहे थे। रानी को कल्पना में आन्द्रे तेज़ क़दमों से चलता अपनी ओर आता दिखाई दिया। उस का चोगा हवा में पैरों के पास फड़फड़ा रहा था, दाढ़ी के केश हवा में उड़ रहे थे और आंखें उज्ज्वल

"तुम्हारी यह दाढ़ी"--रानी विनोद में बोलीं, "तुम्हारे मुख को छिपाये रहती है। तुम्हारी ठोढ़ी और होंठों को तो मैं कभी देख ही न पायी।"

परन्तु आन्द्रे का तो पूरा शरीर ही छिपा रहता था। उस के ढीले भूरे चोगे में उस के शरीर की आकृति का कुछ पता न चलता था और बेडौल कपड़े के बड़े-बड़े जूतों में उस के पांव छिपे रहते थे।

रानी फिर मुस्करा कर बोलीं—"तुम्हारे यह बड़े-बड़े पांव, जानते हो बच्चे इसे देख कर कैसे हँसते हैं।"

रानी जब मंदिर में अनाथों को देखने जातीं, बच्चे प्रायः ही हंस-हंस कर आन्द्रे के जूतों की बातें बताते। वे धरती पर चिह्न बना कर बताते कि बाबा इतने-इतने बड़े जूते पहनते थे। बुढ़िया सुनाती कि बाबा के जूतों के तल्ले सीने में उसे कितना समय लग जाता था। बच्चियां चिल्ला-चिल्ला कर बोलने लगतीं,--"हम भी टांके लगाती थीं, हम भी टांके लगाती थीं।"

रानी कुछ देर समाधि की दीवार पर बैठ कर आन्द्रे की बाबत सोचती रहीं और फिर लौट पड़ीं। समाधि के दर्शन से उन्हें बहुत शांति मिली, आश्वासन मिला कि जीवन में उन्हों ने एक भला आदमी पाया और उसे स्नेह कर सकीं।

कुछ दिन बाद एक कारीगर रानी के दिखाने के लिये अपना बनाया एक चित्र लाया। चित्र आन्द्रे का था और दूधिया पत्थर के छोटे टुकड़े का बना हुआ था।

रानी चित्र को कुछ देर देखती रहीं और फिर उन्हों ने संकोच से पूछा--"यह चित्र तुम हमारे यहां क्यों लाये हो?" यह कैसे विश्वास कर लेतीं कि उन के हृदय का रहस्य दूसरे लोग जानते हैं, परन्तु यह भी जानती थीं कि भोली जनता की सूझ गहरी होती है।

"मैंने बाबा के प्रति श्रद्धा से ही यह चित्र बनाया था।"—चित्रकार ने सरलता से कहा, "एक बार मेरा कारोबार बिगड़ गया था। हम लोग बड़ी कठिनाई में थे तब बाबा ने हम लोगों की बहुत सहायता की थी। यह

चित्र मैंने उसी समय बनाया था कि उन का चेहरा सदा याद रहे। कल बच्चे की मां ने सुझाया कि यह चित्र बू-हवेली के मंदिर में लग जाय तो बहुत अच्छा हो। बाबा के अनाथ अब वहीं रहते हैं! इस चित्र को देख कर वे बाबा को याद कर लिया करेंगे, इसीलिये मैं यह चित्र यहां ले आया हूँ।"

रानी के मन की चिन्ता दूर हुई। उन का रहस्य सुरक्षित था। कारीगर ने चित्र को टिकाने के लिये लकड़ी की एक नक़्क़ाशीदार तिपाई भी बनाई थी। चित्र में आन्द्रे के चेहरे का भाव तो था, परन्तु आंखों में कुछ अंतर था, हाथ भी ठीक नहीं बने थे; फिर भी चित्र आन्द्रे ही का था।

"इस के क्या दाम होंगे?"—रानी ने पूछा।

"बेचूंगा नहीं।"—कारीगर ने उत्तर दिया, "यह भेंट है।"

"बहुत अच्छा, इसे हम बच्चों के लिये रख लेते हैं।"—रानी ने स्वीकार कर लिया।

चित्र दिन भर रानी के ही यहां रहा। संध्या समय वे उसे मंदिर में ले गयीं। बच्चे रात का भोजन खा रहे थे। उन के खाने के लिये एक मेज़ मंदिर के फाटक पर बने द्वारपालों की मूर्तियों के सामने ही लगा दी गयी थी। रानी दरवाज़े में ही ठिठकी रहीं। उन्हें वह दृश्य बड़ा भला लग रहा था। देवताओं की मूर्तियों के सम्मुख बड़ी-बड़ी लाल मोमबत्तियां जल रही थीं और धूप का धुआं उठ रहा था। धूप के धुएं के पर्दे में से छत और दीवारों पर बने देवता बच्चों की ओर देख रहे थे।

बच्चे आरंभ में देवताओं की मूर्तियों से डरते थे, परन्तु अब इस स्थान से हिल गये थे। बच्चे बातें करते हुए खा रहे थे। बूढ़ा पुजारी और बुढ़िया बच्चों को परोस रहे थे। बड़ी लड़कियां गोद के छोटे बच्चों को कौर दे कर खिला रही थीं। रानी को देख कर वे सब किलक उठे। रानी उन की ओर स्नेह से देख कर मुस्करा रही थीं। यह विस्मय की बात थी कि रानी को स्वयं अपने बच्चों को छूने में संकोच होता था, पर इन बच्चों से कोई संकोच नहीं रहा था। यह बच्चे न रानी के अपने शरीर के अंश थे, न आन्द्रे के;

परन्तु वे आन्द्रे की आत्मा के अंश थे। इन बच्चों में आ कर वे आन्द्रे के समीप हो जाती थीं। सोचतीं, ऐसे और भी बच्चों को यहां ले आयें, परन्तु ख्याल आता कि इतना वे सम्भाल न पायेंगी। रानी ने बच्चों को संबोधन किया—"बच्चों, तुम्हारे लिये एक चीज लाये हैं।" बच्चियाँ रानी को राह देने के लिये इधर-उधर हो गयीं। रानी ने आगे बढ़ कर आन्द्रे का चित्र मेज़ पर रख दिया। चित्र में आन्द्रे बच्चियों की ओर देख रहे थे और बच्चियां आन्द्रे की ओर। बच्चियां स्तब्ध रह गयीं और फिर धीमे-धीमे बोलने लगीं—"बाबा! बाबा हैं! हमारे बाबा हैं!"

बच्चों की ओर देख कर रानी स्नेह से बोलीं—"अब बाबा तुम्हारे यहां ही रहेंगे। तुम नित्य उन का दर्शन करना और सोने से पहले रात में उन्हें प्रणाम करना।"

बच्चे चित्र देख चुके तो रानी ने चित्र को पलट कर उस की पीठ दिखाई। कारीगर ने चित्र की पीठ पर चार शब्द काली स्याही से खोद कर भर दिये थे—

"एक सहृदय विदेशी व्यक्ति।"

बच्चों को चित्र दिखा कर रानी ने उसे एक ऊंचे स्थान पर रख दिया। चित्र सदा वहीं रहा।

अपने आंगन में लौट कर रानी को याद आया कि मंदिर में च्यूमिंग नहीं दिखाई दी। उन्हों ने इंग से बात की—"छोटी मालकिन से हम ने कह दिया था कि तुम चाहो तो मन्दिर में रह कर बच्चों की देख-भाल करो, परन्तु वे मन्दिर में तो दिखाई नहीं दीं।"

इंग ने उत्तर दिया—"हुजूर, रहती तो मंदिर में ही हैं, लेकिन छोटी बहू के यहां दोनों बैठी बातें करती रहती हैं। दोनों में बहुत सहेलपना हो गया है। एक-दूसरे को दिलासा देती रहती हैं। जब से तीसरी वेश्या आ गयी है, बेचारी को विधवा ही समझिए। साहब ने अपना पाइप उन के यहां कभी नहीं छोड़ा।"

रानी कुछ नहीं बोलीं। इंग उन्हें मालिश करती रही। रानी सोचती

रहीं—इतने बड़े परिवार में स्वाभाविक था कि जिन लोगों की स्थिति और मन एक-सा हो उन का साथ बन जाय। च्यूमिंग रुलन को सान्त्वना देती है तो अच्छा ही है। सम्भव है रुलन भी अनाथ बच्चों की सेवा कर के कुछ सन्तोष पा सकें। बच्चियों को पढ़ाना-लिखाना भी आवश्यक था। आन्द्रे तो समाज के दूसरे लोगों की तरह उन्हें भी शिक्षा देना आवश्यक समझता। रानी उस रात सेज पर लेटी हवेली में अनाथ बच्चों के लिए एक स्कूल खोलने की योजना पर विचार करती रहीं। जल्दी तो वे किसी बात में नहीं करती थीं, जो कुछ भी करतीं बहुत देर तक धीरे-धीरे सोचने-विचारने के बाद।

चौदहवां

एक वर्ष बाद एक और बिजली का पत्र आया। यह पत्र परिवार के तीसरे पुत्र फेंगमो ने भेजा था। पत्र साहब के यहां आया। इस बार साहब स्वयं रानी के यहां नहीं आये, नौकर के हाथ पत्र भेज दिया। यह पत्र विचित्र था। रानी ने कई बार पढ़ा, परन्तु समझ न सकीं। फेंगमो ने अपने आने का समाचार लिखा था और लिखा था—"यदि समुद्र और वायु अनुकूल रही तो वह एक मास में पहुंच जायगा; यदि समुद्र और वायु प्रतिकूल हुए तो दो मास में पहुंचेगा। फेंगमो कई वर्ष तक अध्ययन करने के विचार से गया था, पत्र में उस ने शीघ्र लौट आने का कारण नहीं लिखा था।

रानी तार के संक्षिप्त शब्दों को जितनी बार पढ़तीं, उन की बेचैनी बढ़ती जा रही थी। इस समय आन्द्रे होता तो अवश्य बात समझा सकता। फेंगमो उस का शिष्य था। वही बता सकता था कि फेंगमो अकस्मात् क्यों लौट रहा है। उस ने कोई अनुचित काम तो नहीं किया?

रानी ने आंखें मूंद कर उत्तर पाने के लिए आन्द्रे का ध्यान किया। आंद्रे का चेहरा दिखाई दिया, परन्तु कोई उत्तर नहीं मिला। आंद्रे गम्भीर बना रहा।

रानी फेंगमो के विषय में साहब से बात नहीं करना चाहती थीं;

रुलन से भी नहीं। च्यूमिंग से तो बात करना उचित ही नहीं था। किसी से बात न करने के कारण मन का बोझ बढ़ता ही जा रहा था। आशंका होने लगी, क्या कोई नई विपत्ति आ रही है? किसी दूसरे से बात न कर सकने के कारण सोचा, सेठानी कांग से ही बात करें। सेठानी फँगमो की बहू की मां भी थीं।

दोनों परिवारों में आपस का आना-जाना बहुत कम हो गया था। दोनों हवेलियों के बीच का मार्ग यदि गली और बाजारों में से न हो कर देहात में से होता, तो बीच में जंगल उग कर रास्ता ही मिट जाता। रानी ने सेठानी के यहां जाने का निश्चय तो कर लिया, परन्तु मन में संकोच जरूर रहा। संकोच का कारण भी वे न जान पा रही थीं। रानी कारण समझने का यत्न करने लगीं। सेठानी की छोटी-मोटी त्रुटियों की ओर ध्यान तो वे न देती थीं, मूल कारण था दोनों की प्रकृति का भेद। यह अन्तर सब से अधिक उन के प्रेम के रूप में था। रानी को यह संदेह नहीं था कि सेठानी सेठ से उतना ही प्रेम करती हैं जितना वे स्वयं आन्द्रे से। दोनों प्रेम उतने ही भिन्न थे जैसे आकाश और पृथ्वी, परन्तु करती दोनों ही प्रेम थीं। दोनों ही प्रेमी के लिए अपने आप को न्योछावर कर देने के लिए तैयार थीं। रानी को सेठानी के प्रति क्रोध इसी बात से था कि सेठानी अपने बेपरवाह मोटे बूढ़े सेठ पर जान देने को आतुर थीं, माना यह प्रेम का ही अपमान था। गहराई से सोचने पर रानी को स्वीकार करना पड़ा कि सेठ के प्रति सेठानी की भावना वही थी जो स्वयं उन की आन्द्रे के प्रति। दोनों में भेद गुण और परिणाम का नहीं, केवल स्तर का था। सेठानी को भी अपने प्रेम के लिए उतना ही गर्व था जितना रानी को।

यह सोच कर रानी को और भी विरक्ति अनुभव हुई कि क्या सेठ भी स्वर्ग में आन्द्रे के साथ ही रहेगा और उसी वातावरण में श्वास लेगा? रानी पुस्तकालय में अकेली बैठी इन कल्पनाओं में उलझी हुई थीं। अपनी कल्पनाओं की निरर्थकता की बात सोच कर उन्हें स्वयं अपने ऊपर हंसी आ गयी कि वे दूसरे के प्रेम करने पर क्रोध कर रही हैं। प्रेम तो आकाश से

गिरने वाली वर्षा और धूप की तरह है। उसके तो सभी लोग, गरीब-अमीर, न्यायी-अन्यायी, मूर्ख और विद्वान् सभी लोग अधिकारी हैं। रानी ने आंखें मूंद लीं और उन्हें दिखाई दिया कि उन के साथ-साथ आंद्रे भी उन की बात पर हंस रहा है। आंखें खोलने पर उन्हें यह अनुभव हुआ कि अब उन का मन शांत था।

इंग बाहर जाने के समय पहनने का चोगा ले आई। उस ने एक हरकारे के हाथ समाचार कांग-हवेली में भेज दिया और रानी को कपड़े पहनाने लगी।

रानी कई दिन बाद कांग-हवेली में आयी थीं। पुराना ही ढंग अब भी था। बच्चों की संख्या पहले से कुछ अधिक थी। इस बीच सभी बेटों की बहुओं और रखेलों के एक-एक बच्चा और हो चुका था। सभी मैले-कुचैले थे और खूब प्रसन्न। एक दासी रानी को भीतर के आंगन में ले गई। सेठानी एक मजनू के पेड़ के नीचे जलकुंड के समीप आराम-कुर्सी पर बैठी हुई थीं। आराम-कुर्सी का आकार सेठानी के शरीर की बढ़ती हुई परिधि के अनुसार गोल बन गया था। वे सुबह ही यहां बैठ जातीं और यदि वर्षा न हो तो संध्या तक यहीं बैठी रहतीं।

सेठानी के चारों ओर छोटे-छोटे बच्चे खेलते या रोते रहते, या धायों की गोद में दूध पीते रहते। कोई नौकरानी पास बैठी कपड़ा सीती रहती, कोई जलकुंड में तरकारी धो कर काटती रहती या चावल बिनती रहती। बहुएँ बैठ कर गप लगातीं, पड़ोसिनें आ कर गली-मुहल्ले के समाचार दे जातीं। सम्मानित परिवारों की स्त्रियां आ कर कुछ समय विनोद के लिये जुआ खेल लेतीं।

रानी को आते देख सेठानी ने ऊंचे स्वर में उन का स्वागत किया, पर खड़ी न हुईं। बोलीं—"देखो तो अब उठने लायक मैं रह ही नहीं गयी। जाने क्या हो गया मुझ में! सुबह से शाम तक पाव-आध सेर बढ़ ही जाती हूं।"

समीप के कमरे से मर्दाने गले के हँसने का स्वर सुनाई दिया। जान

पड़ा कि सेठ ने भी सेठानी की बात सुनी थी, परन्तु मर्द होने के कारण उन का स्त्रियों की महफ़िल में आ कर बैठना उचित नहीं था।

एक नौकरानी तुरन्त एक कुर्सी रानी के लिये ले आयी और सेठानी की कुर्सी के साथ रख दी। रानी बैठ गयीं। अनुभव किया कि फेंगमो और लीनी के सम्बन्ध में बात करने का अवसर इस भीड़ में नहीं है। सेठानी भी जानती थीं कि रानी विशेष प्रयोजन से ही बात करने आयी होंगी, इसलिये उन्हों ने अपने फूले-फूले हाथों से सब लोगों को दूर हो जाने का संकेत कर चले जाने का हुक्म दे दिया। उस हुक्म को उन्हों ने कई बार चिल्ला-चिल्ला कर दोहराया, बच्चे रोये और चिल्लाये, दाइयां झुंझलाई तब कहीं जा कर एकांत हुआ।

रानी ने फेंगमो का भेजा बिजली के पत्र का काग़ज़ सेठानी को दिखाया। सेठानी ने हंस कर उत्तर दिया—"क्या देखूं! चार अक्षर पढ़े थे सो भी भूल गयी हूँ। मुझे ज़रूरत भी क्या है! कभी ज़रूरत हो तो तुम से पढ़वा सकती हूँ।"

सेठानी ऐसे बात कर रही थीं कि उन में कोई मन-मुटाव कभी न आया हो और उन का स्नेह अब भी वैसा ही था। रानी मुस्करा दीं। सेठानी की बात पर न मुस्कराना संभव न था। उन्हों ने तार पढ़ कर सुनाया—"तुरंत घर लौट रहा हूं।"

"क्या, बस पत्र समाप्त हो गया।"—सेठानी ने विस्मय से आंखें फैला कर पूछा।

"हां, बस इतना ही लिखा है।"—रानी ने उत्तर दिया और पत्र को तहा कर जेब में रख लिया।

उन के लिये चाय आ गयी थी। उन्हों ने चाय का प्याला उठाया। देखा, प्याला गंदा था। रानी ने उसे मेज़ पर रख दिया और बोलीं—

"कोई आकस्मिक बात ही हुई होगी। वह तो पांच वर्ष वहां रहने के लिये गया था।"

"बीमार तो नहीं हो गया?"—सेठानी ने अनुमान प्रकट किया।

"संभव है।"—रानी बोलीं, "परन्तु लिखना तो चाहिये था।"

"क्या ख्याल है तुम्हारा, कोई अपराध हो गया उस से?"—सेठानी ने दूसरा अनुमान प्रकट किया।

"ऐसा ख्याल तो नहीं।"—रानी बोलीं। आन्द्रे के शिष्य से रानी को ऐसी आशंका नहीं थी और उन्हों ने कहा—"हम लीनी की बाबत बात करने आये थे। हम से बड़ी भूल हुई। जब से पादरी मर गये हम ने उस के लिये दूसरा मास्टर नहीं लगाया।"

रानी सेठानी से बात करते समय आंखें बचाये थीं। वे जानती थीं कि जहां स्त्री-पुरुषों के सम्बन्ध की बात हो सेठानी की सूझ बहुत पैनी और गहरी होती थी।

"तो क्या हुआ!"—सेठानी बेपरवाही से बोलीं, "लड़की को तुम से कहने की हिम्मत नहीं हुई, लेकिन पढ़ाई में उस का जी नहीं लगता था। पादरी भी उसे अच्छा नहीं लगता था। कह रही थी कि वह हमेशा ही अपने धर्म की बात करता रहता था।"

"परन्तु उस ने लड़की को अपने धर्म की शिक्षा तो कभी नहीं दी।"—रानी ने विरोध किया, "हम ने तो फेंगमो की पढ़ाई आरम्भ कराते समय ही पादरी को मना कर दिया था, तो लीनी को भला वह क्यों धर्म की शिक्षा देता! वह जानता था कि हम यह पसंद नहीं करते।"

"हां, हां, देवताओं और भगवान् की बात तो नहीं करता था,"—सेठानी ने स्वीकार किया, "परन्तु यही सिखाता रहता था कि कैसे विचार होने चाहियें। पति से, तुम से और परिवार के लोगों से कैसा व्यवहार करना चाहिये।"

"यह धर्म तो नहीं हुआ।"—रानी बोलीं।

"लीनी इन बातों से परेशान हो जाती थी।"—सेठानी बोलीं, "लड़की कहती है, पादरी ऐसी बातें करता था कि न खाने को मन होता, न नींद आती।"

"गुरु अच्छा हो तो उस का प्रभाव तो पड़ता ही है।"—रानी ने विचार प्रकट किया।

"फेंगमो कहीं उस पादरी-जैसा बन गया होगा,"—सेठानी जम्हाई ले कर बोलीं, "तो दोनों की निभेगी कैसे?" सेठानी ने आंगन में इधर-उधर देखा, जैसे कुछ खोज रही हों।

"क्या कुछ चाहिये मिशेन?"—रानी ने प्रश्न किया।

"हां, इस समय मैं थोड़ी-सी खिचड़ी और मुर्गी का शोरवा लिया करती हूं।"—सेठानी बोलीं, "भूख लग जाती है।"

धीरे-धीरे सेठानी की महफ़िल फिर जुड़ने लगी थी। पहले बच्चे खेल-खेल में वहां पहुंच गये। सेठानी के यहां बच्चों की बात के लिये इंकार कम ही किया जाता था। बच्चों का पीछा करती धायें आ पहुंचीं। बच्चे को उठा ले जाने के लिये धाय ने उन्हें उठाया तो बच्चे और चीख़ने लगे। सेठानी को कहना ही पड़ा—"रहने दो, क्यों रुलाती हो?" नौकरानियां सेठानी के लिये खिचड़ी और शोरवा ले कर आ गयीं। रानी की इच्छा कुछ खाने की न हुई। सेठानी मुख से शब्द करती हुई खाने लगीं। बीच-बीच में बच्चे भी कभी शोरवे का घूंट और कभी खिचड़ी का ग्रास लेते जाते थे।

रानी लौटने के लिये उठ खड़ी हुईं। मन में इच्छा हुई कि अब कभी सेठानी के यहां न आयेंगी। दोनों का आपसी स्नेह तो बहुत पहले ही समाप्त हो चुका था, परन्तु रानी का आना असफल नहीं हुआ। विश्वास हो गया कि आन्द्रे लीनी को उचित शिक्षा दे चुका था। इस शिक्षा का परिणाम सामने आयेगा ही।

× × ×

फेंगमो के शीघ्र लौटने की आशा में रानी ने सब से पहले लीनी की ओर ध्यान देना ही आवश्यक समझा। शेष बातों के लिये जल्दी नहीं थी। बच्चों के लिये स्कूल खोलने और रुलन और च्यूमिंग की समस्यायें स्थगित रहीं।

इस में कोई कठिनाई भी नहीं थी। बहू को जब चाहतीं बुला भेजतीं। इधर बहुत दिन से लीनी से बात करने का अवसर नहीं आया था। इतने बड़े परिवार में यह कोई असाधारण बात न थी। यूं देखा-देखी तो हो ही जाती थी। भोजनालय में मेज़ पर रोज़ ही सामना होता था। त्योहारों के अवसर पर अथवा पुरखों की पूजा के अवसर पर भी बहू सामने आती ही थी, परन्तु बात करने का या उसे अपने यहां बुलाने का कोई कारण नहीं था। यों लीनी हवेली में ही थी। उस की सब आवश्यकतायें भी पूरी होती थीं। वह बहिन से मिल-जुल लेती और आलस्य में समय बिता देती थी। केवल मौसम बदलने पर परिवार और घर में की जाने वाली हेर-फेर में ही उसे थोड़ा बहुत हाथ बँटाना पड़ता था। रानी ने दो-चार काम भी बहू को सौंपे हुए थे—सुनहरी मछलियों को चारा डालना, बड़ी बैठक में फूल सजा देना, फेंगमो के ऊनी और रेशमी कपड़ों को समय-समय पर धूप दिखा देना और अपने आंगन का प्रबंध। आंगन के काम के लिये लीनी के मायके से आयी बुढ़िया नौकरानी भी थी। एक-आध बार लीनी की तबियत भी खराब हुई, तब देखभाल के लिये मेंग थी। लीनी के स्वस्थ हो जाने पर मेंग ने बीमारी की बात रानी को बता दी थी। रानी को बस इतना ही मालूम था।

लीनी से मिल कर बात करने की उत्सुकता और भी बढ़ गयी, क्योंकि रानी जानना चाहती थीं कि आन्द्रे उसे क्या शिक्षा दे गया है। लीनी से आन्द्रे के शब्दों को सुनने की इच्छा थी और जानना चाहती थीं कि लड़की पर उन का क्या प्रभाव पड़ा है।

लीनी आई तो ढंग से कपड़े पहने थी। चेहरे पर पाउडर और सुर्खी भी लगाये थी, केशों में कुण्डल डाले हुये थी। रानी ने स्नेह से मुस्करा कर उसे आराम से बैठने का संकेत किया और बहू को चोटी से पांव तक जांचा। बहू बहुत सुन्दर थी और उसे अपने रूप का गर्व भी था, इसलिये कुछ शोख भी थी। रानी को उस के भोलेपन में मिली शोखी पसन्द आयी।

"समय का परिवर्तन देख कर हमें हंसी आती है।"—रानी बोलीं

"बचपन में हमारे केश घुँघराले होते तो हम लज्जा से रो-रो कर मर जाते। तब काले, चिकने और सीधे केश ही सुन्दर समझे जाते थे। अब घुंघराले बाल ही सुन्दर माने जाते हैं। अच्छे लगते हैं न? मेंग तो खुश होगी। उस के केशों में स्वयं ही छल्ले पड़ जाते हैं, लेकिन शायद मेंग को तो घुंघराले बाल पसन्द नहीं?"

लीनी हँस पड़ी। उस के लाल-लाल मुख में मोती-जैसे दांत बड़े भले दिखाई दिये। वह बोली—"फेंगमो को तो घुंघराले केश बुरे नहीं लगेंगे। विलायत में तो सभी स्त्रियों के बाल घुंघराले होते हैं।"

"अच्छा!"—रानी गंभीर हो गयीं। सहसा उन्हों ने प्रश्न किया—"यह तो बताओ, तुम्हें क्या सभी विदेशी चीजें अच्छी लगती हैं?"

"नहीं, सब तो अच्छी नहीं लगतीं।"—लीनी मुंह बना कर बोली, "वह विदेशी बुड्ढा, रीछ पादरी तो मुझे अच्छा नहीं लगता था।"

"वह बुड्ढा तो नहीं था।"—धीमे से रानी बोलीं।

"मेरे लिये तो बुड्ढा ही था।"—लीनी ने उत्तर दिया, "और कैसा—रीछ-जैसा था, रोयें से भरे लोग मुझे नहीं अच्छे लगते।"

बहू से ऐसे प्रसंग पर बात करना रानी को अच्छा नहीं लगा। सोच कर बोलीं—"तुम्हें शिक्षा तो वह अच्छी ही देता था! अच्छा, तुम्हें कुछ याद है, बताओ तो क्या सिखाया था उस ने।"

रानी का स्वर ऐसा था कि बहू जान गयी कि अवहेलना नहीं की जा सकती। स्मृति पर ज़ोर देने के लिये भौं चढ़ा कर और केशों की लट को उंगली पर लपेटते हुये बोली—

"बहुत तो याद नहीं, ऐसे ही कुछ कहता था कि फेंगमो के सामने बहुत बड़ा आदर्श है और मेरा कर्तव्य है कि उस का जीवन सुखी बनाने का यत्न कर के उस के महान् कार्य में सहायक बनूं।"

"उसे सुखी बनाने का क्या मतलब है?"—रानी ने पूछा।

पादरी कहता था कि मुझे फेंगमो के जीवन की धारा को समझना चाहिये।"—लीनी अनिच्छा से बोली, "और कहता था कि मेरा कर्तव्य

है कि उस धारा में जो-जो घास-फूस, झाड़-झंखाड़ बह कर आये, उसे मैं साफ़ करती रहूँ और प्रवाह में बाधा और कमी न आने दूं। मुझे उस प्रवाह में बाधा देने वाली रुकावट नहीं बनना चाहिये......।"

रानी को विश्वास था कि वे आन्द्रे के ही शब्द हैं। भोली लड़की को उस ने ऐसी सीधी-सादी उपमा से ही समझाया होगा। लीनी की ओर देख वह स्नेह से बोलीं—"बेटी, यह तो बहुत अच्छी बातें हैं, और क्या समझाया था?"

लीनी के हाथ से केशों की लट छूट गयी। याद कर वह बोली—"और कहा था मुझे भी अध्ययन करना चाहिये और फेंगमो के विचारों को समझने का यत्न करना चाहिये। यदि मैं उस के विचारों और काम में सहयोग न दूंगी तो फेंगमो का जीवन सूना हो जायगा। उसे मेरी सहायता की बहुत आवश्यकता है।"

बहू ने रानी की ओर आंख उठा कर देखा। "मेरा तो नहीं ख्याल कि फेंगमो को मेरी आवश्यकता है।"—लीनी ने मुंह बना कर कहा।

रानी ने बहू की आंखों में देख कर पूछा—"तुम उसे प्यार नहीं करतीं?"

सास का बहू से ऐसा प्रश्न पूछ लेना असाधारण बात थी। रानी ही ऐसा साहस कर सकती थीं। लीनी की आंखें छलक आयीं—"मैं तो प्यार करने के लिये तैयार हूँ, कोई मुझे भी करे।"

"क्यों, वह तुम्हें प्यार नहीं करता?"—रानी ने पूछा।

लीनी ने इंकार में सिर हिला दिया। उस की आंखों में छलक आये आंसू गालों पर से फिसल कर उस की हलकी नीली साटिन की पोशाक पर आ पड़े।

"फेंगमो मुझे नहीं चाहता।"—लीनी ने रुँधे हुए कण्ठ से कहा।

लीनी ने दोनों हाथों से मुंह ढँक लिया और रो पड़ी। रानी चुप रहीं। जानती थीं कि नारी के दुखों का सब से बड़ा उपाय रो लेना ही है। कितनी ही बार रोने की इच्छा उन्हें हुई, परन्तु कभी रो न सकीं।

लीनी रोती रही। पहले फफक-फफक कर रोयी, फिर सिसकियाँ लेने लगी। रानी उस के रो लेने की प्रतीक्षा करती रहीं। लीनी का रोना रुका तो रानी बोलीं—"ठीक कहती हो बेटी। फेंगमो किसी को भी प्यार नहीं करता। यह बात अच्छी नहीं है। इस का उपाय करना होगा। बेटी, हम तुम्हारी सहायता करेंगे।"

रानी के शब्द तो संक्षिप्त ही थे, परन्तु परिवार में उन के शब्दों का मूल्य बहुत अधिक था। उन का भरोसा किया जा सकता था। लीनी ने आंखें पोंछ लीं और रानी की ओर कृतज्ञता से देख कर बोली—

"अम्माजी, आप की बड़ी दया होगी······बड़ी दया होगी आप की अम्माजी।"

× × ×

फेंगमो जब लौटा तो जाड़ा आरम्भ नहीं हुआ था, परन्तु गर्मी भी नहीं थी। फ़सल खत्तियों में आ चुकी थी। वू-हवेली, वह नगर और उस के समीप वू-परिवार की जमींदारी अभी तक परम्परागत शांति में वैसे ही बने हुए थे। पूर्व की ओर युद्ध की ज्वालाएँ भभक कर फैल चुकी थीं, दूसरे नगर उजड़ रहे थे, मकान और हवेलियां गिर रही थीं, खेत उजड़ रहे थे और परिवार बिखर रहे थे, परन्तु समुद्र तट से बहुत दूर वह नगर और वू-हवेली अभी शांत ही थे।

फेंगमो ने भी लौट कर नमस्कार और कुशल-क्षेम की बात कर इस शांति की ओर संकेत किया। विस्मय से चारों ओर देख कर बोला—

"यहां तो अभी सब वैसे ही शांति है, कुछ भी बदला नहीं है।"

"बदलने की जरूरत भी क्या है?"—रानी ने पूछा।

परिवर्तन न होने की बात कहते समय रानी के अपने मन में आ चुके परिवर्तन की चेतना मौजूद थी। वह परिवर्तन उन की बोल-चाल में अपने आश्रितों के प्रति व्यवहार में, सभी बातों में था, परन्तु उस के विषय में वे क्या बात करतीं!

"परन्तु तुम तो बहुत बदल गये हो बटा !"—रानी बोलीं।

रानी फेंगमो से मिलने के लिये पुस्तकालय में ही बैठी थीं। वे भूरे-रुपहले कीमखाब के साटिन की पोशाक पहने थीं। इसी स्थान पर वे और फेंगमो आन्द्रे से शिक्षा ग्रहण किया करते थे। आन्द्रे की कोई चर्चा न होने पर भी उस की स्मृति तो रहेगी ही, इसलिये फाटक पर बेटे का स्वागत और उस के आगमन की प्रसन्नता में आतिशबाजी होने और बाजे-गाजे बज चुकने के बाद सब लोग चले गये तो वे फेंगमो से बात करने यहां आ बैठी थीं। संध्या समय भोज होने को था। इसी बीच में उन्हों ने बेटे को बुलवा भेजा।

फेंगमो ने रानी के आंगन में आने से पहले ही विदेशी पोशाक उतार कर घर के कपड़े पहन लिये थे और विदेशी जूतों की जगह काले मखमल के स्लीपर, परन्तु व्यवहार में तो परिवर्तन था। वह आ कर स्वयं ही कुर्सी ले कर बैठ गया। किसी ने उस से त्सेमो की चर्चा नहीं की, क्यों कि तुरन्त घर आये आदमी से मृतक की चर्चा करना अशकुन समझा जाता था, परन्तु उस ने स्वयं ही बात की।

"त्सेमो भाई के लिये बहुत शोक है मुझे। उन की बहुत याद आ रही है।"—फेंगमो बोला।

रानी ने फेंगमो की नजर बचा कर आंखें पोंछ लीं। त्सेमो की याद उन्हें प्रायः आती ही रहती थी। याद उस के रूप-गुण की उतनी नहीं, जितना यह ख्याल कि उन्हों ने अपने उस बेटे को ठीक से नहीं पहचाना था। अब पहचान सकने का अवसर भी कोई न आयेगा।

"छोटी भाभी का क्या हाल है?"—कुछ देर बाद फेंगमो ने पूछा।

"उदास रहती है बेचारी।"—रानी ने उत्तर दिया, "हम कोई उपाय सोच रहे हैं कि उस का जीवन बीत सके। अभी उस की उम्र ही क्या है कि साधुनी बन बैठे।"

"विवाह तो वे नहीं करेंगी न?"—फेंगमो ने पूछा।

"अगर करना चाहे तो हम जरूर सहायता करेंगे।"—रानी बोलीं।

फेंगमो के विस्मय का ठिकाना न रहा। वह यह आशा नहीं कर

सकताथा कि मां परिवार की प्रतिष्ठा से अधिक महत्त्व एक स्त्री के संतोष को देंगी ।

फेंगमो का आश्चर्य समझ कर वे करुण स्वर में बोलीं—"इस उम्र में आ कर ही हम भी समझ सके हैं। यदि संतोष का अवसर न हो तो जीवन विकृत हो जाता है। हमारा विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति को संतोष पाने का अधिकार है।"

"आन्द्रे भाई भी तो यही कहा करते थे।"—सहसा फेंगमो बोल उठा। मां-बेटे को अनुभव हुआ कि किसी अदृश्य शक्ति के माध्यम से वे दोनों एक-दूसरे की ओर खिंच आये थे।

"अम्माजी, आन्द्रे भाई की याद है आप को ?"—फेंगमो ने पूछा।

रानी ठिठक गयीं। आन्द्रे के विषय में वे कैसे और कितनी बात कह सकती थीं! पुराने संस्कारों ने आ दबाया। बुजुर्गों और बच्चों के बीच का अन्तर बना रहना उचित था। वह अन्तर तो प्रकृति का बनाया हुआ था और समय का था। उसे रानी कैसे मिटा सकती थीं! रानी और आन्द्रे समय के इस व्यवधान के एक ओर थे और फेंगमो दूसरी ओर।

"हां, याद है।"—रानी ने इतना ही उत्तर दिया।

"अम्माजी, मुझे तो आन्द्रे भाई ने ही बदल दिया था।"—फेंगमो आन्द्रे भाई की खाली कुर्सी की ओर देख कर बोला, "उन्हों ने ही मुझे बताया कि सच्चा सुख क्या है! उन्हीं की सहायता से मैं अपने आप को पहचान सका, इसलिये मैं यहां लौट कर आ गया हूँ।"

फेंगमो के स्वर में गहरी अनुभूति की झंकार आ गयी थी। उसे विक्षिप्त न करने के लिये मौन रह कर उन्हों ने मुस्करा भर दिया। अपने दोनों हाथ गोद में रख कर वे फेंगमो की बात सुनने के लिये उस की ओर देखने लगीं।

"लोग समझ नहीं पायेंगे कि मैं सहसा क्यों घर लौट आया।"—फेंगमो बोला, "मैं समझा भी नहीं पाऊँगा, परन्तु अम्माजी आप को बता

देना चाहता हूँ, क्योंकि हवेली में आन्द्रे भाई को तो आप ही ने बुलवाया था।"

रानी फिर भी मौन रहीं। वे आन्द्रे को समीप ही बैठा अनुभव कर रही थीं। उसी के सामने उस की बात कैसे करतीं!

"अम्माजी!" फेंगमो ने रानी की ओर देखा और कठिन बात को जल्दी से कह डालने के लिये बोला, "अम्मा जी, मैं इसलिये लौट आया हूँ कि वहां एक विदेशी लड़की से मुझे प्यार हो गया था। वह भी मुझे प्यार करती थी। पर हम दोनों ने बिछुड़ जाना ही उचित समझा।"

कुछ वर्ष पूर्व ऐसी घटना से रानी को क्रोध आ जाता, परन्तु अब वह सहानुभूति से बोलीं—"यह तो दुख की बात है बेटा।" और वे उस दुख को अनुभव भी कर रही थीं।

"आप समझती हैं?"—फेंगमो ने नवयुवक के विस्मय के भाव से मां की ओर देखा।

फेंगमो काफ़ी लम्बा हो गया था। उस का छरहरा लम्बा शरीर अपने दादा की तरह था। रानी ने अनुभव किया कि उन का बेटा बाप पर नहीं, दादा पर गया है। चेहरे और आंखों का भाव भी दादा के अनुरूप गंभीर था। वह देखने में सुन्दर था, परन्तु दृढ़ता की मुद्रा लिये। उस के चेहरे पर न तो लिआंगमो की तरह आरामतलबी का भाव था, न त्सेमो की तरह उग्रता। उस की मुद्रा विचारक की थी।

"अनुभव से ही आदमी सीखता है।"—रानी बोलीं।

"अम्माजी,"—गहरी सांस ले कर फेंगमो बोला, "यहां आप के सिवा और कोई मेरी बात नहीं समझता।" मां का भरोसा पा कर फेंगमो ने बात सुनाई—"वह लड़की हम लोगों के साथ ही पढ़ती थी। वहां लड़के-लड़कियां एक साथ पढ़ते हैं। उस में बहुत जिज्ञासा और उत्सुकता थी। वह मुझ से बात करने लगी। हम दोनों के विचारों और भावों में गहरी सहानुभूति थी। वह मुझ से सैकड़ों ही प्रश्न पूछती रहती थी। हमारे देश, हमारे घर-परिवार और स्वयं मेरे विषय में भी। मैं उसे प्रत्येक प्रश्न का उत्तर

देता था। उस ने अपने विषय में भी मुझ से कुछ छिपाया नहीं। हम दोनों में शीघ्र ही गहरी आत्मीयता हो गयी।"

"तब तो तुम ने लीनी के विषय में भी बताया ही होगा?"—रानी ने कोमल स्वर में पूछा।

फेंगमो का चेहरा उदास हो गया और सिर झुक गया। "हां, मुझे कहना ही पड़ा,"—वह धीमे से बोला, "इसीलिये में लौट आया हूं।"

"आपस में समुद्र का व्यवधान डाल देने के लिये?"—रानी फिर सहानुभूति से बोलीं।

"सभी व्यवधान डाल देने के लिये।"—पुत्र ने स्वीकार किया।

रानी मौन बैठी सोच रही थीं। उन के इस पुत्र के मन और विचारों पर आन्द्रे का प्रभाव था। वह अत्यन्त भावुक हो गया था। उस के औचित्य-अनौचित्य की धारणा अत्यन्त सूक्ष्म हो गयी थी। उन्हें इस बेटे के लिये गर्व था। वह उसे सुखी देखना चाहती थीं। वह दूसरे लोगों से भिन्न व्यक्ति था। वह स्वयं अपने शरीर से अथवा स्त्रियों से संतोष नहीं पा सकता था। जब रानी ने आन्द्रे से पुत्र को शिक्षा देने के लिये कहा था, तब उन्हें क्या मालूम था! अपने विचार में वे एक मामूली क़दम उठा रही थीं। शिक्षा का वह द्वार तनिक ही खुल पाया था कि उन का पुत्र उस मार्ग से दूसरे संसार में चला गया।

फेंगमो लौट तो आया था, परन्तु क्या वास्तव में ही लौट आया था? उसे घेर से दूर ले जाने वाला द्वार क्या बन्द हो गया था?

"बेटा, अब तुम्हारा क्या विचार है?"—रानी ने पूछा।

"मैं घर आ गया हूँ,"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "अब लौट कर नहीं जाऊंगा। यहां ही जीवन का उपयोग करूंगा।" वे दोनों परस्पर विचारों की सहानुभूति में मौन बैठे रहे।

"बेटा, तुम्हें लीनी की सहायता करनी चाहिये।"—रानी बोलीं।

"आप ठीक कहती हैं अम्माजी।"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "मैंने इस विषय में सोचा है कि मेरा क्या कर्तव्य है।"

"बेटा, तुम्हें उस का ख्याल करना ही चाहिये।"—रानी बोलीं, "उसे अवसर दो कि तुम्हें सहयोग और सहायता दे सके। वह तुम्हारी पुस्तकें सम्भाले, तुम्हारे लिये चाय बनाये—ऐसे सब काम उसी पर छोड़ दो। वह अनुभव कर सके कि तुम्हारे लिये कुछ कर रही है।"

"ऐसा ही होगा अम्माजी।"—फेंगमो ने विश्वास दिलाया।

मां और बेटा मौन बैठे थे। संभव था अभी बहुत देर ऐसे ही बैठे रहते, परन्तु उसी समय च्यूमिंग आ पहुंची।

पिछले कई मास से च्यूमिंग रुलन के यहां ही रह रही थी। रुलन प्रायः ही अपने मृत पति की बातें कर अपने प्रेम की कहानी उसे सुनाती रहती। च्यूमिंग जितनी ही रुलन की बातें सुनती, उतनी ही उसे फेंगमो की याद आती। जितनी अधिक फेंगमो की याद आती, उस का निश्चय दृढ़ होता जाता कि अपनी बच्ची को ले कर उसे इस हवेली से दूर चले जाना चाहिये। पर जाती कहां!

एक रात रुलन सो ही नहीं पायी। दोनों स्त्रियां अपने गहरे मर्म और रहस्य की बातें करती रहीं। उस दिन च्यूमिंग अपनी मौन प्रतिज्ञा को निभा न सकी और उस ने फेंगमो के प्रति अपने प्रेम की बात रुलन को बता दी।

"मुझे इस बात के लिये बड़ी लज्जा है।"—च्यूमिंग ने रुलन के सामने स्वीकार किया, "मैं बहुत दुष्ट हूँ।"

रुलन अपने केशों में उंगलियां फँसाये बहुत ध्यान से च्यूमिंग की बात सुन रही थी। उस की बात सुन कर बोली—"बहन, हम दोनों ही इस हवेली से चली जातीं तो अच्छा होता। हम इस चारदीवारी में क़ैद हैं। सारा परिवार हम पर चौकसी करता है। हमारा प्यार इन की आंखों में बुरा है और हमारी घृणा भी इन की आंखों में बुरी है। हम दोनों की ही एक साथ निभ सकती है।"

"यहां हवेली में हमें डर है?"—च्यूमिंग ने रुलन से पूछा। वह रुलन का आदर भी करती थी और डरती भी थी।

"डर तो हमें आपस में एक-दूसरे से भी है।"—रुलन ने उत्तर दिया।

दोनों सहेलियां एक-दूसरे की ओर देखती सोचती रहीं। रुलन ही पहल बोली—"हम लोग हवेली में रहें क्यों?"

"तो जा भी कहां सकती हैं?"—च्यूमिग ने पूछा।

दोनों सखियों ने मिल कर योजना बनायी—पहले च्यूमिग हवेली से जा कर रियासत के गांव में रहने की आज्ञा मांगे। च्यूमिग का अपने पुराने गांव में जाना उचित नहीं था। उस का अर्थ होता कि च्यूमिग को हवेली से निकाल दिया गया था। रानी भी ऐसी प्रार्थना स्वीकार न करतीं। इस लिये च्यूमिग रियासत के गांव में ही रहने की आज्ञा मांगे। जब रानी आपत्ति करें कि देहात में जवान स्त्री का अकेला रहना ठीक नहीं, तो च्यूमिग कह दे कि रुलन भी उस के साथ रहने के लिये तैयार है। रुलन भी कहेगी कि वह अपने वैधव्य का समय काटने के लिये देहात में बच्चों के लिये एक स्कूल खोलना चाहती है। इस बात से तो सभी सहमत होते कि विधवाओं को पुण्य कार्य में सहयोग देना चाहिये। रुलन रानी से तुरन्त बात करने के लिये बहुत उतावली थी। च्यूमिग ने यह उचित न समझा। सोचा, यदि बात रानी को पसन्द न आयी तो उन्हें बहू को इनकार करना पड़ेगा। वह अच्छा नहीं लगेगा। वह पहले स्वयं ही बात करे। यदि बात रानी को न सुहाई तो वे च्यूमिग से ही नाराज़ होंगी, सास-बहू में तो अनबन न होगी।

रुलन ने च्यूमिग का विरोध किया—"यह सब पुराने लोगों के ढोंग हैं। इस की चिन्ता नहीं करनी चाहिये।" फिर भी च्यूमिग ने आग्रह किया कि शिष्टाचार के नाते यही उचित है; और यही तय पाया।

च्यूमिग को भी यह मालूम था कि फेंगमो इस समय रानी के यहां होगा, इसलिये उस ने वहां जाने का वही समय उचित समझा। उस ने निश्चय कर लिया था कि फेंगमो से वह रानी के सामने ही मिलेगी, अन्यथा नहीं। उस ने अपनी बच्ची का मुंह-हाथ धो कर नये लाल कपड़े पहनाये, माथे पर लाल बिन्दी लगा दी और लाल डोरी से उस के छोटे-छोटे केशों की चुटिया गूंथ दी। लड़की अब खूब मोटी हो गयी थी और उस का रंग खूब

गोरा निखर आया था। बच्ची को गोद में लिये और सूचना दिये बिना वह रानी के यहां जा पहुँची थी।

जिस समय च्यूमिग रानी के कमरे में आयी दोपहर बीत चुकी थी। आंगन में धूप नहीं थी, परन्तु प्रकाश खूब था। बच्ची को गोद में लिये च्यूमिग बहुत सुन्दर लग रही थी। हृदय में सुलगती गुप्त प्रेम की आंच ने उस के सौन्दर्य को निखार दिया था। उस के चेहरे पर कोमलता आ गयी थी। रानी का ध्यान फेंगमो की ओर गया कि वह च्यूमिग की ओर किस भाव से देख रहा था। फेंगमो ने उस की ओर देख कर भी ध्यान न दिया था।

च्यूमिग ने विनय से संबोधन किया—"ओह, तीसरे कुँवर साहब! आप आ गये?"

"हां, हां।"—फेंगमो ने उत्तर दे दिया, "आप ठीक हैं?"

'हां मैं बिलकुल ठीक हूँ।"—च्यूमिग ने उत्तर दिया।

च्यूमिग ने दूसरी बार फेंगमो की ओर नहीं देखा। वह रानी से ही बोली—"जोजी, इस समय आना तो ठीक नहीं हुआ, फिर भी आज्ञा दें तो एक बात कहने के लिये आई थी।"

रानी जानती थीं कि च्यूमिग विशेष कारण से ही उस समय आयी होगी, इस लिये उन्हों ने अनुमति दे दी—"हां, हां, बैठो। इस मोटल्ली छोकरी को क्यों उठाये हो; खेलने दो इसे।"

च्यूमिग ने लजाते हुए अपनी बात कह डाली।

रानी ने सुन कर अनुमति दे दी—"बहुत अच्छा।"

रानी समझ गयीं कि च्यूमिग का वास्तविक अभिप्राय क्या है। वह रानी को बता देना चाहती थी कि फेंगमो के लौट आने पर उस का हवेली से चले जाना ही ठीक है, ताकि उस के कारण परिवार में कोई झगड़ा न हो। रानी को च्यूमिग की इस सहृदयता के प्रति कृतज्ञता भी अनुभव हुई।

च्यूमिग को अपनी बात के लिए अनुमति मिल गई तो उसने रुलन की बात कही।

"परिवार में शोक का समय तो पूरा हो गया। उस बेचारी का शोक

तो जन्म भर का है। बेचारी चाहती है किसी भले काम में अपना समय लगाये।"—च्यूमिंग बोली, "वह गांव में किसानों के बच्चों के लिए स्कूल खोलना चाहती है।"

फेंगमो फ़र्श की ओर आंखें झुकाए सुन रहा था। सहसा विस्मय से आंखें उठा कर बोल उठा—"मैं भी तो इसी काम के लिए घर आया हूँ।"

च्यूमिंग स्तब्ध रह गई और रानी भी विस्मित।

"बेटा, यह बात तो तुम ने अभी नहीं बताई थी।"—रानी बोलीं।

"अभी बात पूरी कहाँ कर पाया था?—"फेंगमो बोला, "उस घटना के बाद में यह सोचता रहा कि मैं क्या काम कर सकूँगा?"

रानी ने हाथ उठा कर बेटे को चुप रहने का संकेत किया और च्यूमिंग से पूछा—"कोई और बात है?"

"नहीं, जीजी।"—च्यूमिंग ने उत्तर दिया।

"बहुत अच्छा, तुम लोग चाहो तो गांव चली जाना।"—रानी बोलीं, "हम एक दिन मुख़्तार को बुला कर कह देंगी कि स्कूल के लिये और तुम लोगों के रहने के लिए जगह का इंतज़ाम कर दे। उसके बाद तुम जब चाहो चली जाना। तुम लोगों के लिए कुछ सामान भी तो भिजवाना होगा, देहात में किसानों के यहां क्या रखा है! जो ज़रूरत हो तुम लोग बता दो, हम प्रबन्ध करवा देंगे। तुम लोगों के लिए दो नौकरानियां और एक रसोइए की भी आवश्यकता होगी। बावरचीख़ाने में कई आदमी हैं, कोई एक चला जायगा।"

फेंगमो फिर बोल उठा—"अगर यह लोग देहात में रहना चाहतीं हैं तो इन्हें बहुत ज्यादा रईसी ढंग से नहीं रहना चाहिए, वरना वहां अकेली पड़ जायंगी।"

च्यूमिंग ने एक नज़र उस की ओर देखा पर चुप रही। उसे विस्मय भी हुआ कि सदा रईसी में पलने वाला यह लड़का ग़रीब लोगों के मन की बात कैसे जानता है, परन्तु उस के बोलने का अवसर नहीं था। च्यूमिंग

उठ खड़ी हुई। विनय से रानी के सम्मुख झुकी और बच्ची को उठा कर चली गयी।

रुलन उत्सुकता से च्यूमिंग के लौटने की प्रतीक्षा कर रही थी। दोनों को गांव चले जाने की अनुमति मिल जाने से उन की प्रसन्नता की सीमा न रही। दोनों अपनी योजना बनाने लगीं।

च्यूमिंग के चले जाने के बाद रानी ने फेंगमो से पूछा—"हां, अब बताओ तुम क्या करना चाहते हो?"

फेंगमो कुर्सी से उठ कर सिर झुकाये चहलक़दमी करता हुआ बोला—"मैं जीवन को किसी काम में लगाना चाहता हूँ। आंद्रे भाई ने मुझे यही मंत्र दिया था। अम्माजी, धर्म से मुझे प्रयोजन नहीं; मैं पुजारी-पुरोहित तो हूं नहीं। मेरा सम्बन्ध तो मनुष्यों से है, भगवान् और विधाता से नहीं।"

"ठीक कहते हो बेटा।"—रानी ने समर्थन किया और प्रतीक्षा में उस की ओर देखती रहीं।

फेंगमो कुर्सी पर बैठ गया। "एक आकस्मिक घटना ने मुझे मार्ग दिखा दिया।"—फेंगमो बोला। उस ने जेब से विलायती तम्बाकू और एक छोटा पाइप निकाल कर भरा और सुलगा लिया। रानी ने यह वस्तुएं पहले कभी नहीं देखी थीं, परन्तु उत्सुकता में उन्हों ने पुत्र की बात में विघ्न नहीं डाला। उसकी बात सुनने के लिए मौन ही रहीं।

"उस देश में मैं जिस नगर में रहता था, एक हमारी जाति का एक चीनी धोबी भी था। अपने कपड़े धुलवाने के लिए मैं उसी के यहां ले जाता था।"—फेंगमो सुनाने लगा।

"वह क्या दूसरे लोगों के भी कपड़े धोता था?"—रानी ने विस्मय से पूछा।

"बहुत से लोगों के।"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "वही उस का व्यवसाय था।"

"तुम्हारा मतलब है, विदेशियों के कपड़े भी धोता था?"—कुछ ग्लानि और विस्मय से रानी ने अपना प्रश्न दोहराया।

"कपड़े धोने का काम भी तो कोई आदमी करेगा ही।"--फेंगमो हंस कर बोला।

रानी को हंसी नहीं आयी। वे बोलीं—"हमारे आदमियों को विदेशियों के गन्दे कपड़े तो नहीं धोना चाहिएँ।" रानी ने अपनी विरक्ति प्रकट की।

"इस में क्या है!"--फेंगमो ने रानी को शांत करने के लिए कहा और बोला, "वह आदमी हमारे प्रान्त का नहीं, दक्षिणी चीन का था। एक दिन मैं अपने कपड़े उस के यहां से लाने गया था......।"

"तुम अपने कपड़े लाने खुद गये थे?"—रानी ने प्रश्न किया और पूछा, "क्यों, तुम्हारे पास कोई नौकर नहीं था?"

"नहीं अम्माजी, वहां ऐसा रिवाज नहीं है। वहां बहुत कम लोगों के यहां नौकर होते हैं।"

"अद्‌भुत देश है!"—रानी अपना कौतूहल दमन कर के बोलीं, "हां, तुम क्या बात सुना रहे थे?"

"मैं अपने कपड़े लेने गया था।"—फेंगमो सुनाने लगा, "उस धोबी के घर से एक पत्र आया था। वह पत्र उस ने मुझे पढ़ कर सुनाने के लिये दिया। बीस वर्ष से वह वहीं है। वह न पत्र पढ़ सकता है, न लिख सकता है। मैं उस के पत्र पढ़ कर सुना देता था और उत्तर भी लिख देता था। धोबी ने बताया, उस के गांव में कोई पढ़ा-लिखा आदमी नहीं।है जब भी उन्हें पत्र पढ़ाना या लिखाना होता, उन्हें मुंशी ढूंढ़ने के लिए शहर जाना पड़ता है। अम्माजी अपने लोगों की इस दुरवस्था की ओर मेरा ध्यान पहले कभी नहीं गया था। वह धोबी यों समझदार और बुद्धिमान् आदमी था। स्वयं ही कहता था कि पढ़-लिख न सकने के कारण मैं तो अन्धा ही हूं। अपनी जगह लौट कर मैं खिड़की के सामने बैठा था। खिड़की के सामने ही कालेज की बड़ी-बड़ी इमारतें थीं। हजारों विद्यार्थी आते-जाते दिखाई दे रहे थे। वे कितनी ही बातें सीख और पढ़ रहे थे, परन्तु उस गरीब बूढ़े आदमी को घर से आया पत्र पढ़ लेना सीखने का भी अवसर न मिला था।

याद आया, स्वयं हमारे गांव वालों की भी यही अवस्था है। वहां भी तो कोई आदमी पढ़-लिख नहीं सकता······।"

"उन लोगों की आवश्यकताएं भी क्या हैं!"—रानी ने प्रश्न किया, "उन्हें कहां आना-जाना है? उन्हें ज़मीन जोतने से मतलब है।"

"परन्तु अम्माजी,"—फेंगमो बोला, "अक्षर-ज्ञान ज्ञानचक्षु के समान है। शिक्षा आत्मा की आंख है, जिस से मनुष्य विश्व-ब्रह्मांड के सम्पर्क में आ सकता है।"

बेटे के शब्द रानी के हृदय में गहरे उतर गये। गहरी सांस ले कर बोलीं—"यह तो तुम्हारे गुरु के शब्द हैं।"

"मैं इन शब्दों को कभी भूल नहीं सकता।"—फेंगमो बोला।

अब फेंगमो को शिक्षा-प्रचार के काम से रोकना, और इस काम के लिए हवेली छोड़ कर गांव में रहने से रोकना, रानी के लिये सम्भव न रहा।

"इस काम में रुलन बहुत सहायता दे सकती है।"—फेंगमो ने उत्साह से कहा, "पहले मुझे उस का ध्यान ही नहीं आया था। लीनी भी सहायता देगी और हम लोग काम में लग जायँगे।"

उत्साह की उत्तेजना में फेंगमो फिर चहलक़दमी करने लगा और बोला—"अम्माजी, यदि हम अपने गांव में शिक्षा-प्रचार कर सकें तो यह मामूली बात नहीं होगी। उस का प्रभाव दूसरे गावों पर पड़ेगा। यह पूरे देश के सुधार का मार्ग बन जायगा······।"

रानी को बेटे की आंखों में वही ज्योति दिखाई दे रही थी जिस से आन्द्रे की आंखें उज्ज्वल बनी रहती थीं। इस प्रकाश का विरोध वह कैसे करतीं! उन्हों ने अनुमति दे दी—"बेटा, तुम्हें जो उचित जँचे करो।"

× × ×

रानी सेज पर लेटी हुई थीं, परन्तु नींद नहीं आ रही थी। कुछ दिन उन्हें नींद कम आती थी, परन्तु नींद न आने से असुविधा या बेचैनी अनुभ न होती थी। वे सोचती थीं, नींद की आवश्यकता जवानों को ही अधि

है, वे परिश्रम कर के थक जाते हैं। उन्हें अभी बहुत दिन जाग कर काम करना है। बूढ़ों को इतनी नींद की क्या आवश्यकता! उन की अनन्त निद्रा का दिन कौन दूर है!

रात के सन्नाटे में रानी अनुभव करतीं कि हवेली में दिन के प्रकाश की अपेक्षा रात में कहीं अधिक सचेत और जाग्रति रहती थी। उन की कल्पना दूसरे आँगनों का चक्कर लगाने लगती। दूर के आँगनों में सम्बन्ध के बुजुर्ग लोग रहते थे। कुछ आंगनों में अस्थायी तौर पर आये हुये सम्बन्धी रहते थे। रानी की कल्पना चमेली और साहब के आंगन की ओर भी चली जातीं। वे उस ओर से ध्यान हटा लेतीं। उस तरह की बातों में उन्हें कोई रुचि नहीं थी। साहब शनैः-शनैः बुढ़ा कर शिथिल होते जा रहे थे। चमेली का भी शरीर भारी हो कर सुस्त होता जा रहा था। वह दिन-रात सोया करती थी। उस के कारण हवेली में कोई परेशानी नहीं थी। वह बांझ रही। इस से भी रानी को संतोष ही हुआ। उस का निम्न वर्ग का रक्त परिवार में नहीं मिला तो अच्छा ही हुआ। वह साहब को रिझाये रखती थी। साहब उसे गहने, कपड़े और तरह-तरह के उपहारों से संतुष्ट रखते थे। वह जवानी के आरम्भ में ही सब खेल खेल चुकी थी, अब हवेली की सुरक्षा पा जाना ही उस के लिये सब से बड़ा संतोष था। सड़क किनारे उग आने वाले फूल की तरह उस ने आंधी-पानी के झकोरे बहुत सह लिये थे; अब वह इस बाग़ की चारदीवारी में ही संतोष पा रही थी। साहब की मृत्यु के बाद भी उसे किसी बात की आशंका नहीं थी। इस से अधिक उसे और कुछ चाहिये भी नहीं था।

साहब की लड़काई में मां ने अपने लाड़ से जिन प्रवृत्तियों के बीज बो दिये थे, चमेली ने उन के लिये बहुत अनुकूल जलवायु प्रस्तुत कर दिया था। रानी की संगति से संयम की जो कुछ भावना आने लगी थी, वह सब जाती रही। चटोरेपन के कारण उन का शरीर बेडौल होता जा रहा था। शराब भी बहुत पीने लगे थे, परन्तु सदा चमेली के साथ ही पीते थे। चकले जाना उन्हों ने छोड़ दिया था, वह आवश्यकता चमेली पूरी

कर देती थी; वह उस कला में दक्ष थी। बल्कि अब वे गपबाजी के लिये चायख़ाने में भी कम ही जाते, चमेली यह आवश्यकता भी पूरी कर देती। वह नौकरों से सुनी हुई बातें साहब को सुना कर उन का कौतूहल पूरा करती रहती। उन्हें हवेली या परिवार के दूसरे लोगों से सम्पर्क ही नहीं रहा था, दोनों आपस में संतुष्ट और प्रसन्न थे, नशे में उन्मत्त पशुओं की भांति। लोग भी उन की ओर कम ही ध्यान देते।

रानी साहब के आंगन की अवस्था से परिचित थीं। वे अब उधर कभी न जातीं। चमेली भी रानी के आंगन में कभी न जाती। दोनों आंगन एक-दूसरे से बेख़बर और दूर थे।

रानी रेशमी लिहाफ़ में लेटी-लेटी सोच रही थीं—क्या उन का विवाहित जीवन सफल रहा? उसे सफल बनाने के लिये वह कर भी क्या सकती थीं! उन्हों ने अपने विचारों में यह प्रश्न आन्द्रे से पूछा। इस प्रश्न का उत्तर आन्द्रे भी तुरन्त न दे सका। उन की स्मृति में अंधकार के मख़मली पट पर वृद्ध ससुर का चेहरा चमक उठा! चेहरा अब भी दुबला परन्तु तेजोमय था।

"बाबा, मुझे खेद है कि मैं आप के बेटे का जीवन संतुष्ट नहीं बना सकी।"—रानी ने वृद्ध ससुर के सम्मुख स्वीकार किया। मन में परिताप था कि यदि चालीसवीं वर्षगांठ के अवसर पर वे साहब से पृथक् न हो जातीं तो उन का जीवन इस तरह बरबाद न हो जाता, परन्तु वृद्ध ने रानी के यौवन के दिनों की स्मृति सचेत कर दी।

एक दिन वृद्ध ने उन्हें पुस्तकालय में बुला भेजा था। रानी के आने पर वृद्ध एक पुस्तक के पृष्ठों में उँगली रखे कुछ सोच रहे थे। बहू के आने पर वृद्ध ने कुछ पंक्तियां उन्हें दिखाईं। रानी ने पढ़ा—

"किसी व्यक्ति को-उस की स्वाभाविक प्रवृत्तियों से बहुत ऊंचा उठाने के प्रयत्न में हानि की आशंका ही रहती है। व्यक्ति का जीवन जल के स्रोत के समान होता है, जो स्वाभाविक मार्ग पर ही सरलता से बहता है। जीवन सदा अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों के स्तर की ओर ही बहने की चेष्टा

करता है। उसे बहुत ऊंचे स्तर पर उठाने से उस की धारा टूट जाती है इसलिये जीवन को स्वाभाविक प्रवृत्तियों से जुड़ा रहने देना ही बुद्धिमत्ता है……।"

यह पंक्तियां पढ़ कर रानी ने ससुर की ओर आंखें उठाईं तो उन्हें अपनी ओर देखते पाया था। वैसे ही इस समय भी कल्पना में उन की आंखें मिल गयीं।

यदि मैं उन से पृथक् न होती……।—रानी ने सोचा परन्तु आगे कुछ और सोच ही न सकीं। दूसरा और मार्ग ही कौन था! कितने वर्ष तक आत्म-दमन कर के सब कुछ निबाह कर वे मानसिक विश्राम पाने की प्रतीक्षा करती रही थीं।

अचानक उन्हें लिआँगमो की याद आ गयी। विस्मय हुआ कि बड़े बेटे की ओर ध्यान क्यों गया? सोचा वही तो अपनी प्रवृत्ति के कारण उन के बेटों में सब से अधिक संतुष्ट है। फिर यह भी ख्याल आया कि मैं शायद उसे भी न पहचान सकी होऊं।

फेंगमो की ओर भी ध्यान गया। उन्हें आश्वासन था कि इस पुत्र की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। वह अपना मार्ग पहचान चुका है। सान्त्वना की वायु के इस झोंके से नींद में उन की कल्पना क्षीण होने लगी, जैसे चांदनी रात में कोई खाली बहती जाती नाव दृष्टि से ओझल हो रही हो।

× × ×

"अब अंग्रेजी की किताबें उठा कर लाओ।"—फेंगमो बोला।

लीनी दूसरे संदूक की ओर घूम गयी। लीनी दो बार में वह पुस्तकें उठा कर लाई और बोली—"इतनी पुस्तकें लाये हो!"

"यह तो चुनी-चुनी पुस्तकें हैं।"—फेंगमो ने उपेक्षा से उत्तर दिया, "पुस्तकों के और भी संदूक अभी पहुंचने वाले हैं।"

फेंगमो ने घुटने फ़र्श पर टेक दिये। लीनी पुस्तकें लाती जा रही थी

और फेंगमो उन्हें अलमारी में सजाता जा रहा था। प्रकट में वह निरपेक्ष और निश्चित जान पड़ रहा था, परन्तु मन में उस की योजनाएँ उथल-पुथल मचाये थीं। सामान को इस तरह लगा देना चाहता था कि काम में असुविधा न हो।

"क्या सारा सामान आज ही लगाना चाहते हो?"—लीनी ने पूछा।

"और क्या!"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "घर बस जाना चाहिये, ताकि काम शुरू हो सके।"

फेंगमो का पूरा अभिप्राय समझे बिना ही लीनी को घर बस जाने की बात भली लगी। यह बात कहते समय फेंगमो की कल्पना में कोई दूसरा ही चेहरा था। उस की आंखों के सामने था मारग्रेट का चेहरा, उस की नीली आंखें, भूरे बाल और कोमल गोरा शरीर। उस त्वचा के स्पर्श को भूल जाना असंभव था। समुद्र पार जंगल में घटी वह स्मृति! मारग्रेट को आलिंगन में लेते ही उस ने उसे छोड़ दिया था।

"नहीं, यह उचित नहीं है।"—फेंगमो ने कहा था।

मारग्रेट मौन खड़ी फेंगमो की ओर देखती रही थी। उसकी स्वच्छ नीली पारदर्शी आंखों में उसके हृदय का भाव स्पष्ट था। काली आंखों के पर्दे में मन की भावना छिपी रहती है, परन्तु नीली आंखें तो खुली खिड़की के समान होती हैं।

"मैं विवाहित हूं;"—फेंगमो बोल उठा था, "घर पर मेरी स्त्री है।"

मारग्रेट चीनी समाज के विषय में बहुत-सी बातें सुन चुकी थी। उस ने प्रश्न किया—"विवाह तुम ने स्वयं प्रेम से किया या परिवार ने तुम्हारा विवाह कर दिया है।"

फेंगमो और मारग्रेट दोनों देवदार के विशाल वृक्ष के नीचे बैठे थे। फेंगमो दोनों घुटनों को बाहों में जकड़े और ठुड्ढी घुटनों पर टिकाये सोच रहा था क्या उत्तर दें। कह देना चाहता था कि विवाह परिवार ने ही किया था। वह झूठ भी न होता। मन यही उत्तर देना चाहता था, परन्तु कल्पना में आन्द्रे का चेहरा दिखाई दे गया।

"झूठ बोलना पाप है।"—आन्द्रे ने उस से कहा था।

"झूठ बोलना भगवान् की दृष्टि में उतना बड़ा अपराध नहीं है जितना कि वह स्वयं अपने पतन का प्रमाण है। झूठ के आधार पर बनायी गयी बात कभी सफल नहीं हो सकती। झूठ बोलना दूसरों को धोखा देना नहीं, स्वयं अपने आप को धोखा देना है।"

फेंगमो का मन कांप उठा कि झूठ के सहारे प्रेम को सफल बनाने का प्रयत्न प्रेम को समाप्त ही कर देगा। झूठ किसी दिन तो खुलेगा ही।

"मेरा विवाह मेरी इच्छा के विरुद्ध नहीं किया गया था।"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "उस विवाह के लिये मेरी भी इच्छा थी।"

मारग्रेट मौन और निश्चल बैठी रही। फेंगमो उसे समझाता रहा—

"हम लोगों में विवाह प्रेम के लिये अथवा अपने संतोष के लिये नहीं होता बल्कि वंश और परिवार के प्रति कर्तव्य समझा जाता है। मुझे मालूम है, मेरी मां ने कभी मेरे पिता को प्यार नहीं किया, परन्तु वे परिवार के प्रति अपना कर्तव्य सदा पूरा करती रहीं और करती हैं। चालीस की आयु हो जाने पर उन्हों ने पत्नी का सम्बन्ध समाप्त कर दिया और पति के लिये दूसरी स्त्री का प्रबन्ध कर दिया। इस घटना से हम सभी को दुख हुआ, परन्तु हमें मानना पड़ा कि यही उचित भी था। अब वह परिवार में अपनी इच्छानुसार जीवन बिताती हैं। हम सब लोग उन का आदर करते हैं। इसी प्रकार मेरा भी परिवार के प्रति कर्तव्य है।"

फेंगमो अनुभव कर रहा था कि उसकी बात से मारग्रेट को दुख हो रहा है, परन्तु वह विवश था।

"मैं तो प्रेम के लिये ही विवाह करना चाहती हूँ।"—मारग्रेट ने कहा।

फेंगमो पर न केवल लीनी का ही बन्धन और अधिकार था, परन्तु उस की सैकड़ों पीढ़ियों के पूर्वजों और भविष्य में आने वाली पीढ़ियों का भी उस पर अधिकार और बन्धन था। इच्छा होने पर भी उसके मुख से यह शब्द न निकल सके—"......तो लीनी को जाने दो। हम दोनों

प्यार करते हैं। हम विवाह करेंगे।" वह अपने संस्कारों और विश्वासों से मुक्त नहीं हो सकता था।

फेंगमो की आंखें ज़मीन पर उगी घास से उठ कर नीचे घाटी में नदी पर बने पुल की ओर चली गयीं। मारग्रेट से आंखें न मिला सका। नदी की ओर देखते हुए वह बोला—

"......यह हो नहीं सकेगा। मेरे विश्वास और संस्कार ऐसे ही हैं। मुझे केवल भगवान् ने ही उत्पन्न नहीं किया है अपितु मेरे परिवार ने भी मुझे बनाया है। उस परिवार की परम्पराएँ अटूट हैं। मेरा जीवन केवल अपने ही लिये नहीं बल्कि पहले परिवार के लिये है। यह शरीर उसी परिवार की देन है। मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरा व्यक्तित्व भी कोई चीज़ है जो मेरे परिवार से स्वतंत्र होना चाहिये। उसे आत्मा कहा जा सकता है। वह मेरी अपनी चीज़ है। मैं तुम से प्रेम करता हूँ और अपनी आत्मा ही तुम्हें दे सकता हूँ। यह शरीर तो मेरे परिवार की गत और भावी पीढ़ियों का है। यह मैं तुम्हें दे नहीं सकता।"

"नहीं, नहीं, यह बात ठीक नहीं है।"—मारग्रेट ने विरोध किया, "विवाह का अर्थ प्रेम ही है। प्रेम ही विवाह है।"

"संभव है, कभी ऐसा भी हो सकता है।"—फेंगमो ने स्वीकार किया, "परन्तु भगवान् की इच्छा या आकस्मिक घटना के रूप में। हमारे समाज में भी ऐसा हो जाता है। विवाह के बाद जब दूल्हा वधू के मुख से शुभ-दृष्टि के अवसर पर पहली बार घूंघट हटाता है तो उसे वही बहू दिखाई दे जाती है जिसे वह अपनी इच्छा से चुन लेना चाहता है, परन्तु यह केवल भगवान् की इच्छा और आकस्मिक घटना से ही हो सकता है।"

"हमारे देश में तो विवाह केवल प्रेम से ही होता है।"—मारग्रेट गर्व से बोली।

फेंगमो कड़वी बात कहने के लिये विवश हो गया—"नहीं, ऐसी बात नहीं है। विवाह इस देश में भी हम लोगों की ही तरह वंश-रक्षा के लिये किया जाता है, परन्तु आप लोग अपने आप को धोखा देने के लिये प्रेम

का नाम लेते हैं। आप विश्वास कर लेते हैं कि यह आप के व्यक्तिगत संतोष के लिये है। आप लोग प्रेम की पूजा करते हैं, परन्तु हम लोग आप की अपेक्षा अधिक ईमानदार हैं। हमारी धारणा है कि विवाह करना सभी स्त्री-पुरुषों का जीवन के प्रति कर्तव्य है। यदि प्रेम हो जाय तो यह भगवान् का आशीर्वाद है, परन्तु प्रेम जीवन के लिये आवश्यक नहीं।"

"मेरे लिये तो आवश्यक ही है।"—मारग्रेट ने धीमे स्वर में आग्रह किया।

फेंगमो अपनी ही बात कहता गया—"जीवन के लिये प्रेम नहीं संतोष आवश्यक है। संतोष होता है कर्तव्य पूरा करने से और आवश्यकताएं पूरी होने से……। प्रेम की व्यक्तिगत आवश्यकता की पूर्ति से नहीं, बल्कि परिवार और वंश और सन्तान की आवश्यकता-पूर्ति से।"

फेंगमो को ऐसा जान पड़ रहा था कि वह स्वयं नहीं उस की धारणाएँ, उस के विश्वास और निष्ठा आन्द्रे के शब्दों में बोल रही हैं और वही सत्य था।

फेंगमो और मारग्रेट बहुत देर तक मौन बैठे रहे। वह मौन उन दोनों को पृथक् करने वाली जलराशि की तरह फैलता चला जा रहा था। फेंगमो यह अनुभव कर रहा था और उसे यही उचित जान पड़ रहा था।

मारग्रेट ही पहले बोली। हाथ बढ़ा कर उस ने कहा—"बहुत अच्छा, तो फिर हम दोनों का विदा हो जाना ही उचित है।"

फेंगमो ने मारग्रेट का हाथ अपने दोनों हाथों में ले लिया और कुछ क्षण मौन बना रहा। फिर उस ने मारग्रेट की बात को स्वीकार कर लिया—"हां, विदा।"

पुस्तकें और कपड़े समेट और सहेज दिये जाने के बाद फेंगमो ने सन्दूकों को बाहर आंगन में रख दिया कि सुबह ही नौकर उन्हें ले जा सके। इस के बाद वह शयनागार में पहुँचा। लीनी कमरे के फ़र्श के बीचो-बीच प्रतीक्षा और संकोच में खड़ी थी। फेंगमो ने आ कर अपने दोनों हाथ निस्संकोच उस के कंधे पर रख दिये और बोला—

"देखो, तुम्हारी सहायता के बिना कुछ नहीं कर सकूंगा। मैं यहां अपनी रियासत में काम आरम्भ कर रहा हूँ। अकेला तो कर नहीं पाऊंगा, तुम्हें सामर्थ्य भर सहायता देनी होगी ......।"

फेंगमो के निस्संकोच और उग्रता से लीनी कुछ सहम-सी गयी, परन्तु पति का इस प्रकार अधिकार से बोलना उसे अच्छा भी लगा। फेंगमो का भय अब मधुर जान पड़ा। मन चाहा, ऐसा भय सदा बना ही रहे। धीमे से उत्तर दिया—"मैं सहायता करूंगी, जो कुछ तुम कहोगे सब करूंगी।"

× × ×

फेंगमो ने अपना काम तूफ़ान की चाल से आरम्भ कर दिया। उस की सब सुध-बुध इसी काम में डूब गयी। सूर्योदय से बहुत पहले उठ जाता और दिये के प्रकाश में नाश्ता कर घोड़े की पीठ पर सवार हो खेतों के बीच की पगडंडियों से गांवों की ओर चल देता। पहले उस ने एक गांव में शिक्षा का काम आरम्भ किया। उस का आदेश था कि गांव के सब लोगों को पढ़ना होगा। उस ने बच्चों के लिये, स्त्रियों और पुरुषों के लिये और प्रौढ़ लोगों के लिये भी स्कूल बना दिये।

गांव के बड़े-बूढ़े लोग इस नयी बात का विरोध कैसे न करते! बिना पढ़े ही उन का इतना जीवन कट गया था। बुढ़ौती में आ कर उन्हें दूसरे लोगों की लिखी बातें पढ़ने की क्या जरूरत थी! उन्हों ने कहा—"बिना पढ़े भी हम लोग मूर्ख तो हैं नहीं। हमारे लिये हमारी अपनी समझ काफ़ी है। हमें ऐसे ही रहने दिया जाय।"

फेंगमो अपने उत्साह के आवेग में बूढ़े लोगों की बात सुनने के लिये तैयार न हुआ, इसलिये गांव के बूढ़ों ने जा कर रानी के यहाँ दुहाई दी कि कुँवर साहब से उन की रक्षा की जाय। रानी ग़रीब प्रजा के प्रति सदा ही विनय का व्यवहार करती थीं। उन से बड़ा तो उस प्रदेश में कोई था ही नहीं। अपने समान स्थिति के लोगों की वे उपेक्षा कर जातीं, परन्तु अपने से हीन स्थिति के लोगों की नहीं। देहात के ग़रीग लोगों के आने

पर उन्हों ने हवेली के बड़े हॉल में उन्हें बैठने का स्थान दिया। इस अवसर पर साहब को भी बुलवा भेजा। वे स्वयं मेज के बायीं ओर बैठीं और साहब को दायीं ओर स्थान दिया। साहब भी ढंग से कपड़े पहन कर आये थे। शरबती रंग की साटिन की पोशाक पर काले मखमल की बिना आस्तीन की बंडी पहने थे। कपड़े बिलकुल नये थे। शरीर मोटा हो जाने के कारण पुराने कपड़े अब अटते ही नहीं थे। रानी ने साहब को कई दिन बाद देखा था। उन का मोटापा देख कर उन्हें चिन्ता हुई कि ऐसे मोटायेंगे तो इस शरीर का जल्दी ही अंत हो जायगा, परन्तु ख्याल आया वे इसी अवस्था में प्रसन्न हैं तो रहें। दुखी रह कर कुछ दिन अधिक जीने की अपेक्षा प्रसन्न रह कर कुछ दिन कम जी लेना ही क्या बुरा है! इसलिये उन्हों ने कोई चेतावनी नहीं दी।

साहब और रानी के कुर्सियों में बैठ जाने के बाद किसानों ने भीतर प्रवेश किया। वह लोग नीले सूती कपड़े पहने हुए थे और पांव में मूँज की बुनी हुई चप्पलें। बादामी काग़ज़ में लिपटी कुछ मिठाइयां भी वे भेंट में लाये थे। मिठाई के बंडलों पर लाल रंग की चिंदिया शुभ संकेत में लगी हुई थीं। साहब ने विनय से इतना कष्ट न करने के लिये कह कर वह मिठाइयां स्वीकार कर लीं।

किसानों ने साहब और रानी के सम्मुख खड़े हो अपनी प्रार्थना की। रानी ने ध्यान से और साहब ने उपेक्षा से उन की बात सुनी। रानी चुप रहीं, परन्तु साहब ने किसानों का समर्थन किया—"इन भाइयों का कहना बिलकुल ठीक है। लड़के का दिमाग़ खराब हो गया है। हमारा हुक्म है कि इन्हें परेशान न किया जाय।"

रानी स्थिति समझती थीं। वे नहीं चाहती थीं कि साहब बनता काम बिगाड़ दें, इस लिये पहले तो उन्हों ने साहब की बात का समर्थन किया और फिर किसानों को संबोधन कर के बोलीं—

"सरकार जो कह रहे हैं, वह बिलकुल ठीक है। सब लोगों को मालिक का हुक्म मानना चाहिये। आप सब लोग प्रौढ़ हैं। आप के साथ जबरदस्ती

किया जाना उचित नहीं, लेकिन गांव में कम उम्र के लोग भी तो हैं। वे लोग अगर थोड़ा बहुत पढ़ जायं तो उन का फ़ायदा ही है। अपना हिसाब देख और समझ सकेंगे, बाज़ार और मंडी में ठगे नहीं जा सकेंगे।"

साहब की ओर देख कर रानी ने सुझाव दिया—"आप ने ठीक ही फ़रमाया। लड़के को हुक्म दे दिया जाय कि चालीस साल की उम्र से ऊपर वाले केवल उन्हीं लोगों को पढ़ाया जाय जो पढ़ना चाहते हों।"

इसी बात पर समझौता हो गया। बूढ़े लोगों पर फेंगमो की शिक्षा का आतंक न रहा, न यह भय रहा कि जो लोग पढ़ने-लिखने से इंकार करेंगे उन्हें लगान और तकावी की सहूलियतें नहीं दी जायँगी।

फेंगमो ने जब किसानों की हवेली में जा कर दुहाई देने की बात सुनी तो हँस कर बोला—"कोई डर नहीं, पहले जवानों को ही पढ़ लेने दो। जवानों के पढ़-लिख लेने पर बूढ़े स्वयं ही पढ़ने की इच्छा करने लगेंगे।" वही बात हुई भी। कुछ ही दिन में दूसरे गांव से भी स्कूल खोले जाने की मांग आने लगी। फेंगमो काम में इतना व्यस्त रहता कि मां को देखे महीनों बीत जाते।

फेंगमो का काम तो उत्साह से चल रहा था, परन्तु हवेली में उस के कारण कुछ बेचैनी भी हो रही थी। च्यूमिंग और रुलन भी गांव में चली गयी थीं, इस कारण रानी बहुत चिंतित थीं। फेंगमो च्यूमिंग और रुलन से भी अपने काम में सहायता लेना चाहता था। रानी को यही चिन्ता थी कि च्यूमिंग अपना स्नेह फेंगमो से कैसे छिपा सकेगी! च्यूमिंग और फेंगमो की आयु बराबर ही थी, परन्तु उन का संबंध तो मां और बेटे का हो चुका था। अब यदि किसी भी तरह की बदनामी उठती तो वू-परिवार के नाम पर बहुत बड़ा धब्बा लग जाता। तभी एक रात फेंगमो मां से मिलने आया।

रानी जानती थीं कि फेंगमो अपने काम में ऐसा डूबा हुआ है कि उसे और किसी बात की सुध ही नहीं, परन्तु मन में आशंका भी थी कि वह च्यूमिंग के संबंध में ही बात करने तो नहीं आया है। उन की आशंका ठीक ही थी। फेंगमो के स्वास्थ्य पर गांव की ताज़ी, खुली वायु का प्रभाव अच्छा पड़ा था। चेहरे और स्वर से स्वास्थ्य झलक रहा था।

फेंगमो विलायत से लौटा था तो लम्बे-लम्बे कटे केशों को कंघी से पीछे की ओर संवारे रहता था। अब उस ने किसानों की तरह कटवा दिये थे। कुर्सी पर बैठते ही वह बोला—

"अम्माजी, बहुत-सी ज़रूरी बातें हैं। समझ नहीं पा रहा हूँ कि कैसे कहूँ, फिर भी जैसे बनता है कहूंगा······।"

"हां, बेटा कहो।"—रानी बोलीं। "क्या तुम्हें च्यूमिंग के बारे में कुछ कहना है?"—रानी ने पूछा।

"आप को सभी बातें मालूम हो जाती हैं, यह आपको कैसे मालूम हुआ?"

"हो ही जाती हैं।"—रानी बोली, "हां, बताओ क्या बात है?"

फेंगमो के लिये बात कर सकना सरल हो गया। बोला—"अम्माजी आप जानती हैं कि मैं स्त्रियों की परवाह नहीं करता हूँ।"

बेटे के भोलेपन और चेहरे की गंभीरता से रानी के होंठों में मुस्कान आ गयी। परन्तु हृदय में सूक्ष्म-सी वेदना भी उठ खड़ी हुई। ख्याल आया, संभव है कि विवाह और प्रेम की पुरातन परिपाटी में कुछ भूल ही रही हो।

"हां, हमें याद है।"—रानी बोलीं और कुछ सहम गयीं। उन्हें याद आ रहा था—उस समय उन की आयु फेंगमो के बराबर ही थी। एक दिन सुबह नींद खुलते ही उन की दृष्टि पति के चेहरे पर पड़ी और उन्हें अनुभव हुआ कि वह उन से कभी स्नेह नहीं कर सकेंगी, परन्तु उन्हें संतोष था कि उन्हों ने अपने जीवन का कर्तव्य निबाह दिया और वे संतुष्ट भी थी। वे फेंगमो के यौवन के उत्साह से भरे चेहरे को देखती रहीं।

"अम्माजी आप ही बताइये क्या किया जाय?"—फेंगमो ने पूछा।

"जो भी उचित होगा किया जायगा।"—रानी ने उत्तर दिया।

"आप आज्ञा दें तो मैं गांव में जा कर रहूं और लीनी को भी साथ ले जाऊं।"

रानी की दृष्टि में बेटे के साथ लीनी का जाना ही उचित था, परन्तु

च्यूमिंग अपने अनुभव से स्वयं सीखती जा रही थी परन्तु अगले वर्ष जब लीनी के पहले शिशु का जन्म हुआ तो एक और अप्रत्याशित घटना भी हो गयी। उस वर्ष पूर्वी द्वीपों से आकर आक्रमण करने वाले शत्रु ने देश के बहुत बड़े भाग पर अधिकार कर लिया था, इसलिये समुद्र-तट के नगरों से हजारों-लाखों नर-नारी शरण के लिये देश के भीतरी भाग की ओर बढ़े चले आ रहे थे। वू-वंश जिस नगर में रह रहा था वह देश के मध्य भाग में था, इस लिये ऐसे लोग बहुत बड़ी संख्या में उस नगर से गुज़र रहे थे। ऐसे लोगों में एक विधवा प्रौढ़ा भी थी। प्रौढा अपने बेटे-बहू और पोते-पोती के साथ कई दिन तक नगर की सराय में बनी रही थी। सराय के आदमी ने उन से इतने दिन रहने का कारण पूछा तो बुढ़िया के बेटे ने उत्तर दिया—"कई वर्ष पहले मेरी बहिन यहां खो गयी थी। उस का कुछ पता लग सकता है?"

मुसाफ़िर अच्छी स्थिति के लोग थे, इस लिये सराय के आदमी ने पूछा—"बच्ची की उम्र क्या थी?......ज़िन्दा भी बची होगी?"

"बच्ची उस समय ज़िन्दा ही थी। मेरी दादी का मिजाज़ ज़रा गरम था। मां के एक के बाद एक तीन लड़कियां हो गयी थीं, इस लिये दादी बिगड़ गयी थीं।"—नौजवान ने बताया।

"तब आप लोगों का आना यहां कैसे हुआ था ?"

"सुना है कि उस साल उत्तर में हमारे प्रान्त में भयंकर अकाल पड़ गया था। लोग पेट के लिये दक्षिण की ओर चले आये थे। हम लोग इसी शहर में आ कर टिके थे तो मां के एक लड़की पैदा हुई थी।"

सराय वाला कुछ देर सोच कर बोला—"तो यहां इसी सराय में हुई होगी। यहां यही एक ही तो सराय है। मेरी सारी उम्र इसी सराय में बीत गयी। पहले यहां मेरे बाबा थे।"

"मां कहती हैं लड़की इसी सराय में हुई थी। मेरी दोनों बहिनें मर गयी हैं, इसलिये मां को उस लड़की की बहुत याद आती है।"—नौजवान बोला।

"बहुत अच्छा, मैं मालूम करूंगा।"—सराय वाले ने आश्वासन दिया और बोला, "कुछ पता लग सकता है तो रानी बू के यहां से लग सकता है।"

अगले दिन सांझ मुसाफ़िरों की सेवा का काम समाप्त कर के सराय वाले ने साफ़ कपड़े पहने और हवेली पहुंच कर रानी साहिबा को सलाम भेजा। सराय वाले के पुरखे हवेली में नौकरी कर चुके थे। रानी ने उसे बड़े हाल में बुलवा भेजा। रात का समय था। उस समय रानी ने साहब को परेशान करना उचित नहीं समझा। युद्ध के कारण सराय में मुसाफ़िरों की इतनी भीड़ रहती थी कि सराय वाले के लिये किसी और समय आ सकना संभव न था।

सराय वाले से उस नगर में खोई हुई बच्ची की बात सुन कर रानी घटनाओं का तारतम्य मिलाती रहीं। अपने अनुमान की बात उन्होंने प्रकट न की और बोलीं—"प्रौढ़ा से कहना, आ कर हम से मिले। उसी से सुन कर कुछ बता सकेंगे।"

"हुज़ूर ने ठीक ही फ़रमाया।"—सराय वाला रानी का संदेश ले कर लौट गया।

दूसरे दिन बुढ़िया अपने बेटे को साथ ले कर बू-हवेली गयी। रानी ने

बेटे को बड़े हाल में बैठने के लिये कहा और प्रौढ़ा को अपने आंगन में बुलवा लिया।

मुसाफ़िर प्रौढ़ा को देख कर रानी को कुछ विस्मय हुआ। उन्हें आशा थी कि वे लोग बहुत ही साधारण स्थिति के होंगे, परन्तु प्रौढ़ा एक नौकरानी का सहारा लिये हुए भीतर आयी। वह सम्मानित घर की थी। उम्र ढल चुकी थी, परन्तु चेहरे पर कोमलता और रौब अब भी मौजूद था। रानी ने उन का उचित स्वागत किया और बैठने के लिये सम्मान का स्थान दिया। प्रौढ़ा ने विनय से सम्मान के स्थान पर बैठने के लिये अनिच्छा प्रकट की परन्तु रानी के आग्रह से बैठ गयी। चाय मंगवाई गयी। इंग और बुढ़िया की नौकरानी दोनों कुछ दूर जा कर खड़ी हो गयीं कि बातचीत न सुन सकें, परन्तु आवश्यकता होने पर उन्हें पुकारा जा सके।

कुछ देर तक केवल विनय और शिष्टाचार के शब्दों का ही प्रयोग होता रहा। उस के बाद प्रौढ़ा बोली—

"यह नगर हमारे रास्ते में तो नहीं था। भय से बचने के लिये इतनी दूर आने की आवश्यकता भी नहीं थी। दो सौ मील पीछे ही कहीं रह जा सकते थे, परन्तु एक विशेष कारण से ही यहां आना पड़ा......।" प्रौढ़ा ने रेशमी रूमाल निकाल कर पहले एक आंख पोंछी फिर दूसरी।

"हां, आप वह बात बताइये न।"—रानी ने सहानुभूति से आग्रह किया।

रानी की सहानुभूति पा कर प्रौढ़ा बच्ची को उस नगर में छोड़ जाने की कहानी सुना कर बोली—"मेरा मन सदा कहता रहा कि लड़की मरी नहीं होगी। वह बहुत स्वस्थ थी। हमारा और कोई बच्चा उतना स्वस्थ नहीं हुआ। बच्ची का बाप उन की मां के कहने पर बच्ची को मरवा देने के लिये तैयार नहीं हुआ। सास बड़ी निर्दय थीं, पर वे बहुत भले आदमी थे। सास से पहले ही वह देवलोक चले गये। सास के डर से हमें कुछ बता भी नहीं सके।"

प्रौढ़ा रोने लगी और फिर बोली—"उस पाप का फल भी हमें बहुत

कठोर मिला। उस के बाद कोई बच्चा जिया ही नहीं। लड़के-लड़कियां सभी मरते गये। बस, यही मेरा सब से छोटा लड़का ही बच्च पाया। इसीलिए उस लड़की को ढूंढ़ने के लिए हम लोग इतनी दूर आये हैं।"

"लड़की को मार नहीं दिया था, यह तो आप को मालूम है?"—रानी ने प्रश्न किया।

"मारा नहीं था।"—बुढ़िया ने उत्तर दिया, "प्रसव के बाद मैं अभी खाट पर लेटी हुई थी तो दीवार की आड़ से मां-बेटे की बात सुनाई दे रही थी। बच्ची के बाप ने उसे न मारने के लिए बहुत प्रार्थना की, तो मां इस बात के लिए तैयार हो गयी कि बच्ची को नगर की चारदीवारी के बाहर छोड़ आओ।"

"बच्ची को लाल रेशम के कुरते में तो नहीं लपेटा था?"—रानी ने प्रश्न किया।

प्रौढ़ी विस्मय से रानी की ओर देखती रह गई और बोली—"हां, हम ने लाल रेशम की अपनी पुरानी कुरती में बच्ची को लपेट दिया था। हमारा ख़्याल था कि शायद लाल कपड़े की ओर किसी का ध्यान आकर्षित हो जाय और बच्ची को उठा ले। आप ने कैसे अनुमान किया?"

रानी अपने स्थान से उठीं और अलमारी की ओर बढ़ गयीं। अलमारी में तहा कर रखे अपने कपड़ों में से उन्हों ने पुराने, लाल रेशमी कपड़े का एक टुकड़ा निकाला। वही टुकड़ा जो च्यूमिंग अपने साथ गांव से लेती आयी थी। टुकड़ा प्रौढ़ा को दिखा कर उन्हों ने पूछा—"क्या यही कपड़ा था?"

प्रौढ़ा का चेहरा स्याह पड़ गया। "हां, यही कपड़ा था।"—वह बोली, "परन्तु बच्ची?"

"लड़की भी है।"—रानी ने उत्तर दिया।

रानी ने च्यूमिंग की कहानी, हवेली में आ जाने तक का वृत्तांत, सुना दिया। प्रौढ़ा आंसू बहाती सुनती रही। रानी के लिए भी यह बताना कठिन था कि वे च्यूमिंग को बहुत चाहती हैं, परन्तु लड़की साहब के मन नहीं भाई

और अब गांव में है। प्रौढ़ा रानी के प्रति कुछ कृतज्ञ भी थी और उन्हे बेटी के दुर्भाग्य पर क्रोध भी आ रहा था। पूरी बात सुना कर रानी बोली—"आप हमारे साथ गाँव चलिए। वहां अपनी आंखों देख लीजिएगा कि लड़की अब कितने आराम से है।"

रानी ने तुरन्त दो पालकियां लाने का हुक्म दिया और दोनों महिलायें गांव की ओर चल दीं।

रानी बहुत दिन से सोच रही थीं कि किसी रोज़ स्वयं जा कर गांव में फेंगमो का काम-काज देखेंगी, परन्तु पहले कड़ी सर्दी के कारण, और फिर भयंकर गर्मी के कारण, उस के बाद घुटने में पीड़ा के कारण जाने की सुविधा नहीं बनी थी। अपनी पुस्तकें और पुस्तकालय छोड़ने को भी मन नहीं चाहता था। अस्तु, गांव पहुंचीं तो उन के विस्मय का ठिकाना नहीं था। गांव में खूब सफ़ाई थी और लोग पहले की अपेक्षा समृद्ध और स्वस्थ जान पड़ रहे थे। बच्चे भी साफ़-सुथरे थे। किसानों ने एक मकान की ओर संकेत कर अभिमान से बताया—"यह स्कूल है।" फेंगमो मां को गांव में हो गये परिवर्तनों की बातें सुना तो चुका था, परन्तु ऐसे परिवर्तनों की तो रानी कल्पना भी नहीं कर सकती थीं।

स्कूल के साथ ही फेंगमो का मकान था। एक हरकारे ने पहले ही आ कर रानी के आगमन की सूचना दे दी थी, इसलिए सब तैयारी थी। रानी ने यह तो सुना था कि लीनी गर्भवती थी, परन्तु यह अनुमान नहीं था कि बहू इतनी स्वस्थ हो गई होगी। लीनी के गालों पर लाली थी और होंठ भी बिना सुर्खी लगाये ही लाल थे, वैसे भी शरीर पुष्ट दिखाई दे रहा था। लीनी ने अपने बालों में डाले हुए कुंडल काट दिये थे, इस बात से भी रानी को प्रसन्नता थी। सब से बड़ी बात थी लीनी के व्यवहार का परिवर्तन। उस की विनय और चुस्ती दोनों प्रशंसा के योग्य थीं। रानी ने फेंगमो को बुलवा भेजा। फेंगमो के आने पर फिर पूरी कहानी सुनाई गयी और च्यूमिंग और उस की बेटी को बुलवा भेजा गया। रुलन उन्हें ले कर आयी।

च्यूमिंग के कमरे के भीतर पैर रखते ही मां और बेटी ने एक-दूसरे को

है।" और रानी ने वह सब आवश्यक होने का आग्रह किया। इसके बाद सब लोगों से आज्ञा ले कर और धन्यवाद दे कर च्यूमिंग अपनी बेटी को ले कर मां के साथ सराय में चली गयी और फिर कभी नहीं लौटी।

प्रौढ़ा को विदा देने से पूर्व रानी ने उन्हें एक ओर ले जा कर बात की—'हमारा अनुरोध है कि अच्छा आदमी ढूंढ़ कर जल्दी ही लड़की का विवाह कर देना। उसे ऐसे ही मत रहने देना। बेचारी गृहस्थ जीवन पा सके।" कुछ सप्ताह बाद प्रौढ़ा च्यूमिंग और अपनी नातिन को ले कर नगर से चली गयी। नगर से जाने से पहले च्यूमिंग रानी के यहां नहीं आयी। रानी को इस से संतोष ही हुआ। वे जानती थीं कि च्यूमिंग के न आने का कारण धृष्टता या बेपरवाही नहीं थी। च्यूमिंग फेंगमो की मां से क्या बात कर सकती थी! इसी संकोच के कारण वह नहीं आयी। वह अपने प्रेम की पीड़ा हृदय में लिये चली गयी।

इस के बाद रानी की च्यूमिंग से भेंट नहीं हुई। वर्ष में एक पत्र च्यूमिंग का आता था। पत्र मुंशियों की पक्की लिखावट में होता। नीचे च्यूमिंग के हस्ताक्षर रहते। पत्र में कुशल-क्षेम के समाचार के अनन्तर च्यूमिंग और बेटी के विषय में समाचार रहते। युद्ध समाप्त हो जाने के बाद च्यूमिंग ने लिखा था कि पेकिंग के एक मृत पत्नीक दुकानदार से उस का विवाह हो गया। उस आदमी के दो बच्चे पहली पत्नी से थे। च्यूमिंग उन्हें भी स्नेह से रखती थी। च्यूमिंग की मां का देहांत हो गया। च्यूमिंग के एक पुत्र हुआ, फिर एक साथ दो पुत्र हुए और उस का घर भर गया।

रानी च्यूमिंग के पत्रों का उत्तर स्नेह से देती थीं। उसे आवश्यक शिक्षा भी लिखती रहतीं। पत्रों में परिवार का, विशेष कर फेंगमो का; भी समाचार रहता।

× × ×

फेंगमो का परिवार भी बढ़ रहा था। मानसिक रूप से उस की अवस्था चाहे जैसी रही हो, शारीरिक समृद्धि की कमी नहीं थी। लीनी के पहले

एक लड़का हुआ, फिर एक लड़की हुई और फिर दो लड़के और हुए। प्रत्येक प्रसव के समय वह हवेली चली आती और प्रसव के एक मास पश्चात् गांव लौट जाती। अब बालों में कुण्डल डालने और नाखून रंगने के लिये उस के पास समय न था। फेंगमो का व्यवहार उस के साथ संयम और न्याय का था। रानी जानती थीं कि फेंगमो बहू को प्यार नहीं कर सकेगा, परन्तु प्यार की ज़रूरत ही क्या थी! फेंगमो का मन प्यार से बड़ी चीज़ जन-सेवा में लगा हुआ था। वह एक के बाद एक स्कूल खोलता गया। स्कूलों की संख्या काफ़ी हो गयी तो वह अस्पताल बनाने लगा। रेशमी कपड़ों का व्यवहार उस ने छोड़ दिया था। क़ीमती कपड़े अलमारियों और सन्दूकों में पड़े-पड़े सड़ रहे थे। वर्दी के ढंग के कपड़े वह पहनता था, परन्तु ऊपर कोई चिह्न या संकेत न रहता था। उस के चेहरे की गंभीरता और दृढ़ता को देख कर रानी को आन्द्रे की याद आ जाती। दोनों के चेहरे के भाव में समता थी, परन्तु फेंगमो में आन्द्रे की सूझ और कोमलता नहीं थी। वह स्वयं अपने प्रति भी कठोर था। समुद्र पार किये स्नेह की भी उस ने कभी चर्चा नहीं की, न उस ने उस लड़की को कभी पत्र ही लिखा। अपने चारों ओर के जीवन की थोड़ी बहुत चिन्ता करते हुए या रस लेते हुए चलना उस की प्रकृति में नहीं था। वह एक समय एक ही काम कर सकता था और एक ही रास्ते पर चल सकता था।

जनता और दूसरे लोग तो फेंगमो के उदार विचार और सेवा-भाव की प्रशंसा ही करते थे, परन्तु परिवार में उस का दूसरा परिणाम भी होता था। फेंगमो गांव के लोगों और अपने छोटे भाई येनमो को ही शिक्षा दे कर संतुष्ट न हो जाता, वह बड़े भाई को भी उपदेश देना या मार्ग दिखाना चाहता था। यह लिआंगमो को सह्य नहीं था। फेंगमो को अपने काम के लिये इतने सहायकों की आवश्यकता थी कि उस का संतुष्ट हो जाना कठिन था। फेंगमो की भाभी निठल्ली बैठी मुटाती जा रही थीं। यह फेंगमो को सुहाता न था। एक दिन वह बोल ही पड़ा कि मेंग भी लीनी और रुलन के साथ ग्राम-सुधार के काम में सहयोग क्यों नहीं देती। वह प्रौढ़ा स्त्रियों को पढ़ना-

लिखना सिखाने या सिलाई-बुनाई का काम सिखाने में सहयोग दे सकती है।

"मैं?......मैं यह काम करूंगी!"—मेंग ने विस्मय से विरोध किया, "मैं तो कभी इस आंगन के बाहर भी नहीं जाती। अम्मा के यहां कभी हो आऊं तो दूसरी बात है।"

"परन्तु भाभी तुम्हें बाहर जाना चाहिये।"—फेंगमो बोला, 'यह तुम्हारा कर्तव्य है। तुम दिन भर करती क्या हो? तुम्हारे बच्चों को दाइयां सम्भाले रहती हैं, बड़े लड़के के लिये मास्टर है, घर के काम-काज के लिये नौकर-नौकरानियां हैं; तुम्हें चाहिये घंटे दो घंटे के लिये आ कर हम लोगों की सहायता किया करो।"

मेंग को बहुत बुरा लगा। "मैं तो नहीं करूंगी!"—वह बोली, "तुम्हारे बड़े भाई भी नहीं मानेंगे।"

"लेकिन तुम पढ़ी-लिखी हो।"—फेंगमो ने आग्रह किया, "तुम्हें पढ़ना-लिखना सिखाया गया है, तो तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम दूसरों को सिखाओ।"

फेंगमो को कुछ ऊंचा बोलने की आदत हो गयी थी। सदा उपदेश देने के ढंग से बात करता। बोलने लगता तो दूसरे की सुनता नहीं, परन्तु लोग उस के काम का आदर करते थे, इसलिये बुरा न मानते।

मेंग को देवर की बातें भली नहीं लगीं। कोई उत्तर न पा कर बोली —"बहुत अच्छा, तुम्हारे बड़े भाई से कह दूंगी।" फेंगमो को संतोष हो गया कि भाभी पर उस के उपदेश का प्रभाव पड़ गया और वह चला गया।

मेंग ने रोते हुए पति से फेंगमो के व्यवहार की शिकायत की—"...... वह तो मुझे निठल्ली, बेकार और बेईमान समझता है।"

मेंग की बात सुन कर लिआंगमो ने उत्तेजना में आंखों से चश्मा उतार लिया और मेज पर हाथ पटक कर बोला—"फेंगमो तो रोज़ नयी मुसीबत खड़ी करता है। किसानों को बिगाड़ रहा है। कल किसानों के मुखिया

आ कर बोले कि वे अपना गल्ला खुद ही बेचेंगे, दलाल की मार्फ़त नहीं बेचेंगे। हम ने पूछा खुद बेचेंगे तो दामों का हिसाब कौन गिनेगा, तो मालूम हुआ कि फेंगमो ने उन्हें गिनना और हिसाब करना सिखा दिया है। अब पूछो कि दलाल बेचारे क्या करेंगे? उन के बाल-बच्चे भूखे मरेंगे कि नहीं? उन्हें भी तो विधाता की इस पृथ्वी पर रहना है।"

लिआंगमो के तेवर चढ़ गये। उस ने पत्नी को संबोधन किया—"देखो, तुम्हें फेंगमो से मुंह लगने की जरूरत नहीं, जो बात करनी होगी हम खुद कर लेंगे।"

लिआंगमो फेंगमो से बात करने के लिये गांव गया। गांव की अवस्था में परिवर्तन देख उसे विस्मय हो रहा था, परन्तु उस परिवर्तन की उपेक्षा कर लिआंगमो माथे पर तेवर बनाये रहा और बोला—"देहाती और किसान भले आदमियों की तरह रहने लगेंगे तो दुनिया का काम कैसे चलेगा? अस्पतालों की जरूरत क्या है? लोग मरेंगे ही नहीं तो पैदा होने वालों के लिये जगह कहां होगी?"

लीनी की अवस्था देख कर लिआंगमो को और भी बुरा लगा। वह बोला कि रईसों की बहू मामूली स्कूल मास्टरनियों की तरह रहे, यह बड़े शर्म की बात है। लीनी को जेठ की सहानुभूति भली ही लगी थी, परन्तु रुलन बीच में बोल उठी। वह न्याय-अन्याय, समता और मानवता की बातें करने लगी। फेंगमो के आ जाने पर झगड़ा और भी बढ़ गया। लिआंगमो बहुत क्रुद्ध हो कर लौटा और निश्चय किया कि सारी बात मां के सामने रखेगा।

रानी प्राय: अपने आंगन में ही रहती थीं। कभी निकलतीं तो केवल मन्दिर में बच्चों को देख आने के लिये। मन्दिर में बच्चियों की संख्या उन्हों ने बढ़ाई नहीं। संभव है बच्चियों की संख्या बढ़ जाने से आन्द्रे की आत्मा को संतोष होता, परन्तु वैसा वे कर न सकीं। हां, एक बौद्ध भिक्षुणियों के मठ को दान दे कर उन्हों ने यह प्रबन्ध कर लिया था कि प्रति दिन दो साधुनियां सूर्योदय के समय नगर की चारदीवारी के बाहर जा कर

देख आया करें। यदि कोई फेंकी हुई जीवित बच्ची मिल जाय तो उसे उठा लायें और उस का पालन-पोषण करती रहें। रानी का आदेश था कि इन बच्चियों को भिक्षुणी या साधुनी न बनाया जाय, बल्कि उन्हें सांसारिक शिक्षा दी जाय और समय आने पर योग्य व्यक्ति ढूंढ़ कर उनका विवाह कर दिया जाय। आन्द्रे के प्रति वे यह कर्तव्य पूरा कर रही थीं।

जिन बच्चियों को आन्द्रे छोड़ गया था वे मंदिर में रहीं। जिस लड़की की आयु सोलह वर्ष की हो जाती उस का रानी विवाह करा देतीं। इन लड़कियों की ऐसी प्रशंसा नगर में फैल गयी थी कि इन से विवाह करने वालों की कमी नहीं थी। बहुत-से लोग इस के लिये लालायित रहते। ऐसे प्रत्येक अवसर पर रानी लड़की को वर का नाम उस के विषय में दूसरी बातें बता कर लड़की की इच्छा भी मालूम कर लेतीं। नगर में इन बातों की बहुत चर्चा होती थी, परन्तु रानी अपने नियम पर दृढ़ रहीं। वे न केवल वर के विषय में सभी बातें लड़की को बता देतीं, बल्कि वर का चित्र भी लड़की को दिखा देतीं।

यदि कोई उस विषय में विस्मय प्रकट करता तो रानी उत्तर देतीं—"पुरुष तो स्त्रियों के चित्र देखते ही हैं, यदि स्त्री भी पुरुष का चित्र देख लेगी तो क्या हर्ज है ?"

रानी के काम और व्यवहार की आलोचना कोई न कर सकता। नौजवान इस बात के लिये उत्सुक रहते कि विवाह के लिये उन की प्रार्थना और उन के चित्र रानी स्वीकार कर लें। समय आने पर रानी विवाह के योग्य लड़की को वह चित्र दिखा कर अपनी पसन्द का नौजवान चुनने का अवसर दे देतीं। लड़की जिस व्यक्ति को पसन्द कर लेती, उसे रानी लड़की का चित्र भेज देतीं। ऐसा कभी नहीं हुआ कि लड़की के पसंद कर लेने पर भी लड़के ने इंकार कर दिया हो।

रानी इन लड़कियों को अपनी बेटी ही मानती थीं। इन लड़कियों को सुगृहिणी बनाने योग्य शिक्षा देने में उन्हों ने कभी उपेक्षा नहीं की। सभी लड़कियां अपने घरों में जा कर योग्य गृहिणियां बनीं और उन के

कारण उस प्रदेश में रानी की कीर्ति घर-घर फैल गयी। लड़कियों के विवाह वे उत्साह और समारोह से करती थीं और लड़की की मां का स्थान स्वयं ग्रहण करतीं। विवाह के समय रानी की प्रसन्नता और संतोष को देख लोग विस्मित रह जाते। लोगों के विस्मय की चिन्ता तो उन्हों ने कभी की नहीं। प्रत्येक विवाह के समय उन्हें जान पड़ता कि आन्द्रे की आत्मा उपस्थित है और वह लड़की का जीवन सार्थक होता देख कर संतुष्ट हो रही है। वे वर के विषय में सब आवश्यक जांच कर लेतीं, सम्भव होता तो वर के सम्बन्धियों के विषय में भी। यदि लड़के की मां झगड़ालू होती तो वे विवाह से इनकार कर देतीं। तीन अवसरों पर ऐसा ही हुआ। एक अवसर पर तो निराश वर को इतना क्षोभ हुआ कि वह कलहिन मां से अलग रहने लगा।

इस घटना से भी रानी को खेद हुआ, क्यों कि वे माता-पिता को सेवा पुत्रों का कर्तव्य समझती थीं। इस विषय में एक बार आन्द्रे से भी बात हुई थी।

इन दिनों आयु बढ़ने के साथ-साथ आन्द्रे की याद भी उन्हें अधिक आने लगी थी। एक दिन जाड़े के दिनों में फेंगमो को पाठ पढ़ा चुकने के बाद वे दोनों बात कर रहे थे। आंगन में बर्फ़ पड़ी हुई थी और बर्फ़ पर आन्द्रे के पांव के चिह्न दिखाई दे रहे थे। फेंगमो और इंग बर्फ़ से पांव बचाने के लिये बरामदे में से हो कर आये-गये थे, परन्तु आन्द्रे बर्फ़ में क़दम रखता आंगन से ही आया था।

"आप के पांव भीग गये होंगे।"—रानी ने उस के आते ही चेतावनी दी थी।

रानी की बात सुन कर आन्द्रे ने अपने पांव की ओर देखा। पांव भीग जाने का ध्यान उसे न था, और पांव की ओर देख कर भी वह कुछ बोला नहीं। पुस्तक खोल ली और फेंगमो को पढ़ाने लगा। रानी चुपचाप समीप बैठी रहीं। फेंगमो के चले जाने के बाद उन्हों ने प्रश्न किया था—"क्या यह उचित है कि पुत्र पिता का घर छोड़ कर चला जाय?"

फेंगमो जैसी शिक्षा पा रहा था, उस से रानी को आशंका हो रही थी कि उन का बेटा सम्भवतः बाहर जाने की इच्छा करने लगेगा।

आन्द्रे अपने रूमाल में पुस्तकों को इकट्ठा कर बस्ता बांधते-बांधते बोला—"पिता के घर से पुत्र का सम्बन्ध केवल इतना ही है कि वह वहां जन्म पा लेता है।"

"माता-पिता के प्रति पुत्र का कोई कर्तव्य नहीं है?"—रानी ने पूछा।

"इस प्रश्न का उत्तर मैं क्या दे सकता हूं!"—आन्द्रे ने उत्तर दिया और फिर रानी की ओर देख कर बोला, "देखिये मैं कितनी दूर-दूर घूम आया हूं, परन्तु मैं यह तो कभी नहीं भूल सकता कि मेरा जन्म वेनिस नगर के एक घर में हुआ था।"

"वेनिस?"—रानी ने दोहरा कर पूछा। इस से पहले आन्द्रे ने अपने जन्म-स्थान का नाम उन्हें कभी नहीं बताया था।

"वेनिस आप के नगर सूचाऊ की तरह ही है।"—आन्द्रे ने बताया, "वहां भी नहरें सड़कों का काम देती हैं। लोग पालकी के बजाय नाव से ही आते-जाते हैं। मुझे खूब याद है कि वेनिस में सूर्योदय और सूर्यास्त के समय नहरें पिघले हुए सोने के समान हो जाती थीं।" बात कहते समय आन्द्रे की निर्निमेष आंखें सामने की दीवार की ओर लगी हुई थीं। रानी समझ गईं कि आन्द्रे कल्पना में वेनिस की सुनहरी नहरों को ही देख रहा है। इस के बाद आंद्रे उठा और बिदा ले कर चल दिया। ऐसी छोटी-छोटी घटनाओं से ही आन्द्रे रानी की मानसिक परिधियों को तोड़ता रहता था, इस लिये अब वे चिड़चिड़ी और अहंकारी मां को छोड़ कर पृथक् रहने वाले पुत्र को भी क्षमा कर सकती थीं। नवयुवकों को भी जीवन का अवसर चाहिये; सभी को जीवन का अवसर चाहिये—उन्होंने सोचा।

जिस समय लिआंगमो क्रोध में मुंह बनाये फेंगमो की शिकायत करने पहुंचा, रानी कुछ ऐसी ही बात सोच रही थीं। पुत्रों से उन का साक्षात्कार काफ़ी समय बाद होता था, इसलिए वे उन्हें प्रति बार नये रूप में देख पातीं।

उस समय लिम्रांगमो उन्हें समृद्ध कारोबारी म्रादमी जान पड़ा, जो कुछ ही दिन में म्रपने परिवार का मालिक म्रौर सफल व्यवसायी बनने वाला था।

लिम्रांगमो म्राते ही बोला—"छोटा भाई तो बिलकुल सनकी होता जा रहा है। चाहता है कि मेंग भी जा कर देहातियों को पढ़ाने का काम करे। यह कैसे हो सकता है! लीनी तो बिलकुल स्कूल मास्टरनी-सी लगती है। केश छँटवा दिए हैं म्रौर केश धूप से भूरे हो गये हैं; म्रौर रुलन तो बिलकुल कम्युनिस्ट लड़कियों-जैसी दिखाई देती है। घर की इज़्ज़त मिट्टी हुई जा रही है।"

रानी मुस्करा दीं। "देखा तो होगा कि गांव में कितनी सफ़ाई हो गयी है?"—उन्हों ने पूछा।

"हम गांव की फ़िकर करें या पहले म्रपने घर की?"—लिम्रांगमो संतोष से बोला, "म्रम्माजी, म्राप का म्रौर पिताजी का बोझ तो मुझे ही सम्भालना होगा।"

बेटे साहब से बात नहीं करते थे। घर में उन का जो कुछ भी महत्त्व कभी था, वह भी समाप्त हो चुका था। वे ऊंघते-से रहते म्रौर इसी बात से सन्तुष्ट थे कि उन्हें कोई चिंता न करनी पड़े। पोते-पोतियां म्रवश्य उन से बहुत प्रसन्न रहते थे। बच्चे प्रायः ही उन के म्रांगन में म्रा जाते म्रौर खूब शोर मचाते। साहब उन्हें खूब मिठाइयां खिलाते। बच्चे खेलते रहते म्रौर वे ऊंघते रहते। चमेली का म्रपना कोई बाल-बच्चा नहीं था। वह इन बच्चों को बहला कर म्रांगन में बुला लेती, ताकि साहब को बच्चों का म्रभाव न खटके। यह भी जानती थी कि बूढ़ों को बच्चों से खेलना बहुत भाता है। इस से वे मृत्यु का भय भूले रहते हैं।

लिम्रांगमो बोला—"हमारे छोटे भाई येनमो का समय यों ही बरबाद हो रहा है। उसे स्कूल जाना चाहिए।"

"येनमो स्कूल जाना नहीं चाहता।"—रानी ने उत्तर दिया।

"उस के चाहने की बात क्या है?"—लिम्रांगमो ने म्रापत्ति की, "उसे

देखिए तो क्या भले घर का लड़का जान पड़ता है? बिलकुल ऐसे लगता है, जैसे किसान का बेटा हो।"

रानी धीमे से हुंकारा भर कर चुप रहीं।

लिम्रांगमो मां का संकेत समझ गया कि अब और बोलना उचित नहीं। चाय का एक बड़ा घूंट ले कर उस ने क्रोध शांत कर लिया और चेहरा गंभीर बनाये बैठा रहा।

रानी चुप ही रहीं। उन की चुप सदा अर्थपूर्ण होती थी। दिन बड़ा उदास-उदास-सा था। आकाश में भूरे बादल थे। दीवारें भी भूरी जान पड़ रही थीं। हवा कुछ गर्म ही थी, इसलिए आंगन के जलकुंड से कुछ कोहरा उठ रहा था। वायु में भीगी धरती की गंध भी थी।

बहुत देर तक मौन रह कर रानी बोलीं—"बेटा, तुम्हारे आंगन में तो सब कुशल है न?"

"जी हां, अम्माजी आप की कृपा है।"—लिम्रांगमो ने चाय का प्याला मेज़ पर रखते हुए उत्तर दिया, "वहां कोई मेरी बात टाल नहीं सकता। बच्चे तन्दुरुस्त हैं और समझदार भी। अम्माजी आप को मालूम है, मेरे बड़े लड़के ने प्राइमरी स्कूल पास कर लिया?"

"अच्छा, बहुत अच्छी बात है।"—रानी ने प्रसन्नता प्रकट की और पूछा, "नगर का क्या हाल-चाल है?"

"अच्छा ही है।"—लिम्रांगमो ने उत्तर दिया, "बाज़ार में कारोबार तो ज़्यादा नहीं है परन्तु इस मौसम के ख़्याल से बुरा भी क्या है। लड़ाई ख़त्म हो गयी है, इसलिए विलायती माल भी आने लगा है। फिरंगियों के अस्पताल की नयी इमारत बन रही है। सुना है, कुछ और विदेशी भी आ रहे हैं।"

"पर यह क्या अच्छी बात है?"—रानी ने पूछा।

"फेंगमो ही खुश है।"—लिम्रांगमो बोला, "हम पर तो विधाता की कृपा है। मेंग को विदेशी डाक्टरों की ज़रूरत नहीं पड़ती। बच्चे हमारे बीमार ही नहीं होते।"

"हमें याद है कि कांग सेठ का पोता खांसी से परेशान था। उसे हम ने दादी की बताई एक दवा दी थी, उसी से ठीक हो गया था।"––रानी बोलीं, "अब तो लड़का खूब बड़ा हो गया होगा!"

सेठानी की मृत्यु एक वर्ष पूर्व ही हो चुकी थी। रानी को इस समय सेठानी का कफ़न के संदूक़ में देखा चेहरा याद आ गया। सेठानी के लिए साधारण लोगों की अपेक्षा चौड़ाई में दूना कफ़न-संदूक़ बनवाया गया था। वे साटिन की पोशाक पहने कफ़न में लेटी हुई थीं। उन के फूले-फूले हाथ बाहों के साथ सीधे थे। अब उन की याद आने पर रानी को क्रोध अनुभव न होता था, बल्कि जवानी के दिनों का प्यार उमड़ आता। सेठानी उस समय बहुत खुश मिजाज़ थीं, चेहरा गुलाबी-गुलाबी प्यारा-प्यारा-सा लगता था। मन में यही खेद था कि उन की नाक बैठी हुई थी और नथुने चौड़े थे। सेठ ने शीघ्र ही दूसरा विवाह भी कर लिया था। यह पत्नी झगड़ालू थी और घर भर में परेशानी खड़ी किए रहती थी, परन्तु इस से रानी को क्या मतलब था!

लिआंगमो अपनी बात का उत्तर सुनने की प्रतीक्षा में बैठा था। आखिर रानी मुस्करा कर बोलीं—"बेटा, प्रत्येक व्यक्ति की अपनी प्रवृत्तियां होती हैं। उसी के अनुकूल उसे रूप लेने देना चाहिये। दूसरों पर बन्धन लगाने से स्वयं भी असुविधा होती है। बेटा, तुम अपने आँगन में अपने ढंग से चलो और फेंगमो को उस के ढंग से चलने दो।"

"तो अम्माजी फेंगमो को आप समझा दीजिये।"––लिआंगमो ने उत्तेजना से कहा, "वह भी हमारे यहां आ कर दखल न दे।"

"हम कह देंगे।"––रानी ने विश्वास दिलाया।

लिआंगमो चला गया। उस के बाद जब फेंगमो आया तो रानी ने उसे समझाया।

"बेटा, तुम्हें याद है, तुम्हारे गुरु ने एक बार कहा था कि किसी व्यक्ति को शिक्षा देने का अर्थ उसे स्वर्ग का मार्ग दिखाना है। स्वर्ग में किसी को जबरदस्ती तो नहीं धकेला जा सकता।"

फेंगमो को गुरु की बात याद आ गयी। सिर झुका कर वह बोला —"अम्माजी मैं समझ गया हूं कि आप मुझे यह बात याद क्यों दिला रही हैं। कभी-कभी मैं अपने हृदय की आग को वश में नहीं कर पाता हूं। मैं पागल हो कर दौड़ पड़ना चाहता हूं और चाहता हूँ कि दूसरों को भी साथ घसीट ले जाऊं।"

रानी चुपचाप उस की बात सुनती रहीं। वे जानती थीं कि फेंगमो को भी अपना मन हलका करने की आवश्यकता है। वह मां के सिवाय और किस से बात कर सकता था। स्वयं भी इच्छा हुई कि आन्द्रे के विषय में बात करें। उन का यह पुत्र ही तो आन्द्रे को समझ सका था और उसकी भावना को चरितार्थ कर रहा था, परन्तु उन्हों ने अपनी इच्छा का दमन कर लिया। फिर भी बोलीं—

"तुम्हारे उस विशाल शरीर गुरु का इस घर पर क्या प्रभाव पड़ा? हमारा यह परिवार सैंकड़ों वर्ष से इसी प्रकार चला आ रहा है। हमें किसी से क्या सीखने की जरूरत थी, फिर भी उस का प्रभाव प्रकट में न मालूम होने पर पड़ा है। वह प्रभाव हम लोगों के द्वारा आया है, इसलिये समझना चाहिये कि वह प्रभाव क्या है।"

"हम लोगों को आन्द्रे भाई ने जीवन के अधिकार की शिक्षा दी।" —फेंगमो बोला।

"बहुत ठीक कहा तुम ने।"—रानी बोलीं। रानी को ऐसा जान पड़ा कि आन्द्रे उन के पुत्र के समीप खड़ा मुस्करा रहा था और वे उस की उपस्थिति का सुख अनुभव कर रही थीं। इस से पहले कितनी ही बार वे आन्द्रे की उपस्थिति अनुभव कर चुकी थीं, परन्तु सदा अकेले ही। पहली बार उन्हों ने पुत्र के साथ आन्द्रे की उपस्थिति अनुभव की।

"यदि आन्द्रे भाई जीवित होते,"—रानी फेंगमो से बोलीं, "तो वह तुम्हारे काम से अवश्य प्रसन्न होते।"

"आप का ऐसा विश्वास है?"—फेंगमो ने उत्साह से सिर उठा कर पूछा, "अम्माजी आप का क्या विचार है? मैं चाहता हूं कि फिरंगी

अस्पताल के डाक्टरों से कहा जाय कि वे हमारे देहात के लोगों को भी चिकित्सा की थोड़ी-बहुत शिक्षा दे दें। मेरा मतलब पूरा डाक्टर बनाने से नहीं है, अभिप्राय है कि मामूली-मामूली बीमारियों से हमारे हज़ारों आदमी मर जाते हैं, उन की रक्षा हो सके।"

फेंगमो उत्साह से अपनी बात कहता गया। रानी उस की बात सुन रही थीं, परन्तु उन का ध्यान आन्द्रे की ओर था। कल्पना में उन्हें आन्द्रे के बड़े-बड़े सशक्त सुंदर हाथ दिखाई दे रहे थे। एक हाथ साधारण अभ्यास के अनुसार सलीब को थामे हुए था। उस की सुमिरनी टूट गयी थी तो सलीब को एक डोरी से ही लटका लिया था। जिस समय गुंडों ने उसे मार कर गिरा दिया था सलीब भी पत्थरों से टकरा कर रगड़ गयी थी। रानी ने जब आन्द्रे को अंतिम बार कफ़न के सन्दूक़ में देखा था तो रगड़ी हुई सलीब की ओर उन का ध्यान गया था।

"ठीक कह रहे हो बेटा, तुम ठीक कह रहे हो।"—रानी बोल उठीं।

फेंगमो मां से पाये नये उत्साह से उठ कर चला जा रहा था तो रानी को लिआंगमो को दिया हुआ वचन याद आया। उन्हों ने फेंगमो का हाथ थाम लिया और बोलीं—"बस एक बात याद रखना। दूसरों के साथ जबर-दस्ती न करना। लिआंगमो और मेंग के साथ......"

"आप उन लोगों की बात कह रही हैं।"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "उन लोगों से मुझे कोई आशा नहीं है।"

फेंगमो चला गया और आन्द्रे भी चला गया। रानी अकेली बैठी सोचती रहीं।

× × ×

वर्षों बीत गये, रानी अपने आंगन से बाहर नहीं निकलीं। अपने आंगन में ही बैठी वे प्रायः सब कुछ जान जाती थीं। उन के धैर्य और पैनी सूझ की चर्चा दूर-दूर तक फैल चुकी थी। लोग नगर और प्रान्त की समस्याओं के संबंध में भी उन से परामर्श लेने आते थे। जाड़ों में मिस हिसा एक रात

चल बसीं तो उन के अंतिम संस्कार के लिये भी रानी से ही राय लेने आये। रानी ने हिसा का सूखा-सा मृतक शरीर हवेली के मंदिर में ही मंगवा लिया और उन के कफ़न की व्यवस्था की आज्ञा दे दी। हिसा दूसरे विदेशियों से भी झगड़ बैठी थी। उन की मृत्यु पर केवल उन का बूढ़ा रसोइया ही शोक मनाने वाला था। उसी ने आ कर रानी को समाचार दिया था कि मिस हिसा रात में अपना फटा लिहाफ़ ओढ़े कुर्सी पर बैठे इंजील पढ़ती पढ़ती चल बसीं।

हिसा का कफ़न देवताओं की मिट्टी की प्रतिमाओं और आन्द्रे भाई के चित्र के सम्मुख फ़र्श पर रखा हुआ था। अनाथ लड़कियों के विवाह हो चुके थे। केवल स्नेह रह गयी थी। पुजारी इतना बूढ़ा हो गया था कि चलना-फिरना भी कठिन था। स्नेह ही उसे पूजा के काम में सहायता देती थी। यही अवस्था बुढ़िया दाई की थी। उस की सहायता के लिये भी रानी ने एक नौकरानी रख दी थी। हिसा के कफ़न पर स्नेह ने ही मोमबत्तियां जलाई थीं।

रानी हिसा के सूख कर कंकालमात्र हो गये चेहरे की ओर देख कर सोच रही थीं—इस स्त्री ने अपना देश, अपना परिवार दूसरे लोगों को भगवान् का संदेश देने के लिये छोड़ दिया था। उन्हों ने हिसा की प्रार्थना याद करने की चेष्टा की, परन्तु याद न आयी। अनावश्यक बात की तरह भूल चुकी थीं। उन्हों ने एक धूपबत्ती देवता की प्रतिमा के सम्मुख जला दी और मन में सोचा, देवता इस ग़रीब स्त्री की भी चिन्ता कर लेंगे। हिसा के कफ़न को कीलों से जड़ कर मंदिर के कोने में रख दिया गया। शुभ मुहुर्त देख कर रानी ने पहाड़ी ढलवान पर हिसा की भी क़ब्र बनवा दी। क़ब्र पर एक पत्थर, हिसा का जो कुछ भी नाम-धाम उन्हें पता था, खुदवा कर लगवा दिया कि भविष्य में कभी हिसा का कोई सम्बन्धी उन्हें खोजता हुआ आये तो ढूंढ़ सके। किसी के आने की आशा तो नहीं थी, परन्तु सोचा कि संसार में अप्रत्याशित भी तो होता है।

युद्ध के बाद देश भर में अव्यवस्था फैल गयी थी। उस अव्यवस्था को

दूर कर व्यवस्था क़ायम करने के लिये बहुत-से लोग राजधानी और समुद्र-तट के नगरों से आते रहते थे। वू-परिवार का नगर समुद्र-तट से इतनी दूर था कि वहां अव्यवस्था का प्रभाव पहुंच ही नहीं पाया था, फिर भी बहुत से देशी-विदेशी लोग किसी-न-किसी बहाने से उस नगर में भी पहुंच ही जाते थे। एक कारण यह भी था कि फेंगमो किसी भी विदेशी के आने का समाचार सुनता तो उसे अपने गांव में निमंत्रण दे कर सलाह लेना चाहता। फेंगमो के काम और नाम की ख्याति भी दूर-दूर तक पहुंच चुकी थी।

रानी इन विदेशियों से नहीं मिलती थीं। वे उन की भाषा नहीं जानती थीं। मिलने से कोई लाभ भी उन्हें न जान पड़ता था। सोचतीं, मेरा जीवन पूर्ण हो चुका, अब इस में कुछ और जोड़ने की आवश्यकता नहीं।

परन्तु एक दिन फेंगमो ने संदेश भेजा था कि समुद्र पार से एक विदेशी आया था। फेंगमो उसे एक विशेष कारण से मां से मिलाना चाहता था। रानी ने अनुमति दे दी थी। कुछ समय बाद फेंगमो एक खूब लम्ब-तड़ंग पक्के रंग के विदेशी के साथ आया।

रानी ने उस विदेशी के गहरे पक्के रंग से विस्मित हो कर फेंगमो से पूछा—

"यह क्या यूरोपियन है ? इस का रंग तो बहुत गहरा है।"

"यूरोपियन ही है,"—फेंगमो ने उत्तर दिया, "परन्तु इस के माता-पिता आन्द्रे के देश इटली से आये थे।"

रानी के हृदय और शरीर में एक सिहरन दौड़ गयी। वे भूल गयीं कि वे अपनी भाषा के अतिरिक्त कोई भाषा नहीं बोल सकतीं। वे अपनी छड़ी की चांदी की मूंठ पर बोझ ले कर आगे झुक गयीं और बोलीं—

"आप आन्द्रे से परिचित थे ?"

फेंगमो तुरन्त आगे बढ़ आया और नौजवान अतिथि और मां के बीच दुभाषिये का काम करने लगा।

"नहीं, मैं उन से परिचित नहीं था।"—नौजवान ने उत्तर दिया, 'मैंने अपने माता-पिता से उन के बारे में सुना है। वे मेरे चाचा थे।"

"आप के चाचा ?"—रानी ने फिर प्रश्न किया, "आप उन के सम्बन्धी हैं। उन्हीं के वंश के हैं ?"

रानी उस पक्के रंग के नवयुवक के चेहरे में आन्द्रे की समता खोजती रहीं। उन्हें आन्द्रे की काली आंखें दिखाई दीं, परन्तु वे इतनी बड़ी नहीं थीं। सिर की बनावट आन्द्रे-जैसी थी, पर वह उतना बड़ा न था। नौजवान के हाथ भी आन्द्रे-जैसे ही थे, परन्तु उतने बड़े नहीं; कुछ छोटे और कोमल थे। दृष्टि आन्द्रे-जैसी न थी। आत्मा आन्द्रे की न थी।

रानी ने एक गहरी सांस ली और पीछे हट गयीं—नहीं, यह वह आत्मा नहीं।

"आप अपने चाचा को खोजने आये हैं ?"—रानी ने पूछा।

"जी हां।"—नौजवान ने उत्तर दिया, "मेरे माता-पिता को मालूम था कि चाचा इस स्थान पर हैं। चाचा ने तो कभी पत्र लिख कर सूचना नहीं दी, परन्तु पिता को मालूम था। मैं इस नगर के समीप पहुंचा तो इच्छा हुई कि पता लूं; [illegible] जीवित हों और पिता को पत्र लिख दूं।"

"उन्हें हमारी ही भूमि में समाधि दी गयी थी।"—रानी ने बताया, "हमारा बेटा आप को वह स्थान दिखा देगा।"

कुछ देर वे लोग मौन बैठे रहे। रानी ने सिर झुका कर आंखें मूंद लीं उन को ईर्ष्या-सी अनुभव हुई। कल्पना में उन्हें आन्द्रे का चेहरा दिखाई दिया और उन्हों ने उसे संबोधन किया—"तुम केवल मेरे ही हो, किसी और के नहीं।"

आंखें खोलने पर रानी को आन्द्रे का भतीजा सामने बैठा दिखाई दिया। वह इस बात का प्रमाण था कि दूर विदेश में आन्द्रे का अपना परिवार और सम्बन्धी थे।

नौजवान ने रानी की ओर देखा और मुस्करा कर बोला—"मेरा अनुमान है, आप जानती हैं कि मेरे चाचा इतनी दूर क्यों आ गये और उन्हों ने हमें कभी पत्र तक नहीं लिखा ?"

फेंगमो ने उत्तर दिया—"नहीं, हम लोगों को तो नहीं मालूम।"

"वे नास्तिक थे।" नवयुवक का चेहरा गंभीर हो गया। "धार्मिक लोगों और पादरियों ने उन्हें नास्तिक कह कर उन का बहिष्कार कर दिया था। वह निराश्रय और निस्सहाय हो गये थे। उन्हों ने अपना पता भी हमें न दिया। हमें उन का पता मालूम हुआ तो हम लोगों ने कुछ रुपया उन्हें भेजा, परन्तु वह उन्हों ने स्वीकार न किया।"

"परन्तु उन्हों ने कोई पाप तो नहीं किया।"—फेंगमो आशंका से बोला।

"प्रश्न उन के करने का नहीं था,"—नवयुवक बोला, "प्रश्न था उन के विचारों का। उन का विचार था कि स्त्री-पुरुषों में ही दैवी शक्ति का वास है। आज हम लोगों की पीढ़ी में तो यह बात पाप नहीं जान पड़ती, परन्तु पिछली पीढ़ी में ऐसा सोचना महापाप था और उन्हों ने अपने बड़े पादरी को अपने विचार बता देना आवश्यक समझा। अपने अन्तिम पत्र में चाचा ने मेरे पिता को यह सब वृत्तान्त लिख भेजा था। हम लोग भी उन का अभिप्राय समझ नहीं पाये। मेरी मां तो समझती थीं कि घर-बार से इतनी दूर अकेले रहने के कारण ही उन की मानसिक अवस्था ऐसी हो गयी है।"

फेंगमो नवयुवक की बात का अनुवाद कर मां को समझा रहा था। रानी ध्यान से सुन रही थीं। उन्हों ने सोचा—आन्द्रे के अपने लोगों ने ही उसे त्याग दिया था।

रानी ने पल भर को आंखें मूंद लीं और मन ही मन आन्द्रे को संबोधन किया—"परन्तु हम ने तो तुम्हें नहीं त्यागा।" रानी फिर आंखें मूंदे रहीं। दोनों नौजवान उन की ओर देखते रहे। रानी के इतने देर तक निश्चल आंखें मूंदे रहने से फेंगमो को चिन्ता हुई। उस ने कुर्सी पर एक करवट ले कर तनिक आहट की। रानी ने आंखें खोल दीं और फेंगमो की ओर देख कर बोलीं—

"विदेशी नौजवान को समझा दो कि समाधि यहां से काफ़ी दूर है। रास्ता भी संकरा और ऊंचा-नीचा है और वहां जा कर क़ब्र ही तो देखने मिलेगी।"